हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—१९

संगीत शास्त्र

लेखक
के० वासुदेव शास्त्री

हिन्दी समिति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश
लखनऊ

प्रकाशकीय

ललित कलाओं के प्रति भारतीय समाज की प्राचीन काल से अभिरुचि रही है और संगीत एवं कलाओं को विशेष महत्व दिया गया है। प्राचीन काल में विद्वानों ने इन पर शास्त्रीय ढंग से गम्भीरता-पूर्वक विचार किया और विशद ग्रन्थों की रचना की। आधुनिक काल में भी शास्त्रीय संगीत के प्रति शिष्ट वर्ग की रुचि दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है और स्वतन्त्र भारत की लोकप्रिय सरकारें उसकी उन्नति में यथोचित सहयोग दे रही हैं। अतः 'संगीत शास्त्र' पर हिन्दी में श्री के० वासुदेव शास्त्री की यह कृति सर्वथा स्तुत्य है। भारत में उपलब्ध तद्-विषयक प्राचीन ग्रन्थों का दीर्घकाल तक अध्ययन करने के बाद उन्होंने इसका प्रणयन किया है और इसमें उन सभी बातों को उदाहरण-सहित सरल भाषा में समझाने की चेष्टा की है, जो संगीत का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करनेवाले शिक्षार्थी के लिए अपेक्षित होती हैं। इसमें देश की प्रचलित मुख्य-मुख्य संगीत-पद्धतियों का समावेश किया गया है।

यह ग्रन्थ संगीत-शास्त्र में रुचि रखनेवाले लोगों; विशेषतया विद्यार्थियों, में अधिक लोकप्रिय हुआ है। अतः पहली आवृत्ति समाप्त होने के बाद हम इसे पुनः प्रकाशित कर रहे हैं। हमें विश्वास है, संगीत-कला प्रेमी पाठक इसकी दूसरी आवृत्ति का स्वागत करेंगे।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
सचिव, हिन्दी समिति

भूमिका

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में संगीत शास्त्र विषयक जो सामग्री उपलब्ध है, पिछले ३७ वर्ष से मैं उसका अध्ययन करता रहा हूँ। यह पुस्तक उसी का परिणाम है। तंजौर जिले में स्थित मेरे ग्राम कीवलूर में बहुत से शौकिया तथा पेशेवर संगीतज्ञ निवास करते थे। कन्दस्वामी नागस्वरक्कारर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध वंशीवादक उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। वे वंशीवादक संगीतज्ञों के मुकुटमणि थे, जिनका स्थान देश के उस अञ्चल में सामान्यतः अन्य वादकों तथा गायकों के समकक्ष ही माना जाता है। राग, छाया तथा स्वर-संचार की प्रथम शिक्षा मुझे अपने बड़े भाई श्री माधव शास्त्री से मिली जो संगीत शिक्षक थे। मुझे अपने गांव के बहुत ही कुशल संगीतज्ञ श्रीरामचन्द्र भागवतार का गायन सुनने तथा उनसे कुछ सीखने का भी अवसर प्राप्त हुआ था। पहले तो वे हिन्दुस्थानी संगीत के अद्वितीय गायक के रूप में प्रसिद्ध हुए, किन्तु बाद में उन्होंने कर्णाटक संगीत में भी ख्याति प्राप्त की। उनके नारी-सुलभ कण्ठस्वर पर नागूर के मशहूर ढोलकवादक तंजौर निवासी जनाब नन्हूं मियां साहब, मुग्ध हो गये। इन्होंने उन्हें शास्त्रीय हिन्दुस्थानी संगीत की शिक्षा दी और फिर दोनों ने साथ-साथ समस्त दक्षिण भारत का परिभ्रमण किया जिससे दोनों को ही संयुक्त लाभ पहुंचा। श्री रामचन्द्र भागवतार ने अपने प्रारम्भिक जीवन के कितने ही वर्ष उस समय के दो महान् करनाटकी संगीतज्ञों, श्री महावैद्यनाथ ऐयर तथा श्री पटनम सुब्रह्मण्य ऐयर, का संगीत सुनने में बिताये और जब उक्त दोनों प्रतिष्ठित कलाकार दिवंगत हो गये, तब स्वयं प्रथम कोटि के करनाटकी संगीतज्ञ का स्थान प्राप्त कर लिया। इसी समय सुप्रसिद्ध अभिनेत्री बालामणि ने लुभावना वेतन देकर उन्हें संगीत की शिक्षा प्रदान करने के लिए कुछ वर्षों तक अपने यहां नियुक्त कर लिया, जिससे पेशेवर संगीतज्ञ के रूप में उनका जीवन समाप्त हो गया। इसके बाद उन्होंने अपना अधिकांश समय संगीत की शिक्षा प्रदान करने में ही लगाया और वे लगभग २५ वर्षों तक "संगीतज्ञों के संगीतज्ञ" रूप में ही प्रसिद्ध रहे। मैंने देखा था कि स्वर्गीय पंचम केश भागवतार, वायलिन गोविन्द स्वामी पिल्लै, नागस्वरम् पक्किरिया पिल्लै, कोयम्बटूर तयी और बंगलौर नागरत्नम् रागों तथा कृतियों के किसी गूढ़ तत्त्व को समझने के लिए हफ्तों तक उनकी मौज का इन्तजार किया करते थे। पिछली शताब्दी

के उत्तरार्ध में कर्णाटक संगीत के उक्त दोनों आचार्यों की संयुक्त परम्परा का प्रतिनिधित्व उन्होंने किया।

मैंने उस समय तक रागों, उनकी छायाओं, उनके स्वरों तथा संचारों का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जब सन् १९२१ में प्रकाशित पूना ज्ञान समाज के स्मृति-ग्रन्थ में संगीत विषयक संस्कृत के भाषण मैंने देखे। उसमें मुझे श्री बलवन्त तैलंग सहस्रबुद्धे तथा कुछ अन्य विद्वानों के व्याख्यान पढ़ने को मिले। संगीत रत्नाकर, नारदी शिक्षा तथा पाणिनि शिक्षा, यही तीन पुस्तकें थीं जिनका अध्ययन मैंने पहले पहल किया।

संस्कृत जानने के कारण मुझे संगीत रत्नाकर तथा नारदी शिक्षा के श्लोकों का अर्थ समझने में वहाँ यथेष्ट सुविधा हुई जहां तक ऐसे विषय का सम्बन्ध था जो प्राविधिक न था, किन्तु उसके प्राविधिक अंश में हर दूसरे-तीसरे श्लोक पर कठिनाई का सामना करना पड़ा। पहली समस्या श्रुतियों और स्वरों के पारस्परिक सम्बन्ध में थी जिसका मुझे समाधान करना था। हमें बताया गया है कि सप्तक में बाईस श्रुतियां होती हैं, षड्ज में चार, ऋषभ में तीन, इत्यादि और समस्त सातों स्वरों में बाईसों श्रुतियों का समावेश हो जाता है। अब प्रश्न यह था "क्या प्रत्येक श्रुति एक स्वर का प्रतिनिधित्व करती है? ग्रन्थों में जो यह कहा गया है कि षड्ज में चार श्रुतियां होती हैं, क्या उसका यह आशय है कि षड्ज भी चार होते हैं?" कोई भी इसका उत्तर "हां" में न देगा। फिर, यदि प्रत्येक श्रुति का आशय स्वर ही हो, तो इसके लिए दो पृथक शब्द—श्रुति और स्वर—रखने की क्या आवश्यकता है? और यदि प्रत्येक श्रुति स्वर है तो फिर स्वर भी बाईस होने चाहिए, जब कि ग्रन्थों में कहीं भी इनकी अधिक से अधिक संख्या १९ के ऊपर नहीं आयी है। मैंने सहजबुद्धि से यह परिणाम निकाला कि श्रुतियां वे घटक अंग मात्र हैं जिनसे स्वरों का निर्माण हुआ है अर्थात् प्रत्येक स्वर चार, तीन या दो श्रुतियों के संयोग से बना है। कई वर्षों के बाद जब मैंने नाट्यशास्त्र का सुषिराध्याय याने ३० वां अध्याय देखा तो मेरे इस विचार की पुष्टि हो गयी। किन्तु इस पुष्टि के बहुत पहले ही मानों मेरे कान में कोई कह उठता था कि मेरा यह सोचना यथार्थ है। श्रुतियां स्वरों के निर्माणकारी अंग हैं, लेकिन फिर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि "किसी विशिष्ट श्रुति में प्रत्येक स्वर का अपना स्थान है", इस कथन का क्या तात्पर्य है? प्रत्येक स्वर को किसी विशिष्ट श्रुति के रूप में पहचानने में हमें अपने कानों से सहायता मिलती है जिससे इस मत की पुष्टि होती है कि प्रत्येक स्वर एक ही श्रुति-विशेष का द्योतक है। इसका उत्तर मैंने यह कहकर दिया कि यद्यपि प्रत्येक स्वर कई श्रुतियों के मेल से बनता है, फिर भी जो

श्रुति अधिक देर तक बनी रहती है, उसी से स्वर का स्थान निर्धारित करने में सहायता मिलती है।

नाटयशास्त्र के जिस अंश से स्वरों की बनावट सम्बन्धी मेरे मत का समर्थन होता है, वह जैसा कि पहले कहा जा चुका है, नाटयशास्त्र के सुषिर सम्बद्ध तीसवें अध्याय में आया है जहां चार श्रुतियोंवाले, तीन श्रुतियोंवाले तथा दो श्रुतियोंवाले स्वर उत्पन्न करने की विधि का उल्लेख किया गया है। वहां कहा गया है कि जब आप किसी स्वर सम्बन्धी छिद्र को पूरा खुला रखते हैं, तो चार 'श्रुतियोंवाला स्वर निकलता है, जब उसे आधा बन्द रखते हैं तब दो श्रुतियों का स्वर प्राप्त होता है और जब आप जल्दी-जल्दी उसे बन्द करते तथा खोलते हैं तो तीन श्रुतियोंवाला स्वर निकलता है। पश्चिम का "मध्यावकाश" वाला विचार, मैं भरत मुनि के[१] स्पष्ट कथन को देखते हुए स्वीकार नहीं कर सकता था। इस दिशा में मैंने बाद में जो गवेषण किये हैं, उनसे यह बात प्रमाणित हो गयी है कि मैंने जो कहा था, वह सत्य है।

दूसरा प्रश्न, जिसका समाधान मुझे करना है, इस कथन के सम्बन्ध में था कि सप्तक में केवल २२ श्रुतियां होती हैं। केवल २२ श्रुतियों के होने की बात कहने का क्या आशय है जब कि हम सप्तक में अगणित श्रुतियों की कल्पना कर सकते हैं? संगीत रत्नाकर में "श्रुति वीणा" सम्बन्धी श्लोकों का अच्छी तरह अध्ययन करने से यह कठिनाई दूर हो गयी। "बाईस श्रुतियां, एक दूसरी से अधिक ऊंचाई पर, बाईस तारों पर स्थापित की गयी हैं, शर्त यह है कि अनुक्रम में एक के बाद एक आगेवाली दो श्रुतियों के बीच में तीसरी श्रुति नहीं रह सकती।" (देखिए "संगीत रत्नाकर", अध्याय १, प्रकरण ३, श्लोक २—"स्यान्निरन्तरता श्रुत्योर्मध्ये ध्वन्यतराश्रुतेः।") शुरू में इस शर्त का कोई मतलब मेरी समझ में नहीं आ रहा था। मेरा तरीका ग्रन्थ के वाक्यों को बार-बार तब तक पढ़ते रहना रहा है, जब तक कि उनका वास्तविक अर्थ समझ में न आ जाय। कभी-कभी तो श्लोकों का यथार्थ आशय समझने में मुझे वर्षों लग गये हैं। जैसा कि बहुधा हुआ है, इस दृढ़ विश्वास के साथ लगातार परिश्रम करते

१. मैंने प्रारम्भ से ही अपनी स्थापनाओं का आधार उन वाक्यों को माना है जो प्राचीन महर्षि हमारे लिए छोड़ गये हैं। मैंने उन्हें आधुनिक विज्ञान के नतीजों से अधिक ऊंचा स्थान दिया है। आज का विज्ञान अभी दिन पर दिन "प्रगति" ही कर रहा है, अतः आज की स्थापना में कल और सुधार हो जाया करता है। मैंने उक्त शास्त्रीय वाक्यों को व्यवहार के बिलकुल अनुरूप पाया है। प्रत्येक संगीतज्ञ उन्हें देख सकता है और उनकी परीक्षा कर सकता है।

रहने से अन्य श्लोकों की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया कि हमारे महर्षियों ने जो कुछ कहा है, समस्त वैज्ञानिक साधनों से युक्त आज के सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक कहा है और वे अधिक गहराई तक जा सके हैं, अन्त में अन्य श्लोकों की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया। एकाएक यह बात मेरे ध्यान में आयी कि जब एक श्रुति में दो स्वर एक दूसरे के बहुत निकट होते हैं, तब वे 'डोल' (बीट) उत्पन्न करते हैं और बिना एक दूसरे में मिले पृथक्-पृथक् नहीं रह सकते। इसलिए स्वतंत्र अस्तित्व की शर्त यह है कि श्रुतियों के बीच में कम से कम दूरी हो। अब उक्त श्लोक का अर्थ स्पष्ट हो गया। इसका आशय यह हुआ कि अनुक्रम में आनेवाली ऐसी केवल बाईस श्रुतियां ही हो सकती हैं जिनके बीच में इतना अल्पतम अन्तर हो कि डोलों की उत्पत्ति न होने पाये।

दूसरी समस्या उस समय सामने आयी जब मैंने "ग्राम", फिर "मूर्च्छना" और तब "जाति" से सम्बद्ध धारणाओं पर विचार किया। इनके कारण मुझे अधिक कठिनाई नहीं हुई, क्योंकि उनका अर्थ आसानी से मेरी समझ में आ गया। फिर भी मुझे इन धारणाओं के सम्बन्ध में जनता में प्रचलित अनेक भ्रांतियों से जूझना पड़ा। इस पुस्तक में मैंने विस्तार से यह कार्य किया है। तंजौर के सरस्वती महल में कार्य करने का परम सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था, जहां पाण्डुलिपियों का दुर्लभ संग्रह विद्यमान है, अतः संगीत के सम्बन्ध में प्रत्येक छपी हुई पुस्तक और पाण्डुलिपियों में उपलब्ध प्रायः एक-एक सामग्री का मैं अवलोकन कर चुका हूँ।

मैं समझता हूँ कि सबसे महत्त्व की बात जिसकी खोज मैंने की है, सात प्रकार के स्थायी स्वर अलंकारों के सम्बन्ध में है। एक ही स्वर का उच्चारण सात मूर्च्छनाओं से किया जा सकता है और इन मूर्च्छनाओं का प्रत्येक राग से विशिष्ट सम्बन्ध है, यह जो बात कही जाती रही है, इसने संगीत रत्नाकर के रचनाकाल से अर्थात् सन् १२०० ईसवी से आज तक के विद्वानों और संगीत शास्त्रियों को हैरान कर रखा था। बाद के सभी ग्रन्थ-लेखकों ने इस सिद्धान्त की अवहेलना की, यद्यपि 'संगीत रत्नाकर' में इसे प्रत्येक राग का लक्षण माना है। अब मैं बतलाता हूं कि बुद्धि को चक्कर में डालने वाला यह विषय किस तरह मेरी समझ में आया। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में मैं निरंतर विचार करता रहता था कि एक दिन मैंने देखा कि षड्ज में "यदुकुल काम्भोजी" की जिस तरह समाप्ति होती है, उसमें एक विशेष प्रकार की कोमलता (फ्लैटनेस) रहती है जो 'काम्भोजी' में विद्यमान नहीं रहती। तब मेरे मन में यह बात आयी कि षड्ज में समाप्ति के ये दोनों प्रकार ही स्थायी स्वर अलंकारों के सात प्रकारों में से दो प्रकार होने चाहिए। अब मैं अपने परिश्रम का फल सुविज्ञ विद्वानों तथा संगीतज्ञों के

सामने रख दे रहा हूँ जिससे इसमें जो कुछ उपयोगी हो, उसे वे ग्रहण कर लें और जो काम का न हो उसे छोड़ दें।

मैं उत्तर प्रदेश सरकार के सूचना विभाग की हिन्दी समिति के सचिव को हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूं क्योंकि उन्होंने संगीत के अध्ययन में अपना यह तुच्छ अंशदान सर्वसाधारण के समक्ष रखने का अवसर मुझे प्रदान किया।

सरस्वती महल, तंजौर]

के० वासुदेव शास्त्री

विषय-सूची

संगीत शास्त्र

पहला परिच्छेद

शास्त्रावतरण

संगीत का शब्दार्थ

'सम्' (सम्यक्) और 'गीत' दोनों शब्दों के मिलन से संगीत शब्द बनता है। मौखिक गाना ही 'गीत' है। 'सम्' (सम्यक्) का अर्थ है 'अच्छा'। वाद्य और नृत्य दोनों के मिलने से ही गीत अच्छा बन जाता है—

'गीतं वाद्यं च नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते।'

हम आज साधारणतया केवल 'गीत' या 'गीत' और 'वाद्य' को ही संगीत कहते हैं। इसलिए प्रधानतः गीत और वाद्य पर ही इस पुस्तक में 'संगीत-शास्त्र' शीर्षक के अन्तर्गत विचार किया जा रहा है।

संगीत की प्रशंसा

संगीत आनन्द का आविर्भाव है। आनन्द ईश्वर का स्वरूप है। संगीत के द्वारा ही दुःख के लेश तक से भी सम्बन्ध न रखनेवाला सुख मिलता है। दूसरे विषयों से होनेवाले सुखों के आगे या पीछे दुःख की सम्भावना है परन्तु इस दुःखपूर्ण संसार में संगीत एक स्वर्गवास है। संगीत के ईश्वर स्वरूप होने के कारण जो लोग संगीत का अभ्यास करते हैं वे तप, दान, यज्ञ, कर्म, योग आदि के कष्ट न झेलते हुए मोक्षमार्ग तक पहुँचते हैं। योग और ज्ञान के सर्वश्रेष्ठ आचार्य श्री याज्ञवल्क्य कहते हैं—

"वीणावादनतत्त्वज्ञः श्रुतिजातिविशारदः।
तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्गं प्रयच्छति।।"

—याज्ञवल्क्यस्मृति।

संगीत योग की विशेषता यह है कि इसमें साध्य और साधन दोनों ही सुखरूप हैं।

भक्तिमार्ग में संगीत के साथ भगवद्भजन करने से मन शीघ्र ही ईश्वर के नाम-रूप में लीन हो जाता है। इसके दो कारण हैं। संगीत के बिना नामोच्चारण मात्र करते समय मुँह सिर्फ नाम का रटन करता रहता है, मन तो दसों दिशाओं में फिरता रहता है। पर संगीत के साथ नामजप या गुणगान करते समय संगीत की मनोहर शक्ति एक दृढ़ रज्जु बनकर भगवान के नाम-रूप को मन के साथ बाँध देती है। दूसरा कारण यह है कि ईश्वर संगीत से जितना प्रसन्न होता है उतना दूसरे उपचारों से नहीं—

"गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञः पार्वतीपतिः।
गोपीपतिरनन्तोऽपि वंशध्वनिवशंगतः।।
सामगीतिरतो ब्रह्मा वीणासक्ता सरस्वती।
किमन्ये यक्षगन्धर्वदेवदानवमानवाः।।"

संगीत समस्त जीवसमूह को आनन्द का वरदान देकर अपनी ओर खींच लेता है।

'पशुर्वेत्ति शिशुर्वेत्ति वेत्ति गानरसं फणी'

यह एक सुप्रसिद्ध वाक्य है।

देवर्षि नारद ने जीवन्मुक्त होने पर भी वीणावादन को नहीं छोड़ा। इससे प्रतीत होता है कि संगीतानन्द जीवन्मुक्ति के आनन्द से कम नहीं है।

संगीतरूपी एकमात्र साधन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थ मिलते हैं। भगवद्भजन से धर्म, राजाओं और प्रभुओं से मिले हुए सम्मान के रूप में अर्थ, अर्थ से काम और ईश्वरप्रसाद के फलस्वरूप मोक्ष की भी प्राप्ति होती है।

संगीत शास्त्र का अवतरण

भारतवर्ष की कलाओं और शास्त्रों की उत्पत्ति की खोज करते समय वेद, आगम (तन्त्र) और महर्षियों के वाक्य ही हरएक कला या शास्त्र का मूल ठहरते हैं। ये मूलभूत उपदेश आज भी विद्यमान हैं। एक और विशेषता यह है कि यह शास्त्र जितना पुराना है उतना ही अगाध और सम्बद्ध विषय पर विस्तृत रूप से विचार करता हुआ दृष्टिगोचर होता है।

हमारे देश में नये ग्रन्थ लिखते समय प्राचीन ग्रन्थों का अनुसरण करने में ही ग्रन्थ का गौरव समझा जाता है, परन्तु पाश्चात्य देशों में प्राचीन ग्रन्थों का खण्डन करके लिखने में ही लेखक अपने ग्रन्थों का गौरव समझते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे मूलभूत ग्रन्थ योगधारणा की शक्ति के द्वारा साक्षात् **दृष्ट विषयों** से ओतप्रोत हैं। इसी मार्ग से सब वस्तुओं का सच्चा स्वरूप प्राप्त हुआ है। **यह**

योगियों के प्रत्यक्ष और स्वानुभव ज्ञान से प्राप्त है, अनुमान से नहीं। पाश्चात्य देशों में इन्द्रियों से उपलब्ध ज्ञान ही एक मात्र साधन है। जिन विषयों में पाश्चात्य विद्वान् इन्द्रियों से सत्य स्वरूप नहीं जान पाते, उनमें इन्द्रियों से प्राप्त तत्सम्बद्ध ज्ञान से अनुमान करते हैं। नयी-नयी खोजों के अनुसार यह अनुमान प्रतिदिन बदलता रहता है। उनके ग्रन्थों में वस्तुओं का स्वरूप कल एक प्रकार का हुआ तो, आज और कुछ भिन्न प्रकार का होता है। वस्तुत: वस्तुस्वरूप कभी बदलनेवाला नहीं होता, परन्तु पाश्चात्य लोग वस्तुओं के लगातार बदलनेवाले सिद्धान्त को 'साइण्टिफ़िक प्रोग्रेस' नाम देकर तृप्त होते हैं। असली बात यह है कि हरएक कला और विज्ञान की शाखा में हमारे प्राचीन ग्रन्थों में पाये जानेवाले बहुत से तत्त्वों[1] पर पाश्चात्य वैज्ञानिकों और कलाकारों का ध्यान अब तक नहीं गया है।

हमारे संगीत शास्त्र के अवतरण में विविध परम्पराएँ हैं। उनमें तीन परम्पराएँ मुख्य प्रतीत होती हैं—(१) वेद-परम्परा (२) आगमों और पुराणों की परम्परा (३) ऋषि प्रोक्त संहिता परम्परा। वेद-परम्परा में हमारे संगीत की उत्पत्ति सामवेद से बतायी गयी है।

'सामवेदादिदं गीतं सञ्जग्राह पितामहः।'

गीत और वाद्य में क्रमशः नारद और स्वाति ब्रह्मा के प्रथम शिष्य हुए। कहा जाता है कि नाटक में उपयोग करने के लिए गीत और वाद्य को इन दोनों से भरत मुनि ने सीखा। भरतमुनि ने ही स्वयं यह अपने 'नाट्यशास्त्र'[2] में कहा है।

१. उदाहरण के तौर पर यहाँ एक विषय का उल्लेख किया जाता है। हमारे शस्त्रचिकित्सा ग्रन्थ 'सुश्रुत संहिता' में हमारे शरीर के १०७ मर्मस्थानों का विवरण है जिनमें शस्त्र का आघात होने से वे अंग प्रयोजन के योग्य नहीं रह जाते अथवा कुछ ही दिनों में या बहुत दिनों के बाद मृत्यु की सम्भावना होती है। पाश्चात्य चिकित्साशास्त्री इस तथ्य को नहीं जानते। फलतः पाश्चात्य चिकित्सा में सुसिद्ध 'आपरेशन' करने के कुछ दिनों के बाद, कारण जाने बिना लगभग ५ प्रतिशत लोगों का मरण होता है।

२. 'गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च।
विस्तार गुणसम्पन्नम् उक्तं लक्षणकर्मतः॥
अनुवृत्त्या तथा स्वातेरातोद्यानां समासतः।
पौष्कराणां प्रवक्ष्यमि निर्वृत्ति संभवं तथा॥'

—अध्याय ३३, श्लोक ३—४।

महर्षि नारद का आदि ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' है। यही सामवेद की शिक्षा है। उसमें श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, सप्त मुख्य राग—इनका विवरण है। इसके अलावा सामवेद के सप्तस्वर, लौकिक संगीत के सप्तस्वर और दूसरे वेदों के स्वर आदि में परस्पर सम्बन्ध भी बताया गया है।

सामवेद के सप्तस्वरों का नाम क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, अतिस्वार है। यह अवरोहण क्रम है। लौकिक सप्तस्वरों में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान हैं। ऊपरी दृष्टि से देखें तो यह अनुभवविरुद्ध जान पड़ता है। यह चर्चा की ही बात है। इसका पूरा विवरण आगे स्पष्ट किया जायगा।

'स्वातिनारदसंवाद' नामक एक ग्रन्थ है। प्रयत्न करने पर यह ग्रन्थ मिल सकता है।

संगीत शास्त्र के उपलब्ध आदि ग्रन्थ भरत नाट्यशास्त्र में संगीत विभाग (अध्याय २८ से ३६ तक) है। इस ग्रन्थ में गीत और वाद्यों का पूरा विवरण है, परन्तु रागों के नाम और उनके विवरण नहीं बताये गये हैं। भरत के शिष्यों में दत्तिल, कोहल, विशाखिल—इन तीनों के द्वारा ग्रन्थ लिखे गये। उनमें दत्तिल कृत 'दत्तिलम्' नामक ग्रन्थ छपा हुआ है। कोहल कृत 'कोहलीयम्' लिखित रूप में मिल सकता है। 'विशाखिलम्' उपलभ्य नहीं है। इसी परम्परा में आये हुए मतंग मुनि ने 'बृहद्देशी' नामक ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ भी छपा हुआ है। 'दत्तिलम्' और 'बृहद्देशी' में रागों की उत्पत्ति, नाम और लक्षण के विवरण हैं।

आगम परम्परा में संगीत के आदिकर्ता महादेव हैं। शिव-पार्वती संवाद के रूप में ३६००० श्लोकों का एक ग्रन्थ गान्धर्व नाम से प्रचलित था। परन्तु वह ग्रन्थ अब प्राप्य नहीं है। तो भी उसकी विषय सूची यामलाष्टक नामक ग्रन्थ में दी गयी है।

इसी परम्परा के ग्रन्थों में नन्दिकेश्वर कृत 'नन्दिकेश्वर संहिता' भी एक है। यह ग्रन्थ अब नहीं मिलता। परन्तु संगीत रत्नाकर के टीकाकार सिंहभूपाल नें (ई० १५००) इसके कुछ श्लोक उद्धरण के रूप में दिये हैं। यदि खोज की जाय तो कदाचित् यह ग्रन्थ मिल सकता है।

ऋषि कृत संहिता परंपरा में 'काश्यपीयम्' ही मुख्य ग्रन्थ है। इसके कुछ श्लोकों के उद्धरण पिछले दिनों के ग्रन्थों में दिये गये हैं। पर यह काश्यपीय ग्रन्थ अप्राप्य ही है।

इनके अलावा आगम-पुराण-परंपरा के शैव और वैष्णव आगम ग्रन्थों में शिल्प, नाट्य आदि विषयों के साथ संगीत विषयक विचारों के महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं।

अन्य परम्पराओं में याष्टिक, दुर्गा, आञ्जनेय परम्पराएँ ही मुख्य हैं। याष्टिक, दुर्गा परम्पराओं का अनुसरण करके संगीत रत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने रागोत्पत्ति और रागविवरण दिये हैं। आञ्जनेय मत का अनुकरण चतुरदामोदर कृत 'संगीत दर्पण' (१६०० ई०) में है। संगीत परम्पराओं के प्रवर्तकों का नाम संगीत रत्नाकर में यों दिया गया है—

'सदाशिवः शिवा ब्रह्मा भरतः कश्यपो मुनिः।
मतङ्गो याष्टिको दुर्गा शक्तिः शार्दूलकोहलौ ॥
विशाखिलो दत्तिलश्च कम्बलोऽश्वतरस्तथा।
वायुविश्वावसू रम्भार्जुनो नारदतुम्बुरू ॥
आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वरः।
स्वातिर्गणो बिन्दुराजः क्षेत्रराजश्च राहलः ॥
रुद्रटो नान्यभूपालो भोजभूवल्लभस्तथा।
परमर्दी च सोमेशो जगदेकमहीपतिः ॥
व्याख्यातारो भारतीये लोल्लटोद्भटशंकुकाः।
भट्टाभिनवगुप्तश्च श्रीमत्कीर्तिधरः परः ॥
अन्ये च बहवः पूर्वे ये संगीतविशारदाः।'

इनके साथ द्रविड़ (तमिल) देश में एक अति प्राचीन पद्धति उत्पन्न हुई है। इस परम्परा के प्रवर्तक परमशिव, स्कन्द और अगस्त्य हैं। इस पद्धति में कई ग्रन्थ भी लिखे गये थे। पर अब सब ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। उन ग्रन्थों से कुछ उद्धरण पिछले दिनों के काव्यों और निघण्टुओं में उपलभ्य हैं। इस पद्धति में रागों का नाम 'पण' और 'तिरम्' है। इनके लक्ष्य अब भी 'देवार' नामक स्तोत्र में वर्तमान हैं।

सन् १२०० ई० में सब पद्धतियों का मन्थन करके शार्ङ्गदेव ने 'संगीत रत्नाकर' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा, इसकी छः टीकाएँ[1] संस्कृत में थीं। पर अब दो ही प्राप्य हैं। सन् १७०० ई० में लिखी हुई 'सेतु' नाम की एक व्रजभाषा टीका 'तंजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में है। टीकाकार का नाम है गंगाराम। भावभट्ट के द्वारा लिखी हुई आन्ध्रभाषा की टीका भी है। इससे इस ग्रन्थ का महत्त्व जाना जा सकता है। यही समूचे भारत के संगीत संप्रदाय में एकरूपता लानेवाला अन्तिम ग्रन्थ है।

१. कुम्भकर्ण, केशव, कल्लिनाथ, सिंहभूपाल, हंसभूपाल—और एक टीकाकार का नाम नहीं मालूम है।

इसके पश्चात् लिखे हुए सब ग्रन्थ हिन्दुस्थानी और कर्नाटक पद्धतियों की उत्पत्ति के बाद ही लिखे गये हैं। इस ग्रन्थ के लेखनकाल तक भारतवर्ष के संगीत में अन्तः-प्रान्तीय छाया भेदों के रहने पर भी सारे देश में एक ही प्रकार का संगीत विद्यमान था। इस ग्रन्थ की रचना के पश्चात् उत्तर और दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणों के कारण कलाजगत् और शास्त्रजगत् में एक शून्यता फैल गयी थी। यह अवस्था १०० वर्ष तक रही। इसके पश्चात् दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य और उत्तर में दिल्ली के बादशाहों की सहायता से कला और शास्त्रों का पुनरुद्धार किया गया। इस पुनरुद्धार के फल-स्वरूप ही कर्नाटक और हिन्दुस्थानी नामक दो पद्धतियों का उदय हुआ। बीच के 'अन्धकारयुग या शून्ययुग' के कारण सब शास्त्रों को, उत्तर और दक्षिण के विद्वान् लोग भूल गये। संप्रदायों में भी उथल-पुथल हुई। पुनरुद्धार के समय रहे-सहे संप्र-दाय के रक्षण के लिए एक व्यवस्था करनी पड़ी। उत्तर भारत में थाट, और दक्षिण में मेल का उदय हुआ। इसके पहले के ग्रन्थों में 'थाट' या 'मेल' शब्दों का प्रयोग कहीं नहीं हुआ है। केवल श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, जाति, राग, वर्ण और अलंकार—ये ही संगीत शास्त्र के अंग रहते थे।

रत्नाकर के बाद के ग्रन्थों में उत्तर भारत की पद्धति के आधारभूत ग्रन्थों में (१) रागार्णव (२) गन्धर्वराज कृत 'राग रत्नाकर' (३) पुण्डरीक विट्ठल कृत 'नर्तन निर्णय' (४) सोमेश कृत 'मानसोल्लास' (५) कुम्भकर्ण कृत 'संगीत राज' (६) भावभट्ट कृत 'हृदय प्रकाश' (७) जयदेव कृत 'षड्राग चन्द्रोदय' (८) 'रागमाला' (९) चतुरदामोदर कृत 'संगीत दर्पण'—आदि मुख्य हैं।

इनमें पहले के चार ग्रन्थ अमुद्रित हैं, जिनमें पहले के तीन ग्रन्थ तंजौर सरस्वती महल पुस्तकालय में हस्तलिखित ग्रन्थों के रूप में हैं। चौथा बड़ौदा में छापा जा रहा है। 'संगीतराज' की छपाई भी हो रही है। अन्तिम चार ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

कर्नाटक सम्प्रदाय के आधारभूत ग्रन्थ विद्यारण्य का 'संगीत सार', रामामात्य का 'स्वरमेलकलानिधि', रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित का 'संगीत सुधा', सोमनाथ का 'रागविबोध,' वेंकट मखी कृत 'चतुर्दण्डि प्रकाशिका', गोविन्द कृत 'संग्रह चूड़ामणि, शाहजी और उनके सभा पण्डितों के द्वारा लिखे हुए 'रागलक्षण' और 'चतु-र्दण्डिलक्ष्य' और तुलजाराज कृत 'संगीत सारामृत' आदि हैं।

इनमें 'संगीत सार' अब उपलभ्य नहीं है, परन्तु संगीत सुधा का 'रागलक्षण' इसके अनुकरण पर लिखा हुआ है। शाहजी के रागलक्षण और चतुर्दण्डिलक्ष्य के अति-रिक्त शेष सब ग्रन्थ मुद्रित हो चुके हैं। शाहजी और उनके विद्वानों के लक्षण, लक्ष्य ग्रन्थ तालपत्र के रूप में सरस्वती महल. पुस्तकालय में हैं।

इनके अनुकरण पर पीछे लिखे हुए बहुत से ग्रन्थ दोनों सम्प्रदायों में मिलते हैं। साधारणतया प्राचीन शास्त्रों के बहुत भाग समझ में न आने के कारण, दोनों ही सम्प्र-दायों में लक्ष्य के सहारे ही संगीत कला का रक्षण और पोषण किया गया है। शास्त्र की सहायता बहुत कम ही ली गयी है। ऐसी हालत में भी विद्वानों और गवैयों का कथन है कि शास्त्र के अनुसार ही वे गाते हैं। वे नहीं मानते कि रागच्छाया के आव-श्यक शास्त्र भाग बहुत दिन पूर्व ही भूले जा चुके हैं। प्राचीन शास्त्र का एकमात्र अवशेष 'वादी-संवादी-तत्त्व' हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में ही है। कर्नाटक पद्धति में वह भी नहीं है। हरएक राग में स्वरों का तीव्र या कोमलस्वरूप, उनके क्रम, वक्र, वर्ज्य-भाव को ही अब दोनों संप्रदायों के व्यक्ति शास्त्र समझ बैठे हैं। गुरुकुल सम्प्रदाय में अभ्यास के कारण रागों का स्वरूप, मार्ग और छाया उनके मन में भली-भाँति ठहर जाती है। परन्तु यह उनका भ्रम है कि स्वरावली की सहायता से ही राग स्वरूप सिद्ध हो रहा है। उनको यह बात भी नहीं ज्ञात है कि इसके अतिरिक्त एक सच्चा शास्त्र हमारे प्राचीन ग्रन्थों में उपलभ्य है।

दूसरा परिच्छेद

श्रुति, स्वर और ग्राम

नाद की उत्पत्ति

संगीत सुखजनक नादविशेष है। हमारे शास्त्र-सिद्धान्तों के अनुसार नाद आकाश का गुण है। तर्कशास्त्र में 'शब्दगुणकमाकाशम्' कहा गया है। परन्तु पाश्चात्य विज्ञान के अनुसार नाद आकाश का गुण नहीं है, किन्तु अन्य वस्तुओं के आघात से नाद का उद्भव होता है। हमारे सिद्धान्त में भी 'आकाश' अन्य वस्तुओं के साथ रहते समय 'आश्रिताश्रय' सम्बन्ध से विद्यमान है। अतः आकाश में नाद का उद्भव आघात के बिना स्वयं होता हो तो भी अन्य वस्तुओं में स्थित आकाश में नाद के उद्बोधन के लिये आघात की आवश्यकता है।

पञ्चभूत तत्त्व

हमारे शास्त्रों की परिभाषा पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा से भिन्न है। हमारे शास्त्रों में प्रपञ्च के स्वरूप की धारणा के आधार पर ही विवेचन किया गया है कि इन्द्रियों से हम जो-जो अनुभव कर रहे हैं, उनकी समष्टि ही प्रपञ्च है। हरएक इन्द्रिय से अनुभव किये जानेवाले प्रपञ्च भाग को 'भूत' नाम दिया गया है। कान से अनुभव किये जानेवाले भूत का नाम आकाश[1] है। जो भूत स्पर्शेन्द्रिय से अनुभव किया जाता है उसका नाम 'वायु' है। नयनेन्द्रिय से जो अनुभव किया जाता है उसका नाम 'तेजस्' है। जो जिह्वा से अनुभव किया जाता है वह 'अप' और जो नासिका से अनुभव किया जाता है वह 'पृथ्वी' है। यह भी हमारा सिद्धान्त है कि पृथ्वी में गन्ध के साथ बाकी चारों भूतों के गुण भी हैं। 'जल' में रुचि के साथ, पृथ्वी को छोड़कर

१. यह पूछना सरल है कि कैसे आकाश (प्रदेश) ज्ञान का अनुभव कान से किया जा सकता है। अगर किसी को कान के अलावा दूसरी इन्द्रियों की सहायता नहीं है; तो भी वह केवल श्रवण से विभिन्न शब्दों को सुनकर उनकी दिशा और उनकी दूरी समझ सकता है। दसों दिशाओं और दूरी के ज्ञान को जोड़कर प्रदेश का अनुभव उसे होता है।

बाकी तीनों के गुण भी हैं। इसी प्रकार तेजस् में पृथ्वी और जल को छोड़कर बाकी दोनों के गुण भी हैं। वायु में आकाश का गुण भी है। आकाश में 'शब्द' ही एक गुण है। इसीलिए हमारा सिद्धान्त है कि प्रपञ्च सृष्टि क्रम में आकाश से वायु, वायु से तेजस्, तेजस् से जल, जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई है। सृष्टि में ईश्वर ही आदि है। प्रपञ्च का कर्ता और कारणवस्तु दोनों वही है। उसके स्वरूप को समझने की शक्ति हमारे मस्तिष्क में नहीं है। वेद और महर्षियों के अनुभवों से ही ईश्वरस्वरूप को हम जान सकते हैं।

वेद और शास्त्रों में ईश्वर को 'सच्चिदानन्द' कहते हैं। 'सत्' नाश रहित; 'चित्' अखण्ड ज्ञान स्वरूप; 'आनन्द' आनन्द स्वरूप इसका अर्थ है। ईश्वर के, अपनी मायाशक्ति द्वारा अपने सच्चिदानन्द स्वरूप को अनेक प्रकारों में संकुचित करने से प्रपञ्च की सृष्टि हुई है। ईश्वर की प्रथम सृष्टि आकाश है। आकाश का गुण है नाद। इसी कारण से आकाश और उसके गुण नाद में अन्य विषयों से भी अधिक परिमाण में ईश्वर का स्वरूप विकसित है। अर्थात् आनन्द का आविर्भाव आकाश में तथा उससे सम्बद्ध श्रवणानुभव में अधिक है। इसलिए इन्द्रिय-जन्य विषय-सुखों में से कान से अनुभव किये जानेवाले संगीत में अन्य सुखों की अपेक्षा ज्यादा सुख है।

अनाहत नाद

नाद के दो भेद हैं। एक आहत और दूसरा अनाहत। हमारे शरीर में 'चेतन' का स्थान हृदय है। यहीं ईश्वर का आविर्भाव अधिक मात्रा में है।

हृदय में 'दहराकाश' नाम से एक छोटी-सी जगह शुद्ध आकाश से व्याप्त है। उसमें आघात के बिना नाद का आविर्भाव हमेशा हो रहा है। इसका नाम है अनाहत नाद। ऐसा होने पर भी हम उसे नहीं सुना करते, क्योंकि हमारा मन और इन्द्रिय-ग्राम बाह्य विषयों में आसक्त हैं। इन्द्रियों को बाह्य विषयों से खींचकर अन्तर्मुख होने के पश्चात् अगर हम सुनें, तो उस अनाहत नाद को सुन सकते हैं। शास्त्र में कहा गया है कि वह नाद इतना मधुर है कि उसे सुनने के बाद मन किसी दूसरे विषय में नहीं लगता। यह योगियों का ही साध्य है।

हृदय में आनन्द स्वरूपी ईश्वर का आविर्भाव अधिक होने के कारण उस आनन्द-स्वरूप की छाया अनाहत नाद में पड़ती है। इसीलिए अनाहत नाद आनन्दजनक है अर्थात् मधुर है। यही उसकी मधुरता का कारण है।

योगियों की तरह, जनसाधारण ही नहीं, जीवसाधारण को भी, इस आनन्द का अनुभव करने के लिए संगीत रूपी एक साधन ईश्वर की देन है।

आहत नाद

हृदयाकाश में होनेवाले नाद के अलावा बाकी सभी नाद 'आहत' हैं। संगीत का नाद भी 'आहत' ही है। अब हमें यह विचार करना चाहिए कि जनसाधारण को भी अनाहत नाद का अनुभव कराने के लिए संगीत कैसे एक साधन होता है? इसे समझने के लिए नाद-संबद्ध भौतिक शास्त्र का ज्ञान आवश्यक है। नाद विज्ञान में 'अनुनाद' नाम का एक तत्त्व है जो हमें जान लेना चाहिए। अनुनाद (Resonance) तत्त्व यह है कि जब एक सूक्ष्म शब्द उसी तरह के दूसरे शब्द से मिल जाता है, तब पहला शब्द बहुत अधिक स्थूल और गंभीर बन जाता है। यदि संगीत का नाद अनाहत नाद के समान है, तो अनाहत नाद अपनी सूक्ष्मता को छोड़कर और गंभीरता को प्राप्त करके हमारे द्वारा श्रवणीय बन जाता है। उसमें होनेवाले आत्मानन्द की छाया भी मधुरता के रूप में हमें प्राप्त होती है। हमारा संगीत, जितना अधिक अनाहत नाद का अनुकरण करता है, उतना अधिक आनन्द उससे मिलता है। महर्षि लोग जो हमारे संगीत शास्त्र के रचयिता हैं उन्होंने अनाहत नाद का प्रत्यक्ष अनुभव किया है। इसलिए अनाहत नाद के स्वरूप के अनुसार संगीत शास्त्र उन्होंने लिखा है।

शरीर में श्रुति, स्वरों की उत्पत्ति

हमारे योग शास्त्र और आयुर्वेद शास्त्र में 'नाड़ी' का विवरण बहुत विस्तार से लिखा हुआ है। इनके अनुसार अगर हम एक भाव को व्यक्त रूप में प्रकाशित करना चाहते हैं, तो आत्मा मन को प्रेरित करता है। मन शरीर में रहनेवाली अग्नि को जगाता है। नाभि के नीचे 'ब्रह्मग्रन्थि' नामक एक स्थान है। उसमें रहनेवाली वायु को अग्नि उठा देती है। हृदय की ऊर्ध्व नाड़ी में संलग्न तिरछी २२ नाड़ियाँ हैं। उन पर वायु का आघात होने से २२ ध्वनियाँ उच्च-उच्चतर रूप में उत्पन्न होती हैं। इसी तरह कण्ठ में इनके दुगुने प्रमाण की दूसरी २२ ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं, और इनके भी दुगुने प्रमाण की २२ ध्वनियाँ सिर में उत्पन्न होती हैं। इन ध्वनियों का नाम श्रुति है। इन तीनों ध्वनि-समूहों का नाम क्रमशः मन्द्र, मध्य और तारस्थायी (स्थान) है। इन तीनों को सूक्ष्म, पुष्ट और अपुष्ट नाम दिया गया है। कारण स्पष्ट है। इसलिए हमें यह मालूम होता है कि हमारे शरीर में ६६ श्रुतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

पर पाश्चात्य विज्ञान पद्धति में कहा जाता है कि कण्ठ में रहनेवाले द्वार के छोटा या बड़ा बनने से और कण्ठ में रहनेवाली ध्वनि को छोटी रस्सी को लम्बी या छोटी करने से ही ध्वनिसमूहों की उत्पत्ति होती है। इन श्रुतियों से सप्त स्वरों की उत्पत्ति

होती है। उसकी रीति यही है—पहली चार श्रुतियों से षड्ज स्वर उत्पन्न होता है। उसका तात्पर्य यह है कि षड्ज स्वर को उच्चारण करते समय ही चारों श्रुतियों का उच्चारण भी हो जाता है। इसी तरह पाँचवीं, छठी और सातवीं—इन तीनों श्रुतियों से ऋषभ स्वर उत्पन्न होता है। आठवीं और नौवीं—इन दोनों श्रुतियों से गांधार तथा इसके बाद की चारों श्रुतियों से मध्यम की उत्पत्ति होती है। इसके बाद की चारों श्रुतियों, अर्थात् चौदहवीं, पंद्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं श्रुतियों से पञ्चम, अठारहवीं, उन्नीसवीं और बीसवीं श्रुतियों से धैवत तथा इक्कीसवीं और बाईसवीं श्रुतियों से निषाद की उत्पत्ति होती है। इस तरह बने हुए स्वरों का नामकरण 'प्रकृति स्वर' किया गया है।

स्वरस्थान और स्वरगत श्रुतियाँ

यद्यपि स्वर दो, तीन या चार श्रुतियों से उत्पन्न होता है तथापि वह उनमें से एक नियत या विशेष श्रुति पर ही कुछ अधिक देर ठहरता है। जहाँ स्वर अधिक देर ठहरता है, उसे नियतश्रुति या स्वरस्थान कहते हैं। इस तरह षड्ज का स्वरस्थान चौथी, ऋषभ का सातवीं, गान्धार का नवीं, मध्यम का तेरहवीं, पञ्चम का सत्रहवीं, धैवत का बीसवीं और निषाद का स्थान बाईसवीं श्रुति है। स्वरस्थान वीणा में स्पष्टतया निर्दशित कर सकते हैं और स्वरगत श्रुतियों को बाँसुरी में ही स्पष्ट रूप से जान सकते हैं। बाँसुरी में प्रत्येक स्वर के लिए नियत रहनेवाले द्वारों को पूरा खोल देने से चतुःश्रुति स्वर की उत्पत्ति होती है। द्वार को आधा बन्द करके दूसरे आधे भाग को खुला रखने से द्विश्रुतिस्वर की उत्पत्ति होती है। और उस द्वार में उँगली को पुनः-पुनः बन्द और खुला रखने से त्रिश्रुतिस्वर की उत्पत्ति होती है।[1]

अवधान

श्रुति और स्वर हमेशा रसभाव से सम्बन्धित रहते हैं और रसभाव की उत्पत्ति के भी कारणीभूत हैं। रस और भाव मन की वृत्तियाँ हैं। मन के अवधान के बिना

१. 'स्वराणां च श्रुतिकृतं तच्च मे सन्निबोधत।
व्यक्तमुक्ताङ्गुलिस्तत्र स्वरो ज्ञेयश्चतुःश्रुतिः॥
कम्पमानाङ्गुलिश्चैव त्रिश्रुतिश्च स्वरो भवेत्।
द्विकोऽर्धाङ्गुलियुक्तस्तु एवं श्रुत्याश्रिताः पुनः॥'
—नाट्यशास्त्र, ३०।५—६।

रस और भाव का निश्चय नहीं होता। इसलिए मन के अवधान से ही श्रुतिस्वरों के स्वरूप का निश्चय होता है। एक आधार स्वर में मन सावधान नहीं रहता, तो श्रुति स्वरों की उत्पत्ति और स्वरूप निश्चित नहीं हो सकते। यह समझा जाता है कि षड्ज या मध्यम दोनों ही आधार स्वर होने लायक हैं अर्थात् षड्ज को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को तथा मध्यम को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को भी उत्पन्न किया जा सकता है। षड्ज के आधार पर जिन स्वरों की उत्पत्ति होती है उनके समूह का नाम 'षड्जग्राम' है। मध्यम के आधार पर जिस स्वर समूह की उत्पत्ति होती है, वह स्वरसमूह 'मध्यमग्राम' कहलाता है। इन दोनों ग्रामों में पञ्चम और धैवत स्वरों को छोड़कर बाकी स्वर समान हैं। षड्जग्राम में पञ्चम स्वर १४, १५, १६, १७ श्रुतियों से उत्पन्न होता है। मध्यमग्राम में तो १४, १५, १६ इन्हीं तीनों श्रुतियों से पञ्चम उत्पन्न होता है। धैवत स्वर षड्जग्राम में १८, १९, २० इन तीनों श्रुतियों से उत्पन्न होता है और मध्यमग्राम में १७, १८, १९, २० इन चारों श्रुतियों से उत्पन्न होता है। आज से ७०० वर्ष पहले दोनों प्रकार के ग्रामस्वर भी आरम्भिक शिक्षा में सिखाये जाते थे। वह पद्धति मध्यकालीन शून्ययुग में विच्छिन्न हो गयी। इसके बाद पुनरुज्जीवन के समय से षड्जग्राम स्वरों को ही आरंभिक शिक्षा में सिखाया जाना आरम्भ हुआ, परन्तु षड्जग्राम, मध्यमग्राम और उभयग्राम स्वरों से बनाये हुए राग सम्प्रदाय में अब भी विद्यमान हैं। इन रागों का पता लगाने के लिए एक सुलभ मार्ग है। षड्ज को 'सुर' बनाकर गाने से कुछ राग पूर्ण रञ्जक होते हैं, तो और कुछ राग मध्यम का 'सुर' बनाकर गाने से रञ्जक होते हैं। शास्त्रों में कहा गया है कि 'गान्धार' नामक भी एक ग्राम है, पर वह देव और गन्धर्वों के ही गाने योग्य है।

श्रुति और स्वरों के बारे में होनेवाली कुछ शंकाएँ

'श्रुति' शब्द अब 'आधार श्रुति' के अर्थ में प्रयुक्त किया जा रहा है। हम कहते हैं कि इस विद्वान् का संगीत 'श्रुतिशुद्ध' है। इसका श्रुतिज्ञान अच्छा है आदि। पर शास्त्र में 'श्रुति' का शब्दार्थ ऐसा दिया गया है कि—

"प्रथमः श्रवणात् शब्दः श्रूयते ह्रस्वमात्रकः।
सा श्रुतिः संपरिज्ञेया स्वरावयव लक्षणा ॥"

इसका तात्पर्य यह है कि श्रुति ह्रस्वमात्रावाली है। श्रुति स्वर का अवयव या अंग है। अर्थात् हरएक स्वर दो-चार श्रुतियों से बना हुआ है। इस श्लोक का यह भाग 'प्रथमः श्रवणात् शब्दः' कुछ दुरूह-सा है। इसका अर्थ यह है कि एक शब्द को सुनते

समय हमें जो पहला छोटा भाग सुनाई पड़ता है, वही 'श्रुति' कहलाता है। क्योंकि लगातार सुनाई पड़ने के कारण वह 'श्रुति' रूप छोड़कर स्वररूप लेता है।

हमारे शास्त्र में कहा गया है कि एक स्थायी (सप्तक) में २२ श्रुतियाँ ही उत्पन्न हो सकती हैं। पर हरएक स्थायी के अन्दर भिन्न-भिन्न रूप में होनेवाली ह्रस्वमात्र शब्दों की संख्या अनन्त है। फिर शास्त्र वाक्य का मतलब क्या है? इन २२ श्रुतियों के बारे में संगीत-रत्नाकर में कुछ विवरण मिलता है। उस ग्रन्थ में २२ श्रुतियों को वीणा में २२ तारों में स्थापित करने का उपाय कहा गया है। उनकी स्थापना का क्रम यों दिया गया है—

> ....आदिमा।
> कार्या मन्द्रतमध्वाना द्वितीयोच्चध्वनिर्मनाक्॥
> स्यान्निरन्तरता श्रुत्योर्मध्ये ध्वन्यन्तराश्रुतेः।'
>
> —संगीत रत्नाकर, १।३।१२।

इसका तात्पर्य है कि पहले तार में यथासंभव नीची श्रुति का स्थापन करना। पहली श्रुति से तनिक उच्च श्रुति को दूसरे तार में स्थापन करना चाहिए। इन दोनों श्रुतियों के बीच में अगर और एक तार बजाया जाय, तो वह ध्वनि कान में नहीं पड़नी चाहिए। इस बात पर हमें जरा विचार करना आवश्यक है कि दो श्रुतियों के बीच में तीसरी ध्वनि का श्रवण नहीं होना चाहिए। यहाँ 'ध्वनि विज्ञान' हमें सहारा दे सकता है। दो तारों में होनेवाली ध्वनियों में अगर थोड़ी भिन्नता रहती है, तो दोनों को बजाते समय दोनों शब्द अलग-अलग नहीं सुनाई पड़ते हैं। पर दोनों मिलकर ऊँचे और नीचे बदलनेवाला एक शब्द सुनाई पड़ता है। इसे पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा में 'बीट्स' (Beats) कहते हैं। दोनों तारों की ध्वनियाँ जितना निकट होती हैं उतना विलंब 'बीट्स' होते हैं। दोनों ध्वनियाँ एक रूप हो जायँ तो 'बीट्स' नहीं होते। इसी तरह दोनों ध्वनियों की दूरी को अधिक करते जायँ, तो 'बीट्स' वेग से होने लगते हैं। पर ऐसा होते-होते एक नियत दूरी पर बीट्स रुक जाते हैं। इससे यह बात निश्चित होती है कि दो श्रुतियों के बीच का अन्तर नियमित दूरी को पार न करे, तभी 'बीट्स' सुनाई पड़ता है। जिस दूरी में 'बीट्स' रुक जाता है उसी को हमारे शास्त्रों में दो श्रुतियों का अन्तर माना गया है। एक स्थायी में २२ ऐसी ही श्रुतियों को ही उत्पन्न किया जा सकता है। यही बाईस श्रुतियों का तत्त्व है।

श्रुतियों में स्वरस्थानों का निदर्शन

दो समान नाद देनेवाली दो वीणाओं पर हरएक में २२ तारों की स्थापना करनी

चाहिए। फिर इनमें, अब बतायी हुई रीति से, दोनों वीणाओं में समान रूप की २२ श्रुतियों को स्थापित करना चाहिए। इनमें एक वीणा में श्रुतियाँ स्थिर रहती हैं। उसे 'ध्रुव वीणा' नाम दे सकते हैं। और दूसरी वीणा में श्रुतियों को बदला जाता है, उसका नामकरण 'चलवीणा' किया जा सकता है।

चलवीणा में दूसरे तार की श्रुति को ध्रुववीणा के पहले तार की श्रुति के समान (उतारकर अर्थात् शिथिल करके) करना है। इस तरह क्रम से चलवीणा के हर तार की श्रुति को ध्रुववीणा के आगे के तार की श्रुति के समान करने के लिए उतारना है। अब ध्रुववीणा के स्वरों से चलवीणा के स्वर एक श्रुति नीचे होते हैं। इसी तरह पहले उतारी हुई चलवीणा की हरएक श्रुति को उसके आगे की श्रुति के समान नीचा करना है। अब ध्रुववीणा के स्वरों से चलवीणा के स्वर २ श्रुति नीचे होते हैं। हमारे शास्त्र का कथन है कि गान्धार का स्वरस्थान ऋषभ के स्वरस्थान से दो श्रुति ऊँचा है।

इसलिए चलवीणा का गान्धार ध्रुववीणा के ऋषभ के समान रहना चाहिए। अब इन दोनों वीणाओं के गान्धार और ऋषभ तार बजाये जायँ, तो इस बात का निदर्शन होता है। इसी प्रकार चलवीणा का निषाद ध्रुववीणा के धैवत के समान रहता है।

इसी तरह तीसरी बार चलवीणा की श्रुतियों को और एक श्रुति नीचा करना चाहिए। तब चलवीणा के स्वर ध्रुववीणा के स्वरों से तीन श्रुति नीचे होते हैं। इसी कारण चलवीणा के ऋषभ और धैवत, ध्रुववीणा के षड्ज और पञ्चम के समान रहते हैं। इससे इस बात का निदर्शन होता है कि ऋषभ और धैवत, षड्ज और पञ्चम से तीन श्रुतियों से ऊँचे हैं।

अगर इसी तरह चलवीणा के स्वरों को और एक श्रुति नीचा किया जाय, तो चलवीणा के पञ्चम और षड्ज, ध्रुववीणा के मध्यम और निषाद के समान रहते हैं। और चलवीणा का मध्यम ध्रुववीणा के गान्धार के समान होता है। क्योंकि षड्ज, मध्यम्, पञ्चम—इन तीनों स्वरों में चार श्रुतियाँ हैं। इनके स्वरस्थान क्रमशः नि, ग, म स्वरों से चार श्रुति ऊँचे हैं।

स्वरों में रञ्जन का रहस्य

स्वर का निजी अर्थ ग्रन्थों में ऐसा दिया गया है—

'श्रुत्यनन्तरभावी यः शब्दोऽनुरणनात्मकः।
स्वतो रञ्जयते श्रोतुश्चित्तं स स्वर ईर्यते ॥'

इस श्लोक में स्वर का लक्षण ऐसा कहा है—(१) श्रुतियों को लगातार उत्पन्न कराने से स्वर की उत्पत्ति होती है।

(२) शब्द का अनुरणन रूप ही 'स्वर' कहलाता है। अर्थात् हरएक शब्द में, आहति के बाद होनेवाला शब्द, लहरों के क्रम से उत्पन्न होकर फिर क्रम से लीन हो जाता है। इसका नाम 'अनुरणन' है। अनुरणन ही स्वर का मुख्य स्वरूप है। क्योंकि अनुरणन में स्वरगत श्रुतियों का प्रकाशन होता है।

(३) हरएक स्वर, दूसरे स्वर की सहायता के बिना स्वयं रञ्जक है।[1]

एक स्वर में अगर रञ्जन देखना है, तो क्रमशः प्रसाद और दीप्ति के साथ स्वरों का उच्चारण करना आवश्यक है। रेल के इञ्जिन की सीटी की तरह प्रसाद और दीप्ति के बिना उच्चारण करें, तो उसमें रञ्जन नहीं रहता, अतः वह स्वर कहलाने योग्य भी नहीं होता।

हरएक श्रुति और हरएक स्वर का निश्चित रसभाव है। भाव के अनुसार २२ श्रुतियों को ५ जातियों में बाँटा गया है। जातियों को दीप्ता, आयता, करुणा, मृदु और मध्या नाम दिये गये हैं। इसके अलावा प्रत्येक जाति की श्रुतियों को उनके विशिष्ट भाव के कारण अलग-अलग नाम दिया गया है। २२ श्रुतियों का नाम ऐसा है—

श्रुति	श्रुति का नाम	जाति	
१	तीव्रा	दीप्ता	
२	कुमुद्वती	आयता	
३	मन्दा	मृदु	
४	छन्दोवती	मध्या	स
५	दयावती	करुणा	
६	रञ्जनी	मध्या	
७	रतिका	मृदुः	रि
८	रौद्री	दीप्ता	

१. श्रुति और स्वर का भेद प्राचीन ग्रन्थों में सुस्पष्ट बताया गया है। पर पिछले ग्रन्थों में श्रुति और स्वरों के भेद का विवेचन उतना स्पष्ट नहीं है। नाट्यशास्त्र में बताया गया है कि दो, तीन या चार श्रुतियों से स्वर बनाये हुए हैं। एक ही श्रुति से स्वर बनाया हुआ हो, तो स्वर की 'स्वतो रञ्जकत्व' शक्ति नहीं होती। स्वर का अनुरणनत्व भी सिद्ध नहीं होता। शास्त्र वचन के अनुसार श्रुति स्वरावयव न होकर स्वर ही बन जाती है। यह शास्त्र के विरुद्ध है।

९	क्रोधा	आयता	ग
१०	वज्रिका	दीप्ता	
११	प्रसारिणी	आयता	
१२	प्रीतिः	मृदुः	
१३	मार्जनी	मध्या	म
१४	क्षिति	मृदु	
१५	रक्ता	मध्या	
१६	संदीपनी	आयता	
१७	आलापिनी	करुणा	प
१८	मदन्ती	करुणा	
१९	रोहिणी	आयता	
२०	रम्या	मध्या	ध
२१	उग्रा	दीप्ता	
२२	क्षोभिणी	मध्या	नि

स्वरप्रयोग में, आवश्यक विशिष्ट भाव के अनुसार स्वरगत श्रुतियों में उस भाव से सम्बन्ध रखनेवाली श्रुति जरा अधिक देर ठहरानी पड़ती है। स्वरों के भी अपने-अपने विशिष्ट रसभाव हैं। षड्ज और ऋषभ, वीर-अद्भुत और रौद्र रस प्रधान हैं। धैवत, वीभत्स और भयानक रस का अभिव्यञ्जक है। गान्धार और निषाद करुण रस प्रधान हैं। मध्यम और पञ्चम हास्य और शृंगार रस प्रधान हैं।

वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी

प्रायः समान रसभाव देनेवाले दो स्वर पास-पास एक ही स्वरसमूह में रहने पर परस्पर रक्तिवर्धक होते हैं। इसलिए वे परस्पर संवादी स्वर कहलाते हैं। एक का नाम वादी और दूसरे का नाम संवादी है। हमारे काम आनेवाले मुख्य रस देनेवाले स्वर वादी हैं। प्रायः उन्हींके समान रसभाव देनेवाले स्वर संवादी हैं। हरएक स्वरसमूह के आदि या अन्त में स्वर का संवादी रहने से ही वह स्वरसमूह पूर्ण रञ्जक होता है। जिन दो स्वरों के स्वरस्थान के बीच नौ या तेरह श्रुति अन्तर है, वे ही परस्पर संवादी हैं। संवादी के संवादी में रञ्जन शक्ति कुछ कम रहती है। उनके संवादियों में रक्ति और भी कम रहती है। इस प्रकार होनेवाले द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि संवादियों का नाम अनुवादी है। इसी तरह संवादी के संवादियों को ढूँढते समय दस अनुवादियों के बाद पहले की तरह स्वर फिर भी प्राप्त होते हैं।

अनुवादियों की दूरियाँ **क्रमशः** ऐसी ही रहती हैं—

(१)	४	या	१८
(२)	५	या	१७
(३)	८	या	१४
(४)	१	या	२१
(५)	१०	या	१२
(६)	३	या	१९
(७)	६	या	१६
(८)	७	या	१५
(९)	२	या	२०
(१०)	११		

इनमें पिछले के अनुवादियों में क्रम से रक्ति कम होती है। इनमें २ या २० में रक्ति न होने के अलावा रक्ति का भंग भी होता है। इसलिए २ या २० श्रुतियों के आगे रहनेवाले स्वर विवादी हैं।

संवादी प्रकृति स्वरों में

षड्ज	(४)	के संवादी	मध्यम (१३)	और पञ्चम	(१७) हैं।
ऋषभ	(७)	का संवादी	धैवत (२०)		
गान्धार	(९)	का संवादी	निषाद (२२)		
मध्यम	(१३)	,,	निषाद (२२)	और षड्ज	(४)
पञ्चम	(१७)	,,	षड्ज (४)		
धैवत	(२०)	,,	ऋषभ (७)		
निषाद	(२२)	,,	गान्धार (९)	और मध्यम	(१३)

मतङ्ग आदि महर्षियों के मत के अनुसार समश्रुति संख्या रखनेवाले स्वर ही संवादी हो सकते हैं। इस मत के अनुसार देखें तो 'मध्यम' और 'निषाद' संवादी नहीं हैं।

हमारे शास्त्रों के अनुसार रागों में वादी राजा है। संवादी मन्त्री है। अनुवादी परिजन है। विवादी शत्रु है।

प्रकृति स्वर और विकृत या साधारण स्वर

स्वाद के लिए षड् रस हैं। ये छः रस अलग-अलग स्वाद के कारण होते हैं, परन्तु रसना उनसे तृप्त नहीं होती। वह और कुछ मिश्र रसों को चाहती है। रंगों

के सात प्रकार हैं। पर हमारी आँखें केवल इन सात रंगों से तृप्त नहीं होतीं। इनके सम्मिश्रित रंगों का भी प्रकार भेद सुन्दरता की दृष्टि से आवश्यक जान पड़ता है।

इसी तरह, संगीत में भी सात प्रकृति स्वरों से भिन्न रुचिवाले लोगों की तृप्ति नहीं हुई। कुछ मिश्रित स्वरों की भी आवश्यकता हुई।

मिश्रित स्वरों का जन्म पहले विवादी दोष के परिहार के रूप में हुआ। स्वरावली में ऋषभ और गान्धार तथा धैवत और निषाद पास-पास आते हैं। पर ये ऋषभ गान्धार परस्पर विवादी हैं और धैवत निषाद भी परस्पर विवादी हैं। इसलिए ऋषभ गान्धार को साथ-साथ उच्चारण करने से रक्तिभंग होता है। इसी तरह धैवत निषाद को भी। इसे परिहृत करने के लिए गान्धार और मध्यम को मिश्रित करके एक नये स्वर की उत्पत्ति हुई। उसका नाम 'अन्तरस्वर' है। उसका स्वर-स्थान मध्यम की द्वितीय श्रुति अर्थात् ग्यारहवीं श्रुति है। स्वरगत श्रुतिया ८, ९, १०, ११ हैं। इसी तरह धैवत निषाद के विवादित्व के परिहार के लिए 'काकली' नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। स्वर के 'कलत्व' अर्थात् अव्यक्त मधुरता के कारण इसका 'काकली' नाम पड़ा। इसका स्वरस्थान षड्ज की द्वितीय श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२, १, २ हैं। इस तरह के मिश्रित स्वरों का नाम साधारण या विकृत स्वर है। कालान्तर और देशान्तर में कुछ और विकृत स्वरों की उत्पत्ति हुई है। इनमें काकली स्वर के स्वरस्थान को एक श्रुति नीचा करके 'कैशिकी' नाम का एक स्वर उत्पन्न हुआ है। इन काकली व कैशिकी स्वरों का अंतर केशमात्र यानी अतिस्वल्प है। इसलिए इसका नाम कैशिकी पड़ा। उसका स्वरस्थान षड्ज की प्रथम श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२,१ हैं। इसी तरह अन्तरगांधार के स्वरस्थान को भी एक श्रुति नीचा करके साधारण गांधार नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। इसका स्वरस्थान दसवीं श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ ८.९, १० है। षड्जस्वर का स्वरस्थान एक श्रुति नीचा करके च्युतषड्ज नाम का एक विकृत स्वर हुआ। इसी तरह च्युतमध्यम भी मध्यम स्वरस्थान की एक श्रुति नीची करके हुआ।

मध्यमग्रामीय पञ्चम और धैवत, तथा काकली और कैशिकी निषाद, अन्तर एवं साधारण गान्धार ये पहले उत्पन्न विकृतस्वर हैं। बाद में एक श्रुति को मिलाकर चतुःश्रुति ऋषभ का जन्म हुआ; और ऋषभस्वर से गान्धार की दो श्रुतियों को मिलाकर पञ्चश्रुति ऋषभ भी हुआ। और मध्यम की प्रथम श्रुति को भी मिलाकर षट्-श्रुति ऋषभ भी हुआ। इसी तरह धैवत में भी चतुःश्रुति धैवत, पञ्चश्रुति धैवत और षट्श्रुति धैवत भी उत्पन्न हुए। ये सब विकृतस्वर कर्नाटक और हिन्दुस्थानी संप्रदायों में अब भी इस्तेमाल किये जाते हैं। परन्तु इनके नाम में आज के कर्नाटक सम्प्रदाय

में थोड़ा अन्तर है, तो हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय के स्वरों के नामों में अधिक अन्तर है।

स्वरस्थान श्रुति	प्राचीन नाम	कर्नाटक सम्प्रदाय	हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय
१	कैशिकी या साधारण निषाद[1]	कैशिकी निषाद (षट्श्रुति धैवत)	कोमलतर निषाद
२	काकली निषाद	—	कोमल निषाद
३	च्युतषड्ज	काकली निषाद	शुद्ध निषाद
४	षड्ज (प्रकृति)	षड्ज	षड्ज
५	—	—	—
६	—	—	—
७	ऋषभ (प्रकृति)	शुद्ध ऋषभ	कोमल ऋषभ
८	—	चतुःश्रुति ऋषभ	शुद्ध ऋषभ
९	गान्धार (प्रकृति)	शुद्ध गान्धार (पञ्चश्रुति ऋषभ)	(तीव्र ऋषभ) अति कोमलतर गान्धार
१०	साधारण गान्धार	साधारण गान्धार (षट्श्रुति ऋषभ)	कोमलतर गान्धार
११	अन्तर गान्धार	—	कोमल गान्धार
१२	च्युत मध्यम	अन्तर गान्धार	शुद्ध गान्धार
१३	मध्यम (प्रकृति)	शुद्ध मध्यम	शुद्ध मध्यम
१४	—	—	—
१५	—	—	—
१६	मध्यम ग्राम पञ्चम	प्रतिमध्यम	तीव्रमध्यम
१७	पञ्चम (प्रकृति)	पञ्चम	पञ्चम
१८	—	—	—
१९	—	—	—
२०	धैवत (प्रकृति)	शुद्ध धैवत	कोमल धैवत
२१	—	चतुःश्रुति धैवत	शुद्ध धैवत
२२	निषाद (प्रकृति)[2]	शुद्ध निषाद (पञ्चश्रुति धैवत)	अति कोमलतर निषाद

१. कर्नाटक सम्प्रदाय में प्रथम श्रुति में स्थान रखनेवाले स्वर को ही कैशिकी निषाद कहते हैं। पर कुछ रागों में द्वितीय श्रुति पर स्थित स्वर भी प्रयुक्त किया जा रहा है। उसका अलग नाम नहीं है। उसे भी कैशिकी निषाद ही कहते हैं। इसी तरह गान्धार में भी १०, ११ दोनों श्रुतियों में स्थान रखनेवाले स्वरों को भी साधारण गान्धार ही कहते हैं।

२. इन स्वरों के अलावा 'रत्नाकर' में अच्युत षड्ज, अच्युत मध्यम, साधारण

स्वरस्थानों का निश्चय करने का मार्ग

स्वरों के उच्चारण को सुनने से स्वरस्थानों का निर्द्धारण करना सरल नहीं है, परन्तु निश्चय करने का एक सुलभ मार्ग यह है कि वादी एवं संवादी तत्त्व के सहारे स्वरस्थानों को निश्चित करना चाहिए। कर्नाटक पद्धति, हिन्दुस्थानी पद्धति, पाश्चात्य पद्धति इन तीनों पद्धतियों के प्रयोग में आनेवाले स्वरों का श्रुतिस्थान और दो स्वरों के बीच के अन्तर—इन्हें निश्चित करने के लिए वादी संवादी तत्त्व की बड़ी आवश्यकता है। इनके बारे में प्रचलित सिद्धान्त का भी संशोधन करना आवश्यक है।

षड्ज का स्थान तीनों सम्प्रदायों में चौथी श्रुति ही है। मध्यम का स्थान उससे ९ श्रुतियों के आगे है। इसलिए उसका स्थान १३ वीं श्रुति है। पञ्चम का स्थान षड्ज से १३ श्रुतियों के आगे है। इसलिए इसका स्थान १७ वीं श्रुति है। यह भी तीनों पद्धतियों में समान है।

पञ्चम से उसके संवादी ऋषभ का स्थान निश्चित कर सकते हैं। ऋषभ का स्थान पञ्चम से ९ श्रुतियों के नीचे है। अर्थात् इस ऋषभ का स्थान आठवीं श्रुति है। कर्नाटक पद्धति में ऋषभ के चार भेद हैं। प्राचीन काल के प्रकृति ऋषभ को शुद्ध ऋषभ कहते हैं। उसका स्थान शास्त्रों के अनुसार सातवीं श्रुति है। उससे उच्च ऋषभ को चतुःश्रुति ऋषभ कहते हैं। और उससे उच्च ऋषभ को पञ्चश्रुति ऋषभ कहते हैं। और भी ऊँचे ऋषभ को षट्श्रुति ऋषभ कहते हैं। पञ्चम का संवादी होने वाला ऋषभ, शंकराभरण राग में प्रयोग किये जानेवाला चतुःश्रुति ऋषभ भी है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ८ वीं श्रुति में स्थान रखनेवाले ऋषभ का नाम चतुःश्रुति ऋषभ है। इसका उदाहरण शंकराभरण में ऋषभ से शुरू होकर पञ्चम में समाप्त होनेवाली (री, गा, मपा) रक्तिदायक पकड़ है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इस स्वर का नाम शुद्ध ऋषभ है। हिन्दुस्थानी पद्धति के सारङ्ग राग में ऋषभ पञ्चम का संवादी है। उसका नाम उस पद्धति में शुद्ध ऋषभ है।

ऋषभ, साधारण पञ्चम नामक चार विकृत स्वर भी दिये गये हैं। अच्युत षड्ज षड्ज स्वर की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियों से बना हुआ है। उसका स्वरस्थान षड्ज की चतुर्थ श्रुति ही है। इस तरह अच्युत मध्यम भी मध्यम की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियों से बना हुआ है। साधारण ऋषभ ४, ५, ६, ७ श्रुतियों से बना हुआ है। स्वरस्थान सातवीं श्रुति है। साधारण पञ्चम मध्यमग्राम में १३, १४, १५, १६ श्रुतियों से बना हुआ है। स्वरस्थान १६वीं श्रुति है। ये नाम अब प्रचार में नहीं हैं।

पाश्चात्य पद्धति में सुप्रसिद्ध मेल का नाम है 'डायटॉनिक स्केल' (Diatonic Scale)। स्वरों के नाम C, D, E, F, G, a, b, c, हैं। उसमें शुद्ध रूप स्वरों को 'नेचुरल' कहते हैं। तीव्रस्वर को 'शार्प' (sharp) और कोमलस्वर को 'फ्लैट' (flat) कहते हैं। उनके चिह्न 'H' और 'b' हैं।

पाश्चात्य पद्धति में विकृत या शार्प और फ्लैट की उत्पत्ति ऐसी होती है कि 'डायटॉनिक स्केल' के हरएक स्वर को उसके 'पञ्चम भाव' (Dominant or Fight) के अनुसार चढ़ाने से[1] एक विकृत स्वर उत्पन्न होता है। इसी तरह दूसरी बार स्वरों को पञ्चम भाव करने से दूसरा विकृत स्वर उत्पन्न होता है। इस तरह सात 'शार्प' (sharp) स्वरों की उत्पत्ति होती है। इसी तरह मध्यम भाव[2] करने से सात 'फ्लैट' (flat) स्वरों की उत्पत्ति होती है। यही पाश्चात्य सम्प्रदाय

१. पञ्चम भाव से तीव्र स्वरों की उत्पत्ति

स्वर	—	C	D	E	F	G	a	b	
स्वरस्थान	—	4	8	12	13	17	21	25(3)	
पहली दफा	—	17	21	25	4	8	12	16	—F^H
दूसरी दफा	—	8	12	16	17	21	25	7	C^H
तीसरी दफा	—	21	25	7	8	12	16	20	G^H
चौथी दफा	—	12	16	20	21	25	7	11	D^H
पाँचवीं दफा	—	25	7	11	12	16	20	2	a^H
छठीं दफा	—	16	20	2	25	7	11	15	E^H
सातवीं दफा	—	7	11	15	16	20	2	6	b^H

२. मध्यमभाव के अनुसार चढ़ाने से कोमल स्वरों की उत्पत्ति

C	D	E	F	G	a	b	
4	8	12	13	17	21	25(3)	
13	17	21	22	4	8	12	b^b
22	4	8	9	13	17	21	E^b
9	13	17	18	22	4	8	a^b
18	22	4	5	9	13	17	D^b
5	9	13	14	18	22	4	G^b
14	18	22	23(1)	5	9	13	C^b
23	5	9	10	14	18	22	F^b

में विकृतस्वरों का उत्पत्ति विवरण है। इस पद्धति में ८ वीं श्रुति ऋषभ को 'डी' नेचुरल ('D' natural) कहते हैं।

इस ऋषभ का संवादी धैवत है। उसका स्थान २१ वीं श्रुति है। उसका नाम कर्नाटक संप्रदाय में चतुःश्रुति धैवत है। यह स्वर शंकराभरण राग में है। हिन्दुस्थानी पद्धति में उसका नाम शुद्ध धैवत है। राग सारङ्ग में शुद्ध ऋषभ और शुद्ध धैवत वादी संवादी हैं। पाश्चात्य सम्प्रदाय में इस धैवत को नेचुरल ए (Natural 'A') कहते हैं।

धैवत का संवादी गान्धार है। इस गान्धार का स्थान १२ वीं श्रुति है। अर्थात् मध्यम से एक श्रुति नीचे है। इन धैवत और गान्धार को वादी संवादी रखनेवाले राग हिन्दुस्थानी, कर्नाटक दोनों पद्धतियों में हैं। कर्नाटक पद्धति के राग 'मोहनम' को हिन्दुस्थानी पद्धति में 'भूप' कहते हैं। इन दोनों रागों में गान्धार और धैवत वादी संवादी हैं। इस गान्धार को अब कर्नाटक पद्धति में अन्तर गान्धार कहते हैं। प्राचीन सम्प्रदाय में इस स्वर का नाम च्युत मध्यम है। इससे एक श्रुति नीचे स्थान रखनेवाले स्वर को ही अन्तरगान्धार नाम दिया गया था। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसका नाम शुद्ध गान्धार कहते हैं। पर कई रागों में इस स्वर से एक श्रुति नीचे होनेवाला स्वर भी प्रयोग में है। उसे भी 'शुद्ध गान्धार' कहते हैं। पाश्चात्य सम्प्रदाय में भी यह सन्देह है कि 'E' नेचुरल का स्थान ११ वीं 'की' है या १२ वीं। सन्देह निवृत्ति का एक मार्ग यह है। शुद्ध धैवत से एक श्रुति नीचे दूसरा धैवत है। उसका नाम प्राचीन काल में 'प्रकृति धैवत' दिया गया है। हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में उसका नाम कोमल धैवत है। कर्नाटक सम्प्रदाय में उसे 'शुद्ध धैवत' कहते हैं। उसका स्थान बीसवीं श्रुति है। इसके संवादीस्वर का स्थान ११ वीं श्रुति होना चाहिए। इसलिए इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कोमल धैवत और गान्धार के जिन रागों में वादी-संवादी हैं, उनमें गान्धार का स्थान ११ वीं श्रुति है और २१ वीं श्रुति के अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध धैवत और गान्धार जहाँ वादी-संवादी हैं, वहाँ उन रागों में गान्धार का स्थान बारहवीं श्रुति है।

बारहवीं श्रुति के अन्तरगान्धार का संवादी, तीसरी श्रुति में स्थान रखनेवाला निषाद स्वर है। उसका नाम प्राचीन काल में च्युतषड्ज था। अब तो इसका नाम कर्नाटक पद्धति में काकली निषाद, हिन्दुस्थानी पद्धति में शुद्ध निषाद और पाश्चात्य पद्धति में नेचुरल 'बी' (Natural 'B') है। उसके स्वरस्थान के बारे में नेचुरल ई (Natural 'E') की तरह संदेह है कि उसका स्थान तीसरी या दूसरी श्रुति है।

तीसरी श्रुति के इस निषाद का संवादी, पञ्चम से एक श्रुति नीचे का स्वर है।

इसका नाम प्राचीन काल में च्युत पञ्चम, आधुनिक कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्र मध्यम है। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'एफ़' शार्प ('F' sharp) है।

उस मध्यम का संवादी प्राचीन काल का शुद्ध ऋषभ है। उसका स्थान सातवीं श्रुति है। उसे कर्नाटक पद्धति में शुद्ध ऋषभ और हिन्दुस्थानी पद्धति में कोमल ऋषभ कहते हैं। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'सी' शार्प ('C' sharp) है।

इस ऋषभस्वर का संवादी प्राचीन काल का शुद्ध धैवत है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में शुद्ध धैवत, हिन्दुस्थानी पद्धति में कोमल धैवत और पाश्चात्य पद्धति में 'जी' शार्प ('G' sharp) है। उसका संवादी प्राचीन कालीन अन्तरगान्धार है। इनका विवरण अन्तर गान्धार के स्वर स्थान की चर्चा में बताया गया है। ग्यारहवीं श्रुति में स्थान रखनेवाले गान्धार का संवादी प्राचीन काल का काकली निषाद है। अब कर्नाटक पद्धति में इसका अलग नाम नहीं है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसे भी शुद्ध निषाद कहते हैं। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'ए' शार्प ('A' sharp) है।

उसका संवादी १५ वीं श्रुति का होना चाहिए। इसका प्रयोग केवल पाश्चात्य संगीत में है। इसका नाम 'ई' शार्प ('E' sharp) है।

इसका संवादी ६ वीं श्रुति में है। इसका प्रयोग सिर्फ़ पाश्चात्य संगीत में ही है। इसका नाम 'ब्ही' शार्प ('B' sharp) है।

उसका संवादी १९ वीं श्रुति में होना चाहिए। किसी भी पद्धति में इसका प्रयोग नहीं दिखाई पड़ता है। उसका संवादी प्राचीन काल का कैशिकी या साधारण गान्धार है। उसका स्थान १० वीं श्रुति है। अब इसे कर्नाटक पद्धति में साधारण गान्धार कहते हैं। इस पद्धति में प्राचीन काल के अन्तरगान्धार का अलग नाम प्रचलित न होने के कारण ग्यारहवीं श्रुति में स्थान रखनेवाले स्वर को भी साधारण गान्धार ही कहा जाता है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसका नाम कोमलतर गान्धार है। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'एफ़' फ्लाट ('F' flat) है।

इसके आगे भी संवादियों को ढूँढ़कर जायँ तो पहले आये हुए स्वरस्थान ही मिलते हैं। २२ श्रुतियों की उत्पत्ति कर दिखाने के लिए यह भी एक मार्ग है।

दो स्वर परस्पर संवादी हैं या नहीं इसके निश्चय का उपाय जान लेना आवश्यक है। दोनों स्वरों में एक से आरंभ करके दूसरे स्वर में समाप्त होनेवाली एक पकड़ या स्वरावली को गाते समय अन्तिम स्वर पर खड़े होते समय रञ्जन हो तो यह निश्चय होता है कि वे दोनों स्वर परस्पर संवादी हैं। स्वरों के परस्पर संवादित्व के निश्चय हो जाने से हमें यह ज्ञात हो जाता है कि वे स्वर एक दूसरे से ९ या १३ श्रुतियों के

अन्तर के हैं। इसी तरह निर्धारित किये हुए स्वरस्थान से अनिर्धारित स्वरस्थान का निश्चय कर सकते हैं।

कर्नाटक सम्प्रदाय में वादी-संवादी

वादी	संवादी
षड्ज (४)	शुद्धमध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
शुद्ध ऋषभ (७)	प्रतिमध्यम और शुद्ध धैवत (१६ और २०)
चतुःश्रुति ऋषभ (८)	पञ्चम और चतुःश्रुति धैवत (१७ और २१)
पञ्चश्रुति ऋषभ (९)	पञ्चश्रुति धैवत (२२)
शुद्ध गान्धार (९)	शुद्ध निषाद (२२)
साधारण गान्धार (१०)	कैशिकी निषाद (१)
अनामी गान्धार (११)	कैशिकी निषाद (२)
अन्तरगान्धार (१२)	चतुःश्रुति धैवत और काकली निषाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	शुद्ध निषाद और षड्ज (२२ और ४)
प्रतिमध्यम (१६)	काकली निषाद और शुद्ध ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	षड्ज और चतुःश्रुति ऋषभ (४ और ८)
शुद्ध धैवत (२०)	शुद्ध ऋषभ (७)
चतुःश्रुति धैवत (२१)	चतुःश्रुति ऋषभ और अन्तरगान्धार (८ और १२)
शुद्ध निषाद (२२)	शुद्ध गान्धार और शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कैशिकी निषाद (१)	साधारण गान्धार (१०)
काकली निषाद (३)	अन्तर गान्धार (१२) और प्रतिमध्यम (१६)

हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में वादी-संवादी

वादी	संवादी
षड्ज (४)	शुद्ध मध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
कोमल ऋषभ (७)	तीव्र मध्यम और कोमल धैवत (१६, २०)
शुद्ध ऋषभ (८)	पञ्चम और शुद्ध धैवत (१७, २१)
तीव्र ऋषभ (९)	तीव्र धैवत (२२)
अति कोमलतर गान्धार (९)	अति कोमलतर निषाद (२२)

कोमलतर गान्धार (१०)	कोमलतर निषाद (१)
कोमल गान्धार (११)	कोमल धैवत और शुद्ध निषाद (२० और २)
शुद्ध गान्धार (१२)	शुद्ध धैवत और शुद्ध निषाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	अतिकोमलतर निषाद और षड्ज (२२ और ४)
तीव्र मध्यम (१६)	शुद्ध निषाद और कोमल ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	षड्ज और शुद्ध ऋषभ (४ और ८)
कोमल धैवत (२०)	कोमल ऋषभ और कोमल गान्धार (७ और ११)
शुद्ध धैवत (२१)	शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार (८ और १२)
अतिकोमलतर निषाद या तीव्र धैवत (२२)	अतिकोमलतर गांधार या तीव्र ऋषभ और शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कोमलतर निषाद (१)	कोमलतर गान्धार (१०)
कोमल निषाद (२)	कोमल गान्धार (११)
शुद्ध निषाद (३)	शुद्ध[1] गान्धार और तीव्र मध्यम (१२ और १६)

१. प्रकृति या शुद्ध स्वर क्या है? हिन्दुस्थानी शुद्ध स्वर या कर्नाटक शुद्ध स्वर? यह प्रश्न अब सुलझाना है कि हमारे प्राचीन शास्त्र में कहे हुए प्रकृति या शुद्ध स्वर का रूप क्या है? स्वर्गीय भातखण्डे जी, जिन्होंने हिन्दुस्थानी पद्धति की विस्तृत रूप से चर्चा कर एक सरल मार्ग का निर्माण किया है, दस से अधिक प्रश्नों को पीछे आनेवाले गवेषकों के द्वारा सुलझाने के लिए छोड़ गये हैं। उनमें यह प्रश्न भी एक है। इसे निर्धारित करने के लिए प्राचीन ग्रन्थों में दिये हुए प्रकृतिस्वरों के लक्षण पर विचार करना आवश्यक है। स्वर लक्षण को स्पष्ट रूप से बतानेवाला प्राचीन ग्रन्थ भरत का नाट्यशास्त्र है। उसमें प्रकृति स्वरों का लक्षण यों दिया गया है--

"षड्जश्च ऋषभश्चैव गान्धारो मध्यमस्तथा ।
पञ्चमो धैवतश्चैव निषादः सप्त च स्वराः ॥
चतुर्विधत्वमेतेषां विज्ञेयं श्रुतियोगतः ।
वादी चैवाथ संवादी अनुवादी विवाद्यपि ॥"

तत्र यो यत्रांशः स तस्य वादी, ययोश्च नवकत्रयोदश श्रुत्यन्तरे तावन्योऽन्यं संवादिनौ। यथा षड्ज मध्यमौ, षड्जपञ्चमौ, ऋषभधैवतौ, गान्धारनिषादौ इति षड्जग्रामे। मध्यमग्रामेऽप्येवमेव षड्जपञ्चमवर्जं पञ्चमऋषभयोश्चात्र संवादः।

कुछ रागों में हम देखते हैं कि संवादी न होनेवाले स्वर भी 'गमक' और 'स्वर-गुम्फन' नामक क्रिया से संवादी होकर रक्तिजनक होते हैं। एक स्वर, उसके आगे या पीछे होनेवाला स्वर इन दोनों को एक के बाद दूसरे को वेग से बार-बार उच्चारण करने से 'गमक' होता है। वेग के अनुसार गमकों को अनेक नाम दिये गये हैं। स्वर का उच्चारण करते समय उसके आगे या पीछे के स्वर की छाया को भी मिलाकर उच्चारण करने को 'स्वरगुम्फन' कहते हैं। इसलिए यह सिद्ध होता है कि संगीत में स्वर-विवेचन का काम बड़ा कठिन है। कई जगहों में असाध्य भी है।

अत्र श्लोक :

'संवादो मध्यमग्रामे पञ्चमस्यर्षभस्य च।
षड्जग्रामे च षड्जस्य संवादः पञ्चमस्य च।।
विवादिनस्तु ये तेषां द्विश्रुति स्वरमन्तरम्'

यथा ऋषभ, गान्धारौधैवत-निषादौ। एवं वादि-संवादि-विवादिषु स्थापितेषु शेषा अनुवादिसंज्ञकाः।

''षड्जश्चतुःश्रुतिर्ज्ञेय ऋषभस्त्रिश्रुतिः स्मृतः।
द्विश्रुतिश्चापि गान्धारो मध्यमश्च चतुः श्रुतिः।।
चतुः श्रुतिः पञ्चमः स्यात् त्रिःश्रुतिर्धैवतस्तथा।
द्विश्रुतिस्तु निषादः स्यात् षड्जग्रामे भवन्ति हि।।
चतुः श्रुतिस्तु विज्ञेयो मध्यमः पञ्चमः पुनः।
त्रिश्रुतिर्धैवस्तु स्याच्चतुः श्रुतिक एव च।।
निषादषड्जौ विज्ञेयौ द्विचतुःश्रुतिसंभवौ।
ऋषभस्त्रिश्रुतिश्च स्यात् गान्धारो द्विश्रुतिस्तथा।।''

—अध्याय २४ श्लोक १९-२६।

इसका तात्पर्य यह है कि स्वर सात हैं—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद।

स्वर चतुर्विध हैं, वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी। किसी गाने में प्रधान स्वर वादी है। उससे ९ या १३ श्रुतियों के अन्तर पर रहनेवाला स्वर संवादी है। उदाहरणार्थ 'स' और 'म', 'स' और 'प', 'री' और 'ध', 'ग' और 'नि' परस्पर वादी संवादी हैं। षड्जग्राम में वादी संवादी का सम्बन्ध ऐसा है। इस तरह मध्यम ग्राम में 'री' और 'प' वादी संवादी हैं, 'स' और 'प' नहीं। अन्य स्वरों का संवाद षड्जग्राम के अनुसार

सामगान से संगीत की उत्पत्ति

'नारदीय शिक्षा' में सामवेद का और लौकिक संगीत के स्वरों का सम्बन्ध ऐसा बताया गया है कि सामवेद के सप्तस्वर अर्थात् क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ,

ही है। उद्धृत श्लोक का अनुवाद यह है—"मध्यम ग्राम में ऋषभ और पञ्चम वादी संवादी हैं।" दो स्वर परस्पर विवादी हैं जिनमें दो श्रुतियों का अन्तर है। उदाहरणार्थ ऋषभ और गान्धार, धैवत और निषाद। संवादी विवादियों का निर्धारण करने से यह निश्चित होता है कि बाकी स्वर परस्पर अनुवादी हैं।

षड्जग्राम में षड्ज की चार श्रुतियाँ हैं। ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की चार, धैवत की तीन और निषाद की दो, मध्यमग्राम में षड्ज की चार, ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की तीन, धैवत की चार, और निषाद की दो श्रुतियाँ हैं।

इन श्लोकों से प्राचीन ग्रन्थों के प्रकृति या शुद्धस्वर का अर्थात् षड्जग्राम स्वर का स्वरूप निश्चित हो सकता है। पहले मध्यम और पञ्चम के बारे में संदेह नहीं है। अब ऋषभ का स्वरूप निश्चय करना है। कहा गया है कि (श्लोक २१) ऋषभ और पञ्चम, मध्यमग्राम में वादी संवादी हैं। मध्यमग्राम का पञ्चम, षड्जग्राम के पञ्चम से एक श्रुति नीचे का है। उसका प्रमाण 'नाट्यशास्त्र' में है यथा—

"मध्यम ग्रामेतु श्रुत्यपकृष्टः पञ्चमः कार्यः—मध्यम ग्राम में पञ्चम को एक श्रुति नीचे करना है"—२२वें श्लोक के बाद का गद्य भाग।

यह त्रिश्रुति पञ्चम, मामूली पञ्चम से एक श्रुति कम है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम है और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्रमध्यम । यह मध्यमग्राम-पंचम ही ऋषभ का संवादी बताया गया है। कर्नाटक पद्धति में 'पूर्वी कल्याण' में शुद्ध ऋषभ और प्रतिमध्यम का परस्पर संवादित्व है। इसी तरह हिन्दुस्थानी पद्धति में भी उसी राग में कोमल ऋषभ और तीव्र मध्यम का संवादित्व है। हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध ऋषभ तीव्र मध्यम का संवादी नहीं हो सकता। पञ्चम या शुद्ध धैवत का ही संवादी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन ग्रन्थों में बताया हुआ प्रकृति या शुद्ध ऋषभ हिन्दुस्थानी पद्धति का कोमल ऋषभ अर्थात् कर्नाटक पद्धति का शुद्ध ऋषभ ही है। इससे यह निश्चित होता है कि कर्नाटक पद्धति में शुद्ध ऋषभ का नामकरण ठीक है। इसी तरह शुद्ध ऋषभ का संवादी शुद्ध धैवत भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। गान्धार का अब विचार करना है। कहा गया है कि गान्धार, ऋषभ का विवादी (श्लोक २२ के बाद का गद्य भाग) है। इस कारण शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-

मन्द्र और अतिस्वार्य क्रमशः लौकिक स्वरों में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान हैं।[१] पर सामगान करते समय उन स्वरों का स्वरस्थान हिन्दुस्थानी पद्धति के काफी थाट अर्थात् कर्नाटक पद्धति के खरहरप्रिया मेल का 'ग रि स नि ध प म' के समान दिखाई देता है। इनका समन्वय करना आवश्यक है।

पहले हमें याद रखना चाहिए कि काफी थाट या खरहरप्रिया मेल विकृत स्वरों से बनाया हुआ है, क्योंकि उसके ऋषभ, गान्धार, धैवत और निषाद ये चार स्वर प्रकृति स्वरों से ऊँचे हैं। अर्थात् प्रकृति ऋषभ सातवीं श्रुति पर है, परन्तु इस थाट का ऋषभ ८ वीं श्रुति पर है। प्रकृति गान्धार ९ वीं श्रुति पर है, इस थाट या मेल का गान्धार १० वीं श्रुति पर है। प्रकृति धैवत २० वीं श्रुति पर है, परन्तु इस थाट का धैवत २१ वीं श्रुति पर है। प्राचीन काल में काकली और अन्तर—ये दो विकृत स्वर ही प्राचीन ग्रन्थों में बताये गये हैं।

साथ नहीं हो सकता। पर हिन्दुस्थानी पद्धति में शुद्ध गान्धार कोमल ऋषभ के साथ बहुत से रागों में आता है। अतः प्राचीन ग्रन्थों का शुद्ध गान्धार हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध गान्धार नहीं हो सकता। कर्नाटक पद्धति के शुद्ध गान्धार का स्थान चतुःश्रुति ऋषभ के ऊपर और साधारण गान्धार के नीचे है। अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध ऋषभ के ऊपर और कोमल गान्धार के नीचे है। उसका नाम कोमलतर गान्धार है। इस गान्धार के साथ कोमल ऋषभ का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में नहीं है। कारण, दोनों परस्पर विवादी हैं। इस कारण कर्नाटक पद्धति में भी शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-साथ नहीं हो रहा है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ही शुद्ध गान्धार का नामकरण ठीक है। शुद्ध गान्धार के संवादी शुद्ध निषाद का नामकरण भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। कर्नाटक पद्धति में जो स्वर शुद्धस्वर कहे जाते हैं वे ही प्राचीन काल के शुद्धस्वर हैं। परन्तु यह हमें मालूम नहीं होता कि हिन्दुस्थानी पद्धति में कब और किस कारण से शुद्धस्वरों के नाम बदल गये हैं। केवल यह बताया जा सकता है कि यह नवीन नामकरण १७, १८वीं शताब्दी तक नहीं हुआ था।

१. यः सामगानां प्रथमः स वेणोर्मध्यमः स्वरः। यो द्वितीयः स गान्धारः। तृतीय स्त्वृषभः स्मृतः। चतुर्थः षड्ज इत्याहुः पञ्चमो धैवतो भवेत्। षष्ठो निषादो वक्तव्यः सप्तमः पञ्चमः स्मृतः। नारदीय शिक्षा प्रथमप्रकरणे, खण्डिका ५, श्लो० १—२। इन श्लोकों में धैवत और निषाद स्थान विवर्तित हैं।

दूसरी बात यह है कि सामगान करते समय हमें खरहरप्रिया मेल या काफी ठाट की याद नहीं आती है। परन्तु हिन्दुस्थानी पद्धति के 'पीलू' और कर्नाटक पद्धति के

प्रकृतिस्वर की श्रुतियाँ		सामगान में अवरोह रूप में रहते समय उनके रूप	बैठने के स्थान	काफी या खरहरप्रिया के स्वरों की		
				श्रुतियाँ		बैठने के स्थान
म	१०	१३				
	११	१२			८	
	१२	११			९	
	१३	१०	१०	ग	१०	१०
			—		५	—
					६	
ग	८	९			७	
	९	८	८	रि	८	८
रि	५	७	—		१	—
					२	
	६	६			३	
	७	५	५	स	४	४
स	१	४	—			—
	२	३			२१	
	३	२			२२	
	४	१	१	नि	१	१
			—		१८	—
					१९	
नि	२१	२२			२०	
	२२	२१	२१	ध	२१	२१
			—		१४	—
ध	१८	२०			१५	
	१९	१९			१६	
	२०	१८	१८	प	१७	१७
प	१४	१७	—		१०	—
	१५	१६			११	
	१६	१५			१२	
	१७	१४	१४	म	१३	१३
			—			—

'रीतिगौड़' रागों की याद थोड़ी आती है। इन दोनों रागों के पकड़ गान्धार से शुरू होकर षड्ज में खतम होते हैं। इस पकड़ में रक्ति के रहने के कारण आदि और अन्त के स्वर का परस्पर संवादी होना आवश्यक है, परन्तु षड्ज का संवादी गान्धार नहीं; मध्यम है। इसलिए यह निश्चय होता है कि इन रागों का गान्धार मध्यम को छूकर आता है। क्योंकि षड्ज का स्वरस्थान चौथी श्रुति है। इस ठाट के गान्धार का स्वरस्थान १० वीं श्रुति है। मध्यम का स्वरस्थान १३ वीं श्रुति है। संवादित्व होने के लिए नौ श्रुतियों का अन्तर रहना चाहिए। इसलिए ऐसा दिखाई पड़ता है कि यह गान्धार १३ वीं श्रुति से आरम्भ होकर अवरोह करता हुआ दसवीं श्रुति पर समाप्त होता है। इससे हमें एक विषय की स्फूर्ति होती है कि मध्यम की चार श्रुतियां १३, १२, ११, १० इन चारों को अवरोह क्रम मे उच्चारण करें, तो इन रागों की गान्धार के समान ध्वनि सुनाई पड़ती है। अतः मध्यम का अवरोह रूप सामगान के प्रथमस्वर का रूप ले लेता है। इसी तरह अन्य प्रकृति स्वरों को भी अर्थात् ग, रि, स, नि, ध, प को अवरोह रूप में गाते हैं, तो उनके स्वरस्थान काफी थाट या खरहरप्रिया मेल के रि, स, नि, ध, प, म स्वरों के स्थानों में प्रायः बैठ जाते हैं। अतः हम इस सिद्धान्त पर पहुँच सकते हैं कि सामगान के स्वरों का उनकी श्रुतियों पर अवरोहात्मक रूप में उच्चारण किया जाता है, परन्तु लौकिक स्वर अपनी श्रुतियों के आरोहात्मक रूप मार्ग में उच्चरित होते हैं और 'नारदीय शिक्षा' के सामगान स्वरों और लौकिक स्वरों के सम्बन्ध की व्यवस्था ठीक निकलती है।

सामगान स्वरों के उच्चारण की अवरोहात्मक गति सामगान करते समय और ध्यानपूर्वक सुनने पर स्पष्ट दिखाई पड़ेगी।

इससे यह स्पष्ट होता है कि सामगान में प्रकृति स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, परन्तु हरएक स्वर का उच्चारण मार्ग श्रुतियों के अवरोह क्रम में है।

हमारे लौकिक संगीत में ये ही स्वर अपनी श्रुतियों के आरोह क्रम में उच्चरित किये जाते हैं।

तीसरा परिच्छेद

वर्णालंकार और गमक

स्वरों में रञ्जन की उत्पत्ति का साधन

हरएक स्वर स्वतन्त्र रूप में भी रञ्जक होना चाहिए अन्यथा उसका नामकरण 'स्वर' हो ही नहीं सकता। रञ्जन के लिए अनुरणन, प्रसन्नता और दीप्ति का प्रयोग आवश्यक है। 'दीप्ति' का अर्थ है गंभीरता और 'प्रसन्नता' का अर्थ है शांत होना। इन दोनों के साथ-साथ प्रयोग करने की रीति में सात भेद हैं। उनके नाम भी शास्त्रों में दिये गये हैं।

पहली रीति में स्वर का उच्चारण प्रसन्नता से शुरू होकर क्रम से गंभीर होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'विहाग' में है। उस राग में हरएक स्वर शान्त भाव से शुरू होने के पश्चात् क्रमशः गंभीर होकर पुनः शान्त भाव को प्राप्त न करके उसी गंभीरता में स्थिर रहता है। यही रीति कर्नाटक पद्धति में 'भैरवी' और यदुकुल काम्बोजी रागों में पायी जाती है। इसका नाम **'प्रसन्नादि'** है।

दूसरी रीति में स्वर का उच्चारण गंभीरता के साथ आरम्भ होकर फिर शान्त होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'मालकोस' में है। कर्नाटक पद्धति में कल्याणी राग में है। इस रीति का नाम है **'प्रसन्नान्त'**।

तीसरी रीति में स्वरों का उच्चारण गंभीरता से शुरू कर शान्त अवस्था को प्राप्त होता और पुनः गंभीरता में ही स्थिर रहता है। इसका नाम है **'प्रसन्न मध्यम'**। इसका प्रयोग कर्नाटक पद्धति में शंकराभरण और तोड़ी रागों में और हिन्दुस्थानी पद्धति के राग सिन्धुभैरवी में है।

चौथी रीति में स्वरों का उच्चारण प्रसन्नता से आरम्भ होकर गंभीर होता हुआ अन्त में प्रसन्नता को प्राप्त कर लेता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'मांड़' और कर्नाटक पद्धति में 'काम्बोजी' राग में है। इस रीति का नाम है **'प्रसन्नाद्यन्त'**।

पाँचवीं रीति में स्वर का विस्तार होता है। उसका नाम है **'प्रस्तार'**। हिन्दु-स्थानी पद्धति में राग गौड़ सारङ्ग के आरोहण में इसका प्रयोग होता है। कर्नाटक पद्धति में श्रीराग के आरोहण में भी इसका प्रयोग दिखाई पड़ता है।

छठीं रीति में स्वर केवल शान्त हो जाते हैं। इसका नाम है **'प्रसाद'**। प्रस्तार और प्रसाद दोनों रीतियाँ प्राय: एक ही राग में आती हैं। आरोहण में प्रस्तार और अवरोहण में प्रसाद का प्रयोग होता है। प्रसाद रीति का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के राग गौड़ सारङ्ग में और कर्नाटक पद्धति के श्रीराग के अवरोहण में किया जा रहा है।

सातवीं रीति में चार-पाँच स्वरों के द्वारा वेग से आरोह या अवरोह करना पड़ता है। इसका नाम **'क्रमविरेचित'** है। यह रीति 'यमनकल्याण' के अवरोह में और कर्नाटक पद्धति के सहाना राग के आरोहण में मिलती है।

इन सातों प्रकारों में प्रत्येक राग की एक ही रीति का प्रयोग सब स्वरों में करना चाहिए। पर स्थायी स्वर में ही रीति का स्वरूप स्पष्ट दीख पड़ता है। इसीलिए इन रीतियों को 'स्थायी स्वर अलंकार' कहते हैं। गानक्रिया में एक स्वर में स्थिर रहने को 'स्थायी वर्ण' कहते हैं। 'वर्ण' गानक्रिया का साधारण नाम है। स्थायी के अलावा, आरोही वर्ण, अवरोही वर्ण और संचारी वर्ण भी गानक्रिया में हैं। आरोही, अवरोही, संचारी वर्णों में भी अनेक प्रकार के अलंकार हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा में ही इन सब अलंकारों का अभ्यास कराना चाहिए। इनमें अनेक अलंकार अब भी प्रारम्भिक शिक्षाभ्यास में वर्तमान हैं। जो अलंकार आज के अभ्यास में नहीं हैं, उन्हें भी शिक्षाभ्यास में सम्मिलित कर लेना चाहिए। स्थायी स्वर अलंकारों का इस तरह अभ्यास करना चाहिए कि जिस स्थायी स्वर अलंकार का जिस राग में प्रयोग किया जा रहा हो, उस राग के संचार से उस अलंकार का विलंब, मध्य और द्रुत—इन तीनों कालों में अभ्यास हो जाय। और प्रत्येक राग में प्रयुक्त गीत, वर्ण और चीज़ों का उस राग के विशिष्ट स्थायी स्वर अलंकार के साथ तीनों कालों में अभ्यास हो जाय।

आरोही, अवरोही और संचारी वर्णों के अलंकार नाट्यशास्त्र और संगीत रत्नाकर में दिये गये हैं। आरोही वर्ण में १३ अलंकार, अवरोही में ५ और संचारी में १४ अलंकार नाट्यशास्त्र में बताये गये हैं, परन्तु संगीत रत्नाकर में आरोही में १२, अवरोही में १२ और संचारी में २५ अलंकार दिये गये हैं। इनके अलावा सात प्रसिद्ध अलंकारों के नाम भी दिये गये हैं। इन सब अलंकारों का वर्णन मात्र नाट्यशास्त्र में है। संगीत रत्नाकर में उनके उदाहरण भी हैं। आजकल बिना उनके नाम के प्रारम्भिक शिक्षा में उनका अभ्यास किया जा रहा है। कर्नाटक पद्धति में 'सरली वरिस', 'जण्ट वरिस', 'दाट्टु वरिस', सप्तालंकार कहलाते हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति में सरगम, मींड, मुरकी, खटका, तान, बोलतान कहते हैं।

आरोही वर्ण के अलंकार

१. विस्तीर्ण—सा री गा मा पा धा नी

२. निष्कर्ष—सस - रिरि - गग - मम - पप - धध - निनि,
गात्रवर्ण—ससस - रिरिरि - गगग - ममम - पपप - धधध - निनिनि,
ससस - रिरिरिरि - गगगग - मममम - पपपप - धधधध - निनिनिनि।

३. विन्दु—सा॰ [१] रि [१] — गा॰म — पा॰ध — नी॰स — सा॰रि।

४. अभ्युच्चय—सगपनिरि।

५. हसित—सा — रीरी — गागागा — मामामामा — पापापापापा — धा धा धा-धा धा धा — नीनीनीनीनीनीनी — सासासासासासासासा।

६. प्रेंखित—सरी — रिगा — गमा — मपा — पधा — धनी — निसा।

७. आक्षिप्त—सगा — गपा — पनी — निरी।

८. संधिप्रच्छादन—सरिगा — गमपा — पधनी — निसरी।

९. उद्गीत—सससरिगा — मममपधा — निनिनिसरी।

१०. उद्वाहित—सरिरिरिगा — मपपपधा — निससरी।

११. त्रिवर्ण—सरिगगगा — मपधधधा — निसरिरिरी।

१२. पृथग्वेणु—सरिग सरिग सरिग — रिगम रिगम रिगम — मपध मपध मपध पधनि पधनि पधनि — धनिस धनिस धनिस।

इसी नाम के और इसी क्रम में १२ अवरोही अलंकार हैं।

संचारी वर्ण के अलंकार

१. मन्द्रादि—सगरी — रिमगा — गपमा — मधपा — पनिधा — धसंनी — निरिसा—सधनी — निपधा — धमपा — पगमा — मरिगा — गसरी — रिनिसा।

२. मन्द्रमध्यम—गसरी — मरिगा — पगमा — धमपा— निपधा — सधनी — रिनिसा — सगरी — निरिसा — धसनी — पनिधा — मधपा — गपमा — रिमगा— सगरी।

३. मन्द्रान्त—रिगसा — गमरी — मपगा — पधमा — धनिपा — निसधा — सरिनी—सनिरी — निधसा — धपनी — पमधा — मगपा — गरिमा — रिसगा।

४. प्रस्तार—सगा — रिमा — गपा — मधा — पनी — धसा — सधा — निमा — धमा — पगा — मरी — गसा।

१. इसमें 'सा' 'प्लुत' या त्रि-मात्रिक है।

५. प्रसाद—सरिसा – रिगरी – गमगा – मपमा – पधपा – धनिधा – निसनी – सरिसा – सनिसा – निधनी – धपधा – पमपा – मगमा – गरिगा – रिसरी – सनिसा।

६. व्यावृत्त—सगरिमासा – रिमगपारी – गपमधागा – मधपनीमा – पनिधसापा – धसनिरीधा – निरिसगानी – सगरिमासा – सधनिपासा – निपधपानी – धमपगाधा – पगमरीपा – मरिगसामा – गसरिनीगा – रिनिसधारी – सधनिपासा।

७. स्कलित—सगरिममरिगसा – रिमगपपगमरी – गपमधधमपगा – मधपनिनिपधमा – पनिधससधनिपा – धसनिरिरिनिसधा – निरिसगगसरिनी – सधनिपपनिधसा – निपधममधपनी – धमपगगपमधा – पगमरिरिमगपा – मरिगससगरिमा – गसरिनिनिरिसगा।

८. परिवर्तक—सगम – रिमपा – गपधा – मधनी – पनिसा – गनिगा – निधमा – धपगा – पमरी – मगसा।

९. आक्षेप—सरिगा – रिगमा – मपधा – पधनी – धनिगा – सनिधा – निधपा – धपमा – पमगा – मगरी – गरिसा।

१०. बिन्दु—सा$_{३}$रिसा – री$_{३}$गरी – गा$_{३}$मगा – मा$_{३}$पमा – धा$_{३}$निधा – नी$_{३}$सनी – सा$_{३}$रिसा – नी$_{३}$धनी – धा$_{३}$पधा – पा$_{३}$मपा – गा$_{३}$मगा – री$_{३}$गरी – सा$_{३}$निसा।

११. उद्वाहित—सरिगरी – रिगमगा – गमपमा – मपधपा – पधनिधा – धनिसनी – निसरिसा – सनिधनी – निधपधा – धपमपा – पमगमा – मगरिगा – गरिसरी – रिसनिसा।

१२. ऊर्मि—मारामा – पारिपा – धागधा – नीमनी – मापमा – पागपा – मानिमा – गाधगा – रीपरी – सागसा।

१३. सम—सरिगममगरिसा – रिगमपपमगरी – गमपधधपमगा – मपधनिनिधपमा – पधनिससनिधपा – सनिधपपधनिसा – निधपममपधनी – धपमगगमपधा – पमगरिरिगमपा – मगरिससरिगमा।

१४. प्रेंख—सरीरिसा – रिगागरी – गमामगा – मपापमा – पधाधपा – धनीनिधा – निसासनी – सनीनिसा – निधाधनी – धपापधा – पमामपा – मगागरी – गरीरिगा – रिसासरी – सनीनिसा।

१५. निष्कूजित—सरिसागसा – रिगरीमरी – गमगापगा – मपमाधमा – पधपा-

निधा – धनिधासनी – निसनीरिसा – सनिसाधनी – निधनीपधा – धपधामपा – पमपागमा – मगमारिगा – रिसरीनिसा।

१६. श्येन—सपा – रिधा – गनी – पसा – सपा – निगा – धरी – पसा।

१७. क्रम—सरिसरिगसरिगमा – रिगरिगमरिगमपा – गमगमपगमपधा – मपमपधमपधनी – पधपधनिपधनिसा – सनिसनिधसनिधप – निधनिधपनिधपम – धपधपमधपमगा – पमपमगपमगरी – मगमगरिमगरिसा।

१८. उद्वहित—सरिपमगरी – रिगधपमगा – गमनिधपमा – मपसनिधपा – पधरिसनिधा – धनिगरिसनी – निसमगरिसा–सनिमपधनी – निधगमपधा –धमरिगमपा – पमसरिगमा – मगनिसरिगा – गरिधनिसरी – रिसपधनिसा।

१९. रञ्जित—सगरिसगरिसा – रिमगरिमगरी – गपमगपमधा – मधपमधपमा– पनिधपनिधपा – धसनिधसनिधा – निरिसनिरिसनी – सगरिसगरिसा – सधनिसधनिसा – निपधनिपधनी – धमपधमपधा–पगमपगमपा – मरिगमरिगमा – गसरिगसरिगा – रिनिसरिनिसरी – सधनिसधनिसा।

२०. सन्निवृत्त प्रवृत्तक—सपामगरी – रिधापमगा – गनीधपमा – मसानिधपा– परीसनिधा – धगारिसनी – निमागरिसा – समापधनी – निगामपधा– धरीगमपा – पसारिगमा – मनीसरिगा – गधानिसरी – रिपाधनिसा।

२१. वेणु—सासरिमागा – रीरिगपामा – गागमधापा – मामपनीधा – पापधसानी – धाधनिरीसा – सासनिपाधा – नीनिधमापा – धाधपगामा – पापमरीगा – मामगसारी – गागरिनीसा।

२२. ललितस्वर—सरिमरिसा – रिगपगरी – गमधमगा – मानिपमा – पधसधपा – धनिरिनिधा – निसगसनी – सरिमरिसा – सनिपनिसा – निधमधनी – धपगपधा – पमरिमपा – मगसगमा – गरिनिरिगा – रिसधसरी – सनिपनिसा।

२३. हुँकार—सरिस – सरिगरिस – सरिगमगरिस – सरिगमपमगरिस – सरिगमपधपमगरिस – सरिगमपधनिधपमगरिस – सरिगमपधनिसनिधपमगरिस – सनिस – सनिधनिस – सनिधपधनिस– सनिधपमगमपधनिस – सनिधपमगरिगमपधनिस – सनिधपमगरिसरिगमपधनिस।

२४. ह्लादमान—सगरिसा – रिमगरी – गपमगा – मधपमा – पनिधपा – धसनिधा – निरिसनी – सगरिसा – सधनिसा – निपधनी – धमपधा – पगमपा – मरिगमा – गसरिगा – रिनिसरी – सधनिसा।

२५. अवलोकित—सगमामरिसा – रिमपापगरी – गमधाधमगा – मधनीनिपमा–
सधपापनिसा–निपमामधनी–धमगागपधा – पगरीरिमपा–मरिसासगमा।

गमक

एक स्वर में रञ्जन के साथ कम्पन देने को गमक कहते हैं। एक स्वर के ऊपर या नीचे होनेवाले स्वर को भी मिलाकर ऊपर और नीचे वेग से उच्चारण करने से ही 'गमक' उत्पन्न होता है। गमकों के पन्द्रह भेद हैं—

(१) तिरिप (२) स्फुरित (३) कम्पित (४) लीन (५) आन्दोलित (६) वलि (७) त्रिभिन्न (८) कुरुल (९) आहत (१०) उल्लासित (११) प्लावित (१२) गुम्फित (१३) मुद्रित (१४) नामित (१५) मिश्रित।

१. तिरिप—एक ह्रस्वाक्षर के १/८ मात्रा काल के वेग से होनेवाले कम्पन का नाम 'तिरिप' है।

२. स्फुरित—एक ह्रस्वाक्षर के १/६ मात्रा काल के वेग से किये जानेवाले कम्पन का नाम 'स्फुरित' है।

३. कम्पित—एक ह्रस्वाक्षर के १/४ मात्रा काल के वेग से कम्पन किया जाय तो वह 'कम्पित' कहा जाता है।

४. लीन—एक ह्रस्वाक्षर के १/२ मात्रा काल के वेग से कम्पन किया जाय तो वह 'लीन' है।

५. आन्दोलित—एक ह्रस्वाक्षर काल के अर्थात् एक मात्रा के वेग से कम्पन करने को 'आन्दोलित' कहते हैं।

६. वलि—वेग से कम्पन करते समय थोड़े वक्रत्व के साथ कम्पन करने को 'वलि' कहते हैं।

७. त्रिभिन्न—तीनों स्थानों में वेग से संचार करने का नाम 'त्रिभिन्न' है।

८. कुरुल—'वलि' में ही स्वरों को घनता के साथ उच्चारण करने को 'कुरुल' कहते हैं।

९. आहत—संचार करते समय आगे के स्वर पर आघात करके लौटने को 'आहत' कहते हैं।

१०. उल्लासित—संचार में एक स्वर को पार करके जाने को 'उल्लासित' नाम दिया गया है।

११. प्लावित—तीन ह्रस्वाक्षर काल के वेग से कम्पन करने को 'प्लावित' नाम दिया गया है।

१२. गुफित—हुँकार और गंभीरता के साथ कम्पन करने का नाम गुम्फित है।

१३. मुद्रित—मुँह बन्द करके कम्पन करने को 'मुद्रित' कहते हैं।

१४. नामित—स्वरों का नमन करके कम्पन करना 'नामित' है।

१५. मिश्रित—ऊपर बताये हुए गमकों में दो या अधिक गमकों को मिश्रित करके प्रयोग करने को 'मिश्रित' कहते हैं।

चौथा परिच्छेद

मूर्च्छना और क्रम

भारतीय संगीत का विशिष्ट स्वरूप है 'राग'। रागों के स्वरूप और रागों के पारस्परिक भेद को हमारे देश के समस्त संगीत-संप्रदायज्ञ और रसिक जन अनुभव से जानते हैं। परन्तु यदि एक विदेशी पूछे कि 'राग क्या है?' तो उसे समझाने के लिए आजकल के लक्षण पर्याप्त नहीं हैं।

आज रागलक्षण के नाम से प्रचलित लक्षण केवल हरएक राग में प्रयोज्य स्वरों के कोमल और तीव्र रूप एवं वक्र वर्ज्यभाव ही हैं। उत्तर भारत में वादी-संवादी रूप में एक लक्षण और भी है। परन्तु रागच्छाया देनेवाले दूसरे लक्षणों को भूले हमें बहुत दिन हो गये। केवल सम्प्रदाय के कारण रागों का जीवन और छाया सुरक्षित है। रागच्छाया के निश्चित लक्षणों को प्राचीन ग्रन्थों से ढूँढ़ निकालना हमारा आवश्यक कर्तव्य है।

प्राचीन ग्रन्थों में राग का स्वरूप इस प्रकार वर्णित किया गया है कि श्रुति से स्वर, स्वरों से ग्राम, ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति से रागों की उत्पत्ति होती है। श्रुति, स्वर, ग्राम—इन तीनों का स्वरूप पहले ही बताया जा चुका है। अब मूर्च्छना पर विचार किया जाय।

मूर्च्छना का स्वरूप

एक स्वर से आरम्भ करके क्रमशः सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् उसी मार्ग से अवरोह करने को मूर्च्छना कहते हैं। हरएक ग्राम में हरएक स्वर से शुरू करने पर सात मूर्च्छनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। मूर्च्छना रागच्छाया का आधार है। यह कैसे हो सकता है?

कहा गया है कि राग का स्वरूप 'रञ्जक स्वर-सन्दर्भ' है। वैसे तो हरएक स्वर अलग रहते समय भी रञ्जक होता है, परन्तु राग में स्वरसमूह के प्रयोग से और भी रञ्जन की उत्पत्ति होती है। हरएक स्वर एक रसभाव का पोषक है। उस स्वर **को उसके संवादी के साथ एक स्वरसमूह में प्रयोग करने से उस रसभाव का प्रकाशन**

और रञ्जन शक्ति और भी ज्यादा होती है। एक ही रसभाव देनेवाले अनेक पकड़ों को कल्पना के साथ गाते जाना 'राग' है।

हरएक पकड़ में आरम्भिक स्वर का प्राधान्य अधिक है। उसके संवादी तक आरोहण करने से रसभाव-पूर्ण एक पकड़ हमें मिल जाता है। दूसरे स्वर से शुरू करें तो उस पकड़ से दूसरा रसभाव ही मिलता है। राग की प्राप्ति के लिए हमें एक ही प्रकार का रसभाव देनेवाले बहुत पकड़ों की उत्पत्ति चाहिए। पर अब हमें एक ही पकड़ मिला हुआ है। तार और मन्द्र स्थानों में अगर इसी स्वर से शुरू करके उसके संवादी तक आरोहण करें तो और दो पकड़ों की प्राप्ति होती है। इस तत्त्व को लेकर इसी तरह बहुत से पकड़ों को उत्पन्न करने का एक उपाय किया जाय तो उसका नाम मूर्च्छना है।

एक स्वर से आरम्भ करके उसके संवादी तक आरोहण करने से एक रसभाव की पूर्ति होने के कारण, उसके ऊपर लगातार संचार करें तो भी आदि में उत्पन्न रसभाव की हानि नहीं होती। प्रायः एक स्वर का संवादी उसका चौथा या पाँचवाँ स्वर ही रहता है। उस चौथे या पाँचवें स्वर के आगे भी संचार करके जायँ तो रसभाव का भंग नहीं होता। पर इसे याद रखना आवश्यक है कि आरम्भिक स्वर का आठवाँ स्वर तारस्थान में वही स्वर है और उससे शुरू कर संवादी तक आरोहण करने से हमें काम आनेवाला राग का दूसरा पकड़ मिलता है। अगर आठवें स्वर में शुरू करना है तो सातवें स्वर पर रुकना चाहिए। अन्यथा संचार लगातार होने के कारण आठवें स्वर से आरम्भ हमें प्राप्त नहीं होता। इसलिए चौथे या पाँचवें स्वर के आगे संचार करते समय सातवें स्वर तक आरोहण करने पर रुक जाना पड़ता है। अगर और संचार करना है तो अवरोह ही करना चाहिए। अवरोह करते समय भी आरम्भ स्वर तक अवरोहण करके रुक जाना चाहिए। **इस प्रकार एक स्वर से शुरू करके उसके सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् पुनः आरम्भ स्वर तक अवरोहण करने से एक चक्राकार संचार मिलता है। उस चक्र में संचार करते हैं तो एक ही रसभाव प्राप्त होता है।**

हरएक राग का अपना निजी मूर्च्छना-चक्र है। इसे ढूँढ़ने का एक सरल मार्ग है। राग में संचार करते समय, (i) **एक स्वर तक पहुँचने के पश्चात् उसके आगे न जाकर उसी स्वर में कुछ देर स्थिर रहना और तत्पश्चात् ही ऊपर जाना पड़ता है। (ii) या उस स्वर तक पहुँचने के बाद तत्काल लौटना पड़ता है। (iii) या उस स्वर को छोड़कर जाना पड़ता है। इन तीनों में किसी एक प्रकार में संचार रुक जाय तो यह निश्चित होता है कि वही स्वर उस राग की मूर्च्छना का आरम्भक स्वर**

है। इसी प्रकार अवरोहण के द्वारा भी निश्चय कर सकते हैं। जैसे कर्नाटक पद्धति के नाट राग में गान्धार से ऋषभ तक आरोहात्मक संचार ('गपधनिसरि') निर्विघ्न किया जाता है। ऋषभ तक पहुँचकर लौटना पड़ता है। अगर उसके आगे जाना चाहें, तो ऋषभ के बाद के स्वर गान्धार का लंघन करके 'रिमा' या 'सगा'—ऐसा संचार करना पड़ता है। 'रिगा' या 'गरी'—ऐसा संचार नहीं किया जाता। अवरोहण में भी मूर्च्छना के अन्तिम स्वर गान्धार के नीचे जाना चाहें तो 'गमा' या 'मरी'—ऐसा संचार करना चाहिए। 'गरी', 'रिगा'—ऐसा संचार नहीं किया जाता।

इसी तरह हिन्दुस्थानी पद्धति के मांड़ राग में मूर्च्छना का आरम्भ गान्धार से होकर ऋषभ तक समाप्ति होती है, तत्पश्चात् गान्धार तक अवरोह होता है। ऋषभ के ऊपर इस राग में भी 'रिगा, गरी'—ऐसा संचार नहीं है। ऋषभ के ऊपर जाना चाहें, तो ऋषभ पर ठहरकर पुनः आगे जाना पड़ता है। और ऋषभ को पार कर 'सगा'—ऐसा आरोह करना पड़ता है। उसी प्रकार गान्धार के नीचे जाना चाहें तो गान्धार पर ठहरकर संचार करना पड़ता है या 'रि' का लंघन करके नीचे 'गमा'—ऐसा संचार कर सकते हैं।

रागों की सीमाएँ और आधार, मूर्च्छना और न्यासस्वर

राग स्वरमय चित्र है। एक चित्र के ऊपर और एक नीचे की सीमा है। उसी तरह एक आधार है। एक ही आधार और सीमाओं में अनेक चित्रों का अंकन किया जा सकता है। रागस्वरूप की सीमाएँ ही 'मूर्च्छना' है। क्योंकि मूर्च्छनात्मक के अन्दर ही राग का स्वरूप उत्पन्न होता है।

अब यह विचार किया जाय कि 'आधार' क्या वस्तु है। राग में संचार करते समय यह अनुभव होता है कि कुछ स्वरों पर कुछ देर ठहरें। दूसरे स्वरों पर ठहरने की इच्छा नहीं होती। हरएक राग में एक ऐसा स्वर है जहाँ जाने पर और आगे, नीचे बढ़ने की इच्छा ही नहीं होती। रागविस्तार की इच्छा से विवश होकर एक नया प्रस्थान करना पड़ता है। इस स्वर का नाम 'न्यास' है जहाँ हमें उस स्वर पर स्थिर रहने की इच्छा होती है। न्यास शब्द का अर्थ है (नि—नितराम् = अच्छी तरह + आस = बैठना) अच्छी तरह बैठना। यही न्यासस्वर रागों की अनिवार्य है, जहाँ अनेक संचार करने के बाद राग समाप्त होते हैं। चित्रों के आधार और सीमाओं में परस्पर निर्धारक सम्बन्ध है। इसी तरह मूर्च्छना और न्यासस्वर का परस्पर निर्धारक सम्बन्ध है। न्यासस्वर मूर्च्छना से उत्पन्न हुआ है।

एक ही स्वर में आकर समाप्त होनेवाले बहुत से राग हैं। हमें अनुभव है कि

षड्ज स्वर में आकर बहुत से राग समाप्त होते हैं। अनेक राग एक ही न्यासस्वर के आधार में रहने पर भी भिन्न-भिन्न रसभाव के पोषक रहते हैं। इसका कारण यह है कि हरएक राग एक विशिष्ट रसभाव देनेवाले स्वर को अंश रूप में लेता है। अर्थात् वही स्वर उस राग का मुख्य स्वर बन जाता है। उसका नाम अंश या वादी है।

न्यासस्वर से मूर्च्छना निर्धारित होती है। जिससे कि एक ही न्यासस्वर के आधार पर रहनेवाले सब राग एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न हो जायँ।

एक मूर्च्छना एक रसभाव देती है। फिर उसके आधार पर भिन्न-भिन्न रसभाव का पोषण करनेवाले बहुत से रागों की उत्पत्ति कैसे होती है? इस प्रश्न का जबाब देने के लिए ही क्रम संचार है।

क्रमसंचार और वादी-संवादी

हरएक मूर्च्छना चक्राकार में है। इस चक्र में किसी भी स्वर से शुरू कर उस चक्र की पूर्ति कर सकते हैं। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि संगीत में हरएक पकड़ या संचार का रसभाव आरम्भ स्वर से निश्चित होता है। इसके कारण एक मूर्च्छना चक्र में हरएक स्वर से शुरू करके चक्र की पूर्ति करने से एक-एक रसभाव उत्पन्न होता है। अर्थात् हरएक संचार में वादी संवादी भिन्न होते हैं।

हरएक मूर्च्छना हरएक रसभाव का पोषण करती है; और उसमें हरएक स्वर से शुरू करके संचार करते समय भिन्न-भिन्न प्रकार के रसभाव उत्पन्न होते हैं। मूर्च्छना के साथ रसभाव और संचारों के साथ रसभाव का क्या सम्बन्ध है?

काव्य और नाटकों में रसनिष्पत्ति के समय मुख्य रस एक होता है और उसमें उपरस दूसरे होते हैं। उदाहरणतया शृङ्गार रस में ही हास्य, करुण, रौद्र इत्यादि रसभाव उत्पन्न होते हैं। उनमें मुख्य रसभाव मूर्च्छना से उत्पन्न होता है। उपरसों की उत्पत्ति क्रमसंचारों से होती है। नीचे सात मूर्च्छनाएँ चक्राकार में लिखी गयी हैं। हरएक चक्र में १२ स्थान हैं जिनसे शुरू कर चक्र-संचार की पूर्ति कर सकते हैं।

प्रथम मूर्च्छना
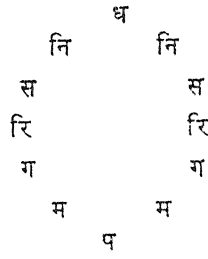
स
रि रि
ग ग
म म
प प
ध ध
नि

द्वितीय मूर्च्छना

नि
स स
रि रि
ग ग
म म
प प
ध

तृतीय मूर्च्छना

ध
नि नि
स स
रि रि
ग ग
म म
प

चतुर्थ मूर्च्छना

प
ध ध
नि नि
स स
रि रि
ग ग
म

पंचम मूर्च्छना

म
प प
ध ध
नि नि
स स
रि रि
ग

षष्ठ मूर्च्छना

ग
म म
प प
ध ध
नि नि
स स
रि

सप्तम मूर्च्छना

रि
ग ग
म म
प प
ध ध
नि नि
स
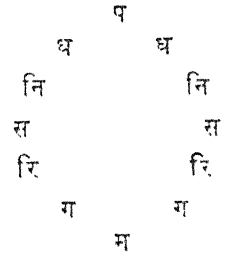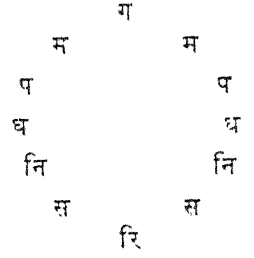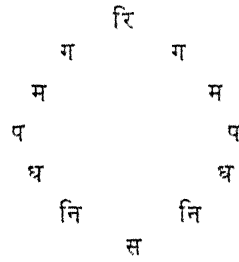
इनमें प्रथम मूर्च्छना मे उत्पन्न होनेवाले क्रमसंचार यों है--

१. सरिगमप धनि धपमगरिस
२. रिगमप धनि धपमगरिसरि
३. गमप धनि धपमगरिसरिग

४. मप धनि धपमगरिसरिगम
५. प धनि धपमगरिसरिगमप
६. धनिधपमगरिसरिगमप ध
७. नि धपमगरिसरिगमप धनि
८. धपमगरिसरिगमप धनि ध
९. पमगरिसरिगमप धनि धप
१०. मगरिसरिगमप धनि धपम
११. गरिसरिगमप धनि धपमग
१२. रिसरिगम पधनि धपमगरि

द्वितीय मूर्च्छना में उत्पन्न होनेवाले क्रमसंचार—

१. निसरिगमप धपमगरिसनि
२. सरिगमप धपमगरिसनिस
३. रिगमप धपमगरिसनिसरि
४. गमप धपमगरिसनिसरिग
५. मप धपमगरिसनिसरिगम
६. प धपमगरिसनिसरिगमप
७. धपमगरिसनिसरिगमप ध
८. पमगरिसनिसरिगमप धप
९. मगरिसनिसरिगमप धपम
१०. गरिसनिसरिगमप धपमग
११. रिसनिसरिगमप धपमगरि
१२. सनिसरिगमप धपमगरिस

तृतीय मूर्च्छना के क्रमसंचार—

१. धनिसरिगमपमगरिसनि ध
२. निसरिगमपमगरिसनि धनि
३. सरिगमपमगरिसनि धनिस
४. रिगमपमगरिसनि धनिसरि
५. गमपमगरिसनि धनिसरिग
६. मपमगरिसनि धनिसरिगम
७. पमगरिसनि धनिसरिगमप

८. मगरिसनि धनिसरिगमपम
९. गरिसनि धनिसरिगमपमग
१०. रिसनि धनिसरिगमपमगरि
११. सनि धनिसरिगमपमगरिस
१२. नि धनिसरिगमपमगरिसनि

इसी तरह चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ और सप्तम मूर्च्छनाओं के क्रमसंचारों को भी लिख सकते हैं। हरएक क्रमसंचार में पहला स्वर रसनिष्पत्ति का कारण है। यही स्वर अंशस्वर है। पर इस स्वर का संवादी निकट में न हो तो यह स्वर अंश होने के योग्य नहीं बनता। तब क्रमसंचार का अन्तिम स्वर अंशस्वर बन जाता है। इसी रीति में हरएक क्रमसंचार के वादी-संवादी यहां दिये जाते हैं। वादी-संवादी निर्धारण के लिए यहाँ सब स्वर प्रकृति-स्वर माने गये हैं। विकृत स्वर हो तो वादी-संवादी उनके स्वरस्थान के अनुसार रहते हैं।

पहली मूर्च्छना के क्रमसंचारों में वादी-संवादी---

क्रमसंचार की संख्या	वादी	संवादी
१	स	म
२	रि	ध
३	ग	नि
४	म	ग
५	प	स
६	ध	रि
७	नि	ग
८	ध	रि
९	प	स
१०	म	स
११	ग	नि
१२	रि	ध

इसी प्रकार दूसरे क्रमसंचारों में वादी-संवादी ऊहनीय हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद

जाति या रागमाता

वादी संवादी में विभिन्नता होने पर भी एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न रागों में कई लक्षण एक ही प्रकार के होते हैं। उन लक्षणों में न्यासस्वर प्रधान हैं। सप्त स्वरों में से किसी भी एक स्वर को न्यास रूप में ग्रहण करनेवाली जाति की उत्पत्ति हो सकती है। जिस जाति में 'षड्ज' न्यास स्वर रहता है उसका नाम षाड्जी है। इसी प्रकार आर्षभी, गांधारी, मध्यमा, पञ्चमी, धैवती, नैषादी—ये क्रमशः ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद आदि को न्यास रूप में ग्रहण करनेवाली जातियों के नाम हैं।

हर जाति या राग के बारह लक्षण होते हैं, यानी (१) न्यासस्वर लक्षण (२) अंशस्वर लक्षण (३) ग्रहस्वर लक्षण (४) अपन्यास स्वर लक्षण (५, ६) संन्यास-विन्यास लक्षण (७, ८) अल्पत्व-बहुत्व लक्षण (९) संपूर्णषाडवौडव लक्षण (१०) अन्तरमार्ग लक्षण (११) तार लक्षण (१२) मन्द्र लक्षण।

जाति या राग का विस्तार करते समय अंशस्वर में पहले थोड़ी देर स्थिर रहना चाहिए। इसलिए अंशस्वर को स्थायी स्वर भी कहते हैं। कभी-कभी स्थायी स्वर से ही संचार शुरू करते हैं। कभी-कभी अन्य स्वर से शुरू करके स्थायी स्वर में आकर रागविस्तार करते हैं। इस तरह के प्रारम्भस्वर का नाम ग्रहस्वर है। अंश या न्यास भी ग्रहस्वर हो सकता है तथा कोई दूसरा स्वर भी।

हरएक जाति में अंशस्वरों को बदलकर भिन्न-भिन्न रागों की उत्पत्ति की जा सकती है। एक या दो स्वरों को वर्ज्य करके भी भिन्न-भिन्न रागों को उत्पन्न कर सकते हैं। उनमें छः स्वरों से उत्पन्न राग और जातियों का नाम षाडव और पाँच स्वरों से उत्पन्न होनेवालों का नाम औडव है।

न्यासस्वर को ही अंश रखकर, सातों स्वरों के साथ अगर जाति विस्तार किया जाय तो शुद्ध जाति होती है। अंशस्वर को बदलकर अथवा एक या दो स्वरों को वर्ज्य करके अर्थात् षाडव, औडव कर जाति विस्तार किया जाय, तो उन्हें विकृत जाति कहते हैं। विकृत जातियाँ ही राग हैं।

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागों की सृष्टि करते हैं, तब रागों के लक्षण अपने आप रागकल्पना में विद्यमान रहते हैं। राग की उत्पत्ति, लक्षणों से नहीं, बल्कि रागों से लक्षणों की उत्पत्ति होती है। इस बात को याद रखना आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अंशस्वर विस्तार का केन्द्र होने योग्य हैं। इनके अलावा न्यास और अंश के संवादी और निकट सम्बन्ध रखनेवाले अनुवादी भी संचार का केन्द्र बनने लायक हैं। इस तरह के स्वरों को **अपन्यास** स्वर कहते हैं। राग संचार में छोटे भागों के केंद्र या आरम्भस्वर **संन्यास** और **विन्यास** हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरो का प्रयोग अधिक होता है और दूसरे स्वरों का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत्व है। न्यास और अंश स्वरों के संवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते हैं। दूर के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर हैं। इन बहुल स्वरों के प्रयोग में दो प्रकार हैं। संचार में उन स्वरों का सम्यक् उच्चारण एक मार्ग है, इसका नाम 'अलंघन' है। इन स्वरों से युक्त पकड़ों का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा मार्ग है। इसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरों के प्रयोग में भी दो प्रकार हैं। संचार में उन स्वरों को वर्ज्य कर अर्थात् उनको लांघकर संचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'लंघन' है। जिन पकड़ों में ऐसे स्वर रहते हैं उन पकड़ों को प्रयोग में न लाना दूसरा मार्ग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में संचार करते समय तारस्थान में एक सीमा होती है, उसके आगे संचार नहीं करना चाहिए। तारस्थान में अंश स्वर का संवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अंशस्वर या न्यासस्वर का संवादी या मन्द्र षड्ज है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में संचार करने से राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर संचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक संचार करने की शक्ति होनी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे संचार करना भी साध्य नहीं है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरों का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा में ऐसे स्वरों को अंश या अंश के संवादी स्वरों के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाइयाँ खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

तिक्त पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

विकृत जातियों की उत्पत्ति

विकृत जातियों की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अंशस्वर न्यास से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् षाडव या औडव होना; इन चारों कारणों से विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणों में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छः विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणों से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियों की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में षाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियों में से आठ विकृत जातियों का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठों विकृत जातियाँ षाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह बन जाती हैं। इसलिए हरएक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नहीं है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियों को मिलाकर नयी ग्यारह जातियों को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम संकीर्ण जाति है। इन ग्यारह संकीर्ण जातियों का उत्पत्तिक्रम यों है—

१. षड्जकैशिकी = षाड्जी + गान्धारी
२. षड्जमध्यमा = षाड्जी + मध्यमा
३. गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४. आन्ध्री = गान्धारी + आर्षभी
५. षड्जोदीच्यवती=षाड्जी + गान्धारी + धैवती
६. कार्मारवी=आर्षभी + पञ्चमी + नैषादी
७. नन्दयन्ती = आर्षभी + गान्धारी + पञ्चमी
८. गान्धारोदीच्यवा = गान्धारी + धैवती + षाड्जी + मध्यमा
९. मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्धारी + धैवती
१०. रक्तगान्धारी = गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैषादी
११. कैशिकी = षाड्जी + गान्धारी + मध्यमा+पञ्चमी + धैवती +नैषादी

इस तरह शुद्ध और संकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुईं। इनमें सात जातियाँ षड्जग्राम-मूर्च्छनाओं से उत्पन्न हुई हैं। वे षाड्जी, षड्जकैशिकी, षड्ज-

मध्यमा, षड्जोदीच्यवती, आर्षभी, धैवती और नैषादी हैं। बाकी ११ जातियाँ मध्यमग्राम-मूर्च्छनाओं से उत्पन्न हुई हैं। जातियों के सम्बन्ध में कई विशिष्ट नियम हैं—

१. जातियों की मूर्च्छनाएँ

जाति	ग्राम	मूर्च्छना
१. षाड्जी	षड्जग्राम	धैवतादि मूर्च्छना
२. आर्षभी	,,	पञ्चमादि मूर्च्छना
३. गान्धारी	मध्यमग्राम	,,
४. मध्यमा	,,	ऋषभादि मूर्च्छना
५. पञ्चमी	,,	,,
६. धैवती	षड्जग्राम	,,
७. षड्जकैशिकी	,,	षड्जादि मूर्च्छना (?)
८. नैषादी	,,	गान्धारादि मूर्च्छना
९. षड्जोदीच्यवा	,,	,,
१०. षड्जमध्यमा	,,	मध्यमादि मूर्च्छना
११. गान्धारोदीच्यवा	मध्यमग्राम	धैवतादि मूर्च्छना
१२. रक्तगान्धारी	,,	ऋषभादि मूर्च्छना
१३. कैशिकी	मध्यमग्राम	गान्धारादि मूर्च्छना
१४. मध्यमोदीच्यवा	,,	मध्यमादि मूर्च्छना
१५. कार्मारवी	,,	षड्जादि मूर्च्छना
१६. गान्धारपञ्चमी	,,	गान्धारादि मूर्च्छना
१७. आन्ध्री	,,	मध्यमादि मूर्च्छना
१८. नन्दयन्ती	,,	पञ्चमादि मूर्च्छना

२. न्यासस्वरों के प्रयोग-नियम

(अ) सात शुद्ध जातियों में अपने-अपने नाम के स्वर ही न्यास हैं; जैसे—षाड्जी का षड्ज, आर्षभी का ऋषभ इत्यादि।

(आ) षड्जकैशिकी, रक्तगांधारी, गांधारपंचमी, आंध्री और नंदयंती—इन पाँच जातियों का न्यास-स्वर गांधार है।

(इ) षड्जोदीच्यवा, गांधारोदीच्यवा और मध्यमोदीच्यवा—इन तीन जातियों का न्यास-स्वर मध्यम है।

(ई) कार्मारवी जाति का न्यास-स्वर पंचम है।
(उ) षड्जमध्यमा जाति के "स" और "म" दो न्यास-स्वर हैं।
(ऊ) कैशिकी जाति के "ग" "प" तथा "नि" न्यास-स्वर हैं।

यह बात पहले ही बतायी गयी है कि मूर्च्छना से ही न्यास-स्वर निश्चित होता है। हर मूर्च्छना में अंतिम स्वरों पर ठहरना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त मूर्च्छना के आरोहण एवं अवरोहण में, आरंभ-स्वर के अंश-स्वर में ठहरना भी उचित है। इसलिए मूर्च्छना के आरंभ और अंतिम स्वर तथा उनके संवादी—इन सब में कोई एक भी न्यास-स्वर बनने योग्य है। दो-चार जातियों को छोड़कर बाकी सब जातियों में ऐसा ही एक स्वर न्यास-स्वर रहता है।

प्रत्येक जाति के सातों स्वर भी अंश-स्वर नहीं हो सकते। न्यासस्वर उसके संवादी तथा पास के अनुवादी; ये ही अंशस्वर हो सकते हैं। इसके नियम नीचे यों दिये जाते हैं—

जातियों में अंश और अपन्यासों के नियम

जातियाँ	अंश	अपन्यास
१. षाड्जी	सगमपध	गप
२. आर्षभी	रिधनि	रिधनि
३. गांधारी	सगमपनि	सप
४. मध्यमा	सरिमपध	सरिमपध
५. पंचमी	रिप	रिपनि
६. धैवती	रिध	रिमध
७. नैषादी	निरिग	निरिग
८. षड्जकैशिकी	सगप	सपनि
९. षड्जोदीच्यवा	समधनि	सध
१०. षड्जमध्यमा	सरिगमपधनि	सरिगमपधनि
११. गांधारोदीच्यवा	सम	सध
१२. रक्तगांधारी	सगमपनि	सगमपधनि
१३. कैशिकी	सगमपधनि	सगमपधनि
१४. मध्यमोदीच्यवा	प	सधा
१५. कार्मारवी	रिपधनि	रिपधनि

जातियाँ	अंश	अपन्यास
१६. गांधारपंचमी	प	रिप
१७. आंध्री	रिगपनि	रिगपनि
१८. नन्दयंती	प	मप

जातियों में षाडव तथा औडवलोपी स्वर

जातियाँ	षाडवलोपी स्वर	औडवलोपी स्वर
१. षाड्जी	नि	—
२. आर्षभी	स	सप
३. गांधारी	रि	रिध
४. मध्यमा	ग	गनि
५. पंचमी	ग	गनि
६. धैवती	प	सप
७. नैषादी	प	मप
८. षड्जकैशिकी	—	—
९. षड्जोदीच्यवा	रि	रिप
१०. षड्जमध्यमा	नि	गनि
११. गांधारोदीच्यवा	रि	—
१२. रक्तगांधारी	रि	रिध
१३. कैशिकी	रि	रिध
१४. मध्यमोदीच्यवा	—	—
१५. कार्मारवी	—	—
१६. गांधारपंचमी	—	—
१७. आंध्री	स	—
१८. नंदयन्ती	—	—

जातियों का रसभाव उनके न्यास एवं अंशस्वरों के अनुसार है।

जातियां और रस[1]

जातियाँ	रस
षड्जोदीच्यवती, षड्जमध्यमा, मध्यमा, पंचमी, नंदयन्ती	शृङ्गार, हास्य
आर्षभी, षाड्जी	वीर, अद्भुत, रौद्र
गांधारी, रक्तगांधारी	करुण
षड्जकैशिकी, धैवती, कैशिकी, गांधारपंचमी	बीभत्स, भयानक

१. संगीतरत्नाकर में १८ जातियों के लक्षण और एक जाति में ब्रह्मा कृत साहित्य भी दिया गया है। उन लक्षणों में ऊपर बताये हुए न्यासस्वर, अंशस्वर, अपन्यासस्वर, षाडव-औडवलोपी स्वरों के अलावा, काकली आदि साधारण स्वरों की विशेष विधि, दो-दो स्वरों को जोड़कर प्रयोग करने की रीति, अल्पत्व-बहुत्व स्वर, स्वरलोप की विशेष विधि, हरएक जाति में साहित्य के लायक प्रबंधों का नियत लक्षण, ताल के नाम व मार्ग, गीतिविशेष, प्रत्येक जाति का नाटक में प्रयोगसंदर्भ और उस जाति की छाया से युक्त तात्कालिक विवरण दिये गये हैं।

ताल के बारे में आगे तालाध्याय में विस्तार किया जायगा। इनमे से पहले-पहल उत्पन्न ताल ही उपयुक्त किये गये हैं।

अ—चच्चत्पुटं	(८ अक्षर)	ई—संपद्वेष्टांक	(१२ अक्षर)
आ—चाचपुटं	(६ अक्षर)	उ—पंचपाणि	(१२ अक्षर)
इ—षट्पितापुत्रकं	(१२ अक्षर)	ऊ—उद्घट्टं	(६ अक्षर)

ये आदिकाल के ताल हैं। ताल के अंगों को दुगुना या चौगुना करके नये तालों के रचना-नियमों की—यानी कला के बारे में प्रत्येक जाति की—विधि भी बतायी गयी है। प्रत्येक कला के मात्राकाल के भेद—अर्थात्, मार्ग के विषय में नियम—दिये गये हैं।

मध्यमोदीच्यवा गांधारोदीच्यवा }	वीर, रौद्र
कार्मारवी आंध्री }	अद्भुत
षड्जमध्यमा	सर्वरस

अब प्रत्येक जाति का लक्षण यहाँ दिया जाता है।

जातिलक्षण

१. षाड्जी

(१) इस जाति में (षाडव-औडव रहित) संपूर्ण रूप में काकली-स्वरों का प्रयोग है। (२) सगा, सधा जोड़कर प्रयोग करना है। (३) गांधार जब अंश होता है तब निषाद का लोप नहीं है। (४) इस जाति के प्रबंध में ताल है। "पंचपाणि" जो षट्पितापुत्रक नामक ताल का एक भेद है। (५) यह ताल एक कला, द्विकला और चतुष्कला में प्रयुक्त किया जाता है। इस ताल के मार्ग में चित्र, वार्तिक तथा दक्षिण का (अर्थात् हर कला की दो, चार और आठ मात्राओं का) प्रयोग होता है। (६) गीति में मागधी, संभाविता और प्रथुला—इन तीनों का प्रयोग है। (७) नाटक में इस जाति का प्रयोग, "नैष्कामिक" ध्रुवा में, पहले दृश्य में किया जाता था। संगीतरत्नाकर-काल के (ई० सन् १२०० के) वराटी राग की छाया इस जाति में थी।

२. आर्षभी

इस जाति में, गांधार और निषाद का, दूसरे पाँच स्वरों के साथ मिलाकर प्रयोग करना पड़ता है। इस जाति में, गांधार और निषाद बहुल स्वर हैं। पंचम अल्प स्वर है। पंचम का लंघन होता है। ताल चच्चत्पुट (८ अक्षर) है। कलाएँ आठ हैं। नैष्क्रामिक ध्रुवा में प्रयोग किया जाता था। इस जाति में देशी मधुकरी की छाया है।

३. गांधारी

इस जाति में न्यासस्वर एवं अंशस्वर अन्य स्वरों के साथ-साथ प्रयुक्त किये जाते हैं। "रि" और "ध" का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है। पंचम के अंश होने पर जाति षाडव-औडव रहित अर्थात् पूर्ण होती है। नि, स, म—इनमें कोई एक स्वर

अंश होता है तो औडव रूप नहीं होता। पूर्ण और षाडव रूप ही होते हैं। इसका ताल "चच्चत्पुट" है। प्रत्येक अक्षर की कलाएँ सोलह हैं। इसका प्रयोग, तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। गांधारपंचमी, देशी वेलावली—इन दोनों रागों की छाया इस जाति में है।

४. मध्यमा

इस जाति में षड्ज और मध्यम बहुल स्वर हैं। इस जाति में साधारण स्वर अर्थात् अन्तर, काकली स्वरों का प्रयोग है। गांधार और निषाद अल्पत्व स्वर हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ आठ हैं। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। चोक्ष (शुद्ध) षाडव और देशी आंधाली—इन दोनों की छाया इस जाति में है।

५. पंचमी

इस जाति में, "सग" और "म" अल्पत्व स्वर हैं। "रिम" और "गनि" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं। इस जाति में भी अन्तर, काकली स्वरों का प्रयोग है। ऋषभ, अंश रहता है, तो औडव रूप नहीं होता। पूर्ण और षाडव मात्र होते हैं। ताल चच्चत्पुट है। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था। चोक्ष पंचम तथा देशी आंधाली की रागच्छायाएँ इस जाति में हैं।

६. धैवती

आरोह में षड्ज और पंचम लंघ्य या वर्ज्य हैं। "रिध" बहुल स्वर हैं। ताल पंचपाणि है। मार्ग, गीति, प्रयोग इत्यादि षाड्जी जाति की तरह होते हैं। कलाएँ बारह हैं। इस जाति में चोक्ष कैशिकी, देशी सिंहली इत्यादि रागों की छाया है।

७. नैषादी

समपध अल्पत्वस्वर हैं और निरिध बहुल स्वर हैं। विनियोग षाड्जी की ही तरह होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चोक्ष, साधारित, देशी, वेलावली इत्यादि की छाया इस जाति में पायी जाती है।

८. षड्जकैशिकी

ऋषभ और मध्यम अल्पत्वस्वर हैं। धनि बहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। दूसरे दृश्य में, प्रावेशिकी ध्रुवा में, इसका प्रयोग होता था। इस जाति में, गांधार पंचम, हिंदोल और देशी वेलावली की छायाएँ हैं।

९. षड्जोदीच्यवा

स म नि और ग—इन चारों में दो-दो स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। मंद्र व गांधार बहुलस्वर हैं। षड्ज और ऋषभ अतिबहुलस्वर हैं। निषाद और गांधार अंश होते हैं तो निषाद का अल्पत्व नहीं होता। गीति, ताल, कला, विनियोग इत्यादि षाड्जी ही के समान हैं। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था।

१०. षड्जमध्यमा

इस जाति में, सब अंशस्वरों में से (सरिगमपधनि) दो-दो स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। इस जाति में अन्तर काकली स्वरों का प्रयोग है। निषाद का अल्पत्व है। गांधारांश न होने पर षाडव-औडव में निषाद का लोप होता है। षाडव-औडव में निषाद का लोप है। षाडव-औडव में गांधार और निषाद विवादी स्वर हैं। गीति, ताल, कला—ये सब षाड्जी की तरह हैं। यह दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, प्रयुक्त होती है।

११. गांधारोदीच्यवा

पूर्ण स्वरूप में, अंश के सिवा अन्य स्वर अल्पत्व के हैं। षाडव-रूप में भी, "नि, ध, प," तथा "ग" का अल्पत्व है। रि और ध साथ-साथ आते हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग है।

१२. रक्तगांधारी

षड्ज और गांधार का, साथ-साथ प्रयोग होता है। धैवत और निषाद बहुल स्वर हैं। ताल, गीति और कला षाड्जी ही के अनुसार हैं। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१३. कैशिकी

इस जाति में, निषाद और धैवत अंश हों तो पंचम-न्यास रहना चाहिए। इस विषय में मतांतर भी है कि "नि" एवं "ग" अंश होने पर नि, ग और प—इन तीनों को न्यास स्वर रहना चाहिए। ऋषभ अल्प स्वर है। निषाद और पंचम बहुलस्वर हैं। सारे अंशस्वरों में अर्थात्, सगमपधनि में—दो-दो स्वरों का प्रयोग, साथ-साथ होता है। ताल, कला और गीति षाड्जी के समान हैं। इसका प्रयोग, पाँचवें दृश्य में, ध्रुवा गान में, होता था।

१४. मध्यमोदीच्यवा

इस जाति में, अल्पत्व, बहुत्व और स्वरसंगति गांधारोदीच्यवा के समान हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१५. कार्मारवी

इस जाति में, जो स्वर अंश के नहीं हैं, वे अंतरमार्ग प्रयोग से बहुलस्वर हैं। गांधार अति बहुल स्वर हैं। अंश स्वरों में से दो-दो स्वरों का, साथ-साथ प्रयोग होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। पाँचवें दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१६. गांधारपंचमी

इस जाति में गांधारी और पंचमी—दोनों जातियों के समान, स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१७. आंध्री

इस जाति में, रि, ग, ध और नि—इन स्वरों को मिला-मिला कर प्रयोग करना चाहिए। अंशस्वर से न्यासस्वर तक का क्रम-संचार है। अन्य लक्षण गांधार पंचमी के अनुसार ही हैं।

१८. नन्दयन्ती

इस जाति में गान्धार ग्रहस्वर है। मतान्तर में, पंचम भी ग्रहस्वर है। मन्द्र ऋषभ बहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ बत्तीस हैं। नाटक में पहले दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

जातियों के उदाहरण

हरएक जाति के लिए, ब्रह्माजी ने, गीति और उसका साहित्य बनाया। इसका कारण यह है कि उन्होंने ही आरम्भ में सामवेद से जातियों का संग्रह किया है। प्रत्येक गीति में उन-उन जातियों के ताल एवं कला का अनुसरण किया गया है।

षाड्जी—१

१.	सा	सा	सा	सा	पा	निध	पा	धनि
	तं		भ	व	ल	ला		ट
२.	री	गम	गा	गा	सा	रिग	धस	धा
	न	य	नां		बु	जा		धि
३.	रिग	सा	री	गा	सा	सा	सा	सा
	कं							
४.	धा	धा	नी	निर्सं	निध	पा	सां	सां
	न	ग	सू		नु	प्र	ण	य
५.	नी	धा	पा	धनि	री	गा	सा	गा
	के		लि		स	मु		द्ध
६.	सा	ध़ा	ध़नि़	प़ा	सा	सा	सा	सा
	वं							
७.	सा	सा	गा	सा	मा	पा	मा	मा
	स	र	स	कृ	त	ति	ल	क
८.	सा	गा	मा	धनि	निध	पा	गा	रिग
	पं			का	नु	ले	प	
९.	गा	गा	गा	गा	सा	सा	सा	सा
	नं							
१०.	ध़ा	सा	री	गरि	सा	मा	मा	मा
	प्र	ण	मा		मि	का		म
११.	धा	नी	पा	धनि	री	गा	री	सा
	दे		हें		ध	ना	न	
१२.	रिग	सा	री	गा	सा	सा	सा	सा
	लं							

आर्षभी—२

१. री	गा	सा	रिग	मा	रिम	गा	रिरि
गु	ण	लो		च	ना		धि
२. री	री	निध	निध	गा	रिम	मा	पनि
क	म	न		न्त	म	म	र
३. मा	धा	नी	धा	पा	पा	सा	गा
म	ज	र	म			क्ष	य
४. नी	धनि	री	गरि	सध़	गरि	री	री
म	जे					यं	
५. री	मा	गरि	सध़	सस	रिस	रिग	मम
प्र	ण		मा			मि	दिव्य
६. निध	पा	री	री	रिप	गरि	सध़	सा
म	णि	द		र्प	णा		म
७. रिस	रिस	रिग	रिगं	मा	मा	मा	गरि
ल	नि	के				तं	
८. पा	नी	री	मा	गरि	सधं	गरि	गरि
भ	व	म	मे				यं

गांधारी—३

१. गा	गा	सा	नी़	सा	गा	गा	गा
ए				तं			
२. गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निसं
र	ज	नि	व	धू		मु	ख
३. निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
वि			भ्र	म		दं	
४. गा	गम	पा	पा	धप	म	निध	निसं
नि	शा	म	य	व	रो		रु
५. निध	पनि	मा	मपरि	मा	गा	मा	सा
न	व	मु	ख	वि	ला		स
६. गा	सा	गा	गा	गा	गम	गा	गा
व	पु	श्चा	रु		म	म	ल

७.	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निस
	मृ	दु	कि	र	ण			
८.	निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	म	मृ	त	भ	वं			
९.	री	गा	मा	पध	री	गा	सा	सा
	र	ज	त	गि	रि	शि	ख	र
१०.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	म	णि	श	क	ल	शं		ख
११.	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निम
	व	र	यु	व	ति	दं		त
१२.	निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	पं		क्ति	नि	भं			
१३.	नी	नी	पा	नी	गा	मा	गा	सा
	प्र	ण	मा		मि	प्र	ण	य
१४.	गा	सा	गा	गा	गा	गम	गा	गा
	र	ति	क	ल	ह	र	व	नु
१५.	गा	पा	मा	मा	निध	निसँ	निध	पनि
	दं							
१६.	मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	श	शि			नं			

मध्यमा—४

१.	मा	मा	मा	मा	पा	धनि	नी	धप
	पा			तु	भ	त्र	मू	
२.	मा	पम	मा	सा	मा	गा	री	री
	र्ध	जा			न	न		
३.	पा	मा	रिम	गम	मा	मा	मा	मा
	कि	री	ट					
४.	माँ	निध	निसँ	निध	पम	पध	मा	मा
	म	णि	द		पं		र्णं	

५.	नी॰	नी॰	री	री	नी॰	री	री	पा
	गौ		री		क	र	प	
६.	नी॰	मप	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	ल्ल	वां			गु	लि		सु
७.	गँा	नी	सँा	गँा	धप	मा	धनि	सँा
	ते						जि	तं
८.	पा	सँा	पा	निधप	मा	मा	मा	मा
	सु	कि	र		णं			

पंचमी—५

१.	पा	धनि	नी	नी	मा	नी	मा	पा
	ह	र	मू		र्ध	जा		न
२.	गा	गा	सा	सा	मा़	मा़	पा़	पा़
	नं	म	हे		श	म	म	र
३.	पा़	पा़	धा़	नी॰	नी॰	नी॰	गा	सा
	प	ति	बा		हु	स्तं		भ
४.	पा	मा	धा	नी	निध	पा	पा	पा
	न	म	नं		तं			
५.	पा	पा	री°	री°	री°	री°	री°	री°
	प्र	ण	मा		मि	पु	रु	ष
६.	मा़	नि़ग	सा	सध	नी	नी	नी	नी
	मु	ख	प	द्म		ल		क्ष्मी
७.	सँा	सँा	सँा	मा	पा	पा	पा	पा
	ह	र	मं		बि	का		प
८.	धा	मा	धा	नी	पा	पा	पा	पा
	ति	म	जे		यं			

धैवती—६

१.	धा	धा	निध	पध	मा	मा	मा	मा
	त	रु	णा		म	लें		दु
२.	धा	धा	निध	निसँ	सँा	सँा	सँा	सँा
	म	णि	भू		षि	ता		म

३.	सध	धा	पा	मध	धा	निध	धनि	धा
	ल	शि	रो				जं	
४.	सा	सा	रिग	रिग	सा	रिग	सा	सा
	भु	ज	गा		धि	पैं		क
५.	ध़ा	ध़ा	नी़	प़ा	ध़ा	प़ा	म़ा	म़ा
	कुं		ड	ल	वि	ला		म
६.	ध़ा	ध़ा	प़ा	म़ध़	ध़ा	नि़ध़	ध़नि़	ध़ा
	कु	त	शो				भं	
७.	धा	धा	निसँ	निसँ	निध	पा	पा	पा
	न	ग	सू		नु	ल		क्ष्मी
८.	रिग	सा	सा	सा	नी़	नी़	नी़	नी़
	दे	हा			र्धं	मि		श्रि
९.	सा	रिग	रिग	सा	नी़	सा	ध़ा	ध़ा
	त	श	री				रं	
१०.	री़	ग़रि़	म़ग़	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	प्र	ण	मा		मि	भू		त
११.	नी	नी	धा	धा	पा	रिग	सा	रिग
	गी		तो		प	हा		र
१२.	पा	धा	सा	मा	धा	नी	धा	धा
	प	रि	तु				ऽं	

नैषादी—७

१.	नी	नी	नी	नी	सँा	धा	नी	नी
	तं		सु	र	वं		दि	त
२.	पा	मा	सा	ध़ा	नी़	नी़	नी़	नी़
	म	हि	ष	म	हा		सु	र
३.	सा	सा	गा	गा	नी	नी	धा	नी
	म	थ	न	मु	मा		प	तिं
४.	सँा	सँा	धा	नी	नी	नी	नी	नी
	भो		ग	यु	तं			

५.	सा	सा	गा	गा	म̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा
	न	ग	सु	त	का		मि	नी
६.	नी̥	प̥ा	ध̥ा	प̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा
	दि		व्य	वि	शे		ष	क
७.	री°	गाँ	साँ	साँ	री°	गाँ	नी	नी
	सू		च	क	शु	भ	न	ख
८.	नी	नी	पा	धनि	नी	नी	नी	नी
	द		पं	ण	कं			
९.	सा	सा	गा	सा	मा	मा	मा	मा
	अ	हि	मु	ख	म	णि	ख	चि
१०.	म̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा	नी̥	ध̥ा	म̥ा	म̥ा
	तो		ज्ज्व	ल	नू		पु	र
११.	धा	धा	नी	नी	री	गा	म̥ा	म̥ा
	बा	ल		भु	जं	ग		म
१२.	म̥ा	म̥ा	प̥ा	ध̥ा	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥
	र	व	क	लि		तं		
१३.	प̥ा	प̥ा	नी̥	नी̥	री	री	री	री
	द्रु	त	म	भि	व्र	जा		मि
१४.	री	मा	मा	मा	री	गा	सा	सा
	श	र	ण	म	निं		दि	त
१५.	धा	मा	री	गा	सा	धा	नी	नी
	पा		द	यु	ग	पं		क
१६.	पाँ	माँ	री°	गाँ	नी	नी	नी	नी
	ज	वि	ला		सं			

षड्जकैशिकी—८

१.	सा	सा	म̥ा	प̥ा	गरि	मग	मा	मा
	दे							
२.	मा	मा	मा	मा	स̥ा	स̥ा	स̥ा	स̥ा
	वं							

३.	धा	धा	पा	पा	धा	धा	री	रिम
	अ	स	क	ल	श	शि	ति	ल
४.	री	री	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़
	कं							
५.	धा	धा	पा	धनि	मा	मा	पा	पा
	द्वि	र	द	ग	तिं			
६.	धा	धा	पा	धनि	धा	धा	पा	पा
	नि	पु	ण	म	तिं			
७.	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
	मु		ग्ध		मु	खां		बु
८.	धा	धा	पा	धा	धनि	धा	धा	धा
	रु	ह	दि		व्य	कां		तिं
९.	सा	सा	सा	रिग	सा	रिग	धा	धा
	ह	र	मं		बु	दो		द
१०.	मा	धा	पा	पा	धा	धा	नी	नी
	धि	नि	ना		दं			
११.	री	री	गा	सा	सा़	सा़	सा़	गा़
	अ	च	ल	व	र	सू		नु
१२.	धा़	रि़सु़	री़	सु़रि़	री़	सा़	सा़	सा़
	दे		हा		धं	मि		श्रि
१३.	सा	सरि	री	सरि	री	सा	सा	सा
	त	श	री		रं			
१४.	मा	मा	मा	मा	निध	पध	मा	मा
	प्र	ण	मा		मि	तम	हं	
१५.	नी	नी	पा	पम	पा	पम	पध	रिग
	अ	नु	प	म	मु	ख	क	म
१६.	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	लं							

षड्जोदीच्यवा—९

१.	सा	सा	सा	सा	मा़	मा़	गा़	गा़
	शं				ले			

२.	गा	मा	पा	मा	गा	मा	मा	धा
	श		सू					नु
३.	सा	सा	मा	गा	पा	पा	नी	धा
	शौ		ले		श	सू		नु
४.	धा	नी	सा	सा	धा	नी	पा	मा
	प्र	ण	य		प्र	सं		ग
५.	ग़ा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	ग़ा
	स	वि	ला		स	खे		ल
६.	धा	धा	पा	धा	पा	नी	धा	धा
	न	वि	नो				दं	
७.	सा	ग़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा	सा	सा
	अ		धि		क			
८.	नी	धा	पा	धा	पा	धा	धा	धा
	मु		खें					दु
९.	सां	सां	मा	गा	पा	पा	नी	धा
	अ	धि	क		मु	खें		दु
१०.	धा	नी	सां	सां	धा	नी	पा	मा
	न	य	नं		न	मा		मि
११.	ग़ा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	ग़ा
	दे		वा		सु	रे		श
१२.	धा	धा	पा	धा	मां	मां	मां	मां
	त	व	रु	चि	रं			

षड्जमध्यमा—१०

१.	मा	गा	सग	पा	धप	मा	निध	निम
	र	ज	नि	व	धू		मु	ख
२.	मां	मां	सां	रिंगं	मंगं	निध	पध	पा
	वि	ला		स	लो			च
३.	मा	गा	री	गा	मा	मा	सा	सा
	नं							

४.	मा	मगम	मा	मा	निध	पध	पम	गमम
	प्र	वि	क	सि	त	कु	मु	द
५.	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	द	ल	फे	न	सं			नि
६.	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	भं							
७.	म̥ा	म̥ा	म̥ग̥म̥	म̥ध̥	ध̥प̥	प̥ध̥	प̥म̥	ग̥म̥ग̥
	का		मि	ज	न	न	य	न
८.	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	हृ	द	या	भि	नं			दि
९.	मा	मा	धनि	धस	धप	मप	पा	पा
	नं							
१०.	म̥ा	म̥ग̥म̥	म̥ा	नि̥ध̥	प̥ध̥	प̥म̥ग̥	ग̥ा	म̥ा
	प्र	ण	मा		मि	दे		वं
११.	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	कु	मु	दा	धि	वा			सि
१२.	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	न							

गांधारोदीच्यवा—११

१.	सा	सा	पा	मा	पा	धप	पा	मा
	सौ							
२.	धा	पा	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	म्य							
३.	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	गौ		री		मु	खां		बु
४.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	रु	ह	दि		व्य	ति	ल	क
५.	मा	मा	धा	निस	नी	नी	नी	नी
	प	रि	चुं		बि	ता		चि
६.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सा	सा
	त	सु	पा		दं			

७. गा	मग	पा	पध	मा	धनि	पा	पा
प्र	वि	क	सि	त	हे		म
८. री	गा	सा	सध	नी	नी	धा	धा
क	म	ल	नि	भं			
९. गा	रिग	सा	सनि	गा	रिग	सा	सा
अ	ति	रु	चि	र	कां		ति
१०. सा	सा	सा	मा	मनि	धनि	नी	नी
न	ख	द		पं	णा		म
११. माँ	पाँ	माँ	पँरिगँ	गँ	गाँ	साँ	साँ
ल	नि	के		तँ			
१२. गाँ	साँ	गाँ	साँ	माँ	पाँ	माँ	पँरिंगँ
म	न	सि	ज	श	री	र	
१३. गाँ	माँ	गाँ	साँ	गाँ	गाँ	गाँ	साँ
ता			ड	नं			
१४. नी°	नी°	पाँ	धाँ	नी°	गाँ	गाँ	गाँ
प्र	ण	सा		मि	गौ		री
१५. नी°	नी°	धाँ	पाँ	धाँ	पाँ	माँ	पाँ
च	र	ण	यु	ग	म	नु	प
१६. धाँ	पाँ	साँ	साँ	माँ	माँ	माँ	माँ
मं							

रक्तगांधारी—१२

१. पा	नी	सा	सा	गा	सा	पा	नी
तँ		बा		ल	र	ज	नि
२. साँ	साँ	पा	पा	मा	मा	गा	गा
क	र	ति	ल	क	भू		ष
३. मा	पा	धा	पा	मा	पा	धप	मग
ण	वि	भू					
४. मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
ति							

५.	ध़ा	नी़	प़ा	म़प़	ध़ा	नी़	प़ा	प़ा
	०							
६.	म़ा	प़ा	म़ा	ध़नि़	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा
	०							
७.	री	गा	मा	पा	पा	पा	मा	पा
	प्र	ण	मा		भि	गौ		री
८.	री	गाँ	माँ	पाँ	पाँ	पाँ	माँ	पाँ
	व	द	ना		र	विं		
९.	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	द							
१०.	री	गा	सा	सा	री	गा गा	गां	गा
	प्री		ति	क	रं			
११.	गाँ	गाँ	पाँ	धँमँ	धं:	निँधँ	पा	पा
	०							
१२.	माँ	पाँ	माँ	पँरिँगँ	गाँ	गाँ	गाँ	गाँ
	०							

कैशिकी—१३

१.	पा	धनि	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	के		ली		ह्		त	
२.	पा	पा	मा	निध	निध	पा	पा	पा
	का		म	त	नु			
३.	धा	नी	सां	सा	री	री	री	री
	वि		भ्र	म	वि	ला		सं
४.	सा	सा	सा	री	गा	मा	मा	मा
	ति	ल	क	यु	तं			
५.	म़ा	ध़ा	नी़	ध़ा	म़ा	ध़ा	म़ा	प़ा
	मू		र्धो		र्ध्व	बा		ल
६.	गा	री	सा	धनि	री	री	री	री
	सो		म	नि	भं			

७. गा	री	सा	सा	धा	धा	मा	मा
मु	ख	क	म	लं			
८. गा	गा	गा	मा	मा	निधनि	नी	नी
अ	स	म		हा		ट	
९. गा	गा	नी	नी	गा	गा	गा	गा
क	स	रो		जं			
१०. गँा	गँा	नी	नी˚	निंधँ	पँा	पँा	पँा
हृ	दि	सु	ख	दं			
११. मँा	पँा	मँा	पँा	पँा	पँा	मँा	मँा
प्र	ण	मा		मि	लो	च	
१२. सँा	मँा	गँा	निंधँनिं	नी	नी˚	मँा	गँा
न	वि	शे		षं			

मध्यमोदीच्यवा—१४

१. पा	धनि	नी	नी	मा	पा	नी	पा
दे		हा		र्ध	रू		प
२. री	री	री	गा	सा	रिग	गा	गा
म	ति	कां		ति	म	म	ल
३. नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
म	म	लें		दु	कुं		द
४. नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
कु	मु	द	नि	भं			
५. पा	पा	री	री	री	री	री	री
चा		मी		क	रां		बु
६. मा	रिग	सा	सध़	नी़	नी़	नी़	नी़
रु	ह	दि			व्य	कां	ति
७. मा	पा	नी	सा	पा	पा	गा	गा
प्र	व	र	ग	ण	पू		जि
८. गा	प़ा	म़ा	नि़ध़	नी़	नी़	सा	सा
त	म	जे		यं			

९. प़ा	प़ा	म़ा	ध़नि़	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा
सु	रा	भि	ष्टु	त	म	नि	ल
१०. मा	पा	मा	रिग	गा	गा	गा	गा
म	नो	ज		व		मं	बु
११. गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
दो		द	धि	नि	ना		द
१२. मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
म	ति	हा		सं			
१३. गाँ	गाँ	गाँ	गाँ	माँ	निँधँ	नी°	नी°
शि	वं	शां		त	म	सु	र
१४. नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
च	मू	म	थ	नं			
१५. री°	गाँ	साँ	साँ	माँ	निँधँनिँ	नी°	नी°
वं		दे		त्रै	लो	क्य	
१६. नी°	नी°	धाँ	पाँ	धाँ	पाँ	माँ	मा
न	त	च	र	णं			

कार्मारवी—१५

१. री	री	री	री	री	री	री	री
तं		स्था		णु	ल	लि	त
२. मा	गा	सा	गा	सा	नी	नी	नी
वा		मां		ग	स		क्त
३. नी़	म़ा	नी़	म़ा	प़ा	प़ा	गा	गा
म	ति	ते		जः	प्र	स	र
४. गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
सौ		धां		शु	कां		ति
५. री°	गाँ	साँ	नी°	री°	गाँ	री°	माँ
फ	णि	प	ति	मु	खं		
६. री	गा	री	सा	नी	धनि	पा	पा
उ	रो	वि	पु	ल	सा		ग

७.	माँ	पाँ	माँ	पँरिँगँ	गा	गा	गा	गा
	र	नि	के		तं			
८.	री	री	गा	सम	मा	मा	पा	पा
	सि	त	पं		न	गें		द्र
९.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	कां		तं			
१०.	धा	नी	पा	मा	धा	नी	सा	सा
	ष		ण्मु	ख	वि	नो		द
११.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क	र	प		ल्ल	वां		गु
१२.	म़ा	म़ा	ध़ा	नी़	सनिनि	धा	पा	पा
	लि	वि	ला		स	की		ल
१३.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		दं			
१४.	नी	नी	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
१५.	साँ	री°	गाँ	साँ	नी°	नी°	नी°	नी°
	य		ज्ञो		प	वी		त
१६.	नी°	नी°	धाँ	धाँ	पाँ	पाँ	पाँ	पाँ
	कं							

गांधारपंचमी—१६

१.	पा	मप	मध	नी	धप	मा	धा	नी
	कां							
२.	सनिनि	धा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
			तं					
३.	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	वा		मै		क	दे		श
४.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	प्रें		खो		ल	मा		न

५.	नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
	क	म	ल	नि	भं			
६.	पा	पा	री	री	री	री	री	री
	व	र	सु	र	भि	कु	सु	म
७.	मा	रिग	सा	सध	नी	नी	नी	नी
	गं		धा		धि	वा		सि
८.	नी	नी	सां	रिंसं	री̊	री̊	री̊	री̊
	त	म	नो		ज्ञ			
९.	नी	गा	सा	निग	सा	नी̥	नी̥	नी
	न	ग	रा		ज	सू		नु
१०.	नी̥	मा̥	नी	मा̥	पा̥	पा̥	गा	गा
	र	ति	रा		ग	र	भ	स
११.	गा	पा̥	मा̥	पा̥	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥
	के		ली		कु	च		ग्र
१२.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	ह	ली	लं		तं			
१३.	नी̥	नी̥	पा̥	धा̥	नी̥	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		वं
१४.	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥	नी̥
	चं		द्रा		र्धं	मं		डि
१५.	मा̥	मा̥	धा̥	नी̥	सनिनि	धा	पा	पा
	त	वि	ला		सकी		ल	
१६.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		दं			

आंध्री—१७

१.	गा	री	री	री	री	री	री	री
	त	रु	णें		दु	कु	सु	म
२.	री	गा	री	गा	री	री	री	री
	ख	चि	त	ज	टं			

३. री	री	गा	गा	री	री	मा	मा
त्रि	दि	व	न	दी	स	लि	ल
४. री	गा	सा	धनि	नी॒	नी॒	नी॒	नी॒
धौ		त	मु	खं			
५. नी॒	री	नी॒	री	ध॒नि॒	ध॒नि॒	पा	पा
न	ग	सू		नु	प्र	ण	यं
६. मा॒	पा॒	मा॒	रिग	गा	गा	गा	गा
वे		द	नि	धिं			
७. री	री	गा	सस	मा	मा	पा	पा
प	रि	णा		हि	तु	हि	न
८. मा॒	पा॒	मा॒	रिग	गा	गा	गा	गा
शै		ल	गृ				
९. धा॒	नी॒·	गा	गा	गा	गा	गा	गा
अ	मृ	त	भ	वं			
१०. पा	पा	मा	रिग	गा	गा	गा	गा
गु	ण	र	हि	तं			
११. नी	नी	नी	नी	री	री	री	री
त	म	व	नि	र	वि	श	शि
१२. री	री	गा	नी	सा	सा	नी	नी
ज्व	ल	न	ज	ल	प	व	न
१३. पाँ	पाँ	माँ	रिंगँ	गाँ	गाँ	गाँ	गाँ
ग	ग	न	त	नुं			
१४. रीं°	रीं°	गाँ	संमँ	माँ	माँ	पाँ	पाँ
श	र	णं		व्र	जा		मि
१५. माँ	माँ	नी°	नी°	साँ	री°	गाँ	पाँ
शु	भ	म	ति	कृ	त	नि	ल
१६. रिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा
यं							

नन्दयन्ती—१८

१. गा	गा	गा	गा	पा	पा	धप	मा
सौ							

२.	धा	धा	धा	धा	धा	नी	सनिनि	धा
	०							
३.	प̥ा	प̥ा	प̥ा	प̥ा	प̥ा	प̥ा	प̥ा	प̥ा
	स्यं							
४.	ध̥ा	नी̥	म̥ा	प̥ा	ग̥ा	ग̥ा	ग̥ा	ग̥ा
	वे		दां		ग	वे		द
५.	मा	री	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	क	र	क	म	ल	यो		निं
६.	मा	मा	पा	पा	धा	निध	पा	पा
	त	मो	र	जो	वि	व		
७.	धा	नी	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	जि	तं						
८.	गम	पा	पा	पा	मा	मा	गा	गा
	हरं							
९.	धा	नी	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	भ	व	ह	र	क	म	ल	गृ
१०.	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
	हं							
११.	री	गा	मा	पा	पम	पा	पा	नी
	शि	वं	शां		तं	सं		नि
१२.	री̥	री̥	री̥	री̥	प̥ा	प̥ा	म̥ा	म̥ा
	वे		श	न	म	पू		वं
१३.	ध̥ा	नी̥	सनि̥नि̥	ध̥ा	प̥ा	पा	पा	पा
	भू	ष		ण	ली		लं	
१४.	ध̥ा	नी	म̥ा	प̥ा	ग̥ा	ग̥ा	ग̥ा	ग̥ा
	उ	र	गे		श	भो		ग
१५.	गा	पा	पा	पा	धा	मा	गा	मा
	भा		सु	र	शु	भ	पु	थु
१६.	धा	धा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
	लं							
१७.	री	गा	मा	पा	पम	पा	पा	नी
	अ	च	ल	प	ति	सू	नु	

१८.	री̣	री̣	री̣	री̣	पा̣	पा̣	पा̣	पा̣
	क	र	पं		क	जा		म
१९.	पा	पा	पा	पा	धा	मा	मा	मा
	ल	वि	ला		स	की		ल
२०.	नी̣	पा̣	गा̣	ग̣म̣	गा̣	गा̣	गा̣	गा̣
	न	वि	नो		द्रं			
२१.	री̣	री̣	गा̣	गा̣	मा̣	मा̣	मा̣	मा
	स्फ	टि	क	म	णि	र	ज	त
२२.	नी	पा	नी	मा	नी	धा	पा	पा
	सि	त	न	व	दु	कू		ल
२३.	सां	सां	धनि	धा	पा	पा	पा	पा
	क्षी		रोद		सा			ग
२४.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सां	सां
	र	नि	का		शं			
२५.	री	री	गा	गा	मा	मा	पा	पा
	अ	ज	शि	रः	क	पा		ल
२६.	री	री	री	गा	मा	रिग	मा	मा
	पृ	थु	भा			ज	नं	
२७.	मा	नी	पा	नी	गा	गा	गा	गा
	वं		दे		सु	ख	दं	
२८.	मा	मा	पा	पा	धा	धनि	निध	मा
	ह	र	दे		ह	म	म	ल
२९.	धा	धा	सा	नी	धा	नी	पा	पा
	म	धु	सू		द	न		सु
३०.	री°	री°	री°	री°	मा	पा	धा	मा
	ते		जो		धि	क		सु
३१.	नी	नी	नी	नी	धा	पा	मा	मा
	ग	ति	यो					
३२.	मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
			निं					

छठवाँ परिच्छेद

राग प्रकरण

राग दो प्रकार के हैं—प्राचीन और नवीन। प्राचीन रागों को 'मार्गराग' तथा 'भाषाराग' कहते हैं। नवीन रागों का नाम 'देशीराग' है। मार्गराग, भाषाराग और देशीराग—इन तीनों के दूसरे नाम भी हैं, जैसे—शुद्ध राग, छायालग राग और साधारण राग। मार्गराग में ब्रह्मा, भरत, नारद आदियों के उपदेशानुसार शुद्ध और विकृत जातियों के लक्षण पूर्णरूप में हैं।

मार्गरागों में तीन भेद हैं, ग्रामराग, शुद्धराग और उपराग। ग्रामरागों में पांच भेद यों हैं—शुद्ध, भिन्न, गौड़, वेसर और साधारण।

काव्य, नाटक और गीत इन सब में रुचिभेद के अनुसार काव्य में रीति, नाटक में वृत्ति और गीत में गीति के भेद हुए हैं। पांचों गीतियों के अनुसार ही ग्रामरागों के पूर्वोक्त पांच भेद हुए हैं।

शुद्ध गीति[1] में स्वर वक्रता रहित हैं और मृदुल भी। भिन्न गीति में स्वर वक्र, सूक्ष्म, मधुर और गमकयुक्त हैं। गौडी गीति में स्वरों की निविडता के साथ, तीनों स्थानों में संचार गमकयुक्त है और मंद्रस्थान में विशेष संचार[2] है। वेसरगीति में स्वरों का प्रयोग वेग से होता है तथा रक्तिपूर्ण भी रहता है। इन चारों गीतियों के लक्षणों का मिश्रित रूप ही साधारणी गीति है।

इन गीतियों के अनुसार ही ग्रामरागों की उत्पत्ति हुई थी; जैसे—

१. भरतमुनि ने—मागधी, अर्धमागधी, पृथुला, संभाविता—इन चारों गीतियों का ही उल्लेख किया है। वे गीतियाँ पद और ताल के अनुसार रहती हैं। परन्तु यहाँ बतायी हुई गीतियाँ स्वरों से अनुसृत हैं। ये पाँच गीतियाँ "संगीत रत्नाकर" में "दुर्गा-मत" के अनुसार लिखी गयी हैं। मतंग के मतानुसार इन पाँचों के साथ, भाषा एवं विभाषा के दो और भेदों को मिलाकर सात गीतियाँ बनी हुई हैं।

२. इस विशेष संचार को "ओहाटी ललित" कहते हैं। चिबुक को वक्षःस्थल पर रखकर उकारों व अकारों के प्रयोग से गाना होता है।

गामराग

(अ) **शुद्ध—७** (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग
(१) षड्जकैशिकमध्यम
(२) शुद्धसाधारित
(३) षड्जग्रामराग
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न राग
(४) पंचम
(५) मध्यमग्रामराग
(६) षाडवराग
(७) शुद्धकैशिकराग

(आ) भिन्न—५ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग
(८) कैशिकमध्यम
(९) भिन्नषड्ज
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(१०) तान
(११) कैशिक
(१२) भिन्नपंचम

(इ) **गौड—३** (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(१३) गौडकैशिकमध्यम
(१४) गौडपंचम
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(१५) गौडकैशिक

(ई) वेसर—८ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(१६) टक्क
(१७) वेसर षाडव
(१८) सौवीरी
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(१९) वोट्टराग
(२०) मालवकैशिक
(२१) मालवपंचम
(३) षड्ज और मध्यमग्राम से उत्पन्न

(२२) टक्ककैशिक
(२३) हिंदोल

(उ) साधारण—७ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(२४) रूपसाधार
(२५) शक
(२६) भम्माणपंचम

(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(२७) नर्त
(२८) गांधारपंचम
(२९) षाड्जकैशिक
(३०) ककुभ

उपराग—८

(१) शकतिलक
(२) टक्क
(३) सैंधव
(४) कोकिलपंचम
(५) रेवगुप्त
(६) पंचमषाडव
(७) भावनापंचम
(८) नागगांधार

राग या शुद्ध राग—२०

(१) श्रीराग
(२) नट्ट
(३) बंगाल (पहला)
(४) बंगाल (दूसरा)
(५) भास
(६) मध्यमषाडव
(७) रक्तहंस
(८) कोल्हहास
(९) प्रसव
(१०) भैरव
(११) ध्वनि
(१२) मेघराग
(१३) सोमराग
(१४) कामोद (पहला)
(१५) कामोद (दूसरा)
(१६) आम्रपंचम
(१७) कंदर्प
(१८) देशाख्य
(१९) कैशिककुभ
(२०) नट्टनारायण

इन ५८ रागों में १५ रागों से भाषा, विभाषा और अंतरभाषा जैसे रागों की उत्पत्ति होती है। वे इनकी छाया के अनुसार रहते हैं। इस तरह के भाषाजनक १५ राग और उन १५ रागों से उत्पन्न राग ये हैं—

(१) सौवीर
(२) ककुभ
(३) टक्क
(४) पंचम
(५) भिन्नपंचम
(६) टक्ककैशिक
(७) हिंदोल
(८) बोट्ट
(९) मालवकैशिक
(१०) गांधारपंचम
(११) भिन्नषड्ज
(१२) वेसरषाडव
(१३) मालवपंचम
(१४) तान
(१५) पंचमषाडव

इनमें (१) सौवीर से उत्पन्न भाषाराग—४

(१) सौवीरी
(२) वेगमध्यमा
(३) साधारित
(४) गांधारी

(२) ककुभ से उत्पन्न भाषाराग—६

(१) भिन्नपंचमी
(२) कांभोजी
(३) मध्यमग्राम
(४) रगन्ती
(५) मधुरी
(६) शकमिश्रा

ककुभ से उत्पन्न विभाषाराग—३

(१) भोगवर्धनी
(२) आभीरिका
(३) मधुकरी

ककुभ से उत्पन्न अंतरभाषाराग—१

१. शालवाहिनिका

(३) टक्कराग से उत्पन्न भाषाराग—२१

(१) श्रवणा
(२) श्रवणोद्भवा
(३) वैरंजी
(४) मध्यमग्रामदेहा
(५) मालववेसरी
(६) छेवाटी
(७) सैन्धवी
(८) कोलाहला
(९) पंचमलक्षिता
(१०) सौराष्ट्री
(११) पंचमी
(१२) वेगरंजी
(१३) गांधारपंचमी
(१४) मालवी
(१५) तानवलिता
(१६) ललिता

(१७) रविचंद्रिका
(१८) ताना
(१९) अंबाहेरिका
(२०) दोह्या
(२१) वेसरी

टक्कराग से उत्पन्न विभाषाराग—४

(१) देवारवर्धनी
(२) आंध्री
(३) गुर्जरी
(४) भावनी

(४) पंचम से उत्पन्न भाषाराग—१०

(१) कैशिकी
(२) त्रावणी
(३) तानोद्भवा
(४) आभीरी
(५) गुर्जरी
(६) सैन्धवी
(७) दाक्षिणात्या
(८) आंध्री
(९) मांगली
(१०) भावनी

पंचम से उत्पन्न विभाषाराग—२

(१) भम्माणी
(२) आंधालिका

(५) भिन्नपंचम से उत्पन्न भाषाराग—४

(१) धैवतभूषिता
(२) शुद्धभिन्ना
(३) वराटी
(४) विशाला

भिन्न पंचम से उत्पन्न विभाषाराग—१

(१) कौशली

(६) टक्ककैशिक से उत्पन्न भाषाराग—२

(१) मालवा
(२) भिन्नवलिता

टक्ककैशिक से उत्पन्न विभाषाराग—१

(१) द्राविडी

(७) हिंदोल से उत्पन्न भाषाराग—९

(१) वेसरिका
(२) चूतमंजरी
(३) षड्जमध्यमा
(४) मधुरी
(५) भिन्नपौराली
(६) गौडी
(७) मालववेसरी
(८) छेवाटी
(९) पिंजरी

(८) बोट्टराग से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) माङ्गली

(९) मालवकैशिक से उत्पन्न भाषाराग—१३

(१) बांगाली
(२) मांगली
(३) हर्षपुरी
(४) मालववेसरी
(५) खंजनी
(६) गुर्जरी
(७) गौड़ी
(८) पौराली
(९) अर्धवेसरी
(१०) शुद्धा
(११) मालवरूपा
(१२) सैंधवी
(१३) आभीरी

मालवकैशिक से उत्पन्न विभाषाराग—२

(१) कांभोजी
(२) देवारवर्धनी

(१०) गांधारपंचम से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) गांधारी

(११) भिन्नषड्ज से उत्पन्न भाषाराग—१७

(१) गांधारवल्ली
(२) कच्छेल्ली
(३) स्वरवल्ली
(४) निषादिनी
(५) त्रवणा
(६) मध्यमा
(७) शुद्धा
(८) दाक्षिणात्या

(९) पुलिन्दका
(१०) तुंबुरा
(११) षड्जभाषा
(१२) कालिन्दी
(१३) ललिता
(१४) श्रीकण्ठिका
(१५) बांगाली
(१६) गांधारी
(१७) सैंधवी

भिन्नषड्ज से उत्पन्न विभाषाराग—४

(१) पौरालिका
(२) मालवी
(३) कालिन्दी
(४) देवारवर्धनी

(१२) वेसरषाडव से उत्पन्न भाषाराग—२

(१) नाद्या
(२) बाह्यषाडवा

वेसरषाडव से उत्पन्न विभाषाराग—२

(१) पार्वती
(२) श्रीकंठी

(१३) मालवपंचम से उत्पन्न भाषाराग—३

(१) वेदवती
(२) भावनी
(३) विभावनी

(१४) तान से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) तानोद्भवा

(१५) पंचमषाडव से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) पोता

ऊपर कहे हुए पंद्रह भाषाजनक रागों के अलावा, कोई-कोई, 'शका' नाम के भाषाराग के जनक रेवगुप्ति को भी अलग मानते हैं।

उत्पत्ति स्थान न जाननेवाला विभाषाराग पल्लवी है। उसी प्रकार के अन्तर-भाषा राग (१) भासवलिता (२) किरणावली (३) शकललिता हैं।

(१) ग्राम रागों से उत्पन्न **देशीराग** या **रागाङ्ग**—

शंकराभरण	पांचाली	गुर्जरी
घंटारव	मध्यमादि	गौड़
हंसक	मालवश्री	कोलाहल
दीपक	तोडी	वसन्त
रीति	बंगाल	धन्यासी
कर्णाटिका	भैरव	देशी
लाटी	वराली	देशाख्या

(२) भाषारागों से उत्पन्न **देशीराग** या **भाषांग**—

गांभीरी	छाया	प्रथममंजरी
वेहारी	तरङ्गिणी	आदिकामोदी
खसिता	गांधारगति	नागध्वनि
उत्पला	वेरंजिका	वराटी
गौड़ी	डोंबक्रिया	नट्टा
नादान्तरी	सावेरी	कर्नाटबंगाला
नीलोत्पली	वेलावली	

(३) **क्रियाङ्ग**—

भावक्री	कुमुदक्री	धन्यकृति
स्वभावक्री	दनुक्री	विजयक्री
शिवक्री	ओजक्री	रामकृति
मकरक्री	इन्द्रक्री	गौड़कृति
त्रिनेत्रक्री	नागकृति	देवकृति

(४) **उपांगराग—३०**

पूर्णाटिका	कुंतलवराटी	हतस्वर वराटी
देवाल	द्राविड़ ,,	**तोडी** (उपाङ्ग)
कुञ्जरी	सैंधव ,,	छायातोडी
वराटी (उपाङ्ग)	अपस्थान ,,	तुरुष्क

गुर्जरी (उपाङ्ग)	प्रताप वेलावली	**हिंदोल** (उपाङ्ग)
महाराष्ट्र गुर्जरी	**भैरव** (उपाङ्ग)	भल्लातिका
सौराष्ट्र ,,	भैरवी	आंधाली
दक्षिण ,,	कामोद (उपाङ्ग)	मल्हारी
द्राविड़ ,,	सिंहली कामोदी	मल्हारराग
वेलावली (उपाङ्ग)	**नट्ट** (उपाङ्ग)	कर्नाट गौड़
गुञ्जी	छायानट्ट	तुरुष्क गौड़
खंबावती (स्तंभावती)	**टक्क** (उपाङ्ग)	द्राविड़ गौड़
छाया वेलावली	कोलाहल	

रागों का लक्षण और ग्रामरागों के पांच भेद

जो स्वजाति का अनुसरण करके प्रकाशित होते समय रूपक या प्रबन्ध के नियमों में दूसरी जातियों का भी थोड़ा-सा अनुसरण करते हैं, उन्हें शुद्धराग कहते हैं। भिन्न राग चार प्रकार के होते हैं, जैसे—(१) श्रुतिभिन्न (२) शुद्धभिन्न (३) जातिभिन्न और (४) स्वरभिन्न।

श्रुतिभिन्न राग में चतुःश्रुति-स्वर, द्विश्रुति-स्वर के रूप को ले लेते हैं। उदाहरण—भिन्नतान राग में षड्ज की दो श्रुतियों को निषाद लेता है।

शुद्धभिन्न रागों की उत्पत्ति स्वरगति के भेद से होती है। शुद्धकैशिक और भिन्न-कैशिक—इन दोनों के स्वरस्थान और दूसरे सब विषय एक-से हैं। लेकिन शुद्ध-कैशिक राग में तारस्वर की व्याप्ति होती है। भिन्नकैशिक में मंद्रस्वरों की व्याप्ति होती है।

जातिभिन्न रागों की उत्पत्ति अल्पत्व-बहुत्व के भेद, सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म और वक्र-स्वरों के प्रयोग से होती है। शुद्धकैशिक मध्यमराग से भिन्नकैशिकमध्यमराग उत्पन्न होता है। दोनों रागों के ग्रह और अंश समान हैं, परन्तु जनकजाति के भेद से वर्णभेद अर्थात् सूक्ष्म व अतिसूक्ष्म स्वरों का प्रयोग, वक्रप्रयोग होने से जातिभिन्न रागों की उत्पत्ति होती है।

स्वरभिन्न रागों में, वादी स्वरों को रखकर संवादियों को छोड़ देना होता है। उदाहरण—शुद्धषाडव से भिन्नषड्ज, भिन्नपंचम इत्यादि रागों की उत्पत्ति इसी रीति से हुई है।

गौड़राग में गौड़गीति का लक्षण है।

वेसरराग में स्वर वेग से उच्चारण किये जाते हैं। इसी कारण इसका नाम

वेसर पड़ा। नाटक में शुद्ध-भिन्न आदि रागों के विनियोग पर नाट्यशास्त्र में इस प्रकार व्यवस्था की गयी है—

पूर्वरङ्ग में शुद्धराग, प्रस्तावना में भिन्नराग, आमुख में वेसरराग, गर्भ में गौड़ी और अवमर्श में साधारण रागों का उपयोग करना होता है। इसके सम्बन्ध में एक दूसरी विधि भी है। मुखसंधि में षड्जग्रामराग, गर्भसंधि में साधारितराग, अवमर्श में पंचमराग, संहार में कैशिकराग, पूर्वरंग में षाडवराग और अन्त में कैशिकमध्यम इत्यादि रागों को उपयोग में लाना चाहिए।

(१) शुद्धसाधारित

यह राग शुद्धमध्यमा जाति से उत्पन्न होता है। इसकी मूर्च्छना षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना हैं। इसके ग्रहस्वर और अंशस्वर तारषड्ज हैं। न्यासस्वर मध्यम है। इसमें निषाद एवं गांधार अल्पप्रयोग हैं। इस राग का देवता है सूर्य। यह राग वीर-रौद्र रसों का पोषक है और यह दिन के द्वितीय प्रहर में गाने योग्य है।

आलाप—सां पां ध̥ा रीपापाधारी पाधा सासा पाधानीधा पाम̥ाम̥ा री̥पा धारी̥ पाधारी̥ पाधापाधापापा सासा मा। सां गां रीं मां। मगरि सासा सरिग पाधारी-पा धारी पाधापाधासासा सारीगामाधापानीधा पानीधापा स̥ा स̥ा।

करण—सस पप धध रिरि पप धस साम् २ रिरि पप धनि पप रिप धस सा सा २ धध म̥म̥ गारी ग̥म̥ रिग मम मगरिग सासा २ सस धस रि̥ग̥ सासा पाधा निधप म̥म̥। (यह प्रबन्धविशेष है।)

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	धा	नी	पा	पा	पा	पा
उ	द	य	गि	रि	शि	ख	र
२. धा	धा	नी	नी	री̥	री̥	पा	पा
शे	ख		र	तु	र	ग	खु
३. री	पा	पा	पा	धा	नी	पा	मा
र		क्ष	त	वि	भि	न्न	
४. धा	मा	धा	सा	सा	सा	सा	सा
ध	न	ति	मि	र			
५. धा	धा	सा	धा	सा	री	गा	सा
ग	ग	न	त	ल	स	क	ल

६. री	गा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
वि	लु	लि	त	स	ह		स्त्र
७. धा	मा	धा	मा	सा	सा	सा	सा
कि	र		णो	ज	य		तु
८. पा	धा	निध	पा	मा	पा	मा	मा
भा				नुः			

—(यह मतङ्गादि प्रोक्त वचन स्वर साहित्य है।)

(२) षड्‌जग्रामराग

यह षड्‌ज मध्यमा जाति से उत्पन्न होता है। इसका ग्रह तथा अंशस्वर तार षड्‌ज है। राग संपूर्ण है। इसमें न्यासस्वर मध्यम है, अपन्यास षड्‌ज है। अवरोही वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नांत है। इसकी मूर्च्छना षड्‌जादि है। इसमें काकली निषाद एवं अंतरगांधार का प्रयोग विहित है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। राग-देवता बृहस्पति है। इसे बरसात के दिनों में प्रथम प्रहर में गाना चाहिए।

आलाप—सुसुरी गधगरिस सनि़धापाधाधारीगा सा। री गा सा सग पनिधनिस सा सा। गसरिग पधनिप मामा।

करण—री़ री़ गाधा गरि सासा नी़धपापा। री़ री़ गध परि सां सां सां सां। सां सां गानिधा रीरीगा धा गारी सां सां निधपापा। री री पापा निधनि सां सां सां। सरि सरि पधनिध पमामामामा।

आक्षिप्तिका—

१. री	री	गा	सा	गा	री	गा	सा
स	ज	य	तु	भू		ता	
२. नी	धा	पा	पा	री	री	गा	धा
धि	प	तिः		प	रि	क	र
३. गा	री	सा	सा	सा	सा	सा	सा
भो		गीं	द्र		कुं		ड
४. सा	सा	गा	धनि	नी	नी	नी	नी
ला		भ	र	णः			

५. गा	रिग	धा	धा	गा	गरि	सा	सा
ग	ज	च		र्म	प	ट	नि
६. नी	धा	पा	पा	री	री	पा	पा
व	स	नः		श	शां		क
७. नी	धा	नी	सा	सा	सा	सा	रिसरि
चू		डा	म	णिः			
८. पा	धा	निध	पा	मा	मा	मा	मा
शं				भुः			

(३) शुद्ध कैशिकराग

यह राग कार्मारवी और कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रहस्वर और अंशस्वर तारषड्ज है, न्यासस्वर पंचम है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। इसमें स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग संपूर्ण है। इसकी मूर्च्छना मध्यमग्रामीय षड्जादि है। राग अंगारक (मङ्गल) का प्रीतिकारी और वीर, रौद्र एवं अद्भुत रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में प्रथम प्रहर में इसे गाना चाहिए।

आलाप—सासा गामा गारी गामा सानी सारी साधा माधा माधा नीधा पामा गामा पापा।

वर्तनी—सासासासा रीरीसासारीरी गागा सासासासा मामा गारी गारी सासा-रीरीप नि सांसांसांसां रीरी मामा पापाधामा मामाधानी सासासासा रीरीगामा सासा-पापा धामागामा पामा पापापापा।

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	सा	सा	सा	सा	नी	धा
अ		ग्नि		ज्वा		ला	शि
२. सा	सा	री	मा	सा	री	गा	मा
खा		के		शि			
३. सा	गा	री	सा	सा	सा	सा	सा
मां				स	शो		णि
४. सा	सा	सा	सा	नी	सा	नी	नी
त	भो				जि	नि	

५. मा	मा	गा	री	मा	मा	पा	पा
स		र्वा		हा		रि	णि
६. धा	नी	पा	मा	धा	मा	धा	सा
नि		र्मा		से			
७. सा	सा	सा	सा	नी	धा	पा	पा
च			मं	मुं	डे	न	
८. धा	नी	गा	मा	पा	पा	पा	पा
मो			स्तु	ते			

(४) शुद्ध षाडवराग

मध्यम जाति में विकृत भेद से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रहस्वर तारमध्यम है, न्यास एवं अंशस्वर मध्यमध्यम हैं। मध्यमग्रामीय मध्यमादि इसकी मूर्च्छना है। इसमें गांधार और पंचम का अल्प प्रयोग है, काकलीनिषाद तथा अंतरगांधार का प्रयोग भी है। संचारी वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह शुक्र-प्रिय राग है और हास्य एवं शृंगार रस का पोषक है। पूर्व याम में गाना चाहिए।

आलाप—मृा सारी नीधा साधानी माधा सारीगृा धृा सृा धृामृारिगामृा माधा-मारी गारीनीधा सृाधानींमृामृा।

करण—ममरिग मम सस धनि सस धनि मृा मृा पपपपनि धममध धससरि गृागा-मृारिगामृामृा।

वर्तनिका—साधनि पध मारि मानि धधाधधससरि मासासाधनी धपमृा मृा गारी गारी गासामाधामृा गृारीगा गमारिगा सृासाधनी मृा धनि धगसाधनि मृा मृा मृा।

आक्षिप्तिका—

१. मृा	मृा	धृा	धृा	सा	धा	नी	पा
पृ	थु	गं		ड	ग	लि	त
२. धा	नीृ	मृा	मृा	मृा	री	मृा	री
म	द	ज	ल	म	ति	सौ	
३. धृा	नीृ	सृा	सृा	गा	रिग	धा	धा
र	भ	ल		ग्न		षट्	प

४. सा	धा	सा	मग	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
द	स	मू		हं			
५. मग	री	गा	मा	मा	मा	पम	गा
मु	ख	र्मि		द्र	नी		ल
६. री	गा	स़ा	स़ा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
श	क	लै		भू	षि		त
७. नी	ध़ा	नी	ध़ा	स़ा	स़ा	स़ा	सा
मि	व	ग	ण	प	ते		
८. गा	री	री	गा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	र्जे	य	तु				

(५) भिन्नकैशिकमध्यम

यह राग षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रह और अंशस्वर षड्ज है, न्यासस्वर मध्यमस्वर भी हो सकता है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है। इसका स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। यह वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। दिन के प्रथम याम में गाने योग्य है। चंद्र-प्रिय राग है।

आलाप—स़ा निधा साम़ा। मम धम मम धम गामाधाधा नीधा सस स़ा ग़ा माधानीधा स़ा स़ा धमा मगा स गास साधा मामा। स़ा ग़ा माधानीधा स़ा स़ा मधा पमाप मामा।

वर्तनिका—सस निध सस मम मध मग मध निमम। नीध़ा नीमधनिस। निधनि स़ुस़ुस़ुस़ुस़ु धध। मम गस़ु स़ु गमा स़ाग गध़ाध़ाधधममध़ुमगमम़धस़ुस़ु। स़ुस़ुधम-धपमापा मामा। (यह प्रबन्धविशेष है।)

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	नी	धा	सा	सा	मा	मा
बृ	ह	द्रु	द	र	वि	क	ट
२. मा	धा	मा	गा	मा	धा	नी	मा
ग		म	न	ज	र	ठ	वि
३. मा	नी	धा	नी	मा	धा	नी	नी
भ		क्तं		सु	वि	पु	ल

४. नी	धा	नी	सा	सा	सा	सा	सा
पी		नां		गं			
५. मा	मस	सा	सा	नी	धा	पा	पा
अ	रि	द	म	न	वि	ष	म
६. धा	नी	मा	मा	गा	री	मा	मा
लो		च	नं	सु	र	न	मि
७. मा	मा	मा	मा	धा	नी	मा	मा
तं	वि	ना		य	कं		
८. सा	सा	धा	नी	मा	मा	मा	मा
वं				दे			

(६) भिन्नतानराग

यह मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न हुआ है। इसमें पंचमस्वर ग्रह और अंश है; न्यासस्वर मध्यम है। इसमें काकलीनिषाद का प्रयोग है, ऋषभस्वर का अल्प प्रयोग है। संचारी वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है, स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। ऋषभ वर्ज्य भी है। मध्यमग्रामीय पंचमादि मूर्च्छना है। प्रथम याम में गाने योग्य है। करुण रस का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—पा नी सागा मापा धापामगामामा। ममध ममग सा सा सस स मागम पापापानी सागामा धापाम गममा। मम धप धध सस पापा ससस मागमपापा मम पप धध निनि पध मध मग गसा सा गसगसमम पापापानी सागापापा धापामगमामा।

वर्तनी—पापा नीनी सस गगपापानीपानी सागग सागामा पाधा पाम गामापापा (पंचम) पापा सासा धामापापापा (षड्ज) सस गम (पंचम) नीसागा मापाधाम गा मामा।

आक्षिप्तिका—

१. पा	पा	नी	नी	सा	सा	गा	गा
ह	र	व	र	मु	कु	ट	ज
२. सा	गा	मप	मग	सा	सा	सा	सा
टा		लु	लि	तं			
३. सा	गा	मा	पा	धा	पा	मप	मग
अ	म	र	व	धू		कु	च

४. सा	गा	मा	पा	पा	पा	पा	पा
प	रि	म	लि	तं			
५. धा	पा	सा	मा	पा	पा	धा	धा
व	हु	वि	ध	कु	सु	म	र
६. सा	सा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
जो		रु	णि	तं			
७. धा	पा	पम	मपग	सा	गा	मा	पा
वि	ज	य	ते	ग		गा	
८. धा	पा	मग	मा	मा	मा	मा	मा
वि	म	ल	ज	लं			

(७) भिन्नकैशिक

यह कैशिकी और कार्मारवी जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अंश और अपन्यास षड्ज हैं। संपूर्ण है। इसमें काकलीनिषाद का प्रयोग है। मंद्र स्थायी स्वरों का प्रयोग अधिक है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना में राग-स्वरूप मिलता है। राग का प्रकाशन संचारी वर्ण में होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। राग दानवीर, रौद्र तथा अद्भुत रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में, पहले याम में गाने योग्य है। शिवजी को प्रीतिदायक है।

आलाप—साधा माधासा निधस नीसा सा सारी मापाधामाधासा निध सनि सासा सारी सामा धानी साधा सा मपामापापा।

वर्तनी—सासाधा माधापा मारी मापा धामाधासासामा। सासा रीरी गागा सारी सासामाधा पापा सारी मापा धासा धापा मापापापा।

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	सा	सा	री	री	मा	मा
इं			द्र	नी			ल
२. मा	मा	पम	पा	पा	पा	पा	गा
स			प्र	भं			म
३. मा	धा	सा	पा	धा	मा	री	सा
दां			ध	गं			ध
४. मा	मा	सनि	सा	सा	सा	सा	सा
वा			सि	तं			

५. सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
ए			क	दं			त
६. नी	गा	सा	सा	धा	पा	मा	पा
शो			भि	तं			न
७. मा	धा	सा	पा	धा	मा	री	मा
मा			मि	तं			वि
८. मा	मा	पम	पा	पा	पा	पा	पा
ना			य	कं			

(८) गौड़कैशिकमध्यम

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न हुआ है। न्यासस्वर मध्यम है। पूर्ण राग है। काकलीनिषाद का प्रयोग इसमें है। आरोहीवर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। भयानक और वीर रसों का पोषक है। दिन के दूसरे याम में गाने योग्य है। चंद्रप्रिय राग है।

आलाप—सा सा सधस सधसा सधस रिमागामामा मम धमधरिधधधध धनिधनि धमाधमा गधरि धनिध (षड्ज) ससध धससससधसरिसा सधधससससरिग· रिमरिगसगसधसस (मध्यम) मममधमध (ऋषभ) रिरिरिधरिधधनिध धधसपधमामा। रीरीरिरिगरिगगधा सासाधधसधधसधधरिधरि। ममधारि रिधानि धनिमधामा। गधारिधानिधा (षड्ज) ससधधससस। रिगरिमरिगसगसा ध-सास (मध्यम) मममधमध (ऋषभ) रिरिरिधरि धधनिधधधसपधमामा। रीरी-रिरिगरिगगधाससाधधसधसधधरिधरिममधारिरिधानिधनिमधमा। गधारिधानि धाध (षड्ज) ससधधससस। रिगरिगरिगस गसानिनिनिसनिससससससससससस धसधसारिमममम धाधाध गसगसा। धाधाधमपधमामा।

करण—धाधाध (षड्ज) सधसासा धध धस धाममाध मध मा (मध्यम) ममध मग निध धध रिधधा। रिधधा निधध सासाध धधस सस धध सामधरिमरिग सासासधससा। (षड्ज) सममामममधामधाधनिधाधा धनिध गधा सगधा धधधस पप मधमारीगाग (धैवत) धासाधाध रिरिरि (ऋषभ) रिगा मामधमधानिधनिधधा (धैवत) रिधधाधधा। धनिसासा। सधधधधससससा धधधसमगमम रिरिरिग। सगधा सधध सा सग (षड्ज) स धा सस धसरि। रिम मधध मधा। मध धध रिधधा धनि (धैवत) धधधग ससग धधधसपधधधमामाम रिग गमा म (षड्ज) पधमा मधमा मामधा (धैवत) रीरीधाधरिधा (षड्जमध्यमधैवत) धासपधमा ममगामामा।

आक्षिप्तिका—

१.	सा	सा	धा	सा	सा̥	मा̥	सा̥	सा̥
	त	रु	ण	र	वि	स	दृ	श
२.	मा̥	मा̥	सा	सा	धा	सा	री	मा
	भा		सु	र	वि	क	ट	ज
३.	मम	री	सा	सा	सा	सा	गरि	सम
	टा		जू		ट	शि	ख	र
४.	मा̥	मा̥	मा̥	मा̥	सा̥	सा̥	सा̥	सा̥
	प	रि	र	चि	ता			
५.	मा	धा	मा	गा	मा	धा	मा	गा
	हि	म	शि	ख	रि	शि	ख	र
६.	मा	धा	सा	सा	नी	धा	सा	सा
	मा		ल		श	र	ण	ग
७.	सा̥	सा̥	मा	मग	री	गा	सा	सनि
	ता		पा		तु	वः		स
८.	धा	सा	पा	धा	मग	मा	मा	मा
	दा		गं		गा			

(९) गौड़पंचम

धैवती और षड्जमध्यमा जातियों से यह उत्पन्न हुआ है। इसके ग्रह एवं अंश-स्वर धैवत हैं, न्यासस्वर मध्यम है। पंचम वर्ज्य है। काकलीनिषाद और अन्तर-गांधार का प्रयोग है। षड्जग्राम में धैवतादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। भयानक, बीभत्स और विप्रलंभ रसों का पोषक है। उद्भट नटन के अवसर पर, ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न के दूसरे याम में गाने योग्य है। शनैश्चर और मन्मथ दोनों का प्रिय राग है।

आलाप—धामा धधमधधधनिधनिध धधनिधनिधसरिगगरिगरिगग धधनिध-निधधमगममगामाम (धैवत) धधधधधनिधनिधधधसधनिधसरिगधनिधधधनि ममनिधग ससमग (मध्यम) मममधधधधनि धनिधमाधधमाधधनिध निध धधध ममधा मधधं धनि धनिमधमगागससगसा। धधनि ममनि धनिसाधाधा (धैवत) धध-धधधनिधनिधधधसधनी धसरिगधनिध धधनि ममनि धग सगमगम (मध्यम) मममध ममध ममधधनि धनि धमामध निध निधनिधधसधधधधसधधनिधनिधनिध-

मधमगागसगमगम धधधधधनिधनिधग़ ससमगममधसरिमधमगधाधमधधाधा। धधनि धधस धधनि धधध धधनिधधधमधसरि मगामामामाधधधमधधधधधधधधधधधधनिधनिमधमगामामा।

करण—मध मध धाधनिधास़ धनिधा धस रिगा धनि धामग। मामा। धमधमा धमधमा (मध्यम) मनि धध रिध धाममम धागमधानिध धनि धाममसमसृगम धाधनि धनि धनि धाध धधस। धनिधा धसरिग धनिधा मधसरि मधमधधा धधधनि धनि धनि धनि मधमा मागामामा।

आक्षिप्तिका—

१. धा	धा	मा	धा	सृा	सृा	मृा	सृा
घ	न	च	ल	न	खि		न्न
२. धा	धा	धा	धा	धा	धा	सा	धा
प		न्न	ग	वि	ष	म	त्रि
३. मृा	सृा	मृा	मृा	मृा	धा	धा	धा
निः		श्वा		स	धू		म
४. धा	धा	मा	गा	मा	मा	मा	मा
धू		म्र	श	शि			
५. मा	मा	मा	गा	मा	धा	धा	धा
वि	र	चि	त	क	पा		ल
६. धा	नी	धा	मा	मा	मा	मा	गा
मा		लं		ज	य	नि	ज
७. मा	धा	धा	धा	मा	मा	मा	मा
टा		मं	ड	लं			
८. धा	धा	धा	धनि	गा	मा	मा	मा
शं				भोः			

(१०) गौड़ कैशिक

यह कैशिकी एवं षड्जमध्यमा जातियों से उत्पन्न हुआ है। इसमें न्यास स्वर पंचम है। ग्रह और अंश षड्ज हैं। पूर्ण राग है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना राग का स्वरूप देती है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकारप्रसन्नादि है। करुण, वीर, रौद्र और अद्भुत

रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में मध्यम याम के उत्तरार्ध में गाने योग्य है। राग शिवप्रिय है।

आलाप—सासा सग सनिसरी मगगसमम पम निप पगम गरि रिगम मस। गसा सुनि सरिम गपम पपरिमपधारी मापाधानि रिमापा धास नि सासा। सासा (षड्ज) ससससस ससस मगस़ गसनि सासा। सासा सस,ग ससस मगमरि गसग सधस। पधप मापमापापा। पमपापापधपधपापप पधरिरिरि मरि मसरि मधास-निस.सा। सासा (षड्ज) ससससस ससस सग सग सनिसासा। सासा ससगस समग मरिगस गसधसपध पमा पापा धम पापा गम गगम (पंचम) पप गग मम गग गमग। निनिपनिप गमगस सनिपनिप। गमगपम मगमग गरीरी रिगमम (षड्ज) स सससससस ससगसधसा गध सरीमामापमपापा।

करण—निस निध सस रिम रिगम ममगपपनिगा पमगारि परीरीरिमरिम-समरी मरिगसा मपधस रिमापमापापारिमरिम रिमपापारिम पनि रीरीरिमसा पध ससससनिसा सम रिगा सग सनिनी़निनि निनि सधध सध मम पपपा गागगनि पपधनी गगगप गमागा रीरी रिगामाम (षड्ज) स सनी निसा गारी रिम गम सागा मापा पनि धनि गमग धधम रिस गा सग सनि धसा धसरि मा पम पापा पम धमा रिमा रीसध सारी रिम मम मग साधध सस मम पप मम पापा पप गग मम पापापा।

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	सा	सा	नी	नी	नी	नी
भ		स्मा		भ्यं		ग	वि
२. नी	नी	सा	री	री	गा	सा	सा
भू		षि	त		दे		हं
३. सा	सा	री	सा	री	मा	री	सा
सु	र	व	र	मु	नि	म	हि
४. री	री	री	री	मा	मा	मा	मा
तं				भी		म	भु
५. सा	सा	सा	सा	री	री	री	री
जं		ग	म	वे		ष्टि	त
६. सा	सा	सा	सा	मा	मा	री	मा
वा		हुं		सु	र	व	र

७. री	मा	मा	मा	पा	पा	पा	पा
न	मि	त	प	दं			
८. री	री	री	री	पा	पा	पा	पा
चं		द्र	क	रा		क	र
९. सा	री	री	री	सा	सा	नी	नी
सं		त	ति	ध	व	ल	
१०. नी	नी	सा	नी	री	मा	री	गा
सु	र	स	रि	दं		बु	ध
११. सा	सा	सम	गरि	सा	सा़	सध	धनि
रं				प्र	ण	म	त
१२. पध	पध	पप	पप	मप	मप	पा	पा
स	त	त		नि	ष्क	लं	
१३. पध	पध	रिम	पम	धा	सा	सा	सा
स	क	ल		प	र	म	
१४. धा	नी	पध	मा	पा	पा	पा	पा
शि	व	म	जे	यं			

(११) वेसरषाडव

यह राग षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न है। अंश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। संपूर्ण राग है। काकली निषाद और अंतरगांधार का प्रयोग है। मध्यमग्रामीय मध्यमादि मूर्च्छना है। शांत, शृंगार और हास्य रसों का पोषक है। दिन के चतुर्थ याम में गेय है। शुक्रप्रिय राग है।

आलाप—मामारीगासारी गामा मागा मासा। मामारीमापाधानी पनी धामा नीधासासा। साधा सारीगाधा सनी धानीध (पंचम) पापा सधा सगा मरी-गारीमामामरीगारीधामा मरी मगागमा सासासरि गमा मग सनि धनि धस धस निध-निधा (पंचम) पस धग सम गरी मगा मा मामामासा मधा नीसा रीगा मम गसा नीधनि धसनिधा नीध (पंचम) पापा। पपनि धधनि पापा पपनि धधनि मा मा। मम निधा धध गसा। ससमरी री गामामा। मरिरिग सासा। सरिरिग मा मा मरि रिग रिरिधामा मरिरि गरि रिधस रिरि सारिग सगा सधनि धसस धनि धगग-धनि धधस धनि धमम मस समध मरिरि मरिग सगसा धनिधसनि धानिधा (पंचम)

पापा पप पपनि धनि धधनि धनि ममनि धधस ससग धधस धधमा रिग सगस धसरि-गम रिगम̥ाम̥ा। मरि गस̥ा रिगम̥ा म̥ा मरी गरिगमा। मरिगरि धरि रिरि धरि रिरि म̥ाम̥ा। गममगधधम धम रिरिम रिग सगस धनिध सनि धनिधा (पंचम) पापा। प̥प̥ प̥प̥ प̥प̥ प̥प̥। निध निध धनि धनि ममनि निध निध धम̥ा ग̥स गस धनिध सनि धनी धसरि गगरि सनिधास̥ा पधासरी म̥ गा म̥ मा।

करण—म̥धामम ग̥म̥ाम̥ा मम गम म̥ा। स̥स̥मरिम̥ाम̥ ममरि म̥म̥ा धध̥ानि धनिधा धस धनिधा धाधा म रिग मग म̥ाम̥ा (ऋषभ) रि धरीरीरीरीधरीरीरीरीग रिग म̥ाम̥ा नी पधा मा रिग रिग रिग सा। स̥म̥ (धैवत) निध धस धनि धापापा। पप (धैवत) धनी̥नी̥म̥ाम̥ा। म̥ारि मरिग मनि धा धा धा (धैवत) धनिधग (षड्ज) सा नीधा सारी̥ ग̥ा म̥ा म̥मधारि रिरि गग म̥म̥ रिग रिनि पध म̥म̥ रिग रिम रिगा ससा धनि धस धनि धध (पंचम) पा। (धैवत) धग सस मग रिग म̥ा-म̥ागाम̥ाम̥ा।

आक्षिप्तिका—

१.	मा	गा	री	सा	री	गा	री	सा
	इं		द	गो		व	म	णि
२.	री	सा	री	गा	म̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा
	दा		रु	सं		चि	अं	
३.	मा	री	गा	सा	नी	धा	सा	सा
	फु	ल्ल	कं		द	ल	सि	
४.	पा	धा	सा	री	गा	मा	मा	मा
	लिं		ध	सो		हि	अं	
५.	री	री	पा	पा	मा	पा	धा	नी
	म		त्त	द		दु	र	णि
६.	पा	धा	मा	गा	री	गा	री	सा
	णा		अ	सो		हि	अं	
७.	मा	री	गा	सा	नी	धा	सा	सा
	का		ण	णं		सु	र	हि
८.	पा	धा	सा	री	गा	मा	मा	मा
		गं	ध	सी		अ	लं	

(१२) बोट्टराग

यह पंचमी और षड्जमध्यमा जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह तथा अंशस्वर पंचम हैं। न्यास मध्यम है। गांधार का अल्प प्रयोग है। पूर्ण राग है। काकली-निषाद का प्रयोग है। मध्यमग्रामीय पंचमादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। हास्य एवं श्रृंगार रसों का पोषक है। उत्सवों में प्रयोग करने योग्य है। दिन के अंतिम प्रहर में गाना चाहिए। शिवप्रिय राग है।

आलाप—पन्निसासा धगारि पानी धा पामा गरी ममा मामा। म पापा पनिनि-मामधासासनि धा धमगा मगारिरिसा री पमापापापसा सपपमपप मपमपनमा। पधनि पध मधस गरि रिरिप रिरिप रिपपप (षड्ज) सा। ससगरि पा (पंचम) पपपपमगरि मगा मा मा मधा धा धध निध निसा मम धध सस रिरि गग रिगा ग (पंचम) पप सप धस निध धधधमसमा मगारी रिध रिरिध रिरि (ऋषभ) रिरिप रिरिप पा पनिधा पामा गरि मगामा मा। गाम। मगममगा ममगप ममगागरी रिरिरि ध धस गागारी। रिस मम गग पमपपमपपापा पमप ध नि धनि मामामधाध-मामधासारीगागापा परि पापमपधनिपधमधमा गारी। रिगमपाधापा मागारिपगा-माम (मध्यम) मगाममगममगमपमगागपमागामापापा पनिधधनिधनिनिपानिधध ससधधगरीगरिरि गपापपधपधापधससधधगसग। सासममरिरिपमपममपापाप-ममपपधधस सपा। ससममसमरिरिगागससपपपप धधनिपधमधमगरिमगाग। सग-सधस पपधधससरिरिपपपपपमगरीमगागगा। मामागमम (मध्यम) मा पनिधनिरिधा धनिपपपधममरिगरिमरिग। ससाससससगससगधधध गससममरिरिरिपरिपाप। पापसधसासपाप (षड्ज) रिसरिरिपाप। पममपपधधधधनिपध मामरिरि। ममरिरि गरिपरिपपपपप (षड्ज) ससासधधगधमगरिपा। पापाधाधापापासासा-पापाधध पप ममगगागारिधारिरिधरिरि (ऋषभ) रिरिपा (पंचम) पधापामा-गारीगारीसगामामा।

करण—धाममगममाममगममा (पंचम) पगममाममगमसाधधधनिप धमाधनिपध सारिगरिमरिमसाममगरिसा। रिगरिग (पंचम) पपपपनिनिधामामा। मामममधधा-धममधधासरिधगाधगगधरिग (पंचम) पापपपनिनिध ससधगसमागारीमारिमा (मध्यम) निधाधाधधधनि। पामागारीरिपारीनिधा (षड्ज) ससममारिरिरिरि-पममममनिधापामागारीरिमागामामाधरिरि धरिरिधरिरिरिपपरिपपरिपपरिपपम-निनिधनिधानिनिधाधधध निधधमधमामाममधध (षड्ज) स (ऋषभ) रि (पंचम)

धपनिनिनिनिधधनिनि निपधधधरिपपमधममरिरिगरि (पंचम) पनिनिधधप̥प̥म̥मगग-रिरिमग मामानिधनिधाधधधनिपपपधगमरीगरिरिपरिपामगागामामा ।

१.	सा	धा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
	प	व	न	वि	लु	लि	त	
२.	धा	पा	मा	पा	धा	पा	मा	मा
	भ्र	मि	त	म	धु	क	र	
३.	धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निध
	ज	ल	ज	रे		णु	प	रि
४.	सा	री	मा	पा	पा	पा	पा	प̥ा
	पिं		ज	रि	ते			
५.	सा	री	मा	पा	पा	पा	पा	धा
	म		द	मं		द	ग	ति
६.	सा	सा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
	हं		स	व	धू			
७.	धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निध
	वि	च	र	ति	वि	क	सि	त
८.	पा	पा	पम	गम	मा	मा	मा	मा
	कु	मु	द	व	ने			

(१३) मालवपंचम

यह मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न है। ग्रह, अंश तथा न्यास पंचम है। मध्यमग्रामीय पंचमादि मूर्च्छना से रागस्वरूप मिलता है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। गांधार अल्पत्वस्वर है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। शृंगार एवं हास्य रसों का पोषक है। केतु का प्रियकर है। दिन के अंतिम याम में गेय है।

आलाप—पामारिगासाधानिधपाधधानिसरीमागागपा धामारिगा सानिधनिमा-माधनिसारिगाममगससाधानीधपापधानीसारी। म̥ाम̥ागगप̥ाधामारीगासानिधनिमा-माधानिसारिगामगगसनिधनिप̥ा।प̥ाप̥ा सधाधासगसास̥मगारिरिरिम̥ाम̥ापमासारीमा-पाधनीधापाधमासाधानीधाप̥ा रिरिरिगामापारीरीगामापारीरीरिगामापानिधा मापा-निधा मारीरिगमाममासरिगमामगसनिधानिपा। पापा पपस धधग ससग गरिप ममप मपप̥ाप̥ा।धाम मप धमामा प̥धानीनिमामापाधासासमामाप̥ाधागास̥ाधानि धाप̥ा

धमासधनि धापा मामा (मध्यम) गागू मगूम री रिरीरिरिमसा सससससमरीरिरिरिप मापमामपापापपपधामाममनिनिधधपपपधमाममससधधनिनिधधपपममगगरिरीनिनी-धधपारीरीधरिरिगामापारीरीधरिरिगमापा। रीरीधरीधरिरिगामापारिगमरिगमप-धनिधमा मरिरिरिगग सससससधसरिगगरिसनिधमपपरिममसृधनिधापाधामृागासृा-धानीधापाधमसधनिधपा।

करण—मापाधामा मरिगसा धनिमा धनिसा रिमगा धनिधधसधनिधापापा। धध धनिधनिरि मापधनिधगसधानीधासाधानी (पंचम) पापधसधाधधगसाससा-मगारीरीपमृामृापनिधनिधसनिधपृापृा रिगमापा धनिधस धनिपृपपधममपमधसधनि-ममनिनिधधपाधामनिधपापा।

आक्षिप्तिका—

१. गा	री	सनि	सा	मग	रिग	सा	पम
ध्या		न	म	यं	न	वि	
२. पा	पा	सा	मा	गम	गा	निध	नी
मुं		च	ति	दी	नं		
३. री	मग	पा	पम	पा	पा	धप	मा
व्या	ह	र		ति	वि	श	ति
४. रिम	गस	धम	धनि	पा	पा	पा	पा
स	रः	स	लि	ले			
५. पम	धम	सा	सा	सा	गा	सा	निध
वि	धु	नो		ति	प		क्ष
६. निध	सा	सा	सा	सा	री	गा	मा
यु	ग	लं		न	रें		द्र
७. धा	मा	रिग	सा	निध	सा	पा	मा
हं		सो		नि		ज	
८. मरि	गम	धस	निध	पा	पा	पा	पा
प्रि	या	वि	र	हे			

(१४) रूपसाधार

यह नैषादी व षड्जमध्यमा जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अंश षड्ज हैं। मध्यम न्यास है। ऋषभ तथा पंचम अल्पस्वर हैं। काकलीनिषाद का प्रयोग है।

अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। वीर, करुण, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है।

आलाप—सानिधा सनि सा सामा पामापापामपा मगामनी निधाधधा सधनि धासनी सूसूपा धा सा री गाधा सापा धमा माधा निधानीनी मागा मागा मसा।

या

आलाप—सा धा सा धा पा पधा सा सा सगामगासगा धा पा धा सा सा सा गा म निधा सा ससनि सा स मा स गा ग सा धा पाप धप ध सा सा सा गा मा नी सासा (षड्ज) स सगा सगा ग सासा धापा धाप मामा।

करण—साधा सनिधनी सा सा पामा पममा गस नीधाधाध सधनिधध (षड्ज) सा साधाधासारी गमगरिसधाधपसाधधनिसा (मध्यम) मगमसा। सगमधमनिधा सगस सधनिध धमा मगामा मामा (मध्यम) (पंचम) पगगम माग ममनि निधप-प मपा। गममम (षड्ज)सध ससया निधम पप धध स रिरि मरि ग सा धधधधगसा (धैवत) निधमा (मध्यम) म सा सगगध मम पस सग सस धनि धध मा मग मामा।

आक्षिप्तिका—

१.	मा	मा	नी	नी	धा	धा	सा	सा
	स	द्यो			जा		तं	
२.	नी	नी	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	वा		म	म	घो		रं	
३.	सा	सा	नी	धा	पा	मा	मा	मा
	त		त्पु	रु	ष	मी		
४.	सा	री	सा	नी	नी	धा	सा	सा
	शा				नं			
५.	मा	मा	मा	मा	नी	नी	धा	धा
	वि		श्वं		वि		ष्णुं	
६.	सा	सा	पा	पा	मा	मा	मा	मा
	वे		द	प	दं			
७.	मा	मा	नी	नी	नी	धा	सा	सा
	सू	क्ष्म	म	चिं		त्य	म	
८.	नी	नी	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	ज	न	क	म	जा		तं	

९.	मा	मा	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	प्र	ण	मा		मि	ह्	रं	
१०.	सा	सा	नी	धा	सा	सा	सा	सा
	सद्	गु		रुं				
११.	मा	मा	नी	नी	नी	धा	सा	सा
	श	र	ण		म	भ	व	म
१२.	सा	सा	पा	धा	मा	मा	मा	मा
	हं		प	र	मं			

(१५) शकराग

यह षाड्जी व धैवती जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। संपूर्ण राग है। काकली एवं अन्तर गान्धार का प्रयोग है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। वीर, हास्य तथा अद्भुत रसों का पोषक है। रुद्रप्रिय राग है।

आलाप—सा निधनी पापाधनी सारीगासासारी गाधा धानी सासा निधसासा निधसानी धापानिसा गमा धध निनिरि गा सा।

या

आलाप—सा सनिमा मप धम सगगा मम मग माध साम पगसमासनि ससमम निरिनिरि रिरि धनि मामपाधा मागासासनि सा स नी सास। रिरिरिरि गा रिधाधा पानिनिनि निध सासा सरि रिरि धधध म ध मा धस रिम मरि। मा धापामा मागा-सास री सासा।

करण—(षड्ज) ससनि मम मम पप धध गगा सरिरीरी गमगम माधधधस गगससगासनि साससनि रिरिरिरिनिरिरिधानिमपधामा (गांधार) ग (षड्ज) सनिनि पनिसासा सससनि रिरि गरिरि धापापनि निधासासा सरिरिरिधधधमधममा। धसरि ममरिमधधपप मम गग (षड्ज) सस निसासा।

या

करण—(षड्ज) सनि धनि सा सा सा स ससा। सरिरिरि रिम (षड्ज) (धैवत) धध (षड्ज) सस मा गा गगगमा गगनिस (षड्ज) सनिनिनि सं रिरि गगमा।

(१६) भम्माणपंचम

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। संपूर्ण राग है। गांधार अल्पत्वस्वर है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर. अलंकार प्रसन्नमध्य है। वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—सा रिरिस रिरि सारी रिपा धाधधध धपाधपाप धपधप म मा मम मा। गारी रिधा धप धासा धासा धासा सरी रीसा सस मग रिसा सनिनि (धैवत) (पंचम) पप धप धप पपप ममप मप मा मगमामा।

या

सासा सधा सरी मा प̥ा प̥ (पंचम) प̥ा प̥ा स̥ा स̥ा सरी̥ पाप̥ा म̥प̥ ध̥स̥ निध प̥ा म̥ा प̥म̥ा प̥ाप̥ा म̥ाध̥ा स̥ानी धाप̥ा म̥ाप̥ म̥ाप̥ा म̥ा मम पम प (मध्यम) मा।

करण—सस रिरिरि सरीरीरी। पापा धप धधा धध पधधा। पापाप मपमप-पापापा धधध मामा माम ध रीरीरीरीरी धरिरि धा। धापा पापा पाप पपप धाधधा सध धसा स̥ा स̥ा। स रिरिरि ससससमसमरिग स पधध धापमपनि पपाप पाप पध्र मधपध पाध पंध पाधपपापपमगसा।

या

करण—सस रिरि सासा धध रिरि सासा ध̥ ध̥ ध̥ सरिम मग सासरि गरिस रिरि मपधससनि धास रिगा मा (पंचम) पम धम मम पग प̥ाप̥ाम̥ामा।

आक्षिप्तिका—

१. री	गा	मा	सा	रिग	सा	धा	मा
गु	रु	ज	ध	न	ल	लि	तं
२. पा	धा	पध	पम	पा	पा	धा	पम
मृ	दु	च	र	ण	प	त	नं
३. सा	री	मा	पा	पा	धा	पम	मप
ग	ति	सु	भ	ग	ग	म	नं
४. पा	धनि	पम	धस	सा	सा	सा	सा
म	द	य	ति			.	

५. री	री	मा	पम	रिग	सा	धा	मा
प्रि	य	मु	दि	ता	म	धु	र
६. पा	पा	पध	पध	पा	पा	पा	पा
म	धु	म	द	प	र	व	श
७. मा	मा	पा	धस	रिग	सा	धनि	पम
हृ	द	या		भू		शं	
८. पा	धा	पा	धप	मा	मा	मा	मा
त				न्वी			

(१७) नर्तराग

यह मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न हुआ है । दुर्गाशक्ति के मतानुसार धैवती जाति से उत्पन्न हुआ है। अंश और ग्रहस्वर पंचम हैं। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। गांधार का अल्पत्व प्रयोग में है। मध्यमग्रामीय पंचमादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्न मध्य है। इसका प्रयोग उद्धट चारीमंडल नृत्य में है। कश्यप के मतानुसार, हास्य व श्रृंगार रस का भी पोषक है।

आलाप—पापसा मगामापापगामा नीधापापमानीनी सासा सागा सानि धनी नीनी। नि निध धमपध ममगा गसा सम मगा गनी निनि धधप पधममगामा।

या

आलाप—गमागम मापापग पापा। पगापानीनिधाधा। नीनी सागासा सधा नीनि नीनी निनि मसा ससस धानीनीनी निनिनि धधनि पपध मामगागसा समा गगागरी निनी निध धधनी प (पंचम) मगामामा।

करण—पापमगापा (पंचम) ससगग निनिधापा (पंचम) नीनीधा (षड्ज) सनिनिध सनी धापा मापा पमगा गनिनि पधनि गम गम पामधाममामा।

या

करण—पपप मपपप मपप मग समग मामग सा। मगा मपापनी निधनि (षड्ज) सनि सनि निधनिधा निनि धधधनि पधपा पपधपाप धामम गमसा ससमगसा (पंचम) धमा नीधापा। मामानी धधसा धधधध निपाधा पामागा गमसा सासा गपमा धनिधा धनि (पंचम) पधप मममनि धनि पधमम (षड्ज) सगामामा।

द्वितीयकरण—पापा (षड्ज) सगामा (पंचम) पापापा पधमा मगमा (मध्यम) मामा। ममम निधा धध निधमा पपधमा गमगमा मा (षड्ज) स मापपाधप माम मनि धरिधग (षड्ज) स धानी निनि नीधधधनि। पापपध पामा सामा। गा (पंचम) धधम मनिधनि पध पमामा गामामामा।

आक्षिप्तिका—

१.	पा	पा	मा	गा	पा	पा	गा	सा
	अ	न	व	र	त	ग	लि	त
२.	सा	सा	सा	सा	सा	मा	गा	सा
	म	द	ज	ल	द्रु		र्दि	न
३.	गा	मा	पा	मा	गा	मा	मा	मा
	धा		रौ		घ	सि		क्त
४.	मा	गा	मा	पा	मा	पा	पा	पा
	भु	व	न	त	ल			
५.	नी	सा	नी	सा	सा	सा	सा	सा
	म	धु	क	र	कु	लां		ध
६.	सा	गा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
	का		रि	त	दि	न		दिङ
७.	नी	सा	नी	सा	मा	धा	पा	पा
	मु	ख	ग	ज	मु		ख	
८.	मा	पा	गा	गा	मा	मा	मा	मा
	न		म		स्ते			

(१८) षड्जकैशिक

यह कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है। अंश और ग्रहस्वर षड्ज तथा ऋषभ हैं। न्यासस्वर निषाद और गांधार हैं। मंद्रस्थान में गांधार एवं षड्ज का प्रयोग हैं। ऋषभ अल्पत्वस्वर है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। षड्जग्राम में षड्जादि मूर्च्छना है। वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—सासनि रिसामा पामृ पाप ममगा। मृ निनि धाधामा मधाध ममधा सा समा मधा गसास। धमा मसासमामधा सासधा धमध नीनी।

या

आलाप—सासास नीनी सनिनी मपानीनीपापा रीरिग रीरी गगरिरि **पापा मप** पमगम गरीगागरीसा। सनीमपनीनी धधमप निरिरिग। सा (षड्ज) स **निरी** सानीसा (षड्ज) स निरीसानी।

करण—(षड्ज) सनिध समा ससनि सूासूा निनिस निरिसा ममपमम पपापपम-पपा (मध्यम)। मम गगाममगम गा (गांधार) गगगनिधम निधम मामा**माधाम धमा**माधा गूगू सगू सगूसा (षड्ज) ससधधधनि समम निधानीनि। **(निषाद) निधनि** नीनिनि (षड्ज) सधनि नी निनिधनिगा। म मपम पापप (मध्यम) **मगम** ग (षड्ज) ससूसूसूसू गधरिग गनिध निनिनिधमा। मम धध गग रिग **(षड्ज)** स सधनिधधमा पधानीनीनी (निषाद) निनि।

या

करण—सा (षड्ज) सनि री सानिसा (षड्ज) समापा नीपा नीधा **(पंचम)** पापारीधरीरी पमा मारी रिगरिग (षड्ज) सरिस निधप निसनि सनीनी।

आक्षिप्तिका—

१.	सा	री	सा	री	सा	सा	सा	सा
	दी		ह	र	फ	णि		द
२.	सा	नी	नी	नी	नी	सा	नी	री
	ना		ले		म	हि	ह	र
३.	री	री	री	री	री	गा	सा	सा
	के		स	र	दि	सा		मु
४.	नी	सा	नी	री	री	री	री	री
	ह	द	लि		ल्ले			
५.	मा	मा	पां	पा	मा	मा	सग	री
			पि	अ	इ	का		ल
६.	रिस	सा	नी	नी	पा	पा	नी	नी
	भ	म	रो		ज	ण	म	अ
७.	सा	सा	सा	सा	सा	नी	नी	नी
	रं		दं	पु	ह	र		
८.	री	री	रिस	नी	नी	नी	नी	नी
	प	उ		मे				

(१९) मध्यमग्रामराग

यह गांधारी, मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अंशस्वर मंद्रषड्ज हैं। मध्यमग्राम की मध्यमादि मूर्च्छना है। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। हास्य एवं शृंगार रसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु में, दिन के प्रथम याम में गाने के लायक है। इस राग से मध्यमादि नामक रागाङ्गराग उत्पन्न होता है। उस राग की उत्पत्ति, न्यास, मूर्च्छना, काकलीस्वर प्रयोग और वर्णालंकार—ये सब मध्यमग्राम राग जैसे हैं। ग्रह तथा अंशस्वर मध्यम हैं।

आलाप—सा नीधापाधा धाधरि। गासा। रिगानीसा। सगपापपप निनि-पनिसा सा गपसानिधनिनि निरिगासा। पा म प निधामा।

करण—निनिपपगगससरिग। नि ससासा। ससगगपपधध मधनिसनिध पापा-पापा पनी पनी सासासागागासागासनी धनीनीनिनिनिरिगासासापापामापानिधपा-मामा।

आक्षिप्तिका—

१.	सा	सा	गा	गा	पा	पा	मा	मा
	अ	म	र	गु	रु	म	म	र
२.	गा	मा	मा	मा	धा	नी	सा	सा
	प	ति	म	ज	यं			
३.	सा	सा	मा	मा	पा	पा	सा	सा
	जि	त	म	द	नं	स	क	ल
४.	री	गा	नी	सा	सा	सा	सा	सा
	श	शि	ति	ल	कं			
५.	नी	नी	नी	नी	धा	पा	मा	मा
	ग	ण	श	त	प	रि	वृ	त
६.	गा	मा	गा	मा	धा	नी	सा	सा
	म	शु	भ	ह	रं			
७.	नी	री	गा	नी	सा	सा	पा	पा
	प्र	ण	म	त	सि	त	वृ	ष
८.	सा	सा	निध	पा	मा	मा	मा	मा
	र	थ	ग	म	नं			

(२०) मालवकैशिक

यह राग कैशिकी जाति से उत्पन्न होता है। ग्रह, अंश और न्यासस्वर षड्ज हैं। काकलीस्वर का प्रयोग है। धैवत का अल्प प्रयोग है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। वीर, रौद्र, अद्भुत और विप्रलंभ रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में दिन के अंतिम प्रहर में गाने लायक है। विष्णुप्रिय राग है। इससे उत्पन्न रागाङ्ग मालवश्री है। अंशस्वर तारषड्ज और मंद्रषड्ज हैं। न्यासस्वर षड्ज है। बाकी अन्य लक्षण मालव-कैशिक के समान हैं।

आलाप—सासपामामारीसनीसासरी मापासा नीनीरीरिसारिपामासनिसा। सनिरीरिपासनीसामगामापासनीसासनिपापनो सधनीपापनीनीनीरीपापनी मामा गगरीरीसासनिन्निपापगामापाधनिससनिपममामगमपपमगागरिरिरि मससससम री-रिरिपमममनिपापप सनोनीरीरिसरिमपनिपपसनी सापापानीसपनिपपसनि सानीस-सनिसनिसनि सपपनीपनिगगनीपपनिगगगमरिरिमससमगगरिरिपरिपपनीपपसनी सा-सा नीनीससनीसनिससनिससपापानीससनिसनिससनिरीरीपा पानीससनिमम गरिरि-ससनिनि पनिभमगमगपमगमगरिससरिमपनिपापसनिसा सा गाममागाममगमगमम-गमा गपपगपगनिनिगमगपपगमगसा। सससधनिपमा सस निसनि रिरिससमगमा गपमगगरिमासससधनीपानि पगमगपगममगरिमा। समगरिपपनि पपसनि पमगमग-पमगमगरि मासरिमपनीपपसनीरीरीरीपप सनीसा।

करण—गागपमगपापनि मापापमनी गपापमनी गपापमनि सं सनीषा (षड्ज) ससा। नीरिरि (ऋषभ) रिममपपनीनिनिरीसनीसा (षड्ज) ससानिनिरिरिनिपानि (पंचम) गगगससधनि पपगमगपगमगारीरिगमामरीरि (षड्ज) सससमगारिरि सापापपनीनि (पंचम) निरिरि (पंचम) नि मा मा मरिगस सधनिपपगम गरीसरी मपानि रिसनी सा स नीरिसनिसा।

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	पा	पा	गा	मा	गा	पा
चं		द्रा		भ	र	णं	
२. धा	नी	पा	पा	धा	नी	गा	गा
ह	र	नी		ल	कं		ठ
३. सा	पा	सा	सा	सा	नी	पा	नी
म	हि	व	ल	य			

४. री	धा	सनि	सा	सा	सा	सा	सा
त्रि	पु	र	ह	रं			
५. पा	नो	री	पा	नी	री	री	सनि
मृ	गां		क	न	य	नं	
६. पा	नी	री	गम	री	गा	री	सनि
गि	रि	नि	ल	यं			
७. सा	सा	पा	पा	नी	नी	पम	नी
न	म	त	स	दा		म	द
८. सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
नां		ग	ह	रं			

(२१) षाडवराग

यह विकृत मध्यम जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका न्यास एवं अंशस्वर मध्यम है, ग्रहस्वर तारमध्यम है। इसमें गांधार एवं पंचम अल्पप्रयोग हैं। काकली अंतर स्वरों का प्रयोग है। मध्यमग्राम की मध्यमादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग हास्य तथा शृंगार रसों का पोषक है। शुक्रप्रिय राग है। पूर्व याम में गाने के लायक है। इससे उत्पन्न रागांग-राग तोडी और बंगाल हैं। तोडी के ग्रह, अंश और न्यासस्वर मध्यम हैं। पंचम में गमक कंपित है। अन्य स्वर षाडव के समान हैं। मंद्र गांधार का प्रयोग है। राग हर्षकर है। अन्य लक्षण षाडव के समान हैं।

बंगाल राग के ग्रह, अंश और न्यासस्वर मध्यम हैं। अन्य लक्षण षाडव के समान हैं। यह भी हर्षकर है।

आलाप—मा सारी नोधा साधानी माधा सारीगा धा सा धामारिगामा माधा-मारी गारीनीधा साधानीमामा।

करण—ममरिग मम सस धनि सस धनि मा मा पपपपनि धममध धससरि गागा-मारिगामामा।

वर्तनिका—साधनि पध मारि मानि धधाधधससरि मासासाधनी धपमा मा गारी गारी गासामाधामा गारीगा गमारिगा सासाधनी मा धनी धगसाधनि मा मामा।

आक्षिप्तिका—

१. मा	मा	धा	धा	सा	धा	नी	पा
पृ	थु	गं		ड	ग	लि	त

२.	धा	नी॰	म़ा	म़ा	म़ा	री	म़ा	री
	म	द	ज	न	म	ति	सौ	
३.	ध़ा	नी॰	स़ा	स़ा	गा	रिग	धा	धा
	र	भ	ल		ग्न		षट्	प
४.	सा	धा	सा	मग	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	द	स	मू		हं			
५.	मग	री	गा	मा	मा	मा	पम	गा
	मु	ख	मिं		द्र	नी		ल
६.	री	गा	स़ा	स़ा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	श	क	लै		भू	षि		त
७.	नी	ध़ा	नी	ध़ा	स़ा	स़ा	स़ा	सा
	मि	व	ग	ण	प	ते		
८.	गा	री	री	गा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
			र्जं	य	तु			

(२२) भिन्नषड्ज

यह षड्जोदीच्यवती जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका अंश और ग्रहस्वर धैवत है, न्यासस्वर मध्यम है। षड्जग्राम की धैवतादिक मूर्च्छना है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। काकली अंतरस्वरों का प्रयोग है। ब्रह्म-प्रिय राग है। बीभत्स एवं भयानक रसों का पोषक है। हेमंत ऋतु में, प्रथम याम में गाने के योग्य है। इससे उत्पन्न रागाङ्ग राग भैरव है। भैरव का अंशस्वर धैवत है। न्यासस्वर मध्यम है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। प्रार्थना में इसका प्रयोग है। अन्य लक्षण भिन्न षड्ज के ही समान हैं।

आलाप—ध़ा ध़ा माम गा स़ा स़ा सगम धधा धा निधमगगमा मम मध मग स़ा स़ा सस़ ग स़। ग मधा धा धा सनिस स़ा सानि गनि सनिधाधा। सनिस़ा स़ा स़ स़ स़ ग सग स़ ग मधा धानि धम गमा माधा। ध़ नि़ नी॰ नी॰ गाम गा मामा।

वर्तनी—धा धगा मामध मम स़ा स़ा। सगम धधा धा धनिध पामामा मा मामम धम गस़ा स़ा सा मप मध गस़ा स़ा गसगध धा धा धनि पध मागा मा मा। मग सा स़ा सग धम धधा धाध निध पम गा मामा।

आक्षिप्तिका—

१.	धा	धा	धा	नो	धा	पा	मा	गा
	च	ल		त्त	रं			ग
२.	सा	गा̥	मा	नो	धा̥	धा̥	धा̥	नो
	भं			गु	रं			अ
३.	धा	पा	मा	गा	सा	गा	सा	धा
	ने			क	रे			णु
४.	धा	धा	नो	गा	मा̥	मा̥	मा̥	मा̥
	पिं			ज	रं			सु
५.	मा	नो	धा	नो	सा̥	सा̥	सा̥	सा̥
	रा			सु	रैः			सु
६.	नी̥	गा̥	सा	नो	धा̥	धा̥	धा	नी
	से			वि	तं			पु
७.	धा	पा	मा	गा	सा	गा	मा	धा
	ना			तु	जा		ह्ल	
८.	धा	धा	नी	गा	मा	मा	मा	मा
	वी			ज	लं			

(२३) भिन्नपंचम

यह मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अंश धैवत है। न्यास पंचम है। मध्यम ग्राम की धैवतादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है और शुद्धनिषाद का भी। विष्णुप्रिय राग है। बीभत्स व भयानक रसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु के प्रथम प्रहर में गाने के लायक है। इससे उत्पन्न रागांग राग वराटी है। अंशस्वर धैवत है। ग्रह और न्यासस्वर षड्ज हैं। मंद्रस्थायी मध्यम से तारस्थान के धैवत तक संचार है। शृंगार रस का पोषक है।

आलाप—धा पा धामा नोधा पानी धामा गा मा पा पा पम मग पम मगस मगा गा री̥ री̥ री माधा पाधा मानीधा धप धनी (धैवत) धा धा मा धा सा̥ (षड्ज) सामारिगसा̥सा̥ गा̥ गसा̥ मनी न्नि (धैवत) धा निध पधा धाम धा मा गा मा पा पा।

वर्तनी—(धैवतषड्ज) सा गा रि (ऋषभ) मनिध पप धपनि (धैवत) धा धप धनी पधम परि गरि निधाधा पा मागा मा पा (पंचम) (ऋषभ) रि मध मम मधा

पा (धैवत) धप पनी धनी (षड्ज) समा रीरी निधा (धैवत) धध मध मधा ममा गामा मा मगनी धा (पंचम) नी धा पाँ मागा माँ पा पा।

आक्षिप्तिका—

१. धा	मा	धप	धा	धा	धनि	धप	मा
वि	म	ल	श	शि	खं		ड
२. धा	सा	नी	धा	पा	निध	मा	मा
धा			रि	ण			
३. मा	री	मा	धा	धप	धा	धप	मा
म	म	र	ग	ण	न	मि	त
४. नी	धा	पध	धनि	धा	धा	धा	धा
म	भ	व	भ	यं			
५. री	मा	धा	मा	नी	गा	मा	नी
वं		दे		त्रि	लो		क
६. धा	पनि	धा	धा	धा	मा	री	मा
ना			थं		गं	गा	
७. धा	पम	गरि	मा	धप	धा	धप	मा
स	रि		तु्स	लि	ल		
८. नी	धा	धप	धनि	धा	मा	पा	पा
धौ		त	ज	टं			

(२४) पंचमषाडव

धैवती व आर्षभी जातियों से यह राग उत्पन्न है। इसका न्यास, अंश और ग्रहस्वर ऋषभ है। कभी-कभी मध्यम भी न्यासस्वर होता है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। मध्यमग्राम में ऋषभादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नाद्यन्त है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है। इससे उत्पन्न रागाङ्गराग गुर्जरी है। इसके अंश और ग्रह ऋषभ हैं। न्यासस्वर मध्यमस्थायी में मध्यम है। ऋषभ व धैवत बहुलस्वर हैं। स्वरों के आहत व प्रत्याहत गमक हैं। शृंगार रस में इसका प्रयोग है। अन्य लक्षण पंचम षाडव के अनुसार हैं।

आलाप—रीरीरिगारि सानी रीरीरीरि निरिरिरि मगामाम धामाम मामामामम मरि मग पप गम मगामम गममप पग मम गा गरिरि गरि मम रि गमम सधु निध सनि

धसनिधाध (पंचम) निपा पनि सनी रीरी रिनीरीम गामाम धामम माम गा गम गम गप पग मम नीन्नि धाधपापमाम गागरीरीरिम सरिग सगसुध निनिध सनिध धनिधाध (पंचम) निपापरीरी रिग मा पा धनीरी रीरिनीरि ममामाम गरि सगा मागरीरि मगा मामा।

करण—रीमामाम मगारि (ऋषभ) रिमापानीनी निमम धामपा गामागा मरीरी गारी मगारिगा (षड्ज) सनिधा (पंचम) पन्नी (पंचम) मधा ममा (ऋषभ) री मापानी पासानी मारि (ऋषभ) रि (षड्ज) सनी सरि रिगाग सामगागरीरी।

आक्षिप्तिका—

१.	री	गा	मा	मा	गा	री	री	री
	स	क	ल	सु	र	न	मि	त
२.	मा	गा	री	मा	गा	री	री	री
	वि	म	ल	मृ	दु	च	र	ण
३.	री	गा	री	धा	नी	मा	नी	नी
	द्व	य		स	रो		ज	यु
४.	धा	मा	धा	नी	गा	री	री	री
	ग	ल	म	म	र	गु	रुं	श
५.	री	री	री	गा	री	री	री	री
	र	ण	म	म	ल	मु	प	
६.	री	री	री	गा	नी	नी	नी	नी
	या		मि	द		या		लु
७.	मा	नी	मा	मा	नी	मा	मा	री
	म	सु	र		सु	र	ज	यि
८.	मा	गा	मा	मा	री	री	री	री
	न	म	जे		यं			

(२५) टक्कराग

यह षड्जमध्यमा व धैवती जातियों से उत्पन्न हुआ है। इसका अंश, ग्रह और न्यासस्वर षड्ज हैं। काकलीनिषाद और अंतरगांधार का प्रयोग है। पंचम अल्पत्व-स्वर है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग युद्धवीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। बरसात में, दिन के अंतिम प्रहर में गाना चाहिए। रुद्र-प्रिय राग है।

रागांग राग गौड़ (गौळ) है। अंश, ग्रह और न्यासस्वर निषाद हैं। पंचम वर्ज्य है। तारस्वर बहुत्व है। अन्य लक्षण टक्कराग के अनुसार हैं।

आलाप—साधा मारी मागा गस गध निसारी गसारी गम मास निध मध मरी-रीरिमागागसा सासग मधनिधासाधामरि गसा गधनि। सा सा ससृगसासससमरिग-साससगधाधध गसा सस धध निधाधम धमन्निमरिगरिरिरि निधममधमरी गरीमरि-गसा ससग सासरिगधाधनि निसासा सँसँसँगससममगधममनिधधस।सधाधमामधा मरिगसा गधनि स। मामामधाम।मधानिधानि मामधा धनिधमगामरिग साधधनि-सासासाससधा गममनि गगमध मरीरिमगागसा सासासगससमगमसगमगनि धामा सासा (षड्ज) सससरि धमगगसनिधाधमा मामा धमधमृमृ मममधमधमाधनि सरिगमगमगरिमगागस।गगन्निसा ममगमगमम गगममगग निनिमम गगमम सममग-गगमस सममरिरि गससगगस सधधनिनि मममधधधधधधध निधनिधमधधधध मधधसध निधामधधमधधधधधमसगसधनिधा। ममममममध सगारि मागागमग धनी सासा।

करण—(षड्ज) सधा मारिगरिनिधाम मधमारिगसासगधाध (षड्ज) सधाधा-सृाधगारि गरीरीरीनिरिमा। माममधनिधा ममध धससधधगरिमासगसनि मनि-माधासाधानी सासामासनिधनिधानी सागाधनी सामा साधा मागृारीरी (ऋषभ) रिगामा निधानी सृा सृा सृ गृ मधधनिगा धासासासमरिगसगसनिधा नीधाधाध सा सासा सासा मगामगागनिगपमागा। सामामामा धामरि गसृासगसागनी गासा मामा गानी (षड्ज) सृ सृा सा सा गा गा गामा सृा सृा। सगासासा गामगा ममगममामा। गासागारि मारि मारि मारि गसागनि (षड्ज) ससा।

आक्षिप्तिका—

१.	सा	सा	धा	धा	मा	मा	मा	मा
	सु	र	मु	कु	ट	म	णि	ग
२.	सा	सनि	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	णा	र्चि	त		च	र	णं	
३.	सा	सा	गा	गा	सा	मा	गा	मा
	सु	र	वृ	क्ष		कु	सु	म
४.	धा	सा	निध	सा	सा	सा	सा	सा
	वा		सि	त	मु	कु	टं	

५. धा	नी	सा	गा	मा	धा	मा	गा
श	शि	श	क	ल	कि	र	ण
६. सा	सा	धा	नी	सनि	धा	धा	धा
वि	च्छु	रि		त	ज	टं	
७. सा	सा	पा	नी	मा	गा	मा	गा
प्र	ण	म	त	प	शु	प	ति
८. गा	गा	धा	नी	सा	सा	सा	सा
म	ज	म	म	रं			

(२६) हिन्दोल

यह राग षाड्जी, गांधारी, पंचमी और नैषादी जातियों से उत्पन्न है। इसके ग्रह, अंश और न्यासस्वर षड्ज हैं। ऋषभ एवं धैवत वर्ज्य हैं। मध्यग्राम की षड्-जादि मूर्च्छना है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। वीर, रौद्र, अद्भुत और श्रृंगार रसों का पोषक है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। वसंतकाल के चौथे प्रहर में गाना चाहिए।

इससे उत्पन्न रागांग राग वसंत है। संपूर्ण राग है। अन्य लक्षण हिंदोल के समान हैं। वसंतराग का दूसरा नाम देशी हिंदोल भी है।

आलाप—सानीपापमागागपापसागनी सासासासा गामापापनीनीनी गागपपा-पनीसा। सनीमागागपापनी सनीसनीगसा। पन्नीसामपनी सगासासामु मगगससनि गसासनीसनी पपसममामगसनिसासुगाममा पापनीसा मनीमगामपापनीसनी सनि गसा पनि सागानी सा गाससासम् गमा गसा सनिसनिनिपापमगामा। ससगग मम-पपनिनि सनिमगा गपापनिसा। गासगसनीसनी सागा मम गम मग मगमप मगापाप सगासामा मगम मनीपा पापममगागसगपापनी निसनि सस। नीपा मागागमा पापनी सा। सनि मगा गपापनी सागासमसनी सनी स। नि ससनी सा। सा सासागसासनी सासससग मसगपमा गपापस गगमगनी पापमम गा। गससमगगपा। ममनीप पस-निनिमगापापनी सागासगसनी सनी सा (षड्ज) ससा। पापानी सासापपनी पनिपा-पनी सासापपनि पनी पनि सगासम मगसगसनीसनी पनी मगमगासासनी। पनी पमगमगमा गस गसानिसनीपनी पमगमगामा। मगमग सागासस निनि पपमम गमपनीनिपम। गाममपनीनि पमगाममपनी ससनिमगाससगासगामपनीपापनी मगा-गपनी सनीसनीगसानी सापनीमपागममगागससससनि सा (षड्ज) ससससगसस। मगामगम मगनी पापापस निनिगसा। ससमा (गांधार) पा (पंचम) पपनिनि

गागस गसनी सनीसा (षड्ज) ससगससमगमा सस गा। निनि सपानी ममापगमा ससससगगससगसगम पापासनि मगागपापनी सागासगासनिसनीसा (पंचम) पपनि पनि पापनि ससनि ससपापनीपगनीगगपापनी मुमुमु। गगगनिनिनि पपपनिनिनि सस। पागगम ससगसगसगमपनिपस निमगागापापन्निस्सासाससमगसगसनीनी सा।

करण——सगापमगापा (पंचम) (षड्ज) समागसागनीनिपानि पपगगपमग-गुागुागुा (षड्ज) ससगागम पाधमम (पंचम) पानिनि सनिसा सु। निनिनि सासा सनि सासानिगपानी। सुासुासुाससनि ससु निमगगगस ससनिसगमनिसनि निपनीनि-पानीपपगगपगमुमुा गुाग (षड्ज) ससुसुसु मपम। पानिसनिमा। मामा (पंचम) निसनिनि सनि ससा। सस निससनी सासापनी। पनि पापपनि सनि ससस पपपपनी। नीमम निपनिप पगसग गमगामास सनिमम गमगापप गमगानीगुागुा (षड्ज) ससमग मगागमगागमगागमससग सनिसनीपागपागमुामाससगगपापस (षड्ज) ससगुगु ममपपनिनि सनीससगगसगसनिसासा।

आक्षिप्तिका——

१.	सा	सा	मा	गा	सा	गा	मा	पा
	स	मु	प	न	त	स	क	ल
२.	पम	गा	सा	सा	सा	गा	मा	मा
	म	भि	नु	त	ज	नी		घ
३.	नी	सा	पा	नी	पा	नी	गा	पा
	प	रि	तु		ष्ट	मा		न
४.	नी	सुा	सुा	सा	सनि	गा	सप	नी
	स		हं		सं			
५.	नी	नी	सा	गा	सा	नी	पा	पा
	प्रि	य	त	म	स	ह	च	र
६.	पम	गा	सा	सा	गम	गा	मा	पा
	स	हि	तं		म	द	नां	
७.	नी	सा	पा	नी	पा	नी	गा	पा
	ग		वि		ना	श	नं	
८.	निस	निस	सा	गा	सा	सा	सा	सा
	नौ			मि				

(२७) शुद्धकैशिकमध्यम

यह राग षड्जमध्यमा और कैशिकी जातियों से उत्पन्न हुआ है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। इसका अंश और ग्रहस्वर तारषड्ज है। न्यास मध्यम है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। गांधार का अल्प प्रयोग है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण रागप्रकाशक होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। चंद्रप्रिय राग है। पूर्व याम में गाना चाहिए।

शुद्धकैशिकमध्यम से उत्पन्न रागांगराग देशी है। ग्रह, अंश और न्यासस्वर ऋषभ हैं। पंचम वर्ज्य है। मंद्र गांधार का प्रयोग है। मध्यम, निषाद और षड्ज बहुत्व-स्वर हैं। करुण रस का पोषक है। अन्य लक्षण शुद्धकैशिकमध्यम जैसे हैं।

आलाप—स̥ा ध̥ाम̥ा ध̥ा सनि धसनी स̥ा स̥ा। सा धानी म̥ा म̥ा स̥ा ग̥ा स̥ा ग̥ा माधा माधा स̥ा निध सनि स̥ा स̥ा ध̥ाम̥ा मधमगागमा सासाधामासगासागामाधास निधस̥ानी स̥ा सासाधानी मा म̥ा।

करण—ससममधधममधसनिधसास̥ास̥ास̥ा। स̥स̥ग̥म गम̥ मधमसानिधस̥ा स̥ा स̥ा स̥ा ध̥ध̥ म̥म̥ धम सगसगमस गग धध सस ग̥स̥ मम धमध सधनि मामा मामा।

आक्षिप्तिका—

१.	स̥ा	स̥ा	धा	पा	मा	ध̥ा	प̥ा	म̥ा
	ओं		का		र	मू		र्ति
२.	धा	पा	मा	पा	री	री	मा	मा
	सं		स्थं		मा		त्रा	
३.	नी	धा	मा	नी	धा	नी	स̥ा	स̥ा
	त्र	य	भू		षि	तं		क
४.	नी	धा	नी	स̥ा	स̥ा	स̥ा	स̥ा	स̥ा
	ला		ती		तं			
५.	धा	धा	म̥ा	म̥ा	री	री	सा	सा
	व	र	दं		व	रं		व
६.	धा	धा	मा	मा	ग̥ा	ग̥ा	म̥ा	ग̥ा
	रे		ण्यं		गो		विं	
७.	नी	धा	मा	नी	धा	नी	सा	सा
	द	क	सं		स्तु		तं	
८.	ध̥ा	सा	ध̥ा	नी	म̥ा	म̥ा	म̥ा	म̥ा
	वं				दे			

(२८) गांधारपञ्चम

यह राग गांधारी और रक्तगांधारी जातियों से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास-स्वर गांधार हैं। काकलीनिषाद का प्रयोग है। मध्यमग्राम में गांधारादि मूर्च्छना है। संचारीवर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। यह राग अद्भुत, हास्य और करुण रसों का पोषक है। राहुप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न रागांग राग देशाख्या (देशाक्षी) है। गांधार में गमक स्फुरित है। ऋषभ वर्ज्य है। अंश, ग्रह और न्यासस्वर गांधार हैं। मंद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरों का समसंचार है। अन्य लक्षण गांधार पंचम के समान हैं।

अलाप—गा सा सा नि सनि स गम गा गा। पामा गा सा सा नि सनि स समम गा गानी धानी सा नीधा पानी मा पा मा। गा स नि स नि सग मगा।

या

अलाप—गागारीरी सनी सपनीसगागा (पंचम) सगा मामग पाधानि धानि पमनि धनि स पनि निध निधपापमगागा मसास साम गमधगम गा गागरी सनिपनि सगापमपसगागा।

करण—गमगग निगमापपपनिममपामप पा पानी नि मधा मम धम ममा गा गा गम मम गामा (षड्ज) सनि स स ग ग मग मम मगागा री गा नी स सनी पानी नी मप मा गम पा पग मम गु निधनि सम पपप मम। गा स गनि मसा सा सा गम धप धम ममा धा नी पनी नि म मप नि मगा (षड्ज) स नि सा सुा सम गपगम।

या

करण—मगरिरि ससनि निससगागाग ममगगममस गसगा गममगमनि धधधनि मध ममापपधनि नीधा (पंचम) पा ममपा मम निधसाम ममपा मपपममा मा सुा सस ससगागा।

आक्षिप्तिका—

१. सा	नी	सा	गा	सा	गा	गा	गा
पिं		ग	ल	ज	टा		क
२. मा	पा	मा	पा	गा	गा	गा	गा
ला		पे		नि	प	तं	
३. गा	पा	सा	गा	गा	गा	गा	गनि
ती		ज	य	ति	जा		ह्न

४.	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	वी		स	त	तं			
५.	गा	गा	गा	गनि	नी	नी	नी	निस
	पू	र्णा			हु	ति	रि	व
६.	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	हु	त	भु	जि	सु	स	मि	धि
७.	मा	पा	सा	गा	गा	गा	मा	गनि
	प	य	सः		क	प	र्दि	
८.	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	नो		प	नु	दे			

(२९) श्रवणा

भिन्नषड्ज राग का भाषाराग[1] है। इस राग में धैवत, निषाद और षड्ज बहुल स्वर हैं। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। धैवत, निषाद और षड्ज को मिलाकर वलितगमक का प्रयोग है। तारस्थान में तारगांधार और मध्यम का प्रयोग है। मंद्र-धैवत का प्रयोग भी है। विजयोत्सवों में इसका प्रयोग होता है। इस राग से उत्पन्न भाषाङ्ग राग डोंबक्कृति है। इसका अंशस्वर षड्ज है। न्यासस्वंर धैवत है। ऋषभ व पंचम वर्ज्य हैं। दीन व करुण रसों का पोषक है।

आलाप—धाधाधामानी सा नी सासनी सा सासनी धाध साससनि सासनि धानी नि धानी सासा सनि सनी निधाधा मा़ गा गु़ सा़ स। सनिधाध मा़ गा़ मा़ मा़ नी धामा़ मगाग सा स सनि धानी धानी निध निध गागमा़ ससनी नीनिधानीनिधानि धानि सनि। धाधधमाधाधा।

रूपक—धनिधगगा़ग सानीनी निनिसनिसनिधनी निधा धा। समनी निध निधा धा धसगमा मगमगा सासा। निनिनि गसनि धनि निधा धा। गाधनि सनि धनिधग सगसनि धनि मम धनिधा।

१. भाषारागों के चार प्रकार होते हैं; जैसे—मूलभाषा, संकीर्णभाषा, देशभाषा, छायामात्राश्रयभाषा। भाषारागों से विभाषा और विभाषारागों से अंतर-भाषारागों की उत्पत्ति होती है।

(३०) ककुभराग

यह मध्यमा, पंचमी और धैवती जातियों से उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अंशस्वर धैवत है। न्यासस्वर पंचम है। षड्जग्राम में धैवतादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। यह राग करुण रस का पोषक है। शरद् ऋतु में गाने योग्य है।

इससे उत्पन्न भाषाराग रगंतिका है। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। धैवत में स्फुरित गमक है। धैवत बहुलस्वर भी है। तारमध्यम का प्रयोग नहीं। अपन्यास पंचम है। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग सावरि है। इस राग के अंश और ग्रहस्वर मध्यम हैं। न्यास धैवत है। षड्ज अल्पस्वर है। तारगांधार तथा मंद्रमध्यम का प्रयोग है। पंचम वर्ज्य है। करुण रस का पोषक है।

ककुभ से उत्पन्न विभाषाराग भोगवर्धनी है। अंश, ग्रह और न्यास धैवत हैं। अपन्यास गांधार है। ऋषभ वर्ज्य है। तार एवं मंद्र गांधार का प्रयोग है। गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद बहुलस्वर हैं। वैराग्य का पोषक है।

इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग वेलावली है। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। षड्ज में कंपित गमक है। तारधैवत व मंद्रगांधार के प्रयोग हैं। विप्रलंभ का पोषक है। हरिप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न दूसरा भाषाराग प्रथममंजरी है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास पंचम है। तारऋषभ, धैवत और मंद्रगांधार के प्रयोग हैं। गांधार तथा मध्यम के गंभीर प्रयोग हैं। उत्सवों में इस राग का प्रयोग होता है।

तीसरा भाषाराग बंगाली है। इसमें अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास गांधार है। ऋषभ व मध्यम के दीर्घ प्रयोग हैं। मंद्रधैवत का भी प्रयोग है। इससे उत्पन्न भाषांग आडीकामोदी है। अंश, ग्रह तथा न्यास धैवत है। मंद्रमध्यम एवं तारगांधार के प्रयोग हैं। स्वरों का क्रमसंचार है।

आलाप—धमृ मृा मगारी रिरि ससनि निधा गामापापगामा धा धगामामसनी सनि निधानिधनि निगा धागधागा रिसासनि मगाग रिरिसासनिनि। धधधपाधपा।

या

आलाप—धाधाधसृ ससससधाध साध साधससधारीरी ममरिग सासृधाधाव पधसधपधधममामा। मरिमारि मृा माधा धाधाधाधपधनिध पधामृा मधापाधा सारी मरी सृ गृ सृा गृ गृाध पधपमपापा।

करण—धा (धैवत) नीधा (पंचम) गामा (ऋषभ) रिरि रि गारि (षड्ज) सधनी नी (धैवत) धाधाधानीरी रिसानि रिसनि सनि सधा नीनी (धैवत) धा। धा धनी रिरिसा निरिसानिधानी ममगमगारी रिसानी रिसानी धानिपपमगपमधाधा। नी निसनि निधध (षड्ज) सगधरिग (मध्यम) मनीनि मानि निधध (पंचम) मपनि मगागरी ममपमगमधाधा। गाधाम गमरिमागा (ऋषभ) रिमाग (षड्ज) सा। धानी नि (धैवत) धा। धामाध सरिगमगपगमनिधानी पधापनि पधमगरि ममपगरि गु़ा मु़ा रि (ऋषभ) रिमाग (षड्ज) स। धानी म (धैवत) धा माधसरि गमगप-गमनि निधानिप धापनीप धमगरिममपगरिगामु़ामु़ा (ऋषभ) सधनिम (धैवत) गा पमपमा (षड्ज) सधनि धनि सनिधाधपा।

या

करण—धधसासमधधधसरीगा सु़ाधा पाधापापा मामापा मापाधा पामु़ा मु़ा सरि मरि ममाधप धापप मु़ा मु़ा पध सरि मरि गासु़ा धामा पारीमा पु़ा पु़ा।

आक्षिप्तिका—

१.	धा	धा	सा	सा	धा	धा	री	री
	यो		ना		म	य		त्र
२.	धा	धा	धा	धा	पा	धा	पा	मा
	नि	व्र	स	ति	क	रो		ति
३.	री	री	मा	मा	पा	धा	पा	मा
	प	रि	र		क्ष	णं		स
४.	पा	धा	पा	मा	मा	मा	मा	मा
	ख	लु	त		स्य			
५.	री	री	मा	मा	धा	धा	पा	मा
	मु		ग्धे		व	स	सि	च
६.	पा	मा	पा	पा	धा	धा	पा	मा
	हृ	द	ये		द	ह	मि	च
७.	पा	धा	पा	मा	सा	रो	सा	री
	स	त	तं		नृ	शं		
८.	गा	सा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	सा				सि			

(३१) वेगरंजी

यह राग टक्कराग की भाषा है। पंचम एवं धैवत वर्ज्य हैं। अंश, ग्रह और न्यास षड्ज हैं। निषाद, षड्ज, ऋषभ, गांधार तथा मध्यम बहुलस्वर हैं। मंद्र-स्थानीय निषाद का प्रयोग है। वेगरंजी से उत्पन्न भाषांगराग नागध्वनि है। इसका ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। पंचम व धैवत वर्ज्य हैं। वीर रस का पोषक है।

आलाप—सा सा सनी सा रिगा नीगगम स नी गा सगसा सनी सारी नी सारी नी सारी सनी सासा मामागागा गा री सनि सानी सारी सारी सारी सारी सनी सनी समागारी सनी नी सरि गानी गागमासनी सासा।

रूपक—मममगगरी री स सनी नी सनी (षड्ज) सनी सरी गरि गगगनी सगरि मासामागा गा री री सा रि ग री सनी नी नी नी नी (षड्ज) सस (ऋषभ) रि गमरि स रिगम म री गसमरी गरी नी सा ममरी गा सा सा।

(३२) सौवीर

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न राग है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। काकली निषाद का प्रयोग होता है। गांधार अल्पस्वर है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग शांत, रौद्र तथा अद्भुत रसों का पोषक है। दिन के पिछले याम में गेय है। शिवप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न मूल भाषाराग सौवीरी है। इसका ग्रह और न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। "सगा" तथा "रिधा" साथ-साथ आते हैं। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग वराटी है। वराटी का दूसरा नाम बटकी है। इसका ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। पंचम, धैवत तथा निषाद बहुलस्वर हैं। तारस्थान में षड्ज व धैवत का प्रयोग है। शांत रस का पोषक है।

आलाप—सा सपा पधानी धापा पधा सा सपाप धा सा सपापधा ध गारि मा गा रि सनि स पा धा सनि सा। मा मा मगारी रि मा म पा प ध निधा पापधा सा स पापधा धगा रि मा गा री सनिधा धपा सा सनी सा सा। मम समम (षड्ज) स स सा ग स ग ग री ग सा स स स ध ध नि निध सनि धनि धा ध प। पपपधध ध स नि सा सा स स स सम (षड्ज) सस सस ग सस मरि रिग सस गध धनि धध ग सं सं सं ध नि ध सनि धनि धध (पंचम) पपप रि पपनि ध ध स सा सस धम रि रि धम रि रि धस सप। धध नि ग धध सस धध नि ध स नि धनि धधपा। पापपप (गांधार) गा गग मरि सग सनिध सस। पपधध सनिसा। स स स प पप निनिनि (षड्ज) स स स रि रि रि रि परि पा धध स निसा। सध म रि रि धम मा रि रि ग सस ग धध

नि धध गस सस धध निध सनि धनि ध धप धध रि नि धधध ग रि म ग रि स निध स निध निध पपृध रि निध सध गरि मगरि मगरि सनि ध समाप पधध सनिसा।

करण—(षड्ज) स (पंचम) नीधा धा धा नी (पंचम) नीधा धा धनी (षड्ज) ससारी रिरि पपनि धाधा धधस स धनि ध पा। पप निध पृ पृ निृ रिृ रिृ ग रि मरि सासां मम रि ग सा स सस स रि ग सा ससनि ध (पंचम) धानि (षड्ज) स स। मम स सस स मस सृा ससरि ग गसृ ग सृा ग सृ गृा सस गसनिधनिधाधध निपा पगृा धगृा धगृा गगग समारी (षड्ज) सनिधापा पापाधापा धनिनि (षड्ज) समृा मृा गगारी (ऋषभ) रिरि मममधमम। मासृास (पंचम) धासाधनिनिपानीधपा-रीपपपपध धध सृ सृ सृ धृ धृ धधध ममम रि रि रि रि गरि गरि गस सधनि धसा धनि-धधरि पपृपप। पधधधध निनि (पंचम) पम धध धनि (षड्ज) ससृा।

आक्षिप्तिका—

१. सृा	सृा	सृा	सृा	सृा	सृा	सृा	सृा
त	रु	ण	त	रु	शि	ख	र
२. नी	नी	धा	धा	पा	पा	पा	मा
कु	सु	म	भ	र	न	मि	त
३. नी	धा	सा	धा	नी	धा	पा	पा
मृ	दु	सु	र	भि	प	व	न
४. धा	गा	धा	सा	सा	सृा	सृा	सृा
धु	त	वि	ट	पे			
५. सृा	सृा	सृा	नी	सा	सा	री	गा
का		न	ने				
६. सा	गा	धा	धा	नी	धा	पा	पा
कुं			ज	रो			
७. नी	धा	सा	धा	नी	धा	पा	पा
भ्र	म	ति	म	द	ल	लि	त
८. गृा	गृा	धा	सा	सा	सा	सा	सा
ली		ला	ग	तिः			

(३३) पिंजरी

हिंदोल से उत्पन्न भाषाराग पिंजरी है। इसमें अंशस्वर गांधार और न्यासस्वर षड्ज है। निषाद वर्ज्य है। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग नट्ट है, जिसमें ग्रह, अंश

और न्यास षड्ज है। तारस्थान में गांधार, पंचम तथा धैवत का प्रयोग है। मंद्रस्थान मे निषाद का भी प्रयोग है। स्वरों का क्रमसंचार है।

गागारि सा धारि सा सारी गा मृ मामा रीरि साधासापामागापाधामारी गापा मागारी सा सानि साधारीसासारीगासारी गागामामागारीसारी रिगारि रीस रि सृ। पृ धापासारि गामारि रीसा।

(३४) कर्नाट बंगाल

वेगरंजी से उत्पन्न भाषाङ्गराग कर्नाटबंगाल है। इसका अंशस्वर गांधार और न्यसस्वर षड्ज है। पंचम वर्ज्य है। श्रृंगार रस का पोषक है।

क्रियाङ्गराग

(१) रामकृति (रामक्रिया)

इस राग का ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। षड्ज से पंचम तक, तारस्थान और मंद्रस्थान में प्रयोग है। षड्ज व ऋषभ बहुलस्वर हैं।

(२) गौड़कृति (गौड़क्रिया)

इस राग का ग्रह, अंश और न्यासस्वर षड्ज हैं। मध्यम एवं पंचम बहुलस्वर हैं। ऋषभ व धैवत वर्ज्य हैं। मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है। तारस्थान में मध्यम का प्रयोग है।

(३) देवकृति (देवक्रिया)

ग्रहस्वर धैवत है। अंश और न्यास षड्ज हैं। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। मंद्रस्थान में निषाद का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

उपाङ्गराग

(१) वराटी

वराटी राग के उपांग ६ हैं। सब में, ग्रह अंश और न्यास षड्ज हैं।

१. **कुंतलवराटी**—इस राग में, निषाद बहुलस्वर है। धैवत में कंपित गमक है। मंद्रस्थानीय षड्ज का प्रयोग है। श्रृंगार रस का पोषक है।

२. **द्राविड़वराटी**—इस राग के ऋषभ में स्फुरित गमक है। मंद्रस्थानीय निषाद का बहुल प्रयोग है।

३. **सिंधु वराटी**—इस राग में गांधार बहुल स्वर है। षड्ज और धैवत में कंपित गमक है। मंद्रमध्यम का प्रयोग है। श्रृंगार रस का पोषक है।

४. **अपस्थान वराटी**—इस राग में, मंद्रस्थायी मध्यम, धैवत और निपाद का प्रयोग है।

५. **हतस्वर वराटी**—इस राग मे पंचम बहुलस्वर है। पड्ज और पंचम में कंपित गमक हैं। मंद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है।

६. **प्रताप वराटी**—इस राग में पंचम बहुलस्वर है। मंद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है। षड्ज में कंपित गमक है।

(२) तोडी

तोडी के दो उपांगराग हैं—

१. **छायातोडी**—इसमें ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं।

२. **तुरुस्कतोडी**—इस राग के स्वरों में आहृति है। गांधार का अल्पप्रयोग है। धैवत और निपाद बहुलस्वर हैं।

(३) गुर्जरी

१. **महाराष्ट्र गुर्जरी**—इस राग में अंश एवं न्यास ऋषभ हैं। पंचम वर्ज्य है। मंद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरों में आहृति है। उत्सवों में इसका प्रयोग होता है।

२. **सौराष्ट्र गुर्जरी**—इस राग के ऋषभ में कंपित गमक है।

३. **दक्षिण गुर्जरी**—इस राग के मध्यम में कंपित गमक है। अन्यस्वरों में आहृति है।

(४) वेलावली

१. **तुच्छी वेलावली**—इसका अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। मध्यम वर्ज्य है। पड्ज तथा पंचम में आंदोलित गमक है। विप्रलंभ शृंगार रस का पोषक है।

२. **खंबावती वेलावली**—इसका अंश और न्यास धैवत है। पंचम वर्ज्य है। मध्यम और निषाद में आंदोलित गमक है। शृंगार रस का पोषक है।

३. **छाया वेलावली**—अंश एवं न्यास वेलावली के अनुसार हैं। मंद्रस्थान में मध्यम का कंपित गमक है।

४. **प्रताप वेलावली**—इसमें ऋषभ और पंचम वर्ज्य हैं। स्वरों में आहत गमक है।

(५) भैरव

१. **भैरवी**—भैरव का उपांग भैरवी ही है। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। तारस्थान और मंद्रस्थान में गांधार का प्रयोग है।

(६) कामोद

१. **सिंहली कामोद**—कामोद का उपांग है। इसके अधिकांश लक्षण कामोद के समान हैं। मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है। धैवत में कंपित गमक है।

(७) नट्ट

१. **छायानट्ट**—नट्टराग का उपांग है। इसके ग्रह, अंशादि लक्षण नट्टराग के समान हैं। निषादगांधार में कंपित गमक है। मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है।

(८) टक्क

१. **कोलाहल**—टक्कराग का भाषाराग है। इसका ग्रह और अंश षड्ज है। पंचम वर्ज्य है। मध्यम बहुलस्वर है। मंद्रस्थान में षड्ज और धैवत का प्रयोग है। स्वरों में कंपितादि गमक का प्रयोग है।

(९) कोलाहल

रामकृति—कोलाहल का भाषाङ्ग है। इस राग का पर्याय नाम बहुलि है। कलहाभिनय में इसका प्रयोग है। अंश मध्यम और न्यास षड्ज हैं। पंचम वर्ज्य है। टक्क तथा कोलाहल रागों के अधिक निकट होने के कारण इस राग को उनका उपाङ्ग भी कहते हैं। इसी तरह अति निकट होनेवाले रागों को उनके उपांग भी कहते हैं।

(१०) हिंदोल

चेवाटी—हिंदोल का भाषाराग है। अंश, ग्रह और न्यास षड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है। धैवत बहुलस्वर है। गांधार और पंचम अपन्यासस्वर हैं। मंद्रस्थान में षड्ज, गांधार और मध्यम का प्रयोग है। तारस्थान में षड्ज और गांधार का प्रयोग है। उत्सवों और हास्यसंदर्भों में इस राग का प्रयोग होता है।

(११) चेवाटी

वल्लाता चेवाटी का उपांग है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। ऋषभ वर्ज्य है। मंद्रस्थान में धैवत का प्रयोग है। शृंगार रस का पोषक है।

(१२) पंचम

ग्रामराग है। मध्यमा एवं पंचमी जातियों से उत्पन्न है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास मध्यमस्थानीय पंचम हैं। मध्यमग्राम की पंचमादि मूर्च्छना है। काकली

अंतर स्वरों का प्रयोग है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। मन्मथप्रिय राग है। शृंगार एवं हास्यरसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु में दिन के प्रथम प्रहर में गेय है।

दाक्षिणात्य—इसका भाषाराग है। इसमें अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास ऋषभ है। तारस्थान में मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

आंधालिका—पंचम का विभाषाराग है। अंश, ग्रह और न्यास पंचम हैं। निषाद का अल्पप्रयोग है। अन्य स्वरों का बहुल है। गांधार वर्ज्य है। मंद्रस्थान में षड्ज का तथा तारस्थान में धैवत का प्रयोग होता है। इसका उपांग मल्लारी है जिसमें ग्रह, अंश और न्यास पंचम है। मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है। गांधार वर्ज्य है। स्वरों में आहत गमक है। शृंगार रस का पोषक है। इसका दूसरा उपांग मल्लार है। मल्लार राग के ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। षड्ज एवं पंचम वर्ज्य हैं। मंद्रस्थान में गांधार और तारस्थान में निषाद का प्रयोग है।

(१३) गौड़

१. **कर्नाट गौड़**—गौड का उपांग है। इसका ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है।

२. **देशवाल गौड़**—दूसरा उपांग है। षड्ज में आंदोलित गमक है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। गांधार बहुलस्वर है। मंद्रस्वरों में आहत गमक है।

३. **तुरुष्क गौड़**—तीसरा उपांग है। इसका अंश और न्यास निषाद हैं। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। गांधार में "तिरिप" गमक है। षड्ज एवं पंचम बहुल-स्वर हैं।

४. **द्राविड़ गौड़**—चौथा उपांग है। अंश, ग्रह और न्यास निषाद है।

(१४) श्रीराग

मार्गरागों में "राग" नामक विभाग में एक प्रसिद्ध राग है। इसे देशी राग भी कहते हैं। यह राग षड्जग्राम की षाड्जी जाति से उत्पन्न है। अंश, ग्रह और न्यास षड्ज है। मंद्रस्थानीय गांधार और तारस्थानीय मध्यम का प्रयोग है। पंचम अल्पस्वर है। वीररस का पोषक है।

(१५) बंगाल

यह राग षड्ज मध्यमा जाति से, षड्जग्राम मूर्च्छना में उत्पन्न है। इसमें ग्रह अंश और न्यास षड्ज हैं। मंद्रस्थान में संचार नहीं है।

(१६) द्वितीय बंगाल

कैशिकी जाति से मध्यमग्राम मूर्च्छना में उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। मध्य तारस्थानीय पंचम का प्रयोग है।

(१७) मध्यमषाडव

इसमें अंशस्वर ऋषभ, न्यासस्वर पंचम और अपन्यासस्वर धैवत है। पंचम अल्पस्वर है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है।

(१८) शुद्धभैरव

अंश, ग्रह और न्यासस्वर धैवत हैं। तारस्वर षड्ज और मंद्रस्वर गांधार है।

(१९) मेघराग

षड्जग्राम में धैवती जाति से उत्पन्न है। तारस्वर षड्ज है। तारस्थान में संचार नहीं है। अंश, ग्रह और न्यास स्वर धैवत हैं।

(२०) सोमराग

षड्जग्राम में षाड्जी जाति से उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यासस्वर षड्ज हैं। निषाद एवं गांधार का बहुलप्रयोग है। मंद्रस्थान में, मध्यम का प्रयोग नहीं। वीररस का पोषक है।

(२१) कामोद

षड्जग्राम में षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न राग है। ग्रहस्वर तारषड्ज है। तार और मंद्रस्वर गांधार हैं। अंशस्वर धैवत है। न्यासस्वर षड्ज है।

(२२) द्वितीय कामोद

षाड्जी जाति से उत्पन्न है। षड्जग्राम की मूर्च्छना से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। मंद्रस्थान में गांधार का प्रयोग रक्तिदायक है।

(२३) आम्रपंचम

इसका अंश, ग्रह और न्यास गांधार है। तारस्थान में संचार नहीं है। मंद्र-संचारों की सीमा नहीं है। मंद्र व मध्य स्थान में ही संचार है। हास्य और अद्भुत रसों का पोषक है।

(२४) कैशिकी

यह शुद्धपंचम का भाषाराग है। ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। अपन्यास मध्यम है। मध्यमपंचम का बहुलप्रयोग है। तारस्वर षड्ज, गांधार या मध्यम है। ईर्ष्याभाव का पोषक है। इसी राग को भाषांगराग कहकर दूसरे प्रकार के लक्षण ऐसे दिये गये हैं कि तारस्वर ऋषभ है। मंद्रस्वर षड्ज या मध्यम है। उत्सवों में प्रयोज्य है।

(२५) सौराष्ट्री

यह पंचम का भाषाराग है। ग्रह, अंश और न्यास पंचम है। ऋषभ वर्ज्य है। षड्ज एवं पंचम बहुलस्वर हैं। तारसंचार षड्ज, गांधार और धैवत तक है। मंद्र-संचार मध्यम तक है। स्वरों में गमक का प्रयोग है। समस्त भावों का पोषक है।

(२६) द्वितीय सौराष्ट्री

टक्कराग का भाषाराग है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। निषाद का अतिबहुल प्रयोग है। अन्य स्वरों का भी बहुलप्रयोग है। पंचम वर्ज्य है। करुणरस का पोषक है।

(२७) ललिता

यह टक्क का भाषाराग है। स्वरों का ललित (मृदुल) प्रयोग है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। तार अवधि गांधार या धैवत है। मंद्र अवधि षड्ज है। वीररस का पोषक है।

(२८) द्वितीया ललिता

यह भिन्नषड्ज का भाषाराग है। इसमें अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। ऋषभ, गांधार तथा मध्यम का तारमंद्र स्थानों में ललित प्रयोग है। मंद्रगति की अवधि धैवत है। ललित भावों तथा स्नेहभावों में इसका प्रयोग है।

(२९) सैंधवी (प्रथमा)

टक्क का भाषाराग है। इसका ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। स्वर, गमक व लंघन से युक्त हैं। तारावधि षड्ज या गांधार है। मंद्र की अवधि षड्ज है। सारे रसों का पोषक है।

(३०) सैंधवी (द्वितीया)

यह पंचम का भाषाराग है। अंश, ग्रह और न्यास पंचम हैं। ऋषभ एवं पंचम अपन्यासस्वर हैं। ऋषभ का बहुल प्रयोग है। निषाद, धैवत और पंचम गमकयुक्त हैं।

(३१) सैंधवी (तृतीया)

यह मालवकैशिक का भाषाराग है। इसमें मृदुपंचम का प्रयोग है। मंद्रावधि षड्ज है। निषाद एवं गांधार वर्ज्य हैं। इसमें ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। समस्त भावों का पोषक है।

(३२) सैंधवी (चतुर्थी)

भिन्नषड्ज का भाषाराग है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। मंद्रावधि धैवत है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं।

(३३) गौड़ी

हिंदोल का भाषाराग है। इसका ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। धैवत तथा ऋषभ वर्ज्य हैं। पंचम में गमक है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

(३४) गौड़ी (द्वितीया)

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। तारस्थान और मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। निषाद बहुलस्वर है। विप्रलंभ श्रृंगार तथा वीररस में प्रयोज्य है। यह मतंग-मुनिप्रोक्त है।

(३५) त्रावणी

यह पंचम का भाषाराग है। ग्रह और अंश षड्ज है। न्यास पंचम है। षड्ज, ऋषभ, मध्यम तथा पंचमस्वरों में, हरएक के साथ गांधार एवं निषाद का प्रयोग है। यह राग याष्टिकमुनिप्रोक्त है।

मतान्तर के अनुसार यह राग भाषाङ्ग कहा जाता है। ग्रह और अंशस्वर धैवत हैं। पंचम तथा निषाद वर्ज्य हैं। तारस्थान में संचार नहीं है। मन्द्र धैवत एवं गांधार का प्रयोग है। मध्यम बहुलस्वर है।

(३६) हर्षपुरी

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। तारस्थान में मध्यम एवं पंचम का प्रयोग है। धैवत वर्ज्य है। हर्ष में इसका प्रयोग है।

(३७) भम्माणी

यह पंचम का विभाषाराग है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। तारस्थानीय षड्ज, मध्यम, पंचम तथा निषाद का प्रयोग है। ऋषभ वर्ज्य है। उत्सव में इसका प्रयोग है।

(३८) टक्ककैशिक

ग्राम रागों में वेसर रीति का एक राग है। धैवती और मध्यमा जातियों से उत्पन्न है। षड्जग्राम तथा मध्यमग्राम इन दोनों के स्वरों से युक्त है। इसमें ग्रह, अंश तथा न्यास धैवत हैं एवं काकली और अंतरस्वर का प्रयोग है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। षड्जग्राम की धैवतादि मूर्च्छना में रागस्वरूप मिलता है। बीभत्स और भयानक रसों का पोषक है। दिन के चतुर्थ याम में गाना चाहिए। कंचुकीनर्तन में इसका प्रयोग होता है। महाकाल और मन्मथ—दोनों का प्रीतिकारक है।

टक्ककैशिक का भाषाराग मालवा है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। षड्ज और धैवत स्वरों का प्रयोग गांधार व निषाद के साथ-साथ होता है।

(१) सौवीर के भाषाराग

१. **वेगमध्यमा**—इसके ग्रह एवं न्यासस्वर षड्ज हैं। अंशस्वर षड्ज है। षड्ज एवं पंचम का प्रयोग साथ-साथ होता है। मध्यम बहुलस्वर है। संपूर्ण राग है।

२. **साधारित**—ग्रह एवं अंश षड्ज हैं। न्यास मध्यम है। ऋषभ मध्यम तथा षड्ज मध्यम को साथ-साथ प्रयोग करते समय गमक का प्रयोग किया जाता है।

३. **गांधारी**—ग्रह एवं अंश निषाद हैं। न्यास षड्ज है। करुण रस का पोषक है।

(२) ककुभ के भाषाराग

१. **भिन्नपंचमी**—ऋषभ, मध्यम, पंचम और धैवत बहुलस्वर हैं। अंशस्वर धैवत है। मध्यम अपन्यास है।

२. **कांभोजी**—ग्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत हैं। षड्ज एवं धैवत साथ-साथ आते हैं। ऋषभ एवं पंचम का भी साथ-साथ प्रयोग है।

३. **मध्यमग्राम**—ग्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। ककुभ के दो ग्रामों में मध्यमग्राम से उत्पन्न राग है। ऋषभ एवं धैवत का साथ-साथ प्रयोग है।

४. **मधुरी**—अंशस्वर षड्ज है। न्यासस्वर धैवत है। गांधार, पंचम और निषाद, धैवत के साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं।

५. **शकमिश्र**—ग्रह एवं अंश निषाद हैं। न्यास ऋषभ है। पंचम-निषाद तथा ऋषभ-धैवत का साथ-साथ प्रयोग है।

(३) ककुभ के विभाषाराग

१. **आंभीरिका**—ग्रह, अंश और न्यास मध्यम हैं। तारस्थान में पंचम का प्रयोग है। मंद्रस्थान में धैवत का प्रयोग है। निषाद, ऋषभ और षड्ज के साथ-साथ द्रुत-प्रयोग हैं। मध्यम बहुलस्वर है।

२. **मधुकरी**—ग्रह एवं न्यास षड्ज हैं। अपन्यास गांधार है। षड्ज, ऋषभ, पंचम, धैवत और निषाद बहुलस्वर हैं।

(४) ककुभ के अन्तर-भाषाराग

१. **शालवाहिनी**—इसका ग्रह और अंश ऋषभ हैं। न्यास धैवत हैं। ऋषभ एवं गांधार का साथ-साथ प्रयोग है।

(५) टक्कभाषाराग

१. **त्रवणा**—इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। षड्ज, धैवत तथा निषाद बहुलस्वर हैं। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। तार-स्थान में गांधार और मध्यम का प्रयोग है। दिन के अंतिम याम में गेय है। वीर रस का पोषक है। देवता रुद्र है।

२. **त्रवणोद्भवा**—अंशस्वर मध्यम है। न्यास षड्ज है। अपन्यास गांधार है। ऋषभ एवं धैवत बहुलस्वर हैं।

३. **वेरञ्जी**—इसमें ग्रह एवं अंश गांधार हैं। न्यास षड्ज है। पंचम अल्पस्वर है। "समा" एवं "रिगा" का प्रयोग साथ-साथ होता है। षाडवराग है।

४. **मध्यमग्रामदेहा**—इसका ग्रह, अंश और न्यास मध्यम हैं। षड्ज एवं मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

५. **मालववेसरी**—इसमें अंश एवं ग्रह निषाद है। न्यास षड्ज है। षड्ज तथा गांधार एवं षड्ज एवं मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

६. **चेवाटी**—षाडव राग है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। षड्जमध्यम तथा गांधारनिषाद का साथ-साथ प्रयोग है। मध्यम बहुल स्वर है।

७. **पंचमलक्षिता**—इसमें ग्रह एवं न्यास षड्ज हैं और अंश पंचम है। तार-स्थान में षड्ज, गांधार, मध्यम और पंचम के प्रयोग हैं। ऋषभ वर्ज्य है।

८. **षञ्चमी**—इसमें ग्रह एवं अंश पंचम हैं। न्यास षड्ज है। ऋषभपंचम तथा षड्जपंचम के प्रयोग साथ-साथ हैं।

९. **गांधारपंचमी**—इसमें ग्रह और अंशस्वर धैवत हैं। न्यास षड्ज है। गांधार बहुलस्वर है। षड्जमध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

१०. **मालवी**—पंचम और धैवत क्रिमशः अंश एवं न्यास हैं। ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान के षड्ज, गांधार और मध्यम में कंपित गमक है।

११. **तानवलिता**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यासस्वर षड्ज है। षड्ज और पंचम का मृदुभाव से लालन है।

१२. **रविचन्द्रिका**—इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। ऋषभ और पंचम का अल्प प्रयोग है। ऋषभ गांधार तथा षड्जमध्यम का प्रयोग साथ-साथ है।

१३. **ताना**—इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। अपन्यास धैवत है। ऋषभ और पंचम वर्ज्य हैं। निषाद तथा षड्ज में गमक है। करुणरस का पोषक है।

१४. **अंबाहेरी**—इसमें ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। गांधार एवं धैवत का बहुल प्रयोग है। पंचम वर्ज्य है। वीर रस का पोषक है।

१५. **दोह्या**—इसमें ग्रह तथा अंश गांधार हैं। न्यास षड्ज है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं।

१६. **वेसरी**—इसमें ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। धैवत तथा निषाद का साथ-साथ प्रयोग है एवं षड्ज और धैवत का भी। काकली निषाद का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

(६) टक्क के विभाषाराग

१. **देवारवर्धनी**—अंश एवं ग्रह पंचम हैं; न्यास षड्ज है।

२. **आंध्री**—अंश तथा ग्रह मध्यम हैं, न्यास पंचम है।

३. **गुर्जरी**—ग्रह एवं अंश निषाद है और न्यास षड्ज हैं। "सम" तथा "रिनि" साथ-साथ आते हैं।

४. **भावनी**—ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं।

(७) शुद्धपंचम के भाषाराग

१. **तानोद्भवा**—अंश मध्यम है। पंचम न्यास है। "धप" साथ-साथ आते हैं। पंचम बहुलस्वर है।

२. **आभीरी**—ग्रह, अंश तथा न्यास पंचम हैं। काकली स्वर का प्रयोग है, निषाद बहुलस्वर है। "सम" साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

३. **गुर्जरी**—ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। तारस्थान में षड्जमध्यम का प्रयोग है। गांधार तथा पंचम अपन्यास हैं।

४. **आंध्री**—ग्रह एवं अंशस्वर ऋषभ हैं। न्यासस्वर पंचम है। षड्ज का हलका प्रयोग है।

५. **मांगली**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। काकली निषाद का प्रयोग है। 'सध' तथा 'रिप' साथ-साथ आते हैं।

६. **भावनी**—ग्रह, अंश तथा न्यास पंचम है। ऋषभ वर्ज्य है। स, म, नि बहुलस्वर हैं। "म" अपन्यास है।

(८) भिन्नपंचम के भाषाराग

१. **धैवतभूषिता**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। "सध" तथा "रिध" साथ-साथ आते हैं।

२. **शुद्धभिन्ना**—अंश, ग्रह तथा न्यास धैवत हैं। "रिध" और "सम" साथ-साथ आते हैं। संपूर्ण राग है।

३. **वराटी**—अंश एवं ग्रह मध्यम हैं। न्यास धैवत है। "ऋषभ" का हलका प्रयोग है। "सधा" व "रिगा" का साथ-साथ प्रयोग है। धम बहुलस्वर हैं।

४. **विशाला**—ग्रह और अंश पंचम हैं। न्यास धैवत है। धैवत बहुलस्वर है। 'सधा' साथ-साथ आते हैं। संपूर्ण राग है।

(९) भिन्नपंचम का विभाषाराग

१. **कौशली**—ग्रह एवं अंश निषाद हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

(१०) टक्ककैशिक के भाषाराग

१. **मालवा**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। "सध" "रिध" साथ-साथ आते हैं।

२. **भिन्नवलिता**—ग्रह एवं अंश षड्ज हैं। न्यास धैवत है। धैवत एवं निषाद बहुलस्वर हैं। मध्यम एवं निषाद का साथ-साथ प्रयोग है।

(११) टक्ककैशिक का विभाषाराग

१. **द्राविड़ी**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास धैवत है। "गनि" तथा "सधा" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

(१२) हिंदोल के भाषाराग

१. **वेसरी**—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। पंचम एवं धैवत अल्पस्वर हैं। "सग" व "रिनि" का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. **प्रथममंजरी**—ग्रह एवं अंश पंचम हैं तथा न्यास षड्ज है। पधनिस बहुल स्वर हैं। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

३. **षड्जमध्यमा**—ग्रहस्वर षड्ज और न्यासस्वर मध्यम हैं। निषाद एवं ऋषभ वर्ज्य हैं। "समा" तथा "गमा" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

४. **माधुरी**—ग्रह व अंश मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। पधनिस बहुलस्वर हैं। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

५. **भिन्नपौराली**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं।*न्यास षड्ज है।

६. **मालववेसरी**—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। अपन्यास गांधार है। मध्यम एवं पंचम में गमक हैं। ऋषभ तथा धैवत वर्ज्य हैं।

(१३) बोट्ट राग का भाषाराग

१. **मांगली**—ग्रह और अंश पंचम हैं। न्यास मध्यम है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एवं धैवत का साथ-साथ प्रयोग होता है।

(१४) मालवकैशिक के भाषाराग

१. **वांगली**—अंश एवं ग्रह मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। रि, नि का साथ-साथ प्रयोग है।

२. **मांगली**—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। मध्यम एवं पंचम अल्पस्वर हैं। मध्यम और पंचम स्फुरित गमक से युक्त हैं। धैवत का दीर्घप्रयोग है। तारस्थान में ऋषभ और मध्यम का प्रयोग है।

३. **मालववेसरी**—ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। धैवत वर्ज्य है। तारस्थान में ऋषभ और मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग हैं। मध्यम और पंचम कंपितगमक से युक्त हैं।

४. **खंजनी**—ग्रह एवं अंश पंचम है। न्यास षड्ज हैं। धैवत वर्ज्य है। निस तथा रिमा का प्रयोग साथ-साथ होता है।

५. गुर्जरी—ग्रह और अंश निषाद हैं, न्यास षड्ज है। "रिनि" तथा "रिमा" साथ-साथ आते हैं।

६. पौराली—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। षड्ज एवं मध्यम बहुलस्वर हैं।

७. अर्धवेसरी—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं और न्यास षड्ज है। 'स' एवं 'म' बहुलस्वर है। नि अल्पस्वर है।

८. शुद्धा—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास षड्ज हैं।

९. मालवरूपा—ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। धनि वर्ज्य हैं। गाधार बहुलस्वर है।

१०. आभीरी—ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। गनि अल्पस्वर हैं। स और रि साथ-साथ आते हैं। वीर रस का पोषक है।

(१५) मालवकैशिक के विभाषाराग

१. कांबोजी—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। नि बहुलस्वर है। गमयुक्त भी हैं। रिप वर्ज्य हैं। मंद्रस्थानीय षड्ज का प्रयोग होता है।

२. देवारवर्धनी—षड्ज न्यास है। गांधार एवं निषाद वर्ज्य हैं। न्यास पंचम है।

(१६) गांधारपंचम का भाषाराग

१. गांधारी—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। षड्ज और गांधार बहुलस्वर हैं। लोकरंजक राग है।

(१७) भिन्नषड्ज के भाषाराग

१. गांधारवल्ली—ग्रह एवं अंश मध्यम और न्यास धैवत हैं। 'सधा' साथ-साथ आते हैं।

२. कच्चेली—ग्रह एवं अंश षड्ज हैं। न्यास मध्यम है। कूट तान का प्रयोग है। ग, ध वर्ज्य हैं। मतान्तर में ग्रह तथा अंश मध्यम हैं। तार व मंद्रस्थान में ऋषभ का प्रयोग है। ग और नि वर्ज्य हैं।

३. स्वरवल्लिका—ग्रह निषाद है। अंश एवं न्यास धैवत हैं। ऋषभ वर्ज्य है। स्वरों का मृदुभाव से प्रयोग होता है।

४. निषादिनी—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं।

५. मध्यमा—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं।

६. **शुद्धा**—ग्रह, अंश तथा न्यास धैवत हैं। धैवत का मृदु प्रयोग होता है। रिप वर्ज्य हैं। मतान्तर में "प" मात्र वर्ज्य है। मग का साथ-साथ प्रयोग है। अपन्यास षड्ज है। मंद्रस्थान में स, ग, धा के प्रयोग हैं। पंचम का दीर्घ प्रयोग है।

७. **दाक्षिणात्या**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। पंचम अल्पस्वर है। षाडव राग है। "समा" तथा "सधा" के साथ-साथ प्रयोग होते हैं।

८. **पुलिन्दी**—ग्रह एवं अंश धैवत हैं और न्यास षड्ज है। गप वर्ज्य हैं। "सध" तथा "सम" के साथ-साथ प्रयोग हैं।

९. **तुम्बुरा**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। ऋषभ वर्ज्य है।

१०. **कालिन्दी**—ग्रह एवं अंश गांधार हैं और न्यास धैवत है। रिप वर्ज्य हैं। निषाद का अल्प प्रयोग है। चतुःस्वर राग है। आरोहण व अवरोहण में राग का प्रकाशन होता है।

११. **श्रीकण्ठी**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। पंचम वर्ज्य है। अपन्यास ऋषभ है। रिमा का प्रयोग साथ-साथ आता है।

१२. **गांधारी**—ग्रह व अंश गांधार हैं, और न्यास मध्यम है। मध्यम वर्ज्य है।

(१८) भिन्नषड्ज के विभाषाराग

१. **पौराली**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ अल्पस्वर है। रिमप का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. **मालवी**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। सरिगम बहुलस्वर हैं। मंद्र स्थान में धैवत का प्रयोग है।

३. **कालिन्दी**—ग्रह और अंश गांधार हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। निषाद अल्पस्वर है। अद्भुत रस का पोषक है।

४. **देवारवर्धनी**—ग्रह एवं अंश निषाद हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

(१९) वेसरषाडव के भाषाराग

१. **नाद्या**—ग्रह एवं अंश षड्ज हैं। न्यास मध्यम है। "ग" बहुलस्वर है। पंचम वर्ज्य है।

२. **बाह्यषाडवा**—अंश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। "निग" तथा "रिग" के साथ-साथ प्रयोग हैं।

(२०) वेसरषाडव के विभाषाराग

१. **पार्वती**—अंश एवं ग्रह षड्ज हैं।

२. **श्रीकंठी**—ग्रह, अंश और न्यास मध्यम हैं। "निध" तथा "रिध" का साथ-साथ प्रयोग है। पंचम वर्ज्य है।

(२१) मालवपंचम के विभाषाराग

१. **वेगवती**—अंश धैवत है। ग्रह एवं न्यास षड्ज हैं। आंजनेयप्रोक्त है।

२. **भावनी**—ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। अपन्यास षड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है।

३. **विभावनी**—ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। गांधार, मध्यम और धैवत अल्पस्वर हैं। मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है।

(२२) भिन्नतान का भाषाराग

१. **तानोद्भवा**—अंश, ग्रह और न्यास पंचम हैं। ऋषभ वर्ज्य है। काकली अंतर स्वरों का प्रयोग है।

(२३) पंचमषाडव का भाषाराग

१. **पोता**—अंश, ग्रह और न्यास ऋषभ हैं। निषाद एवं षड्ज बहुलस्वर हैं। धैवत वर्ज्य है।

(२४) रेवगुप्त का भाषाराग

१. **शका**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। गांधार, पंचम, ऋषभ और धैवत बहुलस्वर हैं।

अज्ञातजनक भाषाराग

१. **पल्लवी**—यह विभाषा राग है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। षड्ज एवं ऋषभ बहुलस्वर हैं। तारस्थान में गांधार का प्रयोग है।

२. **भासवलिता**—यह अंतरभाषाराग है। ग्रह, अंश तथा न्यास धैवत हैं। ऋषभ अल्पस्वर है। पंचम वर्ज्य है।

३. **किरणावलि**—यह अंतरभाषाराग है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। तारस्थान में गांधार और निषाद का प्रयोग है। मंद्रस्थान में भी निषाद का प्रयोग है।

४. **शकवलिता**—ग्रह एवं अंश मध्यम हैं। न्यास धैवत है। धनि का साथ-साथ प्रयोग है।

उपराग (मार्ग)

१. **शकतिलक**—यह षाड्जी एवं धैवती जातियों सें उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। पंचम अल्पस्वर है।

२. **टक्कसैंधव**—यह षाड्जी और कैशिकी जातियों से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। पंचम अल्पस्वर है।

३. **कोकिलपंचम**—यह राग पंचमी एवं मध्यमा जातियों से उत्पन्न है। अंश एवं ग्रह पंचम हैं और न्यास मध्यम है।

४. **भावनापंचम**—यह राग गांधारपंचमी जाति से उत्पन्न है। गांधार ग्रह स्वर है, पंचम अंशस्वर है।

५. **नागगांधार**—यह राग गांधारी और रक्तगांधारी जातियों से उत्पन्न है। अंश, ग्रह तथा न्यास गांधार हैं। काकली और अंतर स्वरों का प्रयोग है।

६. **नागपंचम**—यह राग आर्षभी व धैवती जातियों से उत्पन्न है। न्यास धैवत है और ग्रह तथा अंश ऋषभ हैं। गांधार वर्ज्य है।

निरुपपद राग

१. **नट्टराग**—मध्यमोदीच्यवा जाति से उत्पन्न है। अंश, ग्रह और न्यास मध्यम है। तारस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

२. **भास**—यह राग आंध्री जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं।

३. **रक्तहंस**—रक्तगांधारी जाति से उत्पन्न राग है। अंश, ग्रह तथा न्यास धैवत हैं और ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान में गांधार का प्रयोग है।

४. **कोह्लास**—नैषादी व धैवती जातियों से यह राग उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। धैवत अल्पस्वर है।

५. **प्रसव**—नन्दयंती जाति से यह उत्पन्न है। ग्रह व अंश मध्यम हैं और न्यास षड्ज है। षड्ज, मध्यम तथा निषाद बहुलस्वर हैं। वीर रस का पोषक है।

६. **ध्वनि**—गांधारपंचमी जाति से उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यास पंचम हैं। पंचम व धैवत बहुलस्वर हैं। निषाद एवं गांधार अल्पस्वर है। मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है।

७. **कन्दर्प**—यह राग षड्जकैशिकी जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। पंचम वर्ज्य है। मंद्र षड्ज का प्रयोग है।

८. **देशाख्या**—धैवती तथा मध्यमा जातियों से उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। गांधार अल्पस्वर है। पंचम वर्ज्य है। मंद्र मध्यम का प्रयोग है।

९. **कैशिककुभ**—मध्यमा, पंचमी और धैवती जातियों से उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश तथा न्यास धैवत हैं। तार गांधार और मंद्र पंचम का प्रयोग है।

१०. **नट्टनारायण**—मध्यमा एवं पंचमी जातियों से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। काकली अंतरस्वर का प्रयोग है। तारस्थान में गांधार का प्रयोग है। करुण रस का पोषक है। शरत्काल में गेय है। कालप्रिय राग है।

देशीराग

(१) रागाङ्गराग

१. **शंकराभरण**—मध्यमादि राग को मंद्रस्वर के साथ और दूसरी छाया के साथ गायें तो वही शंकराभरण राग है।

२. **घण्टारव**—भिन्नषड्ज राग का यह अंग है। ग्रह एवं अंश धैवत और न्यास मध्यम हैं। तारस्थान में निषाद तथा मंद्रस्थान में गांधार का प्रयोग है।

३. **हंसक**—भिन्नषड्ज का यह अंग है। ग्रह. एवं अंश धैवत हैं और षड्ज वर्ज्य है।

४. **दीपक**—भिन्नकैशिक का अंग है। ग्रह एवं अंशस्वर षड्ज और न्यास मध्यम हैं। दीप्तमध्यम का प्रयोग है। गांधार एवं पंचम अल्पस्वर हैं। मतान्तर के अनुसार धन्याशी का उच्चतर प्रयोग दीपक है।

५. **रीति**—ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। भिन्नषड्ज का अंग है।

६. **पूर्णाटिका**—ग्रह और न्यास षड्ज हैं और अंश धैवत है। तारस्थान में षड्ज और मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है।

७. **लाटी**—लाट देश में उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं।

८. **पल्लवी**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। तारगांधार और मंद्रमध्यम का प्रयोग है। षड्ज, ऋषभ और गांधार बहुलस्वर हैं।

(२) भाषाङ्गराग

१. **गांभीरी**—ग्रह एवं अंश षड्ज हैं और न्यास पंचम। तारस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

२. **वेहारी**—ग्रह, अंश और न्यास मध्यम हैं। निषाद वर्ज्य है। तारषड्ज तथा मंद्रमध्यम का प्रयोग है।

३. **स्वसिता**—ग्रह एवं न्यास गांधार हैं और अंश षड्ज है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। तारस्थान में संचार नहीं है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

४. **उत्पली**—ग्रह, अंश और न्यास मध्यम हैं। तारस्थान में षड्ज, पंचम और धैवत का प्रयोग है। मंद्रस्थान में निषाद का प्रयोग है।

५. **गोल्ली**—ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं। गांधार एवं निषाद वर्ज्य हैं। षड्ज, ऋषभ और धैवत बहुलस्वर हैं। तारस्थान में ऋषभ का प्रयोग है।

६. **नादान्तरी**—ग्रह एवं अंश मध्यम है और न्यास पंचम है। षड्ज, धैवत और निषाद बहुलस्वर हैं। गांधार अल्पस्वर है। तारमंद्रस्थानो में ऋषभ का प्रयोग है।

७. **नीलोत्पली**—ग्रह एवं अंश धैवत है और न्यास तारषड्ज हैं। मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है। निषाद व गांधार वर्ज्य हैं।

८. **छाया**—अंश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। पंचम बहुलस्वर है। मंद्रऋषभ और तारगांधार का प्रयोग है। धनि अल्पस्वर हैं। षड्ज वर्ज्य है।

९. **तरङ्गिणी**—ग्रह एवं न्यास ऋषभ हैं। अंश धैवत है। मंद्रस्थानीय षड्ज-मध्यम का अधिक प्रयोग है। तारस्थान में ऋषभ एवं धैवत का प्रयोग है। संकीर्ण राग है।

१०. **गांधारगति**—अंश गांधार, न्यास षड्ज और पंचम ग्रह है। तारस्थान में ऋषभ, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

११. **वेरंजी**—न्यास अंश और ग्रहस्वर षड्ज है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। धैवत तथा निषाद का बहुल प्रयोग है। पंचम अल्पतर स्वर है। तारस्थान में पंचम का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

(३) क्रियाङ्गराग

भावक्रिया, स्वभावक्रिया, शिवक्रिया, मकरक्रिया, त्रिनेत्रक्रिया, कुमुदक्रिया, धनुक्रिया, ओजक्रिया, इंद्रक्रिया, नागक्रिया, धन्यक्रिया, विजयक्रिया—इन सबों का लक्षण यों है—ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज हैं। अल्पत्व, पूर्णत्व, वर्ज्यत्व और गमक इत्यादि का प्रयोग लक्ष्य के सहारे निर्धारित करना चाहिए।

(४) उपाङ्गराग

१. **पूर्णाट**—अंश एवं ग्रह धैवत हैं। न्यास मध्यम है। पंचम बहुलस्वर है। भिन्न षड्ज का उपाङ्ग है।

२. **देवाल**—अंश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। ऋषभ एवं धैवत का मृदु प्रयोग है। मध्यम में कंपित गमक है। निषाद, ऋषभ और धैवत अल्पस्वर हैं। बंगाल राग का उपाङ्ग है। प्राचीन मत के अनुसार इस राग का नाम कामोद है।

३. **कुरंजी**—अंश, ग्रह और न्यास पंचम हैं। ललित का उपाङ्ग है। षड्ज एवं पंचम बहुलस्वर हैं। ऋषभ एवं निषाद वर्ज्य हैं। मंद्रस्थान में गांधार का प्रयोग है।

सातवाँ परिच्छेद

हिन्दुस्थानी और कर्नाटक संगीत पद्धति

कर्नाटक पद्धति

राग, भाषा, रागाङ्ग तथा भाषाङ्ग इनके विवरण का संप्रदाय शार्ङ्गदेव के काल तक अर्थात् ई० बारहवीं शताब्दी के अंत तक—प्रचार में था। उसके बाद मुसलमानों के आक्रमण के कारण उत्तर और दक्षिण भारत में यह संप्रदाय विच्छिन्न हो गया। उत्तर भारत में राग-रागिनी संप्रदाय अवशिष्ट रह गया। दक्षिण भारत में इसका भी भंग हो गया। मुसलमानों के आक्रमण रुक जाने के बाद १४ वीं शताब्दी के आरंभ से हमारी कलाओं के पुनरुज्जीवन का शुभ कार्य आरम्भ हुआ। दक्षिण भारत में कर्नाटक साम्राज्य अर्थात् विजयनगर साम्राज्य इस काम का केन्द्र-स्थान हुआ। इस कार्य के मूलपुरुष विजयनगर के मंत्री विद्यारण्य (माधवाचार्य) हैं।

उन्होंने भारत की ललितकलाओं का ही नहीं अपितु समस्त वेदों, शास्त्रों और कलाओं का भी उज्जीवन किया है। वेदचतुष्टयी के भाष्य, समस्त दर्शनों के संग्रह, धर्मशास्त्र के विचार, पुराणों के संग्रह, वेदांत के प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों में भी उनकी प्रशंसनीय सेवाएँ हैं।

संगीत के क्षेत्र में उनका कार्य यह है कि देश के कोने-कोने में शेष रहनेवाले रागों को बहुत प्रयास से ढूँढ-ढूँढकर उन्होंने एकत्र किया, तो भी उन्हें लगभग पचास राग ही मिले थे। उनके लक्षणों के बारे में विचार करते-करते उन्हें यह बात प्रतीत हुई कि लक्ष्य कुछ जगह में शेष रहने पर भी लक्षणशास्त्र के संप्रदाय का पूर्ण रूप से भंग हो गया है। प्राचीन संगीत ग्रंथों का अर्थ भी अच्छी तरह समझ में नहीं आया था। देश-देश के रुचिभेद से लक्ष्य में भिन्नता होने के कारण वे, प्राचीन ग्रंथों में पाये जानेवाले लक्षण और तात्कालिक मिले हुए लक्ष्य—इन दोनों में समन्वय कर नहीं सके। इसलिए उन्हें उपलब्ध पचास रागों के लक्ष्यमार्ग का संरक्षण करने के लिए एक नया प्रबन्ध करना पड़ा।

प्राचीन ग्रंथों में बताया गया है कि ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति से राग उत्पन्न हुए हैं। प्रत्येक राग के ग्रह, अंश, न्यासादि दस लक्षण, वर्णलक्षण और स्थायी स्वर अलंकार लक्षण—ये सब प्राचीन ग्रंथों में दिये गये हैं। विद्यारण्य को मिले

हुए पचास रागों के सम्बन्ध में इन लक्षणों को ढूँढने का काम नहीं हो सका। नया प्रबन्ध इस तरह करना पड़ा कि वीणावाद्य के सहारे हर-एक राग में प्रयुक्त होनेवाले प्रकृति-विकृति स्वरों का निर्धारण किया गया। जिन रागों के स्वरों का प्रकृति-विकृतिरूप समान था उन्हें एक समूह में रखकर हर समूह का नाम "मेल" रखा गया। इस तरह ये पचास राग पंद्रह मेलों के अंदर रखे गये। हरएक मेल में रहनेवाले रागों में प्रसिद्ध राग के नाम के अनुसार ही तत्सम्बद्ध मेल का नामकरण किया गया।

बाद में जगह-जगह से कुछ और रागों का पता लगने लगा। उनके प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार और चार मेलों की सृष्टि हुई। विद्यारण्य के बाद विजयनगर साम्राज्य के सेनापति और राजप्रतिनिधि राम रायर की आज्ञा के अनुसार रामामात्य की लिखी हुई "स्वरमेल कलानिधि" (सन् १५५६) पुस्तक में इनका विवरण मिलता है। इन्होंने १९ मेलों तथा ६४ रागों के लक्षण दिये हैं।

सन् १६०५ में, आंध्रदेश में रहनेवाले वैणिक और शास्त्रज्ञ सोमनाथ ने "रागविबोध" नामक ग्रंथ लिखा है। इस ग्रंथ में ७६ रागों के विवरण दिये गये हैं। इनके प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार २३ मेलों की आवश्यकता हुई।

उनके बाद सोमनार्य और भावभट्ट दोनों ने "स्वरराग सुधार्णवम्" और "संगीत चंद्रिका" नामक ग्रंथ लिखे हैं। उनमें लगभग १०० रागों के विवरण हैं। परंतु उन्होंने २० मेलों के अंदर ही इन १०० रागों को बाँट दिया है। आये दिन मेलों की संख्या में अनियमित वृद्धि देखकर संगीतज्ञ लोग इस पर ऐसा विचार करने लगे कि व्यवहार में रहनेवाले रागों में, काम आनेवाले प्रकृति विकृत स्वरभेदों का निश्चय करके, प्रस्तारक्रम के अनुसार, साध्य मेलों की संख्या का निर्धारण किया जाय। इस विषय पर विद्वान् लोग तरह-तरह के मत देने लगे। कुछ लोगों का कथन था कि ३० मेल ही प्रचार में रहनेवाले रागों के लिए पर्याप्त हैं। और कुछ लोग, मेलों की संख्या को एक सहस्र से भी अधिक बढ़ाना चाहते थे। अंत में, बहुत-से वाद-विवाद के बाद सब एक निष्कर्ष पर आ पहुँचे। उनके मतानुसार, तब के प्रचलित रागों में उपयोग किये जानेवाले प्रकृति-विकृतस्वरों की संख्याएँ १६ थीं। उनमें सात स्वर शुद्ध स्वर हैं। ऋषभ के तीन प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और षट्श्रुति। गान्धार के तीन प्रकार—शुद्ध, साधारण और अन्तर। मध्यम के दो भेद—शुद्ध और प्रति-मध्यम। पञ्चम का एक ही रूप था। धैवत के तीन प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और षट्श्रुति। निषाद में तीन रूप—शुद्ध, कैशिकी और काकली। इन १६ स्वरों में

एक ही स्वरस्थान में दो-दो नाम रखनेवाले स्वर भी हैं। तीन ऋषभों और तीन गान्धारों में, दूसरी, तीसरी, ऋषभ के स्थान पहली, दूसरी गान्धार के समान है। ९ वीं श्रुति, पञ्चश्रुति ऋषभ और शुद्ध गान्धार का स्थान है। १० वीं श्रुति षट्श्रुति ऋषभ और साधारण गान्धार का स्थान है। इसी तरह धैवत, निषाद में भी दूसरी. तीसरी धैवत का स्थान पहली दूसरी निषाद के स्थान में हैं। अर्थात् २२ वीं श्रुति पञ्चश्रुति धैवत और शुद्ध निषाद का स्थान है। २३ वीं या पहली श्रुति षट्श्रुति धैवत और कैशिकी निषाद का स्थान है। इसलिए १६ स्वर रहने पर भी स्वरस्थान १२ ही अर्थात् ४, ७, ९, १०, १२, १३, १६, १७, २०, २२ और तीसरी श्रुति हुए।

इसमें और कुछ विशेषता है। कुछ रागों में नवीं श्रुति पर स्थित पञ्चश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। और कुछ रागों में आठवीं श्रुति पर स्थित चतुश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। इन दोनों को और इसी तरह आनेवाले अन्यस्वरों को भी अलग-अलग गिना जाय तो स्वरों की संख्या २० हो जायेगी। तब मेलों की संख्या २०० से ज्यादा हो जाती है। इसलिए मेलों की संख्या को अधिक होने से बचाने के लिए चतु:श्रुति और पञ्चश्रुति स्वर एक ही स्वर-जैसे गिने गये और इसी तरह आनेवाले दोनों स्वरों को भी एक स्वर-जैसा ही गिनकर, अर्थात् केवल १६ स्वरों के रूप रखकर, ७२ मेलों की सृष्टि की गयी है। पर प्रयोग में इन दोनों स्थानों के भेद पर अच्छी तरह ध्यान दिया जाता है।

७२ मेल कर्ता की योजना

ऋषभ के तीन रूप और गान्धार के भी तीन रूप हैं। पहले ऋषभ और पहले गान्धार को मिलाकर (७, ९ स्थान में होनेवाले स्वर) प्रथम मेलचक्र बनाया गया। पहला ऋषभ और दूसरा गान्धार (७, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर दूसरा मेलचक्र बनाया गया। पहला ऋषभ तथा तीसरा गान्धार (७, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर तीसरा मेलचक्र बनाया गया। दूसरा ऋषभ और दूसरा गान्धार (९, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर चौथा मेलचक्र बनाया गया। दूसरा ऋषभ और तीसरा गान्धार (९, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर पांचवाँ मेलचक्र बनाया गया। तीसरा ऋषभ एवं तीसरा गान्धार (१०, १२ वीं श्रुति के स्वर) मिलाकर छठा मेलचक्र बनाया गया। इन छ: मेलचक्रों में भी शुद्ध मध्यम (१३ श्रुति) ही रखा गया। अब प्रत्येक चक्र के पूर्वभाग की जानकारी हमें हुई है। और इसी तरह धैवत और निषाद का मेलन करने से हरएक चक्र को ६ उत्तर भाग मिलेंगे। तब मेलों के रूप यों हुए—

पहले चक्र के पहले मेल में	पहला धैवत (२०वीं श्रुति)	पहला निषाद (२२ वीं श्रुति) रह गया।
,, दूसरे मेल में	,,	दूसरा निषाद (१ ली श्रुति) रह गया।
,, तीसरे मेल में	,,	तीसरा निषाद (३ री श्रुति) रह गया।
,, चौथे मेल में	दूसरा धैवत (२२वीं श्रुति)	दूसरा निषाद (१ ली श्रुति) रह गया।
,, पांचवें मेल में	,,	तीसरा निषाद (३ री श्रुति) रह गया।
,, छठे मेल में	तीसरा धैवत (१ ली श्रुति)	,, ,,

इसी तरह बाकी पांच चक्रों के प्रत्येक चक्र में भी छः मेल मिलेंगे। कुल मिलकर ३६ मेल प्राप्त होते हैं। हर मेल में षड्जपञ्चम मिलेंगे तो मेल का पूर्ण रूप पाया जाता है।

इस तरह छः चक्रों से पहले ३६ मेलों की उत्पत्ति हुई। इन ३६ मेलों में ही शुद्ध मध्यम (१३ वीं श्रुति) के स्थान पर प्रतिमध्यम (१६ वीं श्रुति) को रखकर और ३६ मेलों की सृष्टि इसी रीति पर हुई।

हर एक मेल के प्रकृति, विकृति स्वर जिन रागों में दिखाई पड़ें उन्हें उसी मेल से जन्य कहा गया। यद्यपि मेलों की सृष्टि आधुनिक काल में हुई, तो भी इनको 'जनक' नाम प्राप्त हो गया। इस तरह जनक, जन्य नाम रागों की उत्पत्ति के विषय में बहुत भ्रम का कारण बन गया। रागोत्पत्ति के बारे में प्राचीन ग्रन्थों से परिचय न होने के कारण लोग मेलों को ही, जो आधुनिक काल की सृष्टि है, प्राचीन जनकराग समझने लगे। कुछ पुस्तकों में ७२ मेलों को ही प्राचीन रागाङ्गराग नाम से कहा जाने लगा। करीब ६० वर्ष पहले के सुब्बराम दीक्षित के द्वारा संपादित 'संगीत संप्रदाय प्रदर्शनी' में इसी प्रकार बताया गया है। जिन्हें प्राचीन शास्त्रों का ज्ञान कम है उनमें यह आधार ग्रन्थ माना जाता है।

इन ७२ मेलों के अन्दर रहनेवाले रागों में सब से प्रसिद्ध राग का नाम ही मेलों का नाम बन गया। मेल संख्या की सूचना देने के लिए प्रसिद्ध राग के नाम के साथ कटपयादि संख्या का अनुसरण करके दो अक्षर नाम के आगे जोड़ दिये गये हैं, परंतु बहुत मेलों के अन्दर रखने के लिए एक राग भी न मिला। इस तरह के मेलों की सृष्टि

व्यर्थ प्रतीत हुई। इन ७२ मेलों के रचयिता वेंकट मखी ने इसका समाधान यों दिया है कि भविष्य में आविष्कृत किये जानेवाले रागों और विदेशों से आनेवाले रागों को भी स्थान देने के लिए इन्हें रखा जाय (मद्रपुरी संगीत विद्वत्सभा द्वारा मुद्रित चतुर्दण्डि-प्रकाशिका के ४ थे प्रकरण के श्लोक ८० से ९२ देखिए)।

इस तरह के मेलों को नये नाम दिये गये। इन नामों में पहले दो अक्षर कटपयादि संख्यानुसार मेल के संख्यासूचक थे। इस तरह नाम रखने में भी मतभेद हुआ है।

आजकल व्यवहृत मेलों में मेल राग बने हुए रागों के नाम यों हैं—

मेल	राग	मेल का नाम
८	तोडी	हनुमत्तोडी
१५	मालवगौड़	मायामालवगौड़
२०	भैरवी	नटभैरवी
२८	काम्बोजी	हरिकाम्बोजी
२९	शंकराभरण	धीर शंकराभरण
३६	नाट	चलनाट
४५	पन्तुवराली	शुभपन्तुवराली

मेलकर्ता की योजना, केवल गणित मार्गानुसृत सृष्टि है। परन्तु रागों में स्वरों का रूप तो वादी-संवादी तत्त्व पर निर्भर है। इसलिए कई रागों को ७२ मेलों में किसी के अन्दर भी रखना साध्य नहीं हुआ। कुछ रागों में वादी-संवादी तत्त्व की आवश्यकता के कारण आरोहण में एक विकृत स्वर और अवरोहण में दूसरा विकृत स्वर प्रयोग में है। उन्हें भी मेलकर्ता योजना में युक्त स्थान नहीं मिला।

इस योजना में और एक दोष यह है कि चतुःश्रुति (८ वीं श्रुति), पञ्चश्रुति (९ वीं श्रुति), ऋषभ धैवत स्वरों को एक स्वर-जैसा मानना और साधारण गान्धार, प्राचीन काल के अन्तर गान्धार तथा कैशिकी निषाद और प्राचीन काल के काकली निषाद—इन्हें एक ही स्वर-जैसा मानना। इस प्रकार की मान्यताओं के कारण ७२ मेलकर्ता योजना को याद में रखकर गाने से वादी-संवादी सम्बन्ध भग्न होकर रक्ति-भंग का कारण बन जाता है।

इन १६ स्वरों के अतिरिक्त रहनेवाले चार स्वर, ८ वीं श्रुति पर स्थित चतुः-श्रुति ऋषभ, ११ वीं श्रुति पर स्थित प्राचीन काल का अन्तरगान्धार, २१ वीं श्रुति पर स्थित चतुःश्रुति धैवत और दूसरी श्रुति पर स्थित काकली निषाद हैं। रागों में

जिस स्थान के स्वर का प्रयोग होता है यह बात वादी-संवादी सम्बन्ध के सहारे अत्यन्त सरलतापूर्वक निश्चित हो सकती है।

ई० सन् १५६५ में तलकोट्टा युद्ध में विजयनगर राजधानी के ध्वंस हो जाने के पश्चात् उस साम्राज्य की इकाइयों के प्रतिनिधि स्वतंत्र होकर अपनी-अपनी इकाइयों के राजा हो गये। उनको नायक राजा कहा जाता है। तंजौर, मदुरा, मैसूर, जिञ्जी और पेनुकोण्डा—ये पांच स्वतंत्र नायक राज्य बन गये। उनमें से तंजोर राज्य धन, धान्य, सम्पत्ति में अन्य राज्यों से बढ़कर था। अतः विजयनगर के कलाकार अपने अपने कलाग्रन्थों के साथ तंजौर पहुँचे। विजयनगर में पुनरुज्जीवित और संवर्धित कलाएँ और भी उन्नति पाने लगीं।

संगीत के लक्ष्य संप्रदाय में रागों का स्वरूप निश्चित करने के लिए 'संगीत रत्नाकर' के समय के पश्चात् आलाप और कई प्रबन्ध बनाये गये, वे प्रचार में भी थे। ये चार प्रकारों में बाँटे गये थे। उस विभाग के कर्ता गोपाल नायक हैं जो कर्नाटक देश में संगीत कला में बहुत प्रसिद्धि पाकर दिल्ली बादशाह के द्वारा बुलाये गये। यह भी कहा जाता है कि उन्होंने वहाँ अमीर खुसरो नामक विद्वान् पर विजय प्राप्त की।

गोपाल नायक के अनुसार लक्ष्यसाहित्य आलाप, ठाय, गीत और प्रबन्ध नामक चार भागों में विभाजित किया गया। आलाप का लक्षण संगीत रत्नाकर में दिया गया है।

१. आलाप—आलाप के पहले भाग में रागस्वरूप की रूपरेखा है। इसका नाम 'आक्षिप्तिका' है। इसमें जो 'आयत्तम्' नाम से भी पुकारा जाता है, उसके चार भाग हैं। इसके हर एक भाग का नाम 'स्वस्थान' है।

प्रथमस्वस्थान—प्रथम स्वस्थान में यों गान करना चाहिए—राग के स्थायी स्वर या अंश स्वर पर खड़े होकर आगे और पीछे थोड़ा जाकर जिस प्रकार रागभाव का प्रकाशन हो सकता हो, उस प्रकार राग के स्थायी स्वर का उच्चारण अलंकार और गमक सहित अन्य स्वरों के साथ किया जाय।

यदि वह राग अवरोही वर्ण में प्रकाशित होता हो, तो नीचे के एक-एक स्वर को मिलाकर चालन करना है। वह आरोही वर्ण में प्रकाशित होता हो तो ऊपर के एक-एक स्वर को मिलाकर गाते जाना है। संचारी वर्ण में राग का प्रकाशन हो तो आगे और पीछे के स्वरों को मिलाकर गाना चाहिए। इसका नाम 'मुखचालन' है। हर एक चालन को अन्ततः स्थायी स्वर में न्यस्त करना चाहिए। अंश के संवादी पहले स्वर तक इसी तरह करना चाहिए। यह आलाप का पहला स्वस्थान है। प्रायः संवादी स्वर अंश का चौथा या पाँचवाँ स्वर ही होगा। इसलिए इसका नाम 'द्वयर्ध-स्वर' है।

द्वितीय स्वस्थान—द्व्यर्धस्वर पर खड़े रहकर चालन करने के पश्चात् स्थायी स्वर में आकर न्यास करने का नाम द्वितीय स्वस्थान है।

तृतीय स्वस्थान—दूसरे सप्तक में रहनेवाले अंश स्वर का नाम द्विगुणस्वर है। द्विगुणस्वर और द्व्यर्धस्वर दोनों के बीच में होनेवाले स्वरों का नाम 'अर्धस्थित स्वर' है। अर्धस्थित स्वरों में चालन करके अंश स्वर में आकर समाप्त किये जाने-वाले भाग का नाम तृतीय स्वस्थान है।

चतुर्थ स्वस्थान—द्विगुणस्वर में खड़े रहकर चालन करके अंशस्वर में आकर समाप्त करने को चतुर्थ स्वस्थान कहते हैं। आक्षिप्तिका के बाद राग को बहुत पकड़ों के साथ विस्तार करना चाहिए। इसे कई भागों में विभाजित किया गया है। उनके नाम रागवर्धनी, स्थायी, मकरिणी और न्यास हैं।

रागवर्धनी को प्रथम रागवर्धनी, द्वितीय रागवर्धनी और तृतीय रागवर्धनी नामक तीन भागों में विभाजित किया गया है। हर एक रागवर्धनी में मध्य, तारस्थान में संचार, द्वितीय रागवर्धनी में मन्द्र, मध्य स्थानों में संचार, तृतीय रागवर्धनी में तीनों स्थानों में संचार करना होता है। प्रत्येक रागवर्धनी में विलम्ब, मध्य, द्रुत काल रहते हैं। किन्तु प्रथम रागवर्धनी में विलम्ब काल संचार, द्वितीय रागवर्धनी में मध्यकाल संचार, तृतीय रागवर्धनी में द्रुतकाल के संचार ज्यादा रहते हैं।

इसके बाद 'स्थायी' नामक भाग का गान करना होता है। 'स्थायी' अर्थात् अंशस्वर से शुरू करके प्रत्येक संचार में जिन स्वरों तक संचार करते हैं, उसके ऊपर नहीं जाना होता। इसी क्रम में आरोहण क्रम में एक से आठ स्वर तक दो बार संचार करना है, परन्तु नीचे इच्छानुसार संचार कर सकते हैं। इसके बाद अवरोह क्रम में इसी तरह तारस्थानीय अंश स्वर से मध्यस्थानीय अंश स्वर तक नीचे के एक से आठ स्वर तक दो बार संचार करना होता है। इन संचारों में इच्छानुसार ऊपर के स्वरों में घूम सकते हैं, पर नीचे नहीं घूम सकते। जिस तरह अंश स्वर से स्थायी संचार आरम्भ किया जाता है उसी तरह हर एक अपन्यास स्वर से भी आरम्भ करके आठवें स्वर तक ऊपर और नीचे संचार कर सकते हैं।

इसके बाद आलाप के मुकुटरूप भाग का गान करना है। उसका नाम 'मकरिणी' है। मकरिणी में हर एक स्थान में अन्तिम संचार करके न्यास स्वर में पूर्ति करना होता है। इसमें मन्द्रस्थान में अधिक संचार होता है।

अंत में न्यास स्वर से आरम्भ करके इच्छानुसार संचार करते हुए न्यास स्वर पर समाप्त करना चाहिए। उसका नाम न्यास है।

१५, १६, १७ वीं शताब्दियों में इसी प्रकार के आलापों की कल्पना साम्प्रदायिक आचार्य कर चुके हैं।

२. **ठाय**—दूसरे लक्ष्यसाहित्य का नाम है 'ठाय'। यह शब्द 'स्थाय' नामक संस्कृत शब्द का प्राकृत रूप है। एक छोटे संचार का नाम 'ठाय' है। हर एक ठाय, राग के भिन्न-भिन्न रूप को प्रदर्शित करने का काम करता है। इस प्रकार उनके रूप कार्य के अनुसार उनके नामकरण भी किये गये हैं। संगीत रत्नाकर में 'ठाय' के नाम-रूप वर्णित किये गये हैं। उस जमाने में प्रसिद्ध ठाय रूप के अनुसार दशविध, और कार्य के अनुसार तैंतीस प्रकार के बताये गये हैं। अप्रसिद्ध ठाय में मिश्रित या संकीर्ण ठाय ३६ और असंकीर्ण ठाय २६ हैं। कुल मिलकर ९६ ठायों का उल्लेख है। रूप के अनुसार स्थायों के उदाहरण—

१. शब्द स्थाय—व्यक्त रूप में शब्दों को अलग-अलग दिखानेवाले हैं।

२. ढाल स्थाय—मोती के ढाल के अनुसार चलन करने का नाम है।

३. लषनी—स्वरों को कोमलतर नमन के साथ उच्चारण करने का नाम है।

४. वहनी—इसमें गीत वहनी, आलप्ति वहनी; ये दो भेद होते हैं। आरोह या अवरोह में स्वरकम्पन, और संचारी में स्थिर स्वरकम्पन के साथ स्वर उच्चारण करने का नाम 'वहनी' है। हर एक वहनी के और दो भेद हैं। स्थिर वहनी और वेगाढचा वहनी। और तीन भेद स्थायी के भेद से हैं; हृद्या, कण्ठचा, शिरस्या। हृद्या में दो तरह के प्रयोग हैं। स्वरों को अन्दर घुसने की तरह उच्चारण किया जाय, तो उसका नाम 'कुन्ता' है। बाहर निकलने की तरह उच्चारण किया जाय तो उसका नाम 'फुल्ला' है।

५. वाद्यशब्द स्थाय—इसमें वीणा आदि वाद्यों से उपन्न शब्दों की तरह उच्चारण करने का नाम 'वाद्य शब्द' है।

६. छाया स्थाय—राग, स्वर आदियों के साथ दूसरे राग या स्वरों की छाया को भी मिलाकर उच्चारण करने का नाम है 'छाया स्थाय'।

७. स्वर लंघित—दो, तीन या चार स्वरों को उच्चारण न करके लंघन करने का यह नाम है।[1]

१. रूप के अनुसार स्थायों के नाम—ऊपर दिये हुए स्थायों को छोड़कर और भी दो हैं। वे प्रेरित और तीक्ष्ण हैं।

काम के अनुसार स्थायों के नाम—भजन, स्थापना, गति, नादध्वनि, छबि, रक्ति, द्रुत, शब्द, वृत्त, अंश, अवधान, अपस्थान, निकृति, करुणा, विविधत्व, गात्र,

काम के अनुसार स्थायों के नाम के उदाहरण——

१. भजन स्थाय——राग को रक्ति के साथ प्रकाशित करने का नाम है।

२. स्थापना स्थाय——राग को निश्चयपूर्वक स्थापित करने का काम करता है।

ये स्थाय भी बहुत से रागों में साम्प्रदायिक आचार्यों द्वारा कल्पित हैं। इनमें तानप्प आर्य के द्वारा रचित साहित्य विशेष है।

इस तरह के ठायों की कल्पना करके उन्हें याद रखने के लिए एक सम्प्रदाय मार्ग है। उसके अनुसार राग के अंश, न्यास या अपन्यास स्वर को स्थायी बनाकर ऊपर तीन-चार स्वरों तक चार बार संचार करके उसी तरह नीचे भी संचार करने के पश्चात् मन्द्र षड्ज या न्यास स्वर पर समाप्त करना होता है। संचार का नाम 'येडुप' है। अन्त करने का नाम मुक्तायी या मकरिणी है।

३. **गीत**——बहुत दिन पूर्व से हजारों तरह के प्रबन्धभेद वर्तमान थे। उनका विवरण संगीतरत्नाकर प्रबन्धाध्याय में दिया गया है। उनमें कुछ प्रबन्धों को छोड़कर बाकी सब अंधयुग में अप्रचलित हो गये। बचे हुए प्रबन्धों में 'सालग सूड' नामक प्रबन्ध ज्यादा प्रचार में थे। ये प्रबन्ध तालों के नामों में प्रचलित हैं। ध्रुव, मण्ठ, प्रतिमण्ठ, निस्सारुक, अड्डुताल, रासताल, एक-ताल हैं।

इन सातों तालों में सालगसूड की तरह नयी चीजों की सृष्टि भी हुई। राग-स्वरूप का प्रकाशन करने के लिए साहित्य लक्ष्यों के चार भेदों में 'गीत' का भी एक स्थान है। इसमें राग का रूप सुलभ तालबद्ध छोटे-छोटे संचारों से बना हुआ होता है।

उपसम, काण्डारण, निर्जवनगाढ़, ललित गाढ़, ललित, लुठित, सम, कोमल, प्रसृत, स्निग्ध, घोस, उचित, सुदेशिक, अपेक्षित घोष, स्वर।

अप्रसिद्ध स्थायों के नाम——असंकीर्ण-वह, अक्षराडम्बर, उल्लासित, तरंगित, प्रलम्बित, अवस्खलित, त्रोटित, संप्रविष्टक, उत्प्रविष्ट, निस्सारुग, भ्रामित, दीर्घ-कम्पित, प्रीतग्रहोल्लासित, अविलम्ब, विलम्बक, त्रोटित, प्रतीष्ट, प्रसृताकुञ्चित, स्थिर, स्थायुक, क्षिप्त, सूक्ष्मान्त।

मिश्रित स्थायों के नाम——प्रकृतिस्थ, शब्द, कला, आक्रमण, प्लुत, रागेष्ट, अपस्वराभास, बद्ध, कलरव, छन्दस, सुकराभास, संहित, लघु, अन्तर, वक्र, दीप्त प्रसन्न, प्रसन्न मृदु, गुरु, ह्रस्व, शिथिल गाढ़, दीप्त, असाधारण, साधारण, निरादर, दुष्कराभास, मिश्र।

प्रबन्ध—प्रबन्धों के ४ धातु या अवयव और उनके **६ अंग**—प्रबन्धों में बहुत कुछ अप्रचलित होने के बाद भी कुछ प्रबन्ध बच गये। उनमें पञ्चतालेश्वर प्रबन्ध और श्रीरङ्ग प्रबन्ध मुख्य हैं। प्रबन्धों में ६ अंग और ४ धातु होते हैं। स्वर, विरुद, पद, तेनक, पाट और ताल—ये ६ अंग हैं।

१. स्वर—स, रि, ग, म आदि हैं।

२. विरुद—प्रस्तुत नायक के धैर्य, शौर्य आदि का वर्णन करके उसको संबोधित करना या कर्ता के नाम, कुल आदि का वर्णन करना।

३. पद—केवल प्रस्तुत नायक के गुणों का वर्णन।

४. तेनक—'तेन' आदि अक्षरों के उच्चारण के साथ आलाप करने का नाम है। 'तेन' शब्द 'तत्' शब्द की तृतीया विभक्ति है। 'तेन' शब्द का अर्थ 'तत्' या 'ब्रह्म' है। इसलिए यह मंगलकर शब्द है।

५. पाट—तक, तनादि वाद्य शब्दों से बद्ध साहित्य का नाम है।

६. ताल—एक ही प्रबन्ध में भिन्न-भिन्न ताल साहित्य के अंग हों तो इसका नाम ताल है।

धातु या अवयव

चार धातु हैं—उद्ग्राह, मेलापक, ध्रुव, आभोग।

कभी-कभी उद्ग्राह और ध्रुव के मध्य भाग में अन्तर नामक एक पाँचवाँ धातु भी होता है। प्रबन्ध का आरम्भ भाग 'उद्ग्राह' है। उद्ग्राह को तृतीयाङ्ग ध्रुवा के साथ मिलानेवाला होने के कारण द्वितीयाङ्ग का नाम 'मेलापक' पड़ा। अंगों में अनिवार्यता के कारण तृतीय धातु का नाम 'ध्रुव' हुआ। प्रबन्ध की पूर्ति करने की जगह 'आभोग' है।

प्रबन्ध षडङ्ग, पञ्चाङ्ग, चतुरङ्ग, त्र्यङ्ग या द्व्यङ्ग बनाये गये थे। मेदिनी, आनन्दिनी, दीपनी, भावनी, तारावली आदि इनके नाम हैं।

धातुओं की दृष्टि से चतुर्धातु, त्रिधातु, द्विधातु प्रबन्ध भी हैं। इनमें उद्ग्राह और ध्रुव अनिवार्य हैं। त्रिधातु प्रबन्ध में 'मेलापक' नहीं है। 'आभोग' में दो भाग हैं। पहला भाग बिना ताल के 'आलाप' है। उसका नाम 'वाक्य' है। पूर्वार्ध में साहित्यकर्ता और उत्तरार्ध में प्रस्तुत नायक का नाम रहता है।

ये चारों तरह के लक्ष्य साहित्य 'चतुर्दण्डी' नाम से प्रसिद्ध हुए। 'चतुर्दण्डी' शब्द का अर्थ है संगीत कला को वश में करने के चार उपाय। 'चतुर्दण्डी' सम्प्रदाय के आदिकर्ता गोपाल नायक हैं। इस सम्प्रदाय ने विजयनगर के पतन के पश्चात्

तंजौर में नायकों के आश्रित रहकर संरक्षण पाया। बहुत से चतुर्दण्डी साहित्यों की सृष्टि हुई।

नायकों के बाद तंजौर का शासन महाराष्ट्र राजाओं के हाथ में आ गया। इन राजाओं में दूसरे राजा 'शाहजी' संगीत और साहित्य कलाओं में पारङ्गत हुए। उनका दरबार बहुत से विद्वान् लोगों, शास्त्रज्ञों, गवैयों और कवियों से अलंकृत था। इनके समय रागों के लक्षण को निश्चय करने के लिए दस सम्प्रदायों के विद्वानों के मत के अनुसार लगभग एक सौ कर्नाटक रागों के लक्षणों को सुनकर, तालपत्र कोशों में लिखवाया गया।

चतुर्दण्डी लक्ष्य साहित्य को भी २० तालपत्र की पुस्तकों में लिखाकर सुरक्षित किया गया है। उनमें आलाप, ठाय, गीत और प्रबन्ध स्वररूप में लिखे गये हैं। सब ग्रन्थ अब भी 'तंजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में सुरक्षित हैं।

वैणिक, विद्वान्, शास्त्रज्ञ और साहित्यकार वेंकट मखी ने, जो १६२० ई० में तंजौर में थे, अपने "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" नामक ग्रंथ में चतुर्दण्डी के लक्षण दिये हैं। उनके पिता गोविंद दीक्षित नायक राजाओं के मंत्री थे। राजा रघुनाथ नायक और गोविंद दीक्षित, इन दोनों की लिखी हुई "संगीतसुधा" में ५० रागों के आलापन क्रम विस्तृत रूप में दिये गये हैं। शाहजी (१६७८–१७११) के लक्ष्य-लक्षण ग्रन्थ में पाये जानेवाले लक्षण और लक्ष्यमार्ग ही आज की कर्नाटक संगीत पद्धति में भी विद्यमान हैं, परन्तु यह संप्रदाय संगीतरत्नाकर में दिये हुए रागस्वरूप और रागलक्षणों से बहुत भिन्न है।

संगीतरत्नाकर के बाद लिखे गये ग्रंथों में तात्कालिक रागों की मूर्च्छना, जाति, वर्ण और अलंकार इत्यादि के लक्षण नहीं दिये गये हैं। केवल हर एक राग के प्रकृति-विकृतिस्वर बताये गये हैं। इन ग्रंथों में दी हुई ग्रह, अंश, न्यास इत्यादि संज्ञाएँ भी उनके असली अर्थ में प्रयुक्त नहीं हैं। क्योंकि इन संज्ञाओं के मूलभूत मूर्च्छना-तत्त्व को वे सब भूल गये थे।

शाहजी द्वारा निष्कर्ष रूप में प्राप्त सब राग लक्षणों और लक्ष्य साहित्य से उद्धृत उदाहरणों को उनके भाई तुलजा महाराज ने अपने ग्रंथ "संगीत सारामृत" में यथा-तथ्य लिखा है। इस ग्रंथ में रागों के प्रकृति-विकृतिस्वर और चतुर्दण्डी लक्ष्य से विशेष संचार के उद्धरण मात्र दिये गये हैं। मूर्च्छना, ग्रह, अंश, न्यास, वर्ण और अलंकार आदि का उल्लेख नहीं है, किंतु संप्रदाय-परंपरा की विशुद्धता के कारण रागों की छाया पूर्ण जीवन के साथ, लगभग बीस वर्ष पहले तक विद्यमान थी। गुरुकुल संप्रदाय की

विच्छिन्नता के कारण संगीतकला के एक मात्र आश्रय संप्रदाय की भी कमी होती जा रही है।

आज कर्नाटक संप्रदाय के प्रचलित रागों में लगभग १०० राग प्रसिद्ध हैं। १५० अप्रसिद्ध अपूर्व राग हैं।

कर्नाटक पद्धति में मेल और रागों का इतिहास—

१. विद्यारण्य का मत—संगीतसार[1] (लगभग १४०० ई०)
२. रामामात्य का मत—स्वरमेल कलानिधि (१५५० ई०)
३. सोमनाथ का मत—रागविबोध (१६०९ ई०)
४. वेंकट मखी का मत[2]—चतुर्दण्डिप्रकाशिका (१६१५)
५. शाहजी और तुलजाजी का मत—संगीत सारामृत (१७१०–१७२५)
६. ७२ मेलकर्ता (उद्भवकाल लगभग १६०० ई०)
(प्रचार का काल लगभग १७५० ई०)

१ विद्यारण्य का 'संगीतसार' अब उपलब्ध नहीं है। परन्तु उनका मत रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित की 'संगीतसुधा' में उद्धृत किया गया है।

२. यह रचना ७२ मेलकर्ता के काल में परिष्कृत हुई, परन्तु इस योजना का प्रचार पिछले दिनों में ही हुआ।

१—५० राग और १५ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	११ अन्तर गान्धार	१२ अच्युत मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ वराटी मध्यम	१६ प्रतिमध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ चतुः श्रुति धैवत	२२ पञ्चश्रुति धैवत	१ षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	२ काकली निषाद	३ च्युतषड्ज
१	नट्टा मेल	स						रि	ग		म				प						ध	नि	
२	गुर्जरी मेल	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
	२. सौराष्ट्र																						
	३. मेचबौलि																						
	४. छाया गौड़																						
	५. गुण्डक्रिया																						
	६. सालगनाटिका																						
	७. शुद्ध वसन्त																						
	८. नादरामक्रिया																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	अच्युत मध्यम	शुद्ध मध्यम		वराटी मध्यम	प्रातिमध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	चतुः श्रुति धैवत	पञ्चश्रुति धैवत	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज
	९. गौड़																						
	१०. बौलि																						
	११. कर्नाट बंगाल																						
	१२. ललित																						
	१३. मलहरि																						
	१४. पाठी																						
	१५. सावेरी																						
	१६. रेवगुप्ति																						
३	वराटी मेल	स			रि		ग						म		प			ध				नि	
४	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प					ध	नि		

	२. सालग भैरवी																						
	३. घण्टारव																						
	४. वेलावली																						
	५. देवगान्धारी																						
	६. रीतिगौड़																						
	७. मालवश्री																						
	८. मध्यमादि																						
	९. धनाशी																						
५	भैरवी मेल	स					रि	ग			म				प			ध			नि		
	२. भिन्न षड्ज																						
	३. हिन्दोल वसन्त																						
	४. हिन्दोल																						
	५. भूपाल																						
६	शंकराभरण मेल	स					रि		ग		म				प					ध		नि	
	२. आरभी																						
	३. पूर्वगौड़																						
	४. नारायणी																						
	५. नारायण देशाक्षी																						
७	आहीरी मेल	स					रि	ग			म				प			ध				नि	
	२. आभेरी																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गांधार	११ अन्तर गान्धार	१२ अच्युत मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ वराटी मध्यम	१६ प्रतिमध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ चतुश्रुति धैवत	२२ पञ्चश्रुति धैवत	१ षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	२ काकली निषाद	३ च्युतषड्ज
८	वसन्त भैरवी मेल	स			रि				ग		म				प			ध			नि		
९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध	नि	
१०	काम्बोजी मेल	स					रि		ग		म				प					ध	नि		
११	मुखारी	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
१२	शुद्ध रामक्रिया	स			रि				ग				म		प			ध				नि	
१३	केदारगौड़	स					रि		ग		म				प					ध	नि		
	२. नारायण गौड़																						
१४	हिजुज्जी	स			रि			ग			म				प			ध				नि	
१५	देशाक्षी	स						रि	ग		म				प					ध		नि	

२—६४ राग और २० मेल

मेलों की संख्या	मेल व राग	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्धगान्धार	साधारण गांधार षट्श्रुति ऋषभ	अन्तर गान्धार	च्युत मध्यम गान्धार	शुद्ध मध्यम			च्युत पञ्चम मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज निषाद
१	मुखारी मेल	स			रि						म				प			ध		नि			
२	मालवगौड़ मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	१. मालव गौड़																						
	२. ललित																						
	३. बौलि																						
	४. सौराष्ट्र																						
	५. गुर्जरी																						
	६. मेचबौलि																						
	७. फलमञ्जरी																						

मेलों की संख्या	मेल व राग	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	साधारण गान्धार षट्श्रुति ऋषभ	अन्तर गान्धार	अच्युत मध्यम गान्धार	शुद्ध मध्यम			च्युत पञ्चम मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज
	८. गुण्डक्रिया																						
	९. छायागौड़																						
	१०. सिन्दुरामक्रिया																						
	११. कुरञ्जी																						
	१२. कन्नड बंगाल																						
	१३. मंगल कौशिक																						
	१४. मल्हारी																						
३	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प					ध	नि		
	२. भैरवी																						
	३. गौड़ी																						

	४. धन्याशी																						
	५. शुद्ध भैरवी																						
	६. वेलावली																						
	७. मालवश्री																						
	८. शंकराभरण																						
	९. आन्दोली																						
	१०. देवगान्धारी																						
	११. मध्यमादि																						
४	सारङ्गनाट मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२. सावेरी																						
	३. सालग भैरवी																						
	४. नटनारायणी																						
	५. शुद्ध वसन्त																						
	६. पूर्व गौड़																						
	७. कुन्तल वराली																						
	८. भिन्न षड्ज																						
	९. नारायणी																						
५	हिन्दोल मेल	स					रि	ग			म				प			ध			नि		
	२. मार्ग हिन्दोल																						
	३. भूपाल																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	साधारण गान्धार षट्श्रुति ऋषभ	अन्तर गान्धार	च्युतमध्यम गान्धार	शुद्ध मध्यम			च्युत पञ्चम मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युत षड्ज निषाद
६	शुद्ध रामक्रिया	स			रि					ग				म	प			ध					नि
	२. षाढी																						
	३. आर्धदेशी																						
	४. दीपक																						
७	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			नि
८	कन्नड गौड़	स						रि		ग	म				प					ध	नि		
	२. घण्टारव																						
	३. शुद्ध बंगाल																						
	४. छाया नाट																						
	५. तुरुष्क तोडी																						

	६. नागध्वनि																						
	७. देवक्रिया																						
९	शुद्ध नाट	स						रि		ग	म				प						ध		नि
१०	आहीरी	स					रि	ग			म				प			ध					नि
११	नादरामक्रिया	स			रि			ग			म				प			ध					नि
१२	शुद्ध वराली	स			रि		ग							म	प			ध					नि
१३	रीति गौड़	स			रि		ग				म				प					ध	नि		
१४	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२. सोमराग																						
१५	केदारगौड़ मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२. नारायण गौड़																						
१६	हेज्जुज्जीमेल	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
१७	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध				नि	
१८	रेवगुप्ति मेल	स			रि				ग		म				प			ध		नि			
१९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध	नि	
२०	काम्बोजी मेल	स					रि		ग		म				प					ध		नि	

३—७६ राग और २३ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ	तीव्र ऋषभ	तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	मृदु मध्यम	शुद्ध मध्यम		तीव्रतम मध्यम	मृदु पञ्चम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	तीव्र धैवत	तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	तीव्रतम धैवत कैशिक निषाद	काकली निषाद	मृदु षड्ज
१	मुखारी मेल	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
	२. तुरुष्क तोडी																						
२	रेवगुप्ति मेल	स			रि				ग		म				प			ध		नि			
३	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध				नि	
	२. वसन्तवराली																						
४	तोडी मेल	स			रि			ग			म				प			ध			नि		
५	नादरामक्री मेल	स			रि			ग			म				प			ध					नि
६	भैरव मेल	स			रि				ग		म				प			ध			नि		
	२. पौरविका																						

७	वसन्त	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
	२. डक्क																						
	३. हिजेजा																						
	४. हिन्दोल																						
८	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध				नि	
	२. मारविका																						
९	मालवगौड़ मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	२. चैतीगौड़ी																						
	३. पूर्वी																						
	४. पाडी																						
	५. देवगान्धार																						
	६. गोण्डक्रिया																						
	७. कुरञ्जी																						
	८. बाहुली																						
	९. रामक्री																						
	१०. पावक																						
	११. असावेरी																						
	१२. पञ्चम																						
	१३. बंगाल																						
	१४. शुद्ध ललित																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८ तीव्र ऋषभ	९ तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	११ अन्तरगान्धार	१२ मृदु मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ तीव्रतम मध्यम	१६ मृदु पञ्चम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ तीव्र धैवत	२२ तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	१ तीव्रतर धैवत कैशिक निषाद	२ काकलि निषाद	३ मृदु षड्ज
	१५. गुर्जरी																						
	१६. फरज (परज)																						
	१७. शुद्ध गौड़																						
१०	रीतिगौड़ मेल	स			रि		ग				म				प					ध	नि		
११	आभीर मेल	स					रि	ग			म				प			ध					नि
१२	हम्मीर मेल	स					रि			ग	म				प			ध					नि
	२. विषंगड																						
	३. केदार																						
१३	शुद्ध वराटी मेल	स			रि			ग					म		प			ध					नि

१४	शुद्ध रामक्री मेल	स			रि					ग			म		प			ध					नि
	२. ललित																						
	३. जेतश्री																						
	४. त्रावणी																						
	५. देशी																						
१५	श्रीराग मेल	स				रि		ग			म				प				ध		नि		
	२. मालवश्री																						
	३. धन्याशिकी																						
	४. भैरवी																						
	५. धवला																						
	६. सैन्धवी																						
१६	कल्याण मेल	स					रि	ग						म	प			ध					नि
१७	काम्बोदी मेल	स					रि		ग	ग	म				प					ध		नि	
	२. देवक्री																						
१८	मल्लारी	स					रि				म				प					ध			नि
	२. नटमल्लारी																						
	३. पूर्व गौड़																						
	४. भूपाली																						
	५. गौड़																						
	६. शंकराभरण																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ	तीव्र ऋषभ	तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	मृदु मध्यम	शुद्ध मध्यम		तीव्रतम मध्यम	मृदु पञ्चम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	तीव्र धैवत	तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	तीव्रतर धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	मृदु षड्ज
	७. नटनारायण																						
	८. नारायण गौड़																						
	९. द्वितीय केदार																						
	१०. सालङ्क नाट																						
	११. वेलावली																						
	१२. मध्यमादि																						
	१३. सावेरी																						
	१४. सौराष्ट्री																						
१९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध		नि
२०	कर्नाटगौड़ मेल	स						रि		ग	म				प				ध		नि		

	२. अटाणा																						
	३. नागध्वनि																						
	४. शुद्ध बंगाल																						
	५. वर्ण नाटक																						
	६. ईराक																						
२१	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			
२२	शुद्ध नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
२३	सारङ्ग मेल	स					रि			ग				म	प						ध		नि

४—५४ राग और १९ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	११	१२ अन्तर गान्धार	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५	१६ वराली मध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१	२२ पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	१ कैशिक निषाद	२	३ काकली निषाद
१	मुखारी मेल	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
२	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध					नि
३	भूपाल मेल	स			रि			ग			म				प			ध			नि		
४	हेज्जुज्जीमेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२. रेवगुप्ति																						
५	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
६	गौड़ मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	२. सौराष्ट्रम्																						
	३. सारङ्गनाट																						

	४. गुण्डक्रिया																						
	५. नादरामक्रिया																						
	६. ललिता																						
	७. पाडी																						
	८. गुर्जरी																						
	९. कन्नड बंगाल																						
	१०. बौली																						
	११. सावेरी																						
	१२. मलहरि																						
	१३. छाया गौड़																						
	१४. पूर्वगौड़																						
७	भैरवी मेल	स					रि	ग			म				प					ध	नि		
	२. हिन्दोल																						
	३. घण्टारव																						
	४. रीतिगौड़																						
८	आहीरी मेल	स					रि	ग			म				प			ध					नि
	२. हिन्दोल वसन्तम्																						
	३. आभेरी																						
९	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प				ध		नि		
	२. सालग भैरवी																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
	३. धन्याशी																						
	४. मालवश्री																						
	५. देवगान्धारी																						
	६. जयन्तसेना																						
	७. मध्यमादि																						
	८. आन्थाली																						
	९. वेलावली																						
	१०. कन्नडगौड़																						
१०	काम्बोजी मेल	स					रि			ग	म				प					ध	नि		
	२. केदार गौड़																						

	३. नारायण गौड़																						
११	शंकराभरण मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२. शुद्ध वसन्ता																						
	३. आरभी																						
	४. नागध्वनि																						
	५. साम																						
	६. नारायण देशाक्षी																						
	७. नारायणी																						
१२	सामन्त मेल	स					रि			ग	म				प						ध		नि
१३	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			नि
१४	नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
१५	शुद्ध वराली मेल	स			रि		ग							म	प			ध					नि
१६	पन्तुवराली मेल	स			रि			ग						म	प			ध					नि
१७	शुद्धरामक्रिया मेल	स			रि					ग				म	प			ध					नि
१८	सिंहरव मेल	स					रि							म	प					ध	नि		
१९	कल्याणी मेल	स					रि			ग				म	प					ध			नि

५—१०० राग और १९ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
१.	श्रीराग मेल २. कन्नड गौड़ ३. देवगान्धार ४. सालगभैरवी ५. शुद्ध देशी ६. माधवमनोहरो ७. मध्यमग्रामराग ८. सैन्धवी ९. खापी	स					रि	ग			म				प			ध			नि		

	१०. हुसेनी																						
	११. श्रीरञ्जनी																						
	१२. मालवश्री																						
	१३. देवमनोहरी																						
	१४. जयन्त सेना																						
	१५. मणिरंगु																						
	१६. मध्यमादि																						
	१७. शुद्ध धन्यासी																						
२	शुद्ध नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
	२. उदयरविचन्द्रिका																						
३	मालवगौड़ मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	२. सारङ्ग नाटी																						
	३. आर्ददेशी																						
	४. छाया गौड़																						
	५. टक्क																						
	६. गुर्जरी																						
	७. गुण्डक्रिया																						
	८. फलमञ्जरी																						
	९. नादरामक्रिया																						
	१०. सौराष्ट्री																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्धनिषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
	११. मेचबौली																						
	१२. मागधी																						
	१३. गौरीमनोहरी																						
	१४. मारुवा																						
	१५. गौड़ीपन्तु																						
	१६. सावेरी																						
	१७. पूर्वी																						
	१८. बिभासुक																						
	१९. गौड़																						
	२०. कन्नड बंगाल																						

	२१. बहुली																						
	२२. पाडी																						
	२३. मलहरी																						
	२४. ललित																						
	२५. पूर्णपञ्चम																						
	२६. शुद्ध सावेरी																						
	२७. मेघ रञ्जी																						
	२८. रेवगुप्त																						
	२९. मालवी																						
४	वेलावली मेल	स					रि	ग			म				प					ध			नि
५	बराली मेल	स			रि		ग							म	प			ध					नि
६	शुद्ध रामक्रिया मेल	स			रि					ग				म	प			ध					नि
	२. दीपक																						
७	शंकराभरण मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२. आरभी																						
	३. शुद्ध वसन्त																						
	४. सरस्वती मनोहरी																						
	५. पूर्वगौड़																						
	६. नारायणी																						
	७. नारायण देशाक्षी																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या।																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
	८. सामन्त																						
	९. कुरञ्जिका																						
	१०. पूर्णचन्द्रिका																						
	११. सुरसिन्धु																						
	१२. जुलाऊ																						
	१३. बिलाहुरी																						
	१४. गौड़मल्लार																						
	१५. केदार																						
८	काम्बोजी मेल	स					रि			ग	म				प					ध	नि		
	२. नारायण गौड़																						

	३. केदारगौड़																					
	४. बलहंस																					
	५. नागध्वनि																					
	६. छायातरङ्गिणी																					
	७. ईशमनोहरी																					
	८. गुरुकुल काम्भोजी																					
	९. नाटकुरञ्जी																					
	१०. कन्नड																					
	११. नटनारायणी																					
	१२. आन्दाली																					
	१३. सामा																					
	१४. मोहन																					
	१५. देवक्रिया																					
	१६. मोहन कल्याणी																					
९	भैरवी मेल	स					रि	ग			म				प			ध			नि	
	२. आहरी																					
	३. घण्टारव																					
	४. इन्दुघण्टारव																					
	५. रीतिगौड़																					
	६. हिन्दोल वसन्त																					

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	११	१२ अन्तर गान्धार	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५	१६ वराली मध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१	२२ पञ्चश्रुति धैवत शुद्धनिषाद	१ कैशिक निषाद	२	३ काकली निषाद
	७. आनन्द भैरवी																						
	८. आभेरी																						
	९. नागगान्धारी																						
	१०. धन्यासी																						
	११. हिन्दोल																						
१०	मुखारी मेल	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
११	वेगवाहिनी मेल	स			रि					ग	म				प					ध	नि		
१२	सिन्धुरामक्रिया मेल	स			रि			ग						म	प			ध					नि
	२. पन्तुवराली																						
१३	हेज्जुज्जी मेल	स			रि					ग	म				प			ध		नि			

१४	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध					नि
	२. गान्धार पञ्चम																						
	३. भिन्न पञ्चम																						
१५	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२. ललितपञ्चम																						
१६	भिन्न षड्ज मेल	स			रि			ग			म				प			ध					नि
	२. भूपाल																						
१७	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			नि
१८	छाया नाट मेल	स						रि		ग	म				प					ध	नि		
१९	सारङ्ग मेल	स					रि			ग				म	प					ध			नि

७२ मेलकर्ता

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
१. कनकांगी	स	शुद्ध	शुद्ध	शुद्ध	प	शुद्ध	शुद्ध
२. रत्नांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
३. गानमूर्ति	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४. वनस्पति	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
५. मानवती	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६. तानरूपी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
७. सेनापति	,,	,,	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
८. हनुमत्तोड़ी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
९. धेनुका	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१०. नाटकप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
११. कोकिलप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१२. रूपवती	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
१३. गायकप्रिय	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
१४. बकुलाभरण	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
१५. मायामालवगौड़	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१६. चक्रवाक	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
१७. सूर्यकान्त	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली

१८. हाटकांबरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
१९. झंकारध्वनि	,,	चतु:श्रुति	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
२०. नटभैरवी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
२१. कीरवाणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२२. खरहरप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
२३. गौरी मनोहरी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२४. वरुणप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
२५. माररंजनी	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
२६. चारुकेशी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
२७. सरसांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२८. हरिकांभोजी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
२९. धीरशंकराभरण	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
३०. नागानंदिनी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
३१. यागप्रिया	,,	षट्श्रुति	,,	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
३२. रागवर्धिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
३३. गांगेयभूषणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	क.कली
३४. वागधीश्वरी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कै.शिक
३५. शूलिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	क.कली
३६. चलनाट	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
३७. सालग	,,	,,	,,	प्रति	,,	शुद्ध	शुद्ध

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
३८. जलार्णव	स	षट्श्रुति	अन्तर	प्रति	प	शुद्ध	कैशिक
३९. झालवराली	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४०. नवनीत	,,	,,	,	,,	,	चतु:श्रुति	कैशिक
४१. पावनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४२. रघुप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४३. गवांबोधि	,,	,,	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
४४. भवप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
४५. शुभपंतुवराली	,,	शुद्ध	,,	,,	,,	,,	काकली
४६. षड्विधमार्गिणी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
४७. सुवर्णांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४८. दिव्यमणि	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४९. धवलांबरी	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
५०. नामनारायणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
५१. कामवर्धनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५२. रामप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	चतु:श्रुति	कैशिक
५३. गमनश्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५४. विश्वंभरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
५५. श्यामलांगी	,,	चतु:श्रुति	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध

५६. षण्मुखप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
५७. सिंहेन्द्रमध्यम	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५८. हेमवती	,,	,,	,,	,,	,,	चतुःश्रुति	कैशिक
५९. धर्मवती	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६०. नीतिमती	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
६१. कांतामणि	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
६२. ऋषभप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
६३. लतांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६४. वाचस्पति	,,	,,	,,	,,	,,	चतुःश्रुति	कैशिक
६५. मेचकल्याणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६६. चित्रांबरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
६७. सुचरित्र	,,	षट्श्रुति	,,	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
६८. ज्योतिःस्वरूपिणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
६९. धातुवर्धिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
७०. नासिकाभूषणी	,,	,,	,,	,,	,,	चतुःश्रुति	कैशिक
७१. कोसल	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
७२. रसिकप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,

हिन्दुस्थानी पद्धति

विदेशी आक्रमणों के कारण हमारी बहुत-सी धार्मिक और कलासंबंधी संप्रदाय-संस्थाएँ मिट गयी थीं। लगभग १००० ईसवी से १२०० ईसवी तक आक्रमणकारियों की नीयत मंदिरों को मिटाना, धन, आभूषण आदि को लूट ले जाना आदि ही थी। कुछ समय के बाद वे आर्थिक निधियों के साथ-साथ कला एवं विज्ञान की निधियों को भी ले जाने लगे। धीरे-धीरे उन्हें इसी देश में रहकर शासन करने की इच्छा हुई। महमूद ग़ोरी ने दिल्ली में अपने एक प्रतिनिधि को नियुक्त करके उत्तर भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग पर शासन किया था। उसके बाद उसका प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन, जो पहले उसका गुलाम था, दिल्ली का बादशाह हुआ। यह ई० सन् १२०६ की बात है। उस समय से दिल्ली के बादशाह, उनके वंशज और उनके परिजन, ये सब भारत को अपनी मातृभूमि मानने लगे। हिंदूधर्म की मूर्तिपूजा उन्हें पसंद न आयी परंतु भारतीय कलाएँ उनके मन को आकर्षित करने लगीं। एक सौ वर्षों के बाद ही दिल्ली दरबार में भारतीय कलाकार स्थान पाने लगे। अलाउद्दीन खिलजी ने, जो अपने राज्य को सुदूर दक्षिण तक विस्तृत कर सका था, भारतीय गायक गोपाल नायक को बहुत आदर के साथ अपने दरबार के गवैयों में एक प्रतिष्ठित स्थान दिया। अलाउद्दीन के दरबार में अमीर खुसरो एक प्रसिद्ध कवि और गायक था। कहा जाता है कि गोपाल नायक और अमीर खुसरो में प्रतिस्पर्धा हुई। इसमें विजय किसकी हुई, यह विवादग्रस्त है। कुछ लोगों का कथन है कि यह घटना अलाउद्दीन के काल में नहीं, अपितु और बीस-तीस वर्ष पश्चात् हुई है।

बात कुछ भी हो, यह स्पष्ट है कि दिल्ली बादशाहों के दरबार में १४०० ई० से भारतीय कलाओं के पोषण करने का कार्य आरम्भ हुआ।

दक्षिण भारत में जिस तरह विजयनगर साम्राज्य के विशेष प्रयत्न से कर्नाटक संप्रदाय उत्पन्न होकर बढ़ा, उसी तरह दिल्ली बादशाहों के आश्रय में उत्तर भारत का अवशिष्ट संगीत संप्रदाय "हिंदुस्थानी संगीत" नाम से बढ़ने लगा।

बादशाहों का मन बहलाने के लिए उनके आश्रय में रहनेवाले भारतीय गायक फारसी भाषा का भी थोड़ा-थोड़ा मिश्रण करने लगे। फारसी भाषा के प्रबंधों का अनुसरण करके भारतीय साहित्यकार प्रबंध रचने लगे। टप्पा, ख्याल, ठुमरी, गजल इत्यादि इसी तरह उत्पन्न हुए हैं। इस तरह भारतीय-फारसी मिश्रित रीति की रचनाओं में अमीर खुसरो का साहित्य ही मुख्य है। स्वरों के उच्चारण की रीति में भी थोड़ा-सा परिवर्तन हुआ। हरएक स्वर के साथ उसके ऊपर के स्वर को छूकर

उच्चारण करने की यह रीति हो गयी। अब तक भारतीय संगीत कुछ-कुछ प्रांतीय छायाभेद होने पर भी देशभर में एक-जैसा था। इसके बाद स्वरों के उच्चारण की रीति में भिन्नता होने के कारण दक्षिण के संगीत और उत्तर के संगीत के रागों में स्वरों की समानता रहने पर भी छायाभेद होने लगे।

परंतु वृन्दावन, अयोध्या आदि भारतीय पुण्यस्थलों में रहनेवाले संत और भक्त दरबार के संगीत से संबंध न रखकर गाते और साहित्य रचना करते आते थे। प्राचीन संगीत साहित्यों में जयदेव का गीतगोविंद, कवि विद्यापति का साहित्य इत्यादि प्रचार में थे और आज भी हैं।

संगीतशास्त्र में रागों का वादी-संवादीतत्त्व मात्र ही अवशिष्ट था। बाकी सब लक्षण—ग्राम, मूर्च्छना, जाति आदि—विस्मृत हो गये थे। रागों के मुख्य संचार "पकड़" नाम से प्रचार में थे।

प्राचीन काल में रागों का विभाग दो प्रकार से था। एक प्रकार में याष्टिक, दुर्गा, मतङ्ग आदि के मत के अनुसार राग, भाषा, रागाङ्ग, भाषाङ्ग, क्रियाङ्ग और उपाङ्ग इत्यादि विभाग थे। इसी को संगीतरत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने दिया है। दूसरा विभाग राग-रागिनी पद्धति में है। राग-रागिनी मत के आदिकर्ता कौन हैं? यह नहीं जाना जाता है। कदाचित् इसकी उत्पत्ति शैव आगमों में से हुई होगी। चतुर दामोदर (१६०० ई०) कृत संगीतदर्पण में राग-रागिनी मत के तीन संप्रदाय दिये गये हैं। रागार्णव मत, सोमनाथ मत, हनुमन्मत ये ही तीन हैं। इन तीनों मतों में थोड़ा-थोड़ा भेद है। इन तीनों मतों के अनुसार राग विभाग इस प्रकार हैं—

संगीतदर्पण में राग-रागिनीमत

१. **सोमेश्वर मत** (प्राचीन मत)—यह मत पार्वतीजी के प्रति शिवजी के द्वारा उपदिष्ट माना जाता है।

पुरुषराग—६

१. श्रीराग—शिवजी के सद्योजात मुख से उत्पन्न।
२. वसंत— ,, ,, वामदेव ,, ,, ,,
३. भैरव— ,, ,, अघोर ,, ,, ,,
४. पंचम— ,, ,, तत्पुरुष ,, ,, ,,
५. मेघ— ,, ,, ईशान ,, ,, ,,
६. नट्टनारायण—पार्वतीजी के मुख से उत्पन्न।

ये सब शिव-पार्वती नर्तन के समय उत्पन्न हुए हैं।

श्रीराग की रागिनियाँ—६

(१) मालवी	(४) केदारी
(२) त्रिवेणी	(५) मधुमाधवी
(३) गौड़ी	(६) पहाड़ी

वसंत की रागिनियाँ—६

(१) देशी	(४) तोड़िका
(२) देवगिरि	(५) ललिता
(३) वराटी	(६) हिंदोली

भैरव की रागिनियाँ—६

(१) भैरवी	(४) गुणकरी
(२) गुर्जरी	(५) बंगाली
(३) रेवा	(६) बहुली

पंचम की रागिनियाँ—६

(१) विभास	(४) बडहंसा
(२) भूपाली	(५) मालवश्री
(३) कर्नाटी	(६) पटमंजरी

मेघराग की रागिनियाँ—६

(१) मल्लारी	(४) कौशिकी—(कैशिकी)
(२) सोरठी	(५) गांधारी
(३) सावेरी	(६) हरिश्रृंगारा

नट्टनारायण की रागिनियाँ—६

(१) कामोदी	(४) नाटिका
(२) कल्याणी	(५) सालंगनाटी
(३) आभेरी	(६) हंवीरा

उस मत के अनुसार राग-गायन का समय

सबेरे से—

मधुमाधवी	भूपाली
देशी	भैरवी

वेलावली	मेघराग
मल्हारी	पंचम
बंगाली	देशकार
साम	भैरव
गुर्जरी	ललित
धनाश्री	वसंत
मालवश्री	

पहले प्रहर के बाद

गुर्जरी[1]	गुणकरी
कौशिक (कैशिक)	भैरवी
सावेरी	रामकरी
पटमंजरी	सोरठी
रेवा	

दूसरे प्रहर के बाद

वैराटी	नाग गांधारी
तोडिका	देशी
कामोदी	शंकराभरण
गुडायिका	

तीसरे प्रहर के बाद--अर्धरात्रि तक गाने योग्य

मालव	केदारी
गौडी	कर्नाटी
त्रिवण	आभीरी
नटकल्याण	बडहंसी
सालंगनाट	पहाड़ी
सरा नाट नामक राग	

रागों को गाने में काल या समय का नियम अवश्य पालनीय है। राजाज्ञा से सब राग सदा गेय हैं।

१. देश भेद के अनुसार गुर्जरियां कई प्रकार की होती हैं।

रागों के ऋतुनियम

श्रीराग और उसकी रागिनियाँ			— शिशिर ऋतु में	
वसंत	,,	,,	— वसंत	,,
भैरव	,,	,,	— ग्रीष्म	,,
पंचम	,,	,,	— शरद	,,
मेघराग	,,	,,	— वर्षा	,,
नट्टनारायण	,,	,,	— हेमंत	,,

रागों के गाने में जो ऋतुनियम कहे गये हैं वे इच्छानुकूल हैं।

२. हनुमन्मत

पुरुषराग—६

(१) भैरव (४) दीपक
(२) कौशिक (कैशिक) (५) श्रीराग
(३) हिंदोल (६) मेघराग

भैरव की रागिनियाँ—५

(१) मध्यमादि (३) बंगाली
(२) भैरवी (४) वराटिका
(५) सैंधवी

कौशिक की रागिनियाँ—५

(१) तोडी (३) गौड़ी
(२) खंभावती (४) गुणक्री
(५) ककुभा

हिंदोल की रागिनियाँ—५

(१) वेलावली (३) देशाख्या
(२) रामक्री (४) पटमंजरी
(५) ललिता

दीपक की रागिनियाँ—५

(१) केदारी (३) देशी
(२) कानडा (४) कामोदी
(५) नाटिका

श्रीराग की रागिनियाँ—५

(१) वसंती
(२) मालती (मालवी)
(३) मालश्री
(४) धनाश्री
(५) असावेरी

मेघराग की रागिनियाँ—५

(१) मल्लारी
(२) देशकारी
(३) भूपाली
(४) गुर्जरी
(५) टक्क

३. रागार्णवमत

पुरुषराग—६

(१) भैरव
(२) पंचम
(३) नाट
(४) मल्लार
(५) गौडमालव
(६) देशाख्य

भैरव की रागिनियाँ—५

(१) बंगाली
(२) गुणकरी
(३) मध्यमादी
(४) वसंता
(५) धनाश्री

पंचम की रागिनियाँ—५

(१) ललिता
(२) गुर्जरी
(३) देशी
(४) वराटी
(५) रामकृति

नाट की रागिनियाँ—५

(१) नटनारायण
(२) पूर्वगांधार
(३) सालग
(४) केदार
(५) कर्णाट

मल्हार की रागिनियाँ--५

(१) मेघमल्लारिका (३) पटमंजरी
(२) मालवकौशिका (कैशिका) (४) असावेरी

गौड़मालव की रागिनियाँ--४

(१) हिंदोल (३) आंधारी
(२) त्रवणा (४) गौड़ी
(५) पडहंसिका

देशाख्य राग की रागिनियाँ--५

(१) भूपाली (३) कामोदी
(२) कुडायी (४) नाटिका
(५) वेलावली

हनूमन्मत की राग-रागिनियों के लक्षण

राग-रागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
भैरव	ध	ध	ध	रि, प	मा बहुत्व ध विकृत औडव	ध आदि	धनिसगमधनि ।
मध्यमादि	म	म	म	रि, ध (कभी)	संपूर्ण	म आदि	पधमनिसरिगम (या) मम,पम,पनि,सनि गम ।
भैरवी	म	म	म	. . .	मध्यम ग्राम मतांतर में भैरव के समान	(सौवीरी) म आदि	मपधनि सरिगम (या) धनिसगमधप ।
बंगाली	स	स	स	रिध	मत्रप्रयुत	स आदि	सगमपनिसा (या) मपधनिसरिगमा ।
वराटी	स	स	स		कीर्तिवर्धनो संपूर्णा	स आदि	सरिगमपधनिसा ।
सैंधवी	स	स	स	रि	मतांतरे संपूर्णा वीररसवर्धनी	स आदि	सरिगमपधनिसा (या) सगमधनिसा ।
कौशिक (मालवकैंशिका)	स	स	स	. . .	पूर्ण काकलीयुत	स आदि	सरिगमपधनिसा सनिधमगरिसा ।
तोडी	म	म	म	. . .	पूर्ण	म आदि	मपधनिसरिगमा (या)
	स (मतांतरे)	स (मतांतरे)	स (मतांतरे)	. . .			सरिगमपधनिसा
खंभावती	ध	ध	ध	प	म ग्राम	ध आदि	धनिसरिगमधा ।
गौडी	स	स	स	रिप	सुखप्रदा	स आदि	सगमधनिसा सनिधमगमा (गसा)

राग-रागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
गुणक्री	नि स (मतांतरे)	नि स (मतान्तरे)	नि स (मतान्तरे)	रिध	औडव	नि आदि	निसगमपनि निपमग-सनि (या) सगमपनिसा ।
ककुभा	ध	ध	ध	. . .	संपूर्ण	ध आदि	धनिसरिगमपधा ।
हिंदोल	स	स	स	रिध	मध्यम ग्राम काकलीयुत	स आदि	सगमपनिमपसा ।
वेलावली	ध	ध	ध		मध्यमग्राम वीररस	ध आदि	धनिसरिगमपधा ।
रामक्री	स	स	स	रिध (मतांतरे) प (अन्यमत)	पूर्णा करुणरस	स आदि	सगमपनिस (या) सरि-गमपधनिसा (या) सरिगमधनिसा ।
देशाख्या	ग	ग	ग	रि	मध्यमग्राम (मतांतरे संपूर्ण)	गा आदि	गमपधनिसगा (या) गमपधनिसरिगा ।
पटमंजरी	प	प	प	. . .	मध्यमग्राम	प आदि	पधनिसा रीगमपा
ललिता	स	सं	स	रिप	मध्यमग्राम (मतांतर में संपूर्ण)	स आदि	सगमधनिसा (या) धनिसगमधा ।
(द्वितीय ललिता)	ध	ध	ध				

दीपक	स	स	स	...	म ग्राम	स आदि	सरिगमपधनिसा
केदारी	नि	नि	नि	रिध	,, ,,	नि ,,	निसगम पनिनि पमगसनि
कर्णाटी	नि	नि	नि	...	काकलीयुत म ग्राम	नि ,,	निसरिगमपधनि
देशी	रि	रि	रि	प	काकलीयुत म ग्राम	रि ,,	रिमगधनिसरि
कामोदी	ध	ध	ध		विकृत ऋषभ म ग्राम	ध ,,	धनिसरिगमपधा
नाटिका	स	स	स		बहु गमकवाली	स ,,	सरिगमपधनिसा सनिधपमगरिसा
श्रीराग	स	स	स	...	रित्रययुत	स ,,	सरिगमपधनिसा (या) रिगमपधनिस
वसंतिका	स	स	स	...		श्रीराग ,,	सरिगमपधनिसा
मालवी	नि	नि	नि	परि	काकलीयुत	नि ,,	निसपसगनि (या) निसरिमगनि
मालवश्री	स	स	स		श्रृंगाररस	स ,,	सरिगमपधनिसा
धनाश्री	स	स	स	रि	वीररस	स ,,	सगमपधनिसा
असावरी	प	ध	प	रिग	करुण	...	धनिसमपधा मधनिसरिग धगरिसनिध

रागरागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
मेघराग	ध	ध	ध	...	विकृत धैवत शृंगार	ध आदि	धनिसरिगमपधा
मल्लारी	ध	ध	ध	सप	म ग्राम	ध ,,	धनिरिगमधा
देशकारी	स	स	स		वराटीमिश्रित	स ,,	सरिगमपधनिसा
भूपाली	स	स	स	रिम हीना (मतांतर में)	शांतरस	स ,,	सरिगमपधनिसा
गुर्जरी	रि	रि	रि		बहुन्यास	रि ,,	रिगमपधनिसरि
टक्क	स	स	स			स ,,	सरिगमपधनिसा
कल्याणनाट	रि (प) (मतांतर में)	रि (प)	रि (प)				रिगमपधनिसरि सरिग-मपधनिसा
सारंगनाट	स	स	स			स ,,	सरिगमपधनिस
देवक्री	सारङ्गसम	सारङ्गसम	सारङ्गसम				सरिगमपधनिस
सोरठी	प (स) (मतांतर)	प (स)	प (स)	रिवर्ज्य			पधनिसगमा (या) सग-मपधनिसा

त्रिवणा	ध	ध	ध	रिप			धनिसगमधा
पहाड़ी	स	स	स	रिप	गौरीवत्		
पंचम	स	स	स	प	(संपूर्ण मतांतर) शृंगाररस	स आदि	सरिगमधनिसा (या) सरिगमपधनिसा
शंकराभरण	वेलावली जैसे	वेलावली जैसे					
बडहंसा	कर्नाट जैसे	कर्णाट जैसे					
विभास और रेवा	ललिता जैसे	ललिता जैसे					
कुडाई	देशाख्य स्वर जैसे	देशाख्य स्वर जैसे					
आभीरी	कल्याण जैसे	कल्याण जैसे					
मालश्री जयंतश्री धनाश्री मारुका	देशभेद से भिन्न, लक्ष्य से लक्षण जान सकते हैं।						

सरस्वती महल पुस्तकालय में "रागरत्नाकर" नामक एक ग्रंथ है। बताया गया है कि ग्रंथकर्ता का नाम गंधर्वराज है। इस ग्रंथ में हनुमन्मत के अनुसार रागरागिनी-मत और रागों के लक्षण दिये गये हैं। इसमें 'संगीत रत्नाकर' के अतिरिक्त दूसरे ग्रंथों का उल्लेख नहीं है। इस ग्रंथ में दिये हुए लक्षण और संगीतदर्पण में वर्तमान लक्षण दोनों समान हैं। परंतु संगीतदर्पण में न पाये जानेवाले पुत्र, स्नुषारागों के नाम और रूप भी दिये गये हैं। लक्षण नहीं हैं। आजकल के हिंदुस्थानी संप्रदाय के बहुत-से रागों के लक्षण, इन दोनों ग्रंथों के लक्षणों के अनुसार हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि हिंदुस्तानी पद्धति के प्रामाणिक ग्रन्थ ये दो ही हैं। पुण्डरीकविट्ठल कृत "नर्तन निर्णय" में भी रागरागिनी मत बताया गया है। इस ग्रंथ में, इन तीनों मतों को मिश्रित करके ६ पुरुष राग, ३० स्त्रीराग और ३० पुत्रराग दिये गये हैं। हर एक राग का लक्षण और रूप भी दिये गये हैं।

हिंदुस्थानी संगीत का उच्च काल नायक, बैजूबावरा आदियों के काल से स्वामी हरिदास, तानसेन, सदारङ्ग, अदारङ्ग आदियों के काल तक का है। इस काल में दक्षिण के चतुर्दण्डी लक्ष्यों के अनुसार उत्तर भारत में भी लक्ष्यसाहित्य संगीत का रक्षण किया जाने लगा। उस समय में ही 'चीजों' की उत्पत्ति हुई। अनेक संप्रदाय होने के कारण कई घराने हो गये।

किंतु दक्षिण भारत के अनुसार उत्तर भारत में भी मेल या थाट की सृष्टि हुई और उनके अंदर प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार राग रखे गये। भावभट्ट (ई० १७००) ने, जो बीकानेर के नरेश के दरबार में थे, अपने "अनूपसंगीतरत्नाकर" में मेल या थाटों के नाम दिये हैं। (देखिए **अनूपसंगीतरत्नाकर** की मझली किताब पुट ३१)

कुछ दिन तक थाटों की संख्या पर अनेक मतभेद होने के बाद ऐसा निर्धारण हुआ कि थाटों की संख्या दस है। वे ये हैं—

थाट	बिलावल	थाट	मार्वा
,,	कल्याण या यमन	,,	काफी
,,	खमाज	,,	असावरी
,,	भैरव	,,	भैरवी
,,	पूर्वी	,,	तोडी

पूना गायन समाज के प्रकाशन बालसंगीतबोध में १५ थाटों का उल्लेख है।

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित थाट
(पूना गायन समाज से प्रकाशित बाल संगीतबोध के प्रकार)

	श्रुतियाँ	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३	
संख्या	थाट का नाम	षड्ज		कोमल-रि		तीव्र-रि	कोमल-ग		तीव्र-ग		कोमल-म		तीव्र-म		पञ्चम		कोमल-ध		तीव्र-ध	कोमल-नि		तीव्र निषाद		
१	कल्याण	स				रि							म		प				ध			नि		
२	शंकराभरण	स				रि			ग		म				प				ध			नि		
३	श्रीराग	स		रि					ग		म				प		ध					नि		
४	भैरव			रि					ग		म				प		ध					नि		
५	तोडी	स		रि					ग				म		प		ध					नि		
६	बागेसरी	स				रि	ग				म				प				ध	नि				
७	भैरवी	स		रि			ग				म				प		ध			नि				
८	पीलू	स				रि			ग		म				प		ध					नि		
९	झिंजोटी	स				रि			ग				म		प				ध	नि				
१०	मारवा	स		रि					ग				म		प				ध			नि		षाडव
११	सोहनी	स		रि					ग		म				(प)		ध					नि		
१२	सारंग	स				रि			(ग)		म				प				(ध)	नि				औडव
१३	भूप	स				रि			ग		(म)				प				ध			(नि)		औडव
१४	विभास	स		रि					ग		(म)				प		ध					(नि)		औडव
१५	मालकौंस	स		(रि)			ग				म				प		ध			नि				

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित रागों का स्वर लक्षण
(पूना गायन समाज से प्रकाशित बालसंगीतबोध के प्रकार)

संख्या	रागों के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र (रि या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या शुद्ध-म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
१	भैरव	(उषःकाल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	सं
२	विभास	(प्रभात)	स				ग	म			ध			नि	ध	औ
३	रामकली	(प्रातःकाल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	औ
४	गुणकली	,,	स	रि			ग	म		प	ध					षा
५	भैरवी	(पहला प्रहर)	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	सं
६	सिंध भैरवी	,,	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	सं
					रि		ग	म				ध		नि		
७	जोगी	,,	स	रि				म		प	ध		नि		स	षा
८	तोडी	(दूसरा प्रहर)	स	रि		ग			म	प	ध			नि	ग	सं
९	बिलासखानी (मिया की) तोडी	,,	स	रि		ग		म		प	ध			नि	ग	सं
१०	पीलू	,,	स		रि	ग		म			ध				ग	सं

११	आसावरी	,,	स		रि	ग		म		प	ध		नि		नि	सं
१२	बिलावल	,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ग	सं
१३	सारंग	(मध्याह्न)	स		रि			म		प				नि	रि	औ
१४	बृन्दावनी सारंग	,,	स		रि			म		प			नि		रि	औ
१५	मधुमाद सारंग	,,	स		रि			म		प		ध		नि	रि	षा
१६	सौरठ	(तीसरा प्रहर)	स		रि			म		प				नि	रि	औ
१७	देश	,,	स		रि			म		प				नि		औ
			स		रि		ग	म		प		ध	नि			सं
१८	मल्हार (मेघ)	,,	स		रि			म		प		ध				औ
१९	मिया का मल्हार	,,	स		रि	ग		म		प		ध	नि	नि	रि	सं
२०	भीमपलासी	(चौथा प्रहर)		रि	रि	ग		म			ध		नि		म	सं
२१	धनाश्री	(चौथा प्रहर)	स				ग	म		प			नि		स	औ
						ग		म			ध		नि			स
२२	मारवा	.,	स	रि			ग		म			ध		नि	ध	षा
२३	मुल्तानी	,,	स		रि		ग		म	प	ध			नि		सं
२४	श्रीराग	,,	स	रि				म		प	ध			नि	रि	सं
							ग									
२५	गौरी	,,	स	रि			ग	म	म	प	ध			नि	रि	सं
२६	पूर्वी	(सायंकाल)	स	रि			ग		म	प	ध			नि	प	सं
२७	पूरिया कल्याण	,,	स	रि			ग		म			ध		नि	ग	षा

संख्या	रागों के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र-रि (या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या तीव्र म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
२८	कल्याण	(रात्रि का प्रथम प्रहर)	स		रि		ग		म	प		ध		नि	ग	सं
२९	यमन कल्याण	,,	स		रि		ग	म	म	प		ध		नि	ग	सं
३०	भूप कल्याण	,,	स		रि		ग			प		ध			ग	औ
३१	हमीर कल्याण	,,	स		रि		ग	म	म	प		ध		नि	ध	सं
३२	कामोद कल्याण	,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	रि	सं
३३	झिंझोटी	(सर्वदा)	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	सं
३४	खमाच	,,	स				ग	म		प		ध		नि	म	षा सं
३५	काफी	(सर्वदा)	स		रि	ग		म		प		ध	नि		प	सं
३६	छायानाट	(रात्रि का दूसरा प्रहर)	स	नि	धप	म मं	गरि	गम	पम मं	ग मं	रिसं				प	सं
३७	बिहाग	,,	स				ग	म	मं	प				नि	नि	औ सं

३८	मांड		,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ध	सं
३९	केदारा		,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	म	सं
४०	कानड़ा	(मध्यरात्रि)		स		रि	ग		म		प	ध		नि		ग	सं
४१	दरबारी कानड़ा		,,	स		रि		ग	म		प	ध		नि		ग	सं
४२	शहाणा	(रात्रि का तीसरा प्रहर)		स		रि		ग	म		प		ध	नि		ग	सं
४३	अडाणा	,,	,,	स		रि	ग		म		प		ध			ग	सं
४४	मालकौंस	(रात्रि का चौथा प्रहर)		स			ग		म			ध		नि		म	औ
४५	कालंगडा	,,	,,	स	रि		ग		म		प	ध			नि	ग	सं
४६	परज	,,	,,	स	रि			ग		म		ध			नि	ग	औ
		,,		स	रि			ग	म		प	ध			नि		सं
४७	सोहनी	,,	,,	स		रि		ग	म	म		ध		नि		ग	षा
४८	हिंदोल	,,	,,	स				ग		म			ध		नि	ग	औ
४९	बागेसरी	,,	,,	स		रि	ग		म				ध		नि	म	षा
		,,		स		रि	ग		म		प		ध		नि	ध	सं
५०	बहार	,,	,,				ग		म					नि		स	सं
५१	वसत		,,	स				ग	म?	म		ध			नि	प	औ
				स		रि		ग		म	प	ध			नि		सं
५२	पंचम	,,	,,	स				ग		म			ध		नि	प	औ
																	षा
५३	ललत	,,	,,	स		रि		ग	म				ध		नि	म	षा

संख्या	रागों के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र-रि (या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या शुद्ध म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
५४	तिलक	(रात्रि का चौथा प्रहर)	स				ग	म		प				नि		औ
५५	शंकराभरण	प्रातःकाल	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	सं
५६	नटनारायण	अपराह्ण	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ग	सं
५७	आरभी	दो प्रहर	स		रि			म		प		ध			प	औ
			स		रि		ग	म		प		ध		नि		सं
५८	नारायणी	प्रातःकाल	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	स
५९	पूर्वकल्याणी	सायंकाल	स	रि			ग		म	प		ध		नि	ग	सं
६०	आनंद भैरवी	सर्वदा	स		रि	ग	ग	म		प		ध	नि		प	सं
६१	गरुडध्वनि		स		रि		ग	म		प		ध		नि	रि	सं
	(आखिर के सात राग कर्नाटक पद्धति में हैं)															

यह सब कुछ होने पर भी थाटों को अधिक मुख्यत्व नहीं था, क्योंकि रागों का संचार थाटों के विकृतस्वर विभाग का अतिक्रमण करके ही करना पड़ा। इससे यह निश्चित होता है कि "थाट" रागों में प्रयुक्त होनेवाले स्वरों को याद रखने के लिए कल्पित तात्कालिक प्रबन्धमात्र हैं, रागोत्पत्ति के शास्त्रीय मार्ग के अनुसार नहीं हैं। क्योंकि रागों की छाया के लिए मूर्च्छना, वादी, संवादी और वर्णालंकार इन तीनों का लक्षण ही प्राण है।

कुछ दिनों से कर्नाटक पद्धति के ७२ मेलकर्ता प्रबन्ध और दक्षिणी गवैयों के स्वर-ज्ञान ने विद्वानों को आकर्षित किया है। इसलिए थाटों को अधिक मुख्यत्व दिया जाने लगा। रागों के लिए थाट की सृष्टि हुई है। किंतु आजकल लोग यह समझते हैं कि थाट या मेल ही संगीत शास्त्र है। इसका कुफल यह हुआ है कि रागच्छाया और राग-भाव में ध्यान देने की प्रवृत्ति कम हुई और थाटों एवं उनके स्वरों पर ध्यान अधिक दिया जाता है। लोग यह नहीं जानते कि रागों के लिए स्वर हैं, बल्कि स्वरों के लिए राग नहीं है। मकान के लिए पत्थर है, मकान पत्थर के लिए नहीं है। बहुत-से रागों में स्वरों की स्पष्टतया विवेचना करना असाध्य है। इस तत्त्व को भूलकर स्थूल स्वरों पर ही पूरा ध्यान देने से रागों की रक्ति और आकर्षण शक्ति हर रोज कम होती जाती है। रक्ति के संरक्षण के लिए, मूर्च्छना, वादी, संवादी वर्णालंकार आदि लक्षणों पर गवैयों का ध्यान देना आवश्यक है। रागों में इन लक्षणों को ढूँढने का क्रम अब दिया जाता है।

राग यमन

इस राग में मुख्य संचार "मपगा, रि, सा—धपमगारीसा—निसरिगा, मपा, धपमगा रिसा—सनिसरिगा—मपा, धपमागा, रिसागा, रिसधा सरिगा।"

इसमें गांधार स्वर पर—राग का जीवन निर्भर है। ऊपर के संचार और नीचे के संचार दोनों गांधार में ही आकर स्थिर होते हैं। आरोह-संचार धैवत के ऊपर नहीं चलता। अवरोह में षड्ज से निषाद को पारकर धैवत तक चलता है। इनसे यह मालूम होता है कि राग की मूर्च्छना धैवत से शुरू होकर अवरोहण मार्ग पर निषाद तक आती है। आरोहण में नहीं, अपितु, अवरोहण में राग का प्रकाशन होता है। निषाद, मूर्च्छना के नीचे का सिरा है। यह इससे पता चलता है कि षड्ज से नीचे संचार करते समय निषाद को पारकर संचार करना पड़ता है। इसलिए यह निर्धारित होता है कि निषाद ही मूर्च्छना का एक सिरा है। क्रमसंचार षड्ज में आरंभ होकर षड्ज में समाप्त होता है। इसलिए मूर्च्छना और क्रमसंचार का रूप ऐसा है।

मूर्च्छना—निसरिगमपधपमगरिसनि।

क्रमसंचार—सनिसरिगा, मपधपमगारिसा।

इस राग का अंशस्वर गांधार और न्यास षड्ज है। निषाद से शुरू करके ही गांधार में आकर खड़े रहने के कारण इस राग का ग्रहस्वर निषाद है। गांधार का संवादी सप्तक के ऊपरी भाग में धैवत और नीचे के सप्तक में निषाद है।

मूर्च्छना, क्रमसंचार, अंश, न्यास, अपन्यासस्वरों को ढूंढ़ने का मार्ग

१. राग के आरोह या अवरोह में, जिस स्वर पर आने के बाद आगे संचार करना साध्य न होकर लौटना पड़ता है।

या

२. जिस स्वर में आकर आगे संचार करना चाहें तो उसके बाद के स्वर को पार कर ही संचार करना पड़ता है।

या

३. जिस स्वर में आकर कुछ देर वहीं खड़े रहने के बाद ही ऊपर या नीचे का संचार साध्य होता है।

इन तीनों प्रकारों में मूर्च्छना के दोनों सिरों के स्वरों को निश्चित कर सकते हैं। राग के बहुत-से संचार जहाँ आकर सम्पन्न होते हैं उन स्वरों से शुरू करके मूर्च्छना-चक्र में संचार करने से राग का क्रमसंचार मिल जाता है। इसमें आरोहण क्रम से आकर रागसंचार का अंत होता हो तो उस स्वर से अवरोहण मार्ग में क्रमसंचार का आरम्भ करना है। अवरोह मार्ग में आकर रागसंचार का अंत होता हो तो उस स्वर से आरोह मार्ग में क्रमसंचार का आरम्भ करना है।

जिस स्वर में रागभाव निर्भर है, जिस स्वर को बार-बार छूए बिना रागभाव प्रकाशित नहीं होता और जिस स्वर के संवादी या निकट अनुवादी स्वरों में खड़े होकर ही रागसंचार किया जा सकता है उसी स्वर का नाम है अंशस्वर। कई रागों में राग का आरम्भ अंशस्वर में ही है। और कई रागों में दूसरे स्वर में शुरूकर अंशस्वर तक पहुँचते हैं। अंशस्वर से ही शुरू करें तो अंश ही ग्रहस्वर हो जाता है। अन्यथा दूसरा स्वर, जिसमें राग शुरू करते हैं, ग्रहस्वर है। अंशस्वर में ही खड़े रहकर संचार करना पड़ता हो तो वही ग्रहस्वर भी है। जिन स्वरों में रहकर रागविस्तार करते हैं, उन स्वरों का नाम अपन्यास स्वर है।

इसी तरह सब रागों में इन लक्षणों को ढूँढ सकते हैं। १९०६ ई० में पूना गायन समाज से प्रकाशित "बालसंगीत बोध" नामक क्रमिक पुस्तकमाला में तात्कालिक प्रसिद्ध हिंदुस्थानी रागों के लक्षण दिये हुए हैं। (देखिए पुट ३३, ३४, ३५ संगीत-बालबोध)।

इन लक्षणों के साथ हरएक राग की मूर्च्छना, क्रमसंचार, रागप्रकाशन होनेवाले वर्ण, राग के स्थायी स्वर, अलंकार, अंश, ग्रह, न्यास और अपन्यास स्वर आदि को विद्वानों के सम्मिलित प्रयत्न के सहारे निश्चय करके ध्यान में रखना आवश्यक है। तभी हमारा संगीत शास्त्र पूर्ण हो सकता है। तभी हमारा संगीत, जिसकी आकर्षण शक्ति दिन-प्रतिदिन घटती जाती है, पूर्ण जीवन से आनन्ददायक हो सकता है।

आठवाँ परिच्छेद

ताल प्रकरण

बालक आनन्दातिरेक में गाते, ताल बजाते और नाचते हैं। इससे यह जान पड़ता है कि गीत, ताल और नाच आनन्द की अभिव्यक्ति हैं। गीत और नाच की प्रतिष्ठा ताल से है। केवल ताल वाद्यों का वादन सुनते समय स्वतः हमारे हाथ, शिर या पैर हिलने लगते या ताल गति का अनुसरण करने लगते हैं। संकोच के कारण हम तो नहीं नाचते, परंतु संकोचहीन बालक नाचने लगते हैं। इसलिए यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं कि आनन्द ही ताल के रूप में विद्यमान है।

'काल' और 'मान' दोनों को मिलाने से ताल उत्पन्न होता है। 'ताल' शब्द प्रतिष्ठार्थक 'तल्' धातु से उत्पन्न हुआ है। इससे ताल का नाम सार्थक होता है।

ताल में सशब्द और निश्शब्द क्रियाओं से काल का 'मान' या 'नाप' किया जाता है।

ताल का स्वरूप स्पन्द है। संसार में सारी शक्तियाँ स्पन्दन रूप में हैं। कहा गया है कि ताल शब्द का अर्थ शिवशक्ति (ता=शिव; ल=शक्ति) है।

तालोत्पत्ति

बहुत समय से ताल के अंग, लघु, गुरु, प्लुत आदि के आधार पर हैं। ये तीनों शब्द अक्षरों के मात्राकाल के नाम हैं। इसलिए यह प्रतीत होता है कि तालों की उत्पत्ति वृत्तों के गुरु, लघु आदि के अक्षर-नियम अर्थात् छन्द से ही हुई है।

अक्षरों का नियम ऋग्वेद काल से चला आता है। इस नियम का नाम 'छन्द' है। ऋग्वेद में हरएक मन्त्र का अलग-अलग छन्द है। मन्त्र का 'छादन' या छिपाकर रक्षण करने के कारण इसका नाम छन्दस् पड़ा।

छन्दों की उत्पत्ति के विषय में वेदों में एक कहानी है। देवासुर-युद्ध में देवता मन्त्रबल के सहारे युद्ध करने लगे। असुर लोग इन मन्त्रों के रूप को अपनी आसुरी माया से अस्तव्यस्त करने लगे। मन्त्रों को अस्तव्यस्तता से बचाने के लिए हर मन्त्र का एक कवच रूप 'छन्द' अर्थात् गुरु, लघु और प्लुत के अक्षरों के नियम बनाये गये।

फलतः मन्त्रों का रक्षण हुआ। वेदों में देवता एवं असुर शब्द सात्विक, राजस या तामस स्वभावों के अर्थ में प्रयुक्त किये गये हैं। 'देवता' शब्द से बुद्धि का प्रकाश और मन का अवधान सूचित किया जाता है। 'असुर' शब्द इन्द्रियों के वश में पड़कर मन की इच्छा के अनुसार चलने के मनोभाव, असावधानी इत्यादि का सूचक है। इसलिए छन्द का लाभ यह हुआ कि असावधान लोगों से भी मन्त्र अस्तव्यस्त न हो पाया।

इसी तरह गीत, वाद्य और नृत्यों के स्वरूप के रक्षण के लिए वृत्ताक्षरों के नाम अर्थात् लघु, गुरु, प्लुत शब्दों से ही ताल के अंग उत्पन्न हुए हैं।

'तालबद्ध' और 'अनिबद्ध'—ये दो गीत के भेद हैं। इसलिए कुछ समय तक गीत के लिए ताल की आवश्यकता नहीं है। परंतु नृत्त के लिए ताल प्राणरूप है। इसी लिए गीत शास्त्रों की अपेक्षा नर्तन शास्त्रों में तालों का विवरण अधिक मिलता है।

ताल सम्बन्धी ग्रंथ

प्राचीन काल के ताल सम्बन्धी ग्रंथ जो आज उपलब्ध हैं वे भरत का नाट्यशास्त्र (अध्याय ३२), आदिभरतम्, दत्तिलम्, भरतार्णवम्, संगीतरत्नाकर—इत्यादि हैं। इनके अलावा तामिल भाषा में कई सहस्र वर्ष पूर्व गीत, ताल और वाद्य के शास्त्र अगस्त्य आदि आचार्यों के द्वारा रचे गये हैं। इनमें बहुत से ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। अवशिष्ट रहने वाले ग्रन्थों में 'तालसमुद्र' नामक ग्रन्थ मुद्रित हो चुका है।

नाट्यशास्त्र के तालाध्याय में ताल के दस प्राण, आदिकाल में उत्पन्न पाँच तालों के नाम, ताल कलाओं की वृद्धि करके, तथा तालों को मिश्रित करके तालों की संख्या को अधिक करने का मार्ग, नर्तन में उपयोग करने के लिए तालशब्दों से बनाये हुए साहित्य या ताल प्रबन्ध का विवरण, नाटकों में प्रयुक्त होनेवाले प्रबन्धों को उपयोग करने के अवसर इत्यादि दिये गये हैं।

प्राचीन नाट्य एवं नृत्यग्रन्थों से उद्धृत किये हुए भागों से संकलित ग्रन्थ आदिभरत है। यह ग्रन्थसंग्रह सभा में नाट्याचार्यों से नाट्यकला के बारे में विचार विनिमय के लिए तैयार किया गया है। इस ग्रन्थ में तालों के दस प्राण, चच्चत्पुट आदि प्राचीन ताल, १०८ ताल, ध्रुव आदि सात सालगसूडक ताल—ये सब दिये गये हैं। यह बात उल्लेख योग्य है कि 'नाट्यशास्त्र' में १०८ तालों के नाम या विवरण नहीं हैं।

'दत्तिलम्' में नाट्यशास्त्र में पाये जानेवाले विवरण ही संक्षिप्त रूप में हैं।

संगीत रत्नाकर में नाट्यशास्त्र आदिभरत और दूसरे संगीत ग्रन्थों में लिखे हुए सब विषयों को मिलाकर विशद तालाध्याय लिखा हुआ है, परन्तु इस ग्रन्थ के १०८ ताल और आदिभरत तथा भरतार्णव में दिये हुए १०८ तालों में कुछ भेद है।

आदिभरत और भरतार्णव में पाये जानेवाले १०८ ताल एक-से हैं। इन दोनों ग्रन्थों में गुरु लघु आदि तालाङ्गों को हस्तकौशल से दिखाने का मार्ग दिया गया है।

परन्तु इन ग्रन्थों में दिये हुए तालों में बहुत से ताल आजकल उत्तर या दक्षिण भारत में प्रचार में नहीं हैं। 'अंधकारयुग' में अन्य कलाभागों के साथ इनका संप्रदाय भी नष्ट हो गया है।

दक्षिण भारत के पुनरुज्जीवित संप्रदाय में 'सालगसूड' नामक प्रबन्ध में प्रयुक्त किये हुए सात ताल मात्र प्रचार में आने लगे। उनके नाम ध्रुवा, मठ्य, झम्पा, अड्डु, त्रिपुट, रूपक और एक ताल हैं। केवल यही सात ताल, नये साहित्य के लिए पर्य्याप्त नहीं हुए। इसलिए हरएक अंग को तिगुना, चौगुना, पचगुना, छगुना और नौगुना करके सातों तालों के ३५ ताल बना दिये गये। इसमें भी एक संकट था। अर्ध मात्रा वाले अंग को ३, ५, ७, ९ से गुणित करते हुए ताल को बढ़ाते समय सार्ध संख्याएँ—याने १½, २½ इत्यादि—उत्पन्न हुईं। इससे बचने के लिए नियमरहित एक सम्प्रदाय की सृष्टि हुई है। अर्ध मात्राओं को ३, ५, ७, ९ आदि से गुणित करने के अवसर पर उन अंकों से उन्हें गुणित न करके सब जगह ४ से गुणित करना ही साम्प्रदायिक परम्परा है।

यही संप्रदाय दक्षिण भारत में आज व्यवहार में है। उत्तर भारत में प्रायः चतुष्कला रूप में ताल की सृष्टि १, २, ३, ४ मात्राओं के द्वारा नये नाम से की गयी। इनके साथ फारसी पद्धति में होनेवाले कुछ ताल भी प्रचार में आने लगे। दक्षिण और उत्तर भारत में ताल शास्त्र जो बहुत विस्तृत रूप में था आज बहुत संक्षिप्त बन गया है।

ताल के दस प्राण

१. **काल**—संसार में काल की गणना क्षण[1], लव, कला, त्रुटि या अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत से की जाती है। अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत, काकपाद—

१. ८ क्षण	=	१ लव
८ लव	=	१ काष्ठा
८ काष्ठा	=	१ निमेष
८ निमेष	=	१ कला
२ कला	=	१ त्रुटि या अनुद्रुत
२ त्रुटि या अनुद्रुत	=	१ द्रुत
२ द्रुत	=	१ लघु
२ लघु	=	१ गुरु
३ लघु	=	१ प्लुत

इनके द्वारा ताल में काल का नाप किया जाता है। लघु अक्षर का काल एक मात्रा है। इसलिए अनुद्रुत ¼ मात्राकाल है। द्रुत ½ मात्राकाल है। गुरु २ मात्राकाल है। प्लुत ३ मात्रा और काकपाद चार मात्राकाल है।

भिन्न-भिन्न देशों के अलग-अलग संप्रदायों में मात्राओं का काल एक निमेष से चार पाँच निमेष तक का प्रयोग में आता था। प्राचीन ग्रन्थों में लिखा है कि मार्गताल में अर्थात् प्राचीन शास्त्रसम्मत ताल में एक मात्रा का पाँच निमेष काल है। लघु, गुरु, प्लुत इत्यादि अंगों का कालप्रमाण इस तरह के मात्रा-काल प्रमाण के अनुसार गिना हुआ है। तामिल ग्रन्थों में बताया गया है कि देशी ताल में मात्रा का काल चार निमेषों का है।

२. *अंग*—ताल में काल की गिनती करने के लिए प्रयुक्त किये जानेवाले प्रामाणिक नाप ही अंग कहलाते हैं। इन अंगों से ही हरएक ताल बनाया जाता है। अंगों के नाम अनुद्रुत, द्रुत, द्रुतविराम, लघु, लघुविराम, गुरु, प्लुत, काकपाद (हंसपाद) हैं। द्रुत काल के अंग के साथ उसके आधे भाग को मिलाना द्रुतविराम है। इसी तरह लघु के साथ लघुकाल के आधे भाग को मिलाना लघुविराम[1] है।

अंगों के सांकेतिक चिह्न ये ही हैं—

अनुद्रुत	=	˘ (अर्धचन्द्र)
द्रुत	=	० (पूर्णचन्द्र)
द्रुतविराम	=	ỏ (द्रुत के ऊपर एक आंकडा)
लघु	=	। (बाण)
लघुविराम	=	ˋ। (बाण के ऊपर तिरछी रेखा)
गुरु	=	ऽ (झुका हुआ धनुष)
प्लुत	=	ˋऽ (बिजली)
काकपाद	=	+ (कौए या हंस के पाँव)

इन अंगों को मिलाने का नियम[2]—

१. 'विराम' लघु या द्रुतकाल के प्रयोग करने के बाद सुख भाव के लिए थोड़ी विश्रान्ति के साथ समाप्ति करना है। विराम शब्द का अर्थ ही 'समाप्ति करना' है। लघु या द्रुत के विश्रान्तिकाल के आधे भाग में कुछ कमी भी हो सकती है। इसमें मतभेद भी है। उसके अनुसार लघुविराम में भी विराम का काल पाव मात्रा का ही है।

२. ये नियम 'तालसमुद्र' नामक तामिल ग्रन्थ से लिये गये हैं। संगीत-दर्पण में भी इनका विवरण है, पर इतना विशदतर नहीं है।

विराम—यह अलग नहीं आता; द्रुत या लघु के साथ ही आता है; गुरु और प्लुत के साथ नहीं आता।

काकपाद या हंसपाद—काकपाद अलग, पहले और बीच में; गुरु के आगे या पीछे या प्लुत के साथ नहीं आता; अपितु किसी ताल के अन्तिम भाग में लघु या द्रुत के साथ आता है। लघु, गुरु, प्लुत—ये तीन अलग-अलग या मिलकर और सब जगह आते हैं।

हस्तचेष्टाओं से अंगों की सूचना

द्रुत के लिए चार अंगुलों (३/४ इंच) की ऊँचाई से हाथ का आघात होता है। लघु के लिए ८ अंगुलों की ऊँचाई से हाथ का आघात है। गुरु के लिए ८ अंगुल ऊँचे से आघात करके ८ अंगुल नीचे तक हाथ ले जाना होता है। प्लुत के लिए ८ अंगुल ऊँचे से हाथ का आघात करने के पश्चात् एक हाथ पर प्रदक्षिणा करके नीचे आठ अंगुल ले जाना होता है। काकपाद के लिए ऊपर-नीचे और दाहिनी-बायीं ओर हाथ दिखाना पड़ता है। शब्द न होने के कारण काकपाद का नाम निःशब्द भी है।

नामों के पर्यायवाची शब्द

अनुद्रुत—अणु, अर्धचन्द्र, करज, अर्धबिन्दु, अर्धद्रुत, अंकुश, धन्।

द्रुत—बिन्दु, व्यञ्जन, शून्य, द्रु, द्रुत, अर्धमात्र, सुवृत्त, आकाश, उत्तम, ख, कूप, वलय।

लघु—व्यापक, सरल, ह्रस्व, शर, दण्ड, ल, मात्रिक, द्यौ, लमेरु, बाण।

गुरु—दीर्घ, वक्र, द्विमात्र, पूज्य, ग, कला[1], केयूर, नूपुर, हार, ताटङ्क, कंकण।

प्लुत—त्रिमात्रा, सामज, शृङ्गी, प्लुत, दीप्त, त्र्यङ्ग, सामोद्भव, तारस्थान।

काकपाद—हंसपाद, निःशब्द, स्वस्तिक।

३. **क्रिया**—ताल की आनन्दजनक शक्ति क्रिया में है। क्रिया दो प्रकार की है—सशब्द क्रिया और निःशब्द क्रिया। सशब्द क्रिया चार प्रकार की है—ध्रुवा, शम्पा, ताल और सन्निपात। निःशब्द क्रिया चार प्रकार की है—आवाप, निष्काम, विक्षेप, प्रवेशक। सशब्द क्रिया का दूसरा नाम 'पात' है। निश्शब्द क्रिया का पर्याय 'कला' है।

१. 'कला' शब्द ताल शास्त्र में तीन अर्थों में प्रयोग किया जाता है—(१) दो मात्रा या गुरु का नाम (२) तालों के रूप का वर्धन करने के लिए हरएक अंग को दुगुना, तिगुना, चौगुना करने का एक कला, द्विकला, चतुष्कला आदि में प्रयोग है। (३) निश्शब्द क्रिया का नाम है।

सशब्द क्रिया—(१) ध्रुवा—चुटकी बजाने का शब्द है, (२) शम्पा—दाहिने हाथ के द्वारा आघात का नाम है, (३) ताल—बायें हाथ को ऊँचा करके उसके द्वारा आघात करने का नाम है, (४) सन्निपात—दोनों हाथों के परस्पर आघात का नाम है।

निश्शब्द क्रिया—आवाप—हाथ को ऊपर उठाकर अंगुलियों को कुञ्चित करने का नाम 'आवाप' है। फिर हथेली को अधोमुख रखकर ही अंगुलियों को फैलाने का नाम 'निष्क्राम' है। हथेली ऊपर करके अंगुलियों को फैलाकर दाहिनी ओर हाथ ले जाने का नाम 'विक्षेप' है। हथेली को अधोमुख करके अंगुलियों को कुञ्चन करने का नाम 'प्रवेश' है।

४. **मार्ग**—गुरु का नाम है कला। कला का कालप्रमाण विभिन्न देशों और संप्रदायों में भिन्न-भिन्न रूप में है। इस कलाप्रमाण के भेदों से भिन्न होने का नाम 'मार्ग' है। मार्ग के तीन प्रकार 'नाटचशास्त्र' में दिये गये हैं—'चित्र, वार्त्तिक और दक्षिण।' चित्र मार्ग में कला की दो मात्राएँ हैं। वार्त्तिक मार्ग में कला की चार मात्रा हैं। दक्षिण मार्ग में कला की ८ मात्राएँ हैं। 'संगीत रत्नाकर' में 'ध्रुव' नामक मार्ग भी कहा गया है। इसमें कला की मात्रा एक है।

'मार्ग दर्पण' नामक ग्रन्थ से उद्धृत भाग, 'संगीत दर्पण' में है। उसके द्वारा निर्दिष्ट प्रकार—'चित्रतर, चित्रतम, अतिचित्रतम, चतुर्भाग, त्रुटि, अनुत्रुटि, घर्षण, अनुघर्षण और स्वर' हैं। उनमें 'चित्रतर' मार्ग ही 'ध्रुवमार्ग' है। इसमें भी कला की मात्रा एक है। 'चित्रतम' में कला की मात्रा आधी है। 'अतिचित्रतम' में कला का मात्राकाल पाव है। 'चतुर्भाग' की मात्रा $\frac{१}{८}$ है। त्रुटि में कला का मात्राकाल $\frac{१}{१६}$ है। अनुत्रुटि में $\frac{१}{३२}$ मात्रा है। घर्षण में $\frac{१}{६४}$ मात्रा है और अनुघर्षण में $\frac{१}{१२८}$ मात्रा है। स्वर में कला का मात्राकाल $\frac{१}{२५६}$ मात्रा है।

'देशी पद्धति' में कला की हरएक मात्रा की प्रत्येक क्रिया भी बतायी गयी है जिसका नाम 'देशी क्रिया' है। मात्राओं का नाम भी दिया गया है। पहली मात्रा का नाम 'ध्रुवका' है। इसका सशब्द उच्चारण होता है। दूसरी मात्रा का नाम 'सर्पिणी' है। इसकी क्रिया बाईं तरफ हाथ फैलाना है। 'कृष्या' तीसरी मात्रा का नाम है। इसमें हाथ को नीचे लाना है। 'विसर्जिता' में हाथ को बाहर लाना है। विक्षिप्ता में 'कुञ्चन' करना है। 'पताका' में ऊपर ले जाना। 'पतिता' हाथ से आघात करने का नाम है।

'चित्र' मार्ग में 'ध्रुव' और 'पतिता' के प्रयोग हैं। वार्त्तिक मार्ग में ध्रुवा, सर्पिणी, विक्षिप्ता और पताका के प्रयोग हैं। दक्षिण मार्ग में आठ मात्राओं की क्रिया का भी प्रयोग है। सशब्द क्रिया का प्रयोग करते समय ही इनका विनियोग है। क्योंकि

निश्शब्द क्रिया-प्रयोगों में इन मात्राओं की निश्शब्द क्रियाएँ खलबली मचा देती हैं।

५. जाति—ताल की जाति नाट्यशास्त्र और संगीतरत्नाकर में दो प्रकार की बतायी गयी है—त्र्यश्र और चतुरश्र। चतुरश्र ताल चच्चत्पुट है। त्र्यश्रताल चाचपुट है। उनका अंग विभाग नामाक्षरों से ही प्रतीत होता है।

चच्चत्पुट का अंग चत्+चत्+पु+टम्[1] (गुरु, गुरु, लघु, प्लुतम् ऽ ऽ । ऽ̀) है। अनुस्वारान्त अन्तिम भाग को प्लुत करना है। चाचपुट का अंग (गुरु, लघु, लघु, गुरु ऽ ।। ऽ)। इससे प्रतीत होता है कि जाति, ताल के अन्तर्गत गति है; क्योंकि 'चच्चत्पुट' में चतुरक्षर के दो भाग हैं। पहले भाग में दो-दो अक्षर मिलकर चतुरक्षर बना हुआ है। दूसरे भाग में एक और तीन अक्षर, मिलकर चार अक्षर बन गये हैं। ताल चार-चार पद रख कर चलता है। इस तरह रखने में भी दो प्रकार हैं। इस बात को चच्चत्पुट हमें समझा देता है कि चार पद रखकर चलने में भी दो प्रकार हैं। चाचपुट तीन-तीन अक्षरों से बनाया हुआ है। पहले भाग में दो और एक अक्षर मिलकर दूसरे भाग में एक और दो अक्षर मिलकर तीन अक्षर हुए हैं।

चतुरश्र और त्र्यश्र जाति को मिलाकर एक नयी गतिवाली जाति 'मिश्र' नाम से उत्पन्न हुई है। उस जाति का उदाहरण 'षट्पितापुत्रक' ताल है। उस ताल में आदि और अन्त में प्लुत है। बाकी नामाक्षर के प्रकार गुरु-लघु हैं। ताल का रूप ऐसा है—(ऽ̀ । ऽ ऽ । ऽ̀) मिलकर १२ मात्राएँ हैं। इन १२ मात्राओं को तीन-तीन या चार-चार मात्राओं में बाँट सकते हैं। इसलिए इस जाति का नाम 'मिश्र' है।

'जाति' शब्द का यह अर्थ और प्रयोग 'अंधयुग' में विस्मृत हो गये और जाति शब्द नये अर्थ में प्रयोग में आने लगा। लघु के अक्षरकाल या मात्राकाल का नाम 'जाति' हो गया। लघु के तीन मात्राकाल रहे तो उस ताल को त्र्यश्र जाति कहते हैं। ४ मात्राएँ हों तो चतुरश्र जाति, पांच मात्राएँ हों तो खण्डजाति, सात मात्राएँ हों तो मिश्रजाति और नौ मात्राएँ हों तो संकीर्ण जाति कहते हैं। इस तरह कर्नाटक पद्धति में बचे हुए सात तालों से ३५ ताल बना दिये गये हैं।

६. कला—कला शब्द का अर्थ है 'भाग'। ताल शास्त्र में यह शब्द तीन अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। एक कालप्रमाण का नाम है। इस अर्थ में कला ही गुरु है। आदिकाल में चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, सम्यक्वेष्टाक, उद्घट्ट नामक पांच ताल ही थे। हरएक ताल के अंग को दुगुना, चौगुना और अठगुना करके नये तालों की कल्पना किया करते थे। इनको द्विकल, चतुष्कल, अष्टकल इत्यादि नाम

१. संयुक्ताक्षर के पहले होनेवाला लघु अक्षर गुरु हो जाता है ('संयोगे गुरु')।

दिये गये। आदि काल म कलावृद्धि का यही नियम था। चतुरश्रजाति ताल में अर्थात् चच्चत्पुट में एक कल, द्विकल, चतुष्कल आदि तीन ही रूप थे। त्र्यश्र जाति में अर्थात् चाचपुट में त्रिकल, षट्कल, द्वादशकल, चतुर्विंशतिकल, अष्टाचत्वारिंशत्कल, षण्णवतिकल आदि तक कला वृद्धि की जाती थी। यह नियम तालप्रबन्धों में उपयोग में था। आजकल दक्षिण और उत्तर भारत में व्यवहृत हरएक त.ल का एककल,द्विकल, चतुष्कल इत्यादि प्रयोग करते हैं। अष्टकल भी त.लशास्त्र विशारदों के द्वारा प्रयुक्त किया जा रहा है।

७. **ग्रह**—गीत का आरम्भ और ताल का आरम्भ दोनों समकाल या आगे या पीछे होना संगीत सम्प्रदाय में व्यवहृत है। इस व्यवस्था का नाम 'ग्रह' है। गीत और ताल समकाल में आरम्भ हों तो उसका नाम 'समग्रह' है। गीत आरम्भ होने के बाद अर्थात् अतीत होने के बाद ताल आरम्भ हो तो इसका नाम 'अतीतग्रह' है। गीत आरम्भ होने के पहले अर्थात् अनागत में ताल शुरू हो तो उसका नाम 'अनागत-ग्रह' है। अनियम रूप से ताल और गीत शुरू हो तो उसका नाम 'विषमग्रह' है। इनके पर्य्याय नाम क्रमश: समपाणि, अवपाणि, उपरिपाणि और विषमपाणि हैं। दूसरे पर्य्याय नाम ताल, विताल, अनुताल और प्रतिताल हैं।

८. **लय**—दो क्रियाओं के बीच में रहनेवाले अवकाश का 'लय' नाम है। साधारणतया कहें तो 'लय' ही ताल और गीत का वेग है। 'लय' विलम्ब, मध्य और द्रुत—इन तीनों प्रकार के हैं। विलम्ब का दुगुना वेग 'मध्यलय' है। मध्यलय का दुगुना वेग 'द्रुतलय' है।

९. **यति**—द्रुत, मध्य आदि विविध लयों को सुन्दर रूप में मिलाने का मार्ग ही 'यति' है। इसमें पांच प्रकार हैं।

(१) समयति—आदि, मध्य और अन्त सब जगह में एक ही प्रकार का लय रहे तो इसका नाम 'समयति' है।

(२) स्रोतोगता (नदी के प्रवाहस्वरूप)—विलम्ब, मध्यद्रुत—इस क्रम में लयों को मिलायें तो इसका नाम स्रोतोगता है।

(३) मृदङ्गयति—इसमें तीन प्रकार हैं—(अ)आदि और अन्त में द्रुतगति और मध्य में विलम्ब गति (आ) आदि और अन्त में द्रुतगति और मध्य में मध्यगति (इ) आदि और अन्त में मध्यगति और मध्य में विलम्ब गति।

(४) पिपीलिका यति (चींटी का रूप)—आदि और अन्त में विलम्ब, मध्य में द्रुतगति। आदि और अन्त में मध्यलय और मध्य में द्रुतलय। आदि और अन्त में विलम्ब और मध्य में मध्यलय।

(५) गोपुच्छा यति—द्रुत, मध्य और विलम्ब इस क्रम में लयों को मिलाना या द्रुत और मध्य, मध्य और विलम्ब—यही गोपुच्छा यति है।

१०. **प्रस्तार**—हरएक ताल के कई अंग हैं। इन अंगों के कालप्रमाणों को मिलाने से ताल का पूरा कालप्रमाण प्राप्त होता है। इसी पूरे कालप्रमाण को रखकर भिन्न-भिन्न रूप से अंगों का जोड़ना साध्य है। इस तरह भिन्न-भिन्न रूप से किये जाने-वाली अंग कल्पना का मार्ग 'प्रस्तार' है। प्रस्तार में यह रूप-कल्पना क्रम से की जाती है। क्रम का लाभ यह है कि सब रूपों की कल्पना निश्चयपूर्वक साध्य होती है। दूसरा प्रयोजन एक ही प्रकार के रूप को बार-बार न आने देना है।

प्रस्तार, चतुरङ्ग प्रस्तार, षडङ्ग प्रस्तार—इत्यादि हैं। चतुरङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघु, द्रुत—इन चार अंगों से ही प्रस्तार करना होता है। षडङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघुविराम, लघु, द्रुतविराम, द्रुत—इन छः अंगों से प्रस्तार करना होता है। प्रस्तार का क्रम ऐसा है—

१. प्रथमतः ताल का पूरा कालप्रमाण यथासम्भव बड़े अंगों से जोड़ लेना है।

२. दाहिनी ओर बड़ा अंग, बायीं ओर छोटा अंग—इस क्रम में लिखना चाहिए। तब दाहिनी ओर से देखें तो क्रमशः छोटे-छोटे अंग रहते हैं। यह पहला प्रस्तार है।

३. दूसरा प्रस्तार लिखने का क्रम यह है—ऊपरी प्रस्तार के अंगों में से सब से छोटे अंग के नीचे उससे छोटा अंग हो, तो उसको लिखना चाहिए, अगर नहीं, तो इसके निकट के बड़े अंग के नीचे उससे छोटे अंग को लिखना चाहिए। उसके बाद उस अंग की दाहिनी ओर रहनेवाले ऊपरी अंगों को ज्यों का त्यों नीचे भी लिखना चाहिए। अब लिखे हुए सब अंगों को जोड़कर देखने पर पूर्ण कालप्रमाण की कमी होती हो तो पूरक अंग के बायीं ओर यथासम्भव बड़े अंगों से ही पूर्ति करनी चाहिए। इसमें भी पूरक अंगों का क्रम बड़े अंग के बायीं ओर ही छोटे अंग को लिखकर रखना चाहिए। इसी प्रकार तीसरे आदि अन्य प्रस्तारों को भी लिखना है। सर्वद्रुत होने के बाद प्रस्तार की पूर्ति समझनी चाहिए।

उदाहरणार्थ—

काल प्रमाण	**प्रस्तारों का रूप और संख्या**
१. एक द्रुत काल	o[1] एक ही प्रस्तार साध्य है।
२. एक लघु प्रमाण काल	। पहला प्रस्तार
	o o दूसरा प्रस्तार = प्रस्तार = २

१. प्रत्येक प्रस्तार में पहले लेखनीय अंग नीचे रेखांकित दिखाये गये हैं।

३. एक द्रुत और एक लघु

o ।_ पहला प्रस्तार
। o̱ दूसरा प्रस्तार
o o̱ o तीसरा प्रस्तार = प्रस्तार = ३

४. एक गुरु प्रमाण काल

S̱ पहला प्रस्तार
। ।̱ दूसरा प्रस्तार
o o̱ । तीसरा ,,
o । o̱ चौथा ,,
। o̱ o पांचवाँ ,,
o o̱ o o छठा ,, = प्रस्तार = ६

५. एक द्रुत और एक गुरु प्रमाणकाल

o S̱ पहला प्रस्तार
o । ।̱ दूसरा ,,
। o̱ । तीसरा ,,
o o̱ o । चौथा ,,
S o̱ पांचवाँ ,,
। ।̱ o छठा ,,
o o̱ । o सातवाँ ,,
o । o̱ o आठवाँ ,,
। o̱ o o नवाँ ,,
o o̱ o o o दसवाँ ,, = प्रस्तार = १०

६. एक प्लुत प्रमाण काल

S̱̀ पहला प्रस्तार
। S̱ दूसरा ,,
o o̱ S तीसरा ,,
S ।̱ चौथा ,,
। ।̱ । पांचवाँ ,,
o o̱ । । छठा ,,
o । o̱ । सातवाँ ,,
। o̱ o । आठवाँ ,,
o o̱ o o । नवाँ ,,

ο ऽ ο̣ दसवाँ प्रस्तार
ο । ।̣ ο ग्यारहवाँ ,,
। ο̣ । ο बारहवाँ ,,
ο ο̣ ο । ο तेरहवाँ ,,
ऽ ο̣ ο चौदहवाँ ,,
। ।̣ ο ο पन्द्रहवाँ ,,
ο ο̣ । ο ο सोलहवाँ ,,
ο । ο̣ ο ο सत्रहवाँ ,,
। ο̣ ο ο ο अठारहवाँ ,,
ο ο̣ ο ο ο ο उन्नीसवाँ ,, = प्रस्तार = १९

१०८ ताल

१. चच्चत्पुटम् —ऽ ऽ । ऽ = (८)
२. चाचपुटम् —ऽ । । ऽ = (६)
३. षट्पितापुत्रकम् —ऽ । ऽ ऽ । ऽ = (१२)
४. सम्पक्वेष्टाकम् —ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ = (१२)
५. उद्धट्टम्—ऽ ऽ ऽ = (६)
६. आदिताल —। = (१)
७. दर्पणताल —ο ο ऽ = (३)
८. चच्चरी —ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । ο ऽ । = (१८)
९. सिंहलीला —। ο ο ο । = (३½)
१०. कन्दर्प —ο ο । ऽ ऽ = (६)
११. सिंहविक्रम —ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ = (१६)
१२. श्रीरङ्ग —। । ऽ । ऽ = (८)
१३. रतिलील —। । ऽ ऽ = (६)
१४. रङ्गताल —ο ο ο ο ऽ = (४)
१५. परिक्रम —ο ο । । ऽ = (५)
१६. प्रत्यङ्ग —ऽ ऽ ऽ । । = (८)
१७. गजलीला —। । । । = (४½)
१८. त्रिभिन्न —। ऽ ऽ = (६)
१९. वीरविक्रम —। । ο ο ऽ = (५)

२०. हंसलील —ऀ। ऀ। = (२½)
२१. वर्णभिन्न —ऽ । ० ० = (४)
२२. राजचूड़ामणि —० ० । । । ० ० । ऽ = (८)
२३. रङ्गद्योतन —ऽ ऽ ऽ । ऀऽ = (१०)
२४. राजताल —० ऀऽ ० ० ऽ । ऀऽ = (१९)
२५. सिंहविक्रीडितम् —। ऀऽ ऽ । ऀऽ ऽ ऀऽ । ऀऽ = (१९)
२६. वनमाली —० ० ० ० । । ० ० ऽ = (७)
२७. चतुरश्रवर्ण —ऽ । । ० ० ऽ = (७)
२८. त्र्यश्रवर्ण —। ० ० । । ऽ = (६)
२९. मिश्रवर्ण —० ० δ ० ० δ ० ० δ ० ० δ = (७)
३०. वर्णताल — δ ० ० ० ० ० । । । । । । । । । ० ० δ = (१५)
३१. खण्डवर्णताल —ऀऽ ऀऽ ऽ ० ऽ ऽ । ऽ = (१५½)
३२. रङ्गप्रदीप —। । ऽ ऽ ऀऽ = (९)
३३. हंसनाद —। ऀऽ ० ० ऀऽ = (८)
३४. सिंहनाद —। ऽ ऽ । ऽ = (८)
३५. मल्लिकामोद —। । ० ० ० ० = (४)
३६. शरभलील —। ० । ० । ० । ० । । = (८)
३७. रङ्गाभरण —ऽ ऽ । । ऀऽ = (९)
३८. तुरङ्गलील —० ० । = (२)
३९. सिंहनन्दन —ऽ ऽ । ऽ । ऽ ० ० ऽ ऽ । ऀऽ । ऽ ऽ । । + = (३२)
४०. जयश्री —ऽ । ऽ । ऽ = (८)
४१. विजयानन्द —। । ऽ ऽ ऽ = (८)
४२. प्रतिताल —। । ० ० = (३)
४३. द्वितीयक —० ० । = (२)
४४. मकरन्द —० ० । । । ऽ = (६)
४५. कीर्तिताल —। ऽ ऀऽ ऽ । ऀऽ = (१२)
४६. विजयताल —ऀऽ ऽ ऀऽ ऽ = (१०)
४७. जयमङ्गल —। । ऽ । । ऽ = (८)
४८. राजविद्याधर —। ऽ ० ० = (४)

४९. मंठ (मठ्य) ताल—। । ऽ । । । । = (८)
५०. नेत्रमंठ —ऽ ऽ । ऽ ऽ + = (१३)
५१. प्रतिमंठ —। । । । ऽ । । = (८)
५२. जयताल —। ऽ । । । ० ० ऽ̀ = (१०)
५३. कुडुक्क —० ० । । = (३)
५४. निस्सारुक —। ।̀ = (२$\frac{१}{४}$)
५५. निस्सानुक —। । ऽ ऽ । । = (८)
५६. क्रीड़ाताल —० δ = (१$\frac{१}{४}$)
५७. त्रिभङ्गी —। । ऽ ऽ = (६)
५८. कोकिलप्रिय —ऽ । ऽ̀ = (६)
५९. श्रीकीर्तिताल —ऽ ऽ । । = (६)
६०. बिन्दुमाली —ऽ ० ० ० ० ऽ = (६)
६१. नन्दन —। । ० ० ऽ̀ = (६)
६२. श्रीनन्दन —ऽ ० ० ऽ = (५)
६३. उद्वीक्षण —। । ऽ = (४)
६४. मंठिकाताल —ऽ ० ऽ̀ = (५$\frac{१}{२}$)
६५. आदि मठ्य —। । ।̀ ।̀ = (४$\frac{१}{२}$)
६६. वर्ण मठ्य —। । ० ० । ० ० = (५)
६७. ढेङ्कीताल —ऽ । ऽ = (५)
६८. अभिनन्दन —। । ० ० ऽ = (५)
६९. नवक्रीड —० δ = (१$\frac{१}{४}$)
७०. मल्लताल —। । । । ० δ = (५$\frac{१}{४}$)
७१. दीपक —० ० । । ऽ ऽ = (७)
७२. अनङ्गताल —। ऽ̀ । । ऽ ऽ̀ = (११)
७३. विषमताल —० ० ० δ ० ० ० δ = (४$\frac{१}{२}$)
७४. नान्दीताल —। ० ० । । ऽ ऽ = (८)
७५. मुकुन्दताल —। ० ० । ऽ = (५), । ० ० ० ० ऽ = (५)
७६. कर्षुक —। । । । ऽ = (६)
७७. एकताल —० = ($\frac{१}{२}$)
७८. पूर्णकंकाल —० ० ० ० ऽ । = (५)

७९. खण्डकंकाल —० ० ऽ ऽ = (५)
८०. समकंकाल —ऽ ऽ । = (५)
८१. असमकंकाल —। ऽ ऽ = (५)
८२. झोंबड —। । ˋ। = (३$\frac{१}{४}$)
८३. पणताल —। ० । = (२$\frac{१}{२}$)
८४. अभङ्गताल —। ˋऽ = (४)
८५. रायरङ्गाल —ऽ । ऽ ० ० = (७)
८६. लघुशेखर —ˋ। = (१$\frac{१}{४}$)
८७. द्रुतशेखर —δ = ($\frac{३}{४}$)
८८. प्रतापशेखर —ˋऽ ० ˋऽ = (४$\frac{१}{४}$)
८९. गजझम्पा —ऽ ० δ = (३$\frac{१}{४}$)
९०. चतुर्मुखताल —। ऽ । ˋऽ = (७)
९१. झंपाताल —० δ । = (२$\frac{१}{४}$)
९२. प्रतिमठ्य —। । ऽ ऽ । । = (८)
९३. तृतीयताल —। । ० ० δ = (३$\frac{३}{४}$)
९४. वसन्त —। । । ऽ ऽ ऽ = (९)
९५. ललित —० ० । ऽ = (४)
९६. रतिताल —। ऽ = (३)
९७. करणताल —० ० ० ० = (२)
९८. षट्ताल —० ० ० ० ० ० = (३)
९९. वर्धन —० ० । ˋऽ = (५)
१००. वर्णताल —। । ˋऽ ˋऽ = (८)
१०१. राजनारायण —० ० । ऽ । ऽ = (७)
१०२. मदनताल —० ० ऽ = (३)
१०३. पार्वतीलोचन —० ० । । ० ० ऽ ऽ । । । । ऽ । । = (१६)
१०४. गारुगी —० ० ० δ = (२$\frac{१}{४}$)
१०५. श्रीनन्दन —ऽ । । ˋऽ = (७)
१०६. जयताल —। ऽ । । ० ० ˋऽ = (९)
१०७. लीलाताल —० । ˋऽ = (४$\frac{१}{२}$)
१०८. विलोकित —। ऽ ऽ ० ० ˋऽ ˋऽ = (१२)

१०९. ललितप्रिय —। । ऽ । ऽ = (७)

११०. जनक —। । । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ = (१४)

१११. लक्ष्मीश —० ० δ । । ऽ̀ ऽ̀ = (९ ३/४)

११२. भद्रबाण[1] —। ० । = (२ १/२)

कर्नाटक पद्धति में प्रचलित ताल

१. ध्रुवताल = ।०।।=लघु, द्रुत, लघु, लघु=३ १/२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल का अक्षर	=	३	+ २	+ ३	+ ३	=	११	अक्षर
चतुरश्रजाति ,, ,,	=	४	+ २	+ ४	+ ४	=	१४	,,
खण्ड जाति ,, ,,	=	५	+ २	+ ५	+ ५	=	१७	,,
मिश्र जाति ,, ,,	=	७	+ २	+ ७	+ ७	=	२३	,,
संकीर्णजाति ,, ,,	=	९	+ २	+ ९	+ ९	=	२९	,,

२. मठ्यताल=।०।=लघु द्रुत, लघु=२ १/२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	३	+ २	+ ३	=	८	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	४	+ २	+ ४	=	१०	,,
खण्ड ,, ,, ,,	=	५	+ २	+ ५	=	१२	,,
मिश्र ,, ,, ,,	=	७	+ २	+ ७	=	१६	,,
संकीर्ण ,, ,, ,,	=	९	+ २	+ ९	=	२०	,,

३. रूपकताल=० । = द्रुत, लघु = १ १/२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	२	+ ३	=	५	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	२	+ ४	=	६	,,
खण्ड ,, ,, ,,	=	२	+ ५	=	७	,,
मिश्र ,, ,, ,,	=	२	+ ७	=	९	,,
संकीर्ण ,, ,, ,,	=	२	+ ९	=	११	,,

४. झंपाताल = । ◡ ० = लघु, अनुद्रुत, द्रुत = १ ३/४ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	३	+ ३	=	६	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	४	+ ३	=	७	,,

१. इन तालों को '१०८ ताल' ही कहते हैं, पर यहाँ ४ ताल अधिक दिये गये हैं। ये ११२ ताल नन्दिकेश्वर कृत नर्तनग्रन्थ 'भरतार्णव' से उद्धृत हैं।

खण्ड	,, ,, ,,	= ५ + ३	= ८	,,
मिश्र	,, ,, ,,	= ७ + ३	= १०	,,
संकीर्ण	,, ,, ,,	= ९ + ३	= १२	,,

५. त्रिपुट ताल=। ० ०=लघु, द्रुत, द्रुत=२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर		= ३ + २ + २	= ७	अक्षर
चतुरश्र	,, ,, ,,	= ४ + २ + २	= ८	,,
खण्ड	,, ,, ,	= ५ + २ + २	= ९	,,
मिश्र	,, ,, ,,	= ७ + २ + २	= ११	,,
संकीर्ण	,, ,, ,,	= ९ + २ + २	= १३	,,

६. अड्डुताल= । । ० ० =लघु, लघु, द्रुत, द्रुत=३ मात्राएँ

त्र्यश्रजाति में ताल अक्षर		= ३ + ३ + २ + २	= १०	अक्षर
चतुरश्र जाति में ताल अक्षर		= ४ + ४ + २ + २	= १२	,,
खण्ड जाति में	,, ,,	= ५ + ५ + २ + २	= १४	,,
मिश्र	,, ,, ,,	= ७ + ७ + २ + २	= १८	,,
संकीर्ण	,, ,, ,,	= ९ + ९ + २ + २	= २२	,,

७. एकताल=।=१ मात्रा

त्र्यश्रजाति में ताल अक्षर		= ३	अक्षर
चतुरश्र	,, ,, ,,	= ४	,,
खण्ड	,, ,, ,,	= ५	,,
मिश्र	,, ,, ,,	= ७	,,
संकीर्ण	,, ,, ,,	= ९	,,

हरएक जाति में अंग सशब्द और निःशब्द क्रियाओं से गिने जाते हैं। लघु को एक शंपा के बाद बाकी अक्षरों का अंगुलियों के पातन से गणन करते हैं। द्रुत को एक शंपा के बाद एक विक्षेपकर के गिनते हैं। अनुद्रुत को एक शंपा से गिनते हैं।

हरएक ताल में एक या दो जाति ही प्रायः व्यवहार में हैं।

ध्रुवताल में चतुरश्रजाति (४ + २ + ४ + ४ = १४ अक्षर) व्यवहार में हैं।
मठ्य ,, ,, (४ + २ + ४ = १० ,,) ,,
रूपक ,, ,, (२ + ४ = ६ ,,) ,,
झंपा ,, मिश्र ,, (७ + १ + २ = १० ,,) ,,
त्रिपुट ,, चतुरश्र (४ + २ + २ = ८) और त्र्यश्र (३ + २ + २ =७) जाति व्यवहार में है

इस ताल में चतुरश्रजाति को 'आदिताल' कहते हैं।
,, त्र्यश्र ,, त्रिपुट ,, ,,
अट्ठ ,, खण्ड ,, (५ +५ + २ + २=१४ अक्षर अमल में हैं)
एक ,, चतुरश्र ,, ४ अक्षर ,, ,,

कभी-कभी त्र्यश्रजाति के लघु को दो शंपा और एक विक्षेप से गिनते हैं उसको 'चापु' कहते हैं। इस तरह प्रयोग में त्र्यश्रजाति रूपकताल (२+ ३=५अक्षर) प्रसिद्ध हैं। इसलि त्र्यश्रजाति रूपकताल को 'चापुताल' कहते हैं।

तालों का अभ्यास मार्ग

व्यवहार में रहनेवाली ताल जातियों का अभ्यास करने के लिये सप्तालंकार नामक 'स्वरवर्णालंकार' बनाये गये हैं।

हिन्दुस्थानी पद्धति के प्रचलित तालों का विवरण

हिन्दुस्थानी पद्धति में तालों के अंगों पर ज्यादा ध्यान न देकर तालों की मात्राओं और तालों में 'पात' एवं 'खाली' की जगह और ठेके एवं बोल पर अधिक ध्यान दिया जाता है। प्रचलित मुख्य ताल ये हैं—

१. त्रिताल[1]—मात्रा १६

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
ना	धीं	धीं	ना	ना	धीं	धीं	ना	ना	तीं	तीं	ना	ना	धीं	धीं	ना
पा				पा				खा				पा			

१. प्राचीन सूडादि सप्ततालों में त्रिपुटा एक है। 'त्रिपुटा' 'तिवटा' होकर 'त्रिताल' हो गया है। त्रिपुट के अंग '००।' हैं। चतुरश्रजाति त्रिपुट ताल ८ अक्षर काल से युक्त है। उसे दक्षिण के संप्रदाय में आदि ताल कहते हैं। इसमें हरएक अक्षर

२. एक ताल[1]—मात्रा १२
चार पात और दो खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
धीं	धीं	धागे	त्रक	तू	ना	क	त्ता	धागे	त्रक	धीं	ना
पा		खा		पा		खा		पा		पा	

३. चौताल[2]—मात्रा १२
चार पात और दो खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
धा	धा	धीं	ता	किट	धा	धीं	ता	किट	कत	गदी	गन
पा		खा		पा		खा		पा		पा	

४. आड़ा चौताल[3]—मात्रा १४
चार पात और तीन खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धी	तृक	धी	ना	तू	ना	क	त्ता	धि	धिं	ना	धिं	धिं	ना
पा		पा		खा		पा		खा		पा		खा	

को दुगुना करके हिन्दुस्थानी संप्रदाय में १६ मात्राएँ बनायी गयी हैं। पर पात का स्थान प्राचीन अंगों का अनुसरण करता है। दोनों द्रुतों के लिए दो पात और एक लघु के लिए तीसरा पात और एक खाली।

१. एक ताल का प्राचीन अंग एक लघु है। उसकी त्र्यश्रजाति में ३ मात्राएँ हैं। हरएक मात्रा को चौगुनी करके पहली दो मात्राओं के लिए दो पात और तीसरी मात्रा को दो पात दिये गये हैं। इसी रीति से एक ताल का निर्माण हुआ है।

२. चौताल प्राचीन अड्डताल से उत्पन्न हुआ है। अड्डताल के अंग ।। ०० हैं। इसकी चतुरश्रजाति में ४+४+२+२ = १२ मात्राएँ हैं। पर अंगों का अनुसरण करके पात दिये गये हैं। हरएक लघु का एक पात और एक खाली और हरएक द्रुत का एक पात दिया गया है।

३. कर्नाटक संप्रदाय में अड्डताल की खण्डजाति और ध्रुवताल की चतुरश्र-जाति प्रायः प्रयोग में है। दोनों की मात्राएँ १४ हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति के आडाचौताल नामक ताल में अड्डताल के अनुसार ५ + ५ + २ + २ इस प्रकार विभाग न करके २ + ४ + ४ + ४—ऐसा विभाग किया गया है।

५. झपताल[१]—मात्रा १०
तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
धी	ना	धी	धी	ना	तीं	ना	धा	धा	नां
पा		पा			खा		पा		

६. रूपकताल[२]—मात्रा ७
तीन पात

१	२	३	४	५	६	७
ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना
पा			पा		पा	

७. दादरा[३]—मात्रा ६
दो पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	
धा	गे	ना	धा	तो	ना	
पा		पा	खा			संप्रदाय १

१	२	३	४	५	६	
धी	ग	ना	ना	तु	न्ना	
पा		पा		खा		संप्रदाय २

१	२	३	४	५	६	
धा	धी	ना	धा	ती	ना	संप्रदाय ३

१. झपताल के प्राचीन अंग । ०० हैं । कर्नाटक संप्रदाय के अनुसार मिश्रजाति झम्पताल की ७+२+१=१० मात्राएँ हैं । अंगों के अनुसार करें तो तीन पात होते हैं । पर इन तीनों पातों के विनियोग में हिन्दुस्थानी पद्धति में कुछ अन्तर है ।

२. रूपकताल के प्राचीन अंग ० । हैं । खण्डजाति में इसके २+५=७ अक्षर हैं । अंगों का अनुसरण करें तो दो पात ही होते हैं । पर यहाँ लघु के दो पात और द्रुत का एक पात दिया गया है ।

३. इनमें पहले दोनों संप्रदायों में मात्रा और पात व खाली के स्थान समान हैं । पर ताल की मात्राओं का 'पाद भाग' करने में अन्तर है । प्राचीन काल से ताल की मात्राओं का कई पादों जैसा विभाग करने की परम्परा थी, उसका नाम 'पाद भाग' है । दादरे

८. धमार—मात्रा १४

तीन पात

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
ता	धे	ऽ	धे	ऽ	धा	ऽ	त	कि	ट	कि	ट	त	क
पा					पा			पा					संप्रदाय—१

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
ता	धे	ऽ	धे	ऽ	धा	ऽ	त	धि	न	दि	न्न	धा	ऽ
पा					पा			पा				खा.	संप्रदाय—२

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धा	ऽ	ऽ	धि	ट्ट	धा	ऽ	ग	द्दि	न्न	ति	ट्ट	ता	ऽ
पा					पा					पा		खा.	संप्रदाय—२

तीसरे प्रकार के बोल

२	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धी	न	ती	न	ता	ऽ
पा					पा					पा		खा.	संप्रदाय—२

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धी	न	ता	न	धा	ऽ
पा					पा		खा			पा			संप्रदाय—३

९. कहरवा—मात्रा ४

एक पात और एक खाली

१	२	३	४
धागे	नाते	नक	धा ऽ
पा		खा	

में पहले संप्रदाय में तीन-तीन मात्राओं के दो पाद हैं। दूसरे संप्रदाय में दो-दो मात्राओं के तीन पाद हैं। तीसरे संप्रदाय में पाद भाग पहले संप्रदाय के समान है। परन्तु पात व खाली में अन्तर है। पहले संप्रदाय में २ पात और एक खाली है। तीसरा संप्रदाय एक पात और एक खाली है।

१०. झूमरा—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	धी	न	ती	न	ता	ऽ
पा			पा				खा			पा			

संप्रदाय—१

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	धातृ	कट	धि	धि	धागे	तृकट	ति	तातृ	कट	धि	धि	धागे	तृकट
पा			पा				खा			पा			

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धा	तृक	धि	धि	धा	गि	तृक	धि	तातृक	धि	ता	गि	तृक	ति
पा				पा			खा			पा			

संप्रदाय—२

११. दीपचंदी—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	ऽ	धि	ऽ	धा	गे	ति	ति	ऽ	ति	ऽ	धा	गे	ति
पा				पा			खा				पा		

संप्रदाय—१

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	धि	ऽ	धातृ	कट	तू	ना	कत्ति	ऽ	धा	तृकट		तू	ना
पा			पा				खा		पा				

संप्रदाय—२

१२. धीमा तिताल—मात्रा १६

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धा	तृक	धा	धी	ना	धी	नि	ति	ता	तृक	धा	धी	ना	धी	धिं	धिं
पा				पा				खा				पा			

पंजाबी ठेका

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धी न	धी	न	धा	धी न	धी	न	धा	ती न	ती	न	ता	धी	न	धीन	धा
पा				पा				खा				पा			

१ २ ३ ४	५ ६ ७ ८	९ १० ११ १२	१३ १४ १५ १६
तक्कधिं – धा	तक्कधिं – धा	तक्कतिं – ता	तक्कधि – धा
पा	पा	खा	पा

१३. फरोदस्त—मात्रा १३

पाँच पात और एक खाली

१ २	३ ४	५ ६	७ ८ ९	१० ११	१२ १३
धा ऽ	धिन्ना	धिन्ना	धिंधिन्ना	तिटिकित	गदि गन
पा	पा	पा	पा	पा	खा

१४. सूरफ़ाख्ता[1] (उसूले फ़ाख्ता)—मात्रा १०

तीन पात और दो खाली

१ २	३ ४	५ ६	७ ८	९ १०	
धा गी	तिट	धा गी	धागी	तीट	
पा	खा	पा	पा	खा	संप्रदाय—१

१ २	३ ४	५ ६	७ ८	९ १०	
धिंधिं	ना तू	ना क	त्ता धा	ती ना	
पा	पा	खा	पा	खा	संप्रदाय—२

१५. गजल का ठेका—मात्रा ९

दो पात

१ २ ३ ४	५ ६ ७ ८ ९
तिं ऽ त क	धिं ऽ ना ना ऽ
पा	पा

१६. होरी का ठेका—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१ २ ३	४ ५ ६ ७	८ ९ १०	११ १२ १३ १४
ना धिं ऽ	ना क धिं ऽ	ना तिं ऽ	ना क धिं ऽ
पा	पा	खा	पा

१. प्राचीन सालगसूड के मंठ या मठयताल के अंग '।०।' हैं। चतुरश्र जाति में ४+२+४=१० अक्षर हैं। अंगों का अनुसरण करके यहाँ हरएक लघु के लिए एक पात और खाली तथा द्रुत के लिए एक पात दिया गया है।

नवाँ परिच्छेद

प्रकीर्णक अध्याय

इस अध्याय में संगीत शास्त्र से सम्बद्ध प्रकीर्ण विषय बताये गये हैं।

वाग्गेयकार और उनके लक्षण

'वाक्' या 'मातु' गीत साहित्य में शब्दों का नाम है। 'गेय' या 'धातु' गान के प्रकार का नाम है। इन दोनों में जो निपुण हैं वे ही 'वाग्गेयकार' कहे जा सकते हैं। शब्द-शास्त्र-ज्ञान, गानशास्त्र एवं वाद्य शास्त्र का ज्ञान, विविध भाषा-ज्ञान, मधुर-शारीर, नूतन साहित्य रचना करने में निपुणता इत्यादि में सामर्थ्य की कमी हो तो उन वाग्गेयकारों को मध्यम कहते हैं। 'मातु' में समर्थ और धातु में असमर्थ हो तो 'अधम' कहलाता है। दूसरे कवियों की रचनाओं पर धातु रचनेवाले का नाम 'कुट्टि-कार' है। प्राचीन संगीत और नवीन संगीत दोनों का ज्ञान जिसे होता है वह 'गान्धर्व' कहलाता है। प्राचीन संगीत का ज्ञान-मात्र रखनेवाले का नाम 'स्वरादि' है।

गायकों का लक्षण

शारीर की मधुरता, राग का आरम्भ, राग विस्तार, राग को समाप्त करने का ज्ञान, विविध राग, रागाङ्ग, आदि मार्ग देशी रागों का रूप-भेद ज्ञान, तालबद्ध रूपकों को गाने में निपुणता, आलाप में मनोधर्म शक्ति, तीनों स्थानों में गमक प्रयोग करने की अनायास शक्ति, कण्ठ की वशता, ताल का ज्ञान, अवधान की पूर्णता, श्रम को जीतने की शक्ति, गायकों के जो दोष शास्त्रों में बताये गये हैं उनसे विमुक्त रहना, संप्रदाय-शुद्ध गाने की पद्धति, धारणा शक्ति ये सब गुण उत्तम गायकों के लिए आवश्यक हैं। जो दोष रहित, परंतु कम गुणवाले है, उन्हें 'मध्यम गायक' कहते हैं। दोषयुक्त गायक 'अधम' है।

गायकों के पाँच प्रकार हैं—

१. शिक्षाकार—किसी कमी के बिना शिक्षा देने की शक्ति रखनेवाले का नाम है 'शिक्षाकार'।

२. अनुकार—किसी दूसरे गायक का अनुसरण करनेवाले का नाम 'अनुकार' है।

३. रसिक—गायक जो स्वयं रसानुभव करता है वह 'रसिक' है।

४. रञ्जक—कर्णमधुर गायक का नाम 'रञ्जक' है।

५. भावुक—गीत को आश्चर्यजनक शक्ति के साथ गानेवाला 'भावुक' है।

गायकों में एकल, यमल, वृन्दगायक—ये तीन प्रकार हैं। इन तीनों में 'एकल' आदमी की सहायता के बिना गा सकता है। 'यमल' दूसरे गायक के साथ मिलकर नेवाले का नाम है। 'वृन्द' गायक समुदाय के साथ ही गा सकता है। स्त्री गायकों रूप, यौवन, कण्ठ का माधुर्य, चतुरता—ये सब आवश्यक हैं।

गायकों के दोष

१. सन्दष्ट—दांत पीसकर गानेवाला।
२. उद्‌घृष्ट—स्निग्धतारहित घोषण करनेवाला।
३. सूत्कारी—गाते समय मुँह से साँस छोड़नेवाला।
४. भीत—भय के साथ गानेवाला।
५. शंकित—जल्दी-जल्दी गानेवाला।
६. कंपित—कण्ठ में अनावश्यक कम्पन से युक्त।
७. कराली—भयंकर रूप में मुँह बनाकर गानेवाला।
८. विकल—स्वरों को, नियत श्रुति से ऊँचे और नीचे उच्चारण करनेवाला।
९. काकी—कौए की तरह कर्कश या मधुरता रहित आवाज करनेवाला।
१०. विताल—ताल को छोड़कर गानेवाला।
११. करभ—ऊँट की तरह गले को ऊँचा करके गानेवाला।
१२. उद्भट—बकरी के समान कण्ठ से गानेवाला।
१३. झोंबका—गाते समय गला, मुख इत्यादि की शिराओं को फुलानेवाला।
१४. तुंबकी—गालों को तूंबे की भाँति फुलाकर गानेवाला।
१५. वक्री—गले को ऐंठकर गानेवाला।
१६. प्रसारी—शरीर को लंबा या प्रसारित करके गानेवाला।
१७. निमीलक—आँखें बन्द करके गानेवाला।
१८. नीरस—रक्ति के बिना गानेवाला। इन्हे अधम गायक कहते हैं।
१९. अपस्वर—वर्ज्य स्वरों का भी प्रयोग करके गानेवाला।
२०. अव्यक्त—अस्पष्ट उच्चारण के साथ गानेवाला।
२१. स्थानभ्रष्ट—तीनों स्थानों में गाने की शक्ति से हीन।

२२. अव्यवस्थित—तीनों स्थानों में गाने की शक्ति न रहने से एक स्थान में गाते समय ही दूसरे स्थान में आकर पूरा करनेवाला।

२३. मिश्रक—रागच्छायाओं के सूक्ष्मभेद से अपरिचय के कारण रागच्छायाओं को मिश्रित करके गानेवाला।

२४. अनवधान—पकड़ों को अवधान रहित प्रयुक्त करनेवाला।

२५. सानुनासिक—नाक से स्वरों को उच्चारण करके गानेवाला।

कण्ठ ध्वनि के चार भेद

काहुल, नारट, बोंबक और मिश्रक—कण्ठ ध्वनि के ये चार भेद हैं।

काहुल—कफ की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि है। वह स्नेहयुक्त, मधुर, सुन्दर रहती है। मन्द्रमध्य स्थानों में पूर्ण सुखभाव के साथ रहे, तो उसका नाम 'आडिल्ल' है।

नारट—पित्त की अधिकता से उत्पन्न कण्ठध्वनि का नाम है। तीनों स्थानों में गंभीरता व लीनता से युक्त है।

बोंबक—वात की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि का नाम है। स्नेहरहित, माधुर्य-रहित, ऊँची ध्वनि है।

मिश्रक—दोषों की अधिकता के मिश्रण से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का नाम है। मिश्रध्वनि में चार भेद हैं—नाराट काहुल, नाराट बोंबक, बोंबक काहुल, नाराट बोंबक काहुल। मिश्रित ध्वनि में दोनों ध्वनियों के दोष का थोड़ा परिहार हो जाता है। तीनों मिल जाते हैं तो दोषों का पूर्णपरिहार हो जाता है। ध्वनि उत्तमोत्तम बन जाती है। दो-दो के मिश्रण में नाराट काहुल मिश्रण उत्तम है अर्थात् कफ, पित्तज ध्वनि उत्तम है। काहुल-बोंबक अर्थात् कफवातज ध्वनि मध्यम है। बोंबक-नाराट मिश्रण या पित्तवातज ध्वनि अधम है।

कफ, पित्त, वात के अंश भेद से दशविध ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

(१) मधुर, स्नेहयुक्त, घन (२) स्नेहयुक्त, कोमल, घन (३) मधुर, मृदु, त्रिस्थान व्यापक (४) मृदु, त्रिस्थान गंभीर (५) स्नेहयुत, मृदु, घन (६) मधुर, मृदु, घन और त्रिस्थान व्याप्त (७) मधुर, स्नेहयुत मृदु, त्रिस्थान व्याप्त (८) मधुर, स्नेहयुत, गंभीर, घन, त्रिस्थान व्याप्त (९) स्नेहयुत, कोमल, गंभीर, घन, त्रिस्थान, लीन (१०) स्नेहयुत, मधुर, कोमल, घन, लीन, त्रिस्थान व्याप्त और गंभीर।

इनके अतिरिक्त दो-दो भेदों के मिश्रण में अंश भेद से बारह ध्वनि भेद, और तीन दोषों के मिश्रण में अंश भेद से आठ भेद भी 'संगीत रत्नाकर' में दिये गये

हैं। अब तक शब्द स्वरूप का वर्णन हुआ है। अब शब्दगुण और शब्ददोष के बारे में विचार करेंगे।

शब्दगुण और शब्ददोष

शब्दगुण —

१. मृष्ट—कान को सुख से भरनेवाली ध्वनि का नाम है।
२. मधुर—तीनों स्थानों में पूर्ण रूप से वर्तमान ध्वनि।
३. चेहाल—चेहाल ध्वनि में छः गुण हैं।
  (१) शस्त—सुख से अनुभव करने योग्य ध्वनि।
  (२) प्रौढ़—असाधारण विशेषता से युक्त ध्वनि।
  (३) नाति स्थूल—अतिस्थूल भी नहीं।
  (४) नातिकृश—अति कृश भी नहीं।
  (५) स्निग्धता—स्नेहयुक्तत्व।
  (६) घन—घनत्व से युक्त।

'चेहाल' नामक गुण पुरुषों में कण्ठ पर्यन्त ही है। अर्थात् मध्यस्थान तक ही है। स्त्रियों के तो तीनों स्थानों में है।

४. त्रिस्थान—तीनों स्थानों में प्रकाश और रक्ति की पूर्णता रहना।
५. सुखावह—मन को सुखदायक ध्वनि।
६. प्रचुर—स्थूलता से युक्त।
७. कोमल—मृदुत्व और कोयल सरीखी रमणीयता से युक्त है।
८. गाढ—बल से युक्त।
९. श्रावक—बहुत दूर तक सुनने योग्य ध्वनि।
१०. करुण—सुननेवालों के हृदय में करुण रस की उत्पादक ध्वनि।
११. घन—अंतर्बल से युक्त ध्वनि।
१२. स्निग्ध—रूक्षता रहित, स्नेहयुक्त।
१३. श्लक्ष्ण—लगातार सुन्दर रूप में बहनेवाली ध्वनि।
१४. रक्तिभाव—अधिक रञ्जन पैदा करना।
१५. छविमान्—निर्मल कण्ठ की विशेषता से अक्षरोच्चारण, स्पष्टता या प्रकाश से युक्त ध्वनि।

शब्ददोष

१. रुक्ष—स्नेह-विहीन ध्वनि।
२. स्फुरित—बीच-बीच में भंग होनेवाली ध्वनि।
३. निस्सार—आन्तरिक बल रहित।
४. काकोलिका—कौओं के समूह की तरह शब्द करनेवाली कर्ण कठोर ध्वनि।
५. केटि—तीनों स्थानों में व्याप्त होने पर भी गुणरहित ध्वनि।
६. केणि—तार, मन्द्र स्थानों में कठिनता से संचार कर सकनेवाली ध्वनि।
७. कृश—अति सूक्ष्म ध्वनि।
८. मग्न—सूक्ष्म, कृश, नीरस ध्वनि का नाम है।

शारीर

अभ्यास के बिना रागभाव की अभिव्यक्ति करने की शक्ति का नाम शारीर है। शरीर के साथ उत्पन्न होने के कारण इसका नाम शारीर पड़ा। यह जन्मान्तर की वासना-विशेष है।

सुशारीर के गुण

१. तार—दीर्घ ध्वनि
२. अनुध्वनि—अनुरणन के सहित होना।
३. माधुर्य—सुनने में मधुरतापूर्ण।
४. रक्ति—रञ्जन शक्ति।
५. गांभीर्य—गहराई से युक्त।
६. मार्दव—मृदुलता से युक्त या कर्कशता रहित।
७. घनता—सारयुक्तता।
८. कान्ति—प्रकाशन और अन्य शब्द गुण।

शारीर के दोष

१. निस्सारता—अन्तर्बल रहित होना।
२. विस्वरता—शारीर वश में न रहने के कारण स्वरान्तर हो जाना।
३. काकित्व—श्रुतिहीनता के कारण शारीर की अपुष्टता।
४. स्थान विच्युति—शारीर स्वाधीन नहीं होने के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा पड़ना।

५. कार्श्य—आवश्यक स्थूलता से रहित रहना।

६. कार्कश्य—मृदुता रहित होना।

सुशारीर की प्राप्ति विद्या, दान, तप और शिवभक्ति से होती है। पूर्वपुण्य-विशेष से ही सुशारीर प्राप्त होता है।

रूपक आलप्ति

आलप्ति दो प्रकार की होती है। उनमें से रागालप्ति पहले ही बतायी गयी है। अब रूपक आलप्ति का विवरण किया जाता है।

'रूपक' या प्रबन्ध में मनोधर्म से रागों के विस्तार करने का नाम 'रूपक आलप्ति' है। इसमें रूपक के राग और तालों के नियमों का पालन करना आवश्यक है। इसके दो विभाग हैं। एक का नाम 'प्रतिग्रहणिका' दूसरे का नाम 'भञ्जनी' है।

'प्रतिग्रहणिका' में प्रस्तुत रूपक के ताल और राग में इच्छानुसार संचार करके रूपक के एक अवयव को ग्रहण करना चाहिए। इसे कर्नाटक संप्रदाय में 'स्वरगान' कहते हैं। और इसमें स्वरों को नामोच्चारणपूर्वक गाते हैं। पर हिन्दुस्थानी संप्रदाय में अकारादि उच्चारण से संचार करते हैं।[1]

'भञ्जनी' में दो प्रकार हैं—स्थाय भञ्जनी और रूपक भञ्जनी। स्थाय भञ्जनी में रूपक के एक पकड़ रूप अवयव को उसी राग ताल में रूपभेद करके गाना होता है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में 'संगति' डालना है। रूपक भञ्जनी में रूपक के किसी एक पूर्ण भाग को लेकर उसके पद, राग और ताल में इच्छानुसार रूप भेदों के साथ गाना होता है। इसका नाम कर्नाटक पद्धति में 'निरवल' है। 'भञ्जनी' का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के 'ख्याल' नामक प्रबन्ध में बहुत है।

१. आजकल कुछ हिन्दुस्थानी विद्वान् लोग भी कर्नाटक विद्वानों की तरह स्वरोच्चारण करके प्रतिग्रहणिका गाते हैं। पर हिन्दुस्थानी संगीत में रहनेवाले स्वरों का स्वभाव स्वरोच्चारण के लिए उपयुक्त होने के कारण इस तरह गाना सुनने में अच्छा नहीं लगता। अकारादि से गाना ही रमणीय है।

दसवाँ परिच्छेद

प्रबन्ध

प्रबन्धों के अंग और धातु पहले ही चतुर्दण्डि-लक्षण में बताये गये हैं। प्रबन्ध के तीन नाम हैं—१. प्रबन्ध २. रूपक ३. वस्तु। और दो नाम, गीत और गेय भी लक्ष्य संप्रदाय में हैं।

धातुओं में 'अन्तरा' नामक धातु सालगसूड प्रबन्धों में ही प्रयुक्त किया जाता है। प्रबन्धों में तालनिबद्ध और अनिबद्ध के दो भेद हैं। प्रबन्धों में गुरु, लघु आदि अक्षरों का प्रयोग है। इनके प्रयोग करने में कुछ नियम भी हैं। इसी तरह प्रबन्धों के अवयवों की साहित्य रचना में भी आरंभ विषयक अक्षर और गुरु, लघु इत्यादि के नियम हैं। वे अब कहे जाते हैं।

गुरु, लघु के प्रयोग-विषय 'गण' या गुरु एवं लघु से नियमित हैं। हरएक 'गण' में ३ अंग हैं। गण आठ प्रकार के हैं। उनके नाम भी अक्षरों से सूचित किये जाते हैं।

यगण	=	।	ऽ	ऽ
रगण	=	ऽ	।	ऽ
तगण	=	ऽ	ऽ	।
भगण	=	ऽ	।	।
जगण	=	।	ऽ	।
सगण	=	।	।	ऽ
मगण	=	ऽ	ऽ	ऽ
नगण	=	।	।	।

इन आठों गणों में य, र, त गणों में एक लघु है। भ, ज, स गणों में एक गुरु है। 'म' गण में सर्वगुरु है। 'न' गण में सर्वलंघु है। य र त में क्रमशः आदि, मध्य और अन्त में लघु है। इसी तरह भ ज स में क्रमशः आदि, मध्य और अन्त में गुरु है।

'आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।'

गणों के देवता और फल—

गण	देवता	फल
य	अप्	वृद्धि।
र	अग्नि	मृत्यु।
त	पृथ्वी	निर्धनता या गरीबी।
भ	चन्द्र	कीर्ति।
ज	सूर्य	रोग।
स	वायु	स्थान भ्रष्टता।
म	पृथ्वी	धन की प्राप्ति।
न	इन्द्र	आयुर्वृद्धि।

श्लोकों और गीतों के आरम्भ में प्रयोग किये जानेवाले गण से होनेवाला फल ऊपर बताया गया है। अक्षरों के देवता और फल—

अक्षर अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग—इन आठ वर्गों में विभाजित किये गये हैं। अवर्ग सब स्वर हैं। 'कवर्ग' क ख ग घ ङ। चवर्ग च, छ, ज, झ, ञ। टवर्ग ट, ठ, ड, ढ, ण। तवर्ग त, थ, द, ध, न। पवर्ग प,-फ, ब, भ, म। यवर्ग य, र, ल, व। शवर्ग श, ष, स, ह। वर्गों के देवता और हरएक वर्ग में श्लोक और गीतों के आरंभ करने का फल—

वर्ग	देवता	फल
अ	सोम	आयुर्वृद्धि
क	अङ्गारक	कीर्ति
च	बुध	धन-प्राप्ति
ट	गुरु	सौभाग्य
त	शुक्र	कीर्ति
प	शनैश्चर	मन्दता
य	सूर्य	मृत्यु
श	राहु	शून्यता

इनके साथ कुछ विशेष फल भी हैं। न, ह और म ध न, कीर्ति और सर्वस्व नाश करते हैं। उद्ग्राह में दकार, अन्तरा में भकार, आभोग में वकार—ये तीन लक्ष्मीप्रद हैं।

जैसे अक्षरों के गण आठ प्रकार के हैं, वैसे मात्रा के गण भी पाँच प्रकार के हैं जैसे—छगण (छः मात्रावाला), पगण (पाँच मात्रावाला), चगण (चार मात्रावाला), तगण (तीन मात्रावाला) और दगण (दो मात्रावाला)।

प्रबन्धों के भेद

सूड, आलि और विप्रकीर्ण—ये तीन प्रबन्ध के भेद हैं। सूड में दो भेद हैं, शुद्ध सूड और सालगंसूड।

शुद्ध सूड के आठ भेद हैं। एला, करण, ढेंकी, वर्तनी, झोंबड़, लंब, रास, एकताली।

सालगसूड में ध्रुव, मठच, प्रतिमठच, निस्सारुक, अड्डु, रास, एकताली—ये सात भेद हैं।

आली प्रबन्ध में २५ भेद हैं। उनके नाम वर्ण, वर्णस्वर, गद्य, कैवाड, अंकचारिणी, कन्द, तुरङ्गलीला, द्विपदी, चक्रवाल, क्रौंचपद, स्वरार्थ, ध्वनिकुट्टनी, आर्या, धाता, द्विपद, कलहंस, तोटक, घट, वृत्त, मातृका, नन्द्यावर्त, रागकदम्बक, पञ्चतालेश्वर और तालार्णव हैं। प्रकीर्ण प्रबन्धों में ३६ भेद हैं। उनके नाम श्रीरङ्ग, श्रीविलास, त्रिपादी, चतुष्पदी, षट्पदी, वस्तु, विजय, त्रिपत, चतुर्मुख, सिंहलील, हंसलील, दण्डक, झम्पट, कन्दुक, त्रिभङ्गी, हरविलास, सुदर्शन, स्वरांक, श्रीवर्द्धन, हर्षवर्द्धन, वदन, चञ्चरी, चर्या, पद्धडी, राहडी, वीरश्रिय, मंगलाचर, धवल, मंगल, ओवि, लोलि, डोल्लरि, दन्ती हैं।

सब मिलाकर प्रबन्धों की संख्या ७५ है। हरएक प्रबन्ध के अनेक भेद हैं। जैसे—

शुद्ध सूड प्रबन्ध—एला = ३६५, करण = २७, ढेंकि = ३०, वर्तनि = ४, झोंबडा = ३५१०, लंबक = १, रास = ७७, और एक ताली = १।

सालग सूड प्रबन्ध—ध्रुव = १६, मण्ठ = ६, प्रतिमण्ठ = ४, निस्सारुकम् = ६, अड्डु = ६, रासताल = ४, एकताली = ३।

आली प्रबन्ध—वर्ण = १, वर्णस्वर = ४, गद्य = ३६, कैवाड = २, अङ्ग-चारिणी = ६, कन्द = २९, तुरङ्गलीला = ५, गजलीला = १, द्विपदी = ८, चक्रवाल = २, क्रौंचपद = १, स्वरार्थ = ८, ध्वनि कुट्टिनी = ३०, आर्या = २६, धाता = १, द्विपद = ९, कलहंस = २, तोटक = १, घट = १, वृत्त = १, मातृक = ३, रागकदम्बक = २, पञ्चतालेश्वर = २, तालार्णव = २।

विप्रकीर्ण प्रबन्ध—श्रीरङ्ग = २, श्रीविलास = ५, त्रिपदी = १, चतुष्पदी = १, षट्पदी = १, वस्तु = १, विजय = १, त्रिपत = १, चतुर्मुख = १, सिंहलील =

१, हंसलील = १, दण्डक = १, झम्पट = १, कन्दुक = १, त्रिभङ्गी = ५, हरविलास = १, सुदर्शन = १, स्वरांक = १, श्रीवर्द्धन = १, हर्षवर्द्धन = १, वदन = १, चच्चरि = १, चर्या = ४, पद्धडी = १, राहडी = १, वीरश्रिय = १, मंगलाचार = १, धवल = ३, मंगल = १, ओवि = १, लोलि = १, डोल्लरि = १, दन्ति = १।

अन्य प्रसिद्ध प्रबन्ध—वीरशृङ्गार = १, चतुरङ्ग = १, शरभलीला = १, सूर्यप्रकाश = १, चन्द्रप्रकाश = १, रणरङ्ग = १, नन्दन = १, नवरत्न प्रबन्ध = १।

प्रबन्धों का विभाजन, प्रबन्धों की प्रत्येक पांच जातियों से—अर्थात्, मेदिनी, आनंदिनी इत्यादि से युक्त तथा कई दूसरी जातियों से अप्रधानतया मिश्रण करके किया गया है। वह विभाजन यों हुआ है।

पहली मेदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—७

१. श्रीरंग, २. श्रीविलास, ३. पंचभंगी, ४. पंचानन, ५. उमातिलक, ६. करण, ७. सिंहलीलक ॥१॥

दूसरी आनंदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१०

१. पंचतालेश्वर, २. वर्णस्वर, ३. वस्त्वविधान या वस्तु, ४. विजय, ५. त्रिपदा, ६. हरविलास, ७. चतुर्मुख, ८. पद्धडि, ९. श्रीवर्धन, १०. हर्षवर्धन ॥२॥

तीसरी दीपनी जाति से युक्त प्रबन्ध—५

१. सुदर्शन, २. स्वरांक, ३. त्रिभंगी, ४. कुन्तक, ५. वदन ॥३॥

चौथी भाविनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१६

१. वर्ण, २. गद्य, ३. कंद, ४. कैवाड, ५. अंकचारिणी, ६. वर्तनी, ७. आर्या, ८. गाधा, ९. क्रौंचपद, १०. कलहंस, ११. तोटक, १२. हंसलील, १३. चतुष्पदी, १४. वीरश्री, १५. मंगलाचार, १६. दंडक ॥४॥

पाँचवीं तारावली जाति से युक्त प्रबन्ध—२२

१. एला, २. ढेंकी, ३. झोंपट, ४. लंभ, ५. रास, ६. एकतालिक, ७. चक्रवाक, ८. स्वरार्ध, ९. मातृका, १०. ध्वनिकुट्टनी, ११. त्रिपदी, १२. षट्पदी, १३. झोंपट, १४. चच्चरी, १५. चर्या, १६. राहटी, १७. धवल, १८. मंगल, १९. ओवी, २०. लोली, २१. डोल्लरी, २२. दन्ती ॥५॥

पहले कहे हुए मार्ग के अनुसार दो-दो जातियों से युक्त प्रबन्धों का भी नीचे लिखे अनुसार विभाजन कर सकते हैं। जैसे—

तारावली व दीपनी जातियों से युक्त प्रबन्ध—२

(१) हयलीला और (२) गजलीला ।

भाविनी व तारावली से युक्त प्रबन्ध—३

(१) द्विपदी, (२) द्विपदक और (३) व्रत ।

दीपनी व भाविनी से युक्त प्रबन्ध —१

१. घट

कुल मिलकर दोनों जातियों से युक्त प्रबन्ध छः हुए । ऐसे ही पांचों जातियों से युक्त दो प्रबन्ध हैं । जैसे—तालार्णव व रागकदम्ब, अब क्रम से उनका लक्षण कहा जाता है ।

प्रबन्धलक्षण

१. श्रीरंग

इस प्रबन्ध की चार खण्डिकाएँ हैं । हरएक खण्ड के लिए एक-एक राग एवं ताल की आवश्यकता है । प्रत्येक खण्ड के अन्त में पदों का प्रयोग करना चाहिए । इसके अलावा स्वर इत्यादि पंचांग के प्रयोग में कोई नियम नहीं; इच्छा हो तो प्रयोग करेंगे । इन चारों खण्डों के पहले आधे भाग को उद्ग्राह कहते हैं । पिछले आधे भाग को ध्रुव कहते हैं । इसमें आलाप व आभोग नहीं होते । आभोग के न होने पर भी चौथी खण्डिका के अंत में, गायक तथा उद्दिष्ट नायक और प्रबन्धों के नाम का अंकन करना है । इसलिए यह द्विधातु प्रबन्ध, ताल आदि के नियमों के बिना रचे जाने के कारण अनिर्युक्त प्रबन्ध है ।

२. श्रीविलासप्रबन्ध

इसमें पाँच खण्डिकाएँ हैं । प्रत्येक खण्ड के लिए राग व ताल अनिवार्य हैं । खण्डिकाओं के अंत में स्वरों का प्रयोग आवश्यक है । बाकी पाँच अंगों के प्रयोग इच्छानुसृत हैं । बाकी सब लक्षण श्रीरंग की भाँति हैं ।

३. पंचभंगिप्रबन्ध

इसकी दो ही खण्डिकाएँ हैं । प्रत्येक के लिए अलग-अलग राग एवं ताल होते हैं । प्रत्येक खण्ड के अंत में 'तेनक' का प्रयोग करना चाहिए । बाकी लक्षण श्रीरंग जैसे हैं ।

४. पंचाननप्रबन्ध

पंचभंगी के समान इसमें भी दो खण्डिकाएँ हैं। एक मात्र विशेषता यह है कि प्रत्येक खण्ड के अंत में तेनक के बदले पदों का प्रयोग होना है। अवशिष्ट विशेषताएँ पंचभङ्गी जैसी हैं।

५. उमातिलक

इसकी तीन खण्डिकाएँ हैं। राग-ताल प्रत्येक के लिए आवश्यक हैं। खण्डों के अंत में बिरुद की योजना करनी चाहिए। अवशिष्ट बातें श्रीरङ्ग के समान हैं।

६. करण-लक्षण

इष्टस्वर में प्रबन्ध का आरम्भ करके अंशस्वरों से मुक्त होकर रास-ताल तथा द्रुत-लय का संयोजन करना हीं करण का लक्षण है। वे करण आठ प्रकार के होते हैं—(१) स्वरादि, (२) पाटपूर्वक, (३) प्रबन्धादि, (४) पदादि, (५) तेनादि, (६) बिरुदादि, (७) चित्र, (८) मिश्र।

१—स्वरादिकरण

जहाँ उद्ग्राह और ध्रुव मंद्रस्वर में होकर गवैया, नेता, प्रबन्ध—इन तीनों के नाम से अंकित पदों का आभोग भी पाया जाता है वहाँ स्वरादि करण समझना चाहिए।

२—पाट (पूर्वक) करण

हस्त या हाथ के पाटों अर्थात् घातों से युक्त स्वरों से संबद्ध करण हो तो उसे पाटकरण जानना चाहिए। वह पाटकरण भी दो प्रकार के होते हैं—क्रमपाटकरण और व्यत्यासपाटकरण। पहले स्वर और पीछे हस्तपाट हो, तो उसे क्रमपाटकरण कहते हैं। पहले हस्तपाट और पीछे स्वर हो तो उसे व्यत्यासपाटकरण कहते हैं। यह विभाजन मतङ्ग एवं भरत जैसे आचार्यों को भी संमत है।

३—प्रबन्धकरण

स्वरों से उद्ग्राह और मुरज याने मृदंग के पाटों से ध्रुव की रचना हो तो उसे प्रबन्ध या बद्धकरण जानना चाहिए।

४—पदादिकरण

उद्ग्राह और ध्रुव, क्रम से स्वरों या पदों से रचित होते हैं, तो पदादिकरण होता है।

५—तेनकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह स्वरों से और ध्रुव तेनकों से बनाये हुए हैं उसे तेनकरण कहते हैं।

६—बिरुदादिकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह और ध्रुव, क्रमशः स्वरों और बिरुदों से निर्मित होते हैं उसे बिरुदकरण जानना चाहिए।

७—चित्रकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह, स्वर और हस्तपाट दोनों से तथा ध्रुव मुरज के पाटों एवं पदों से रचित होते हैं, तो उसे चित्रकरण जानना चाहिए।

८—मिश्रकरण

स्वर, पाट और तेनक, इन तीनों के उद्ग्राह तथा ध्रुव की रचना जिस प्रबन्ध में पायी जाती है वही मिश्रकरण है। तिल एवं चावल के मिश्रण की भाँति जहाँ की संसृष्टि भली-भाँति प्रतीत होती है वहाँ चित्रकरण और दूध एवं पानी के मिलन की भाँति जहाँ का संकर,स्वरूपनाश के कारण, स्पष्ट नहीं देख पड़ता वहाँ मिश्रकरण होता है। "रास-ताल" नामक ताल नियम के कारण यह निर्युक्त-प्रबन्ध है। एक-लघु का आदिताल ही रासताल है। मेलापक के अभाव के कारण यह त्रिधातु है।

७. सिंहलील

स्वर, पाट, बिरुद और तेनक—ये चार करण इस प्रबन्ध में प्रयुक्त होते हैं। सिंह-लील नामक ताल से युक्त होने के कारण इसका नाम सिंहलील है। सिंहलील ताल में ।००० । होते हैं। स्वर और पाट दोनों से उद्ग्राह, विरुदों तथा तेनकों से ध्रुव और पदों से आभोग निर्मित रहते हैं। इसीलिए यह त्रिधातु-प्रबन्ध है। ताल के नियम से युक्त होने के कारण निर्युक्त है। स्वरादि अंगों से रचित होने के कारण यह मेदिनी-जाति का है।

दूसरी आनंदिनी आदि जातियाँ भिन्न-भिन्न प्रदेशों में प्रसिद्ध हैं। तो भी निश्शंक श्रीशार्ङ्गदेव के 'संगीत रत्नाकर' में श्रीवर्धन-प्रबन्ध का उल्लेख है। तंजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के आचार्य "व्यासपाचार्यजी" ने, "जय कर्णाटधारा" के पदों से आरम्भ होनेवाले एक श्रीवर्धन प्रबन्ध की रचना की है।

विरुद,पाट, पद, और स्वर इन चारों से युक्त इस श्रीवर्धन-प्रबन्ध का उदाहरण—

नाटराग

मामा पामा पाससनिनिपपनिपपनिपम गममापाप सससनिमा पासससपससरी-ससससा सममममपाममम मरिससा मसममरिसनिसा ममारिसारिसानिसा पम-पससानिपनिपम गाममा पासा।

पीछे मध्यमान में सस्स सस्स सममगमपससा सससपपपममपपमरि सससससस-सासपममपम ० ० डली इकअरअ ग ० ० ० डा आ त्तु २—द्रु ५ तोंगिण अंगिण ध ३ द्रु ४ द्रि ३ तों २ तो ओं गिणणंणंगिणमप।

फिर विलंबमान में—पा पाससस सा सा वुशी पनि पससा सा वुशि० मा मापामा प नीपपमपाप्पममामा रिसानि पामपससा; बिरुद और पाट से, सरीसरिसममरिस-निसा मा मा मा पा पा सा सा सपा पमममारिसा रिसानीसासमापा।

इसके द्विगुणमान में ससरि सससससनिपपनिमम मगमपमपसनिपममरिस मगम-पप्पमपनिप्पपससा मपपममरिरिससनिप रिविबे ससानिपाममारिसा पमापासनीसा रिसारीममरिससनिपमरिसरि मरेणे। ध्रुव।

आभोग—ममपपनिप मममपमममरि सममरिसममरिसपममप सससरिग-मपपनिपपमगम पपससप्पपसन्निपममरिसा।

विलंब में—पनिपपममापाममापामममा मामारिसारि सानीस पनिपमप-सासासरिसा रिगामामारिसानिसा।

मध्यमान में—सससममपपसनिपमममरिसरिस सनिपमरिस सममपपा।

इस प्रबन्ध में तीन धातु हैं; इसलिए यह त्रिधातु प्रबंध है। ताल के नियम नहीं, इसलिए अनिर्युक्त है। इसमें तेन्नक नहीं। आनंदिनी-जाति का है।

आधुनिक प्रबन्ध

नवीन पद्धति में, प्रबन्ध के छः अंगों में से (स्वर, पाट, ताल, तेन, पद, बिरुद) प्राय: तीन अंगों में ही प्रबन्ध रचे जाने लगे। उनमें पद और बिरुद दोनों को ही मुख्यत्व दिया गया। स्वर, पाट, ताल, तेन—इनमें से एक ही अंग लिया जाता था।

हिंदुस्थानी पद्धति के प्रबन्ध

इस तरह के ३ अंगों से, ध्रुवपद और अन्य प्रबन्ध, तानसेन के द्वारा रचे गये। पीछे, नये प्रबन्धों में, दो अंगों से रचे हुए प्रबन्ध ही अधिक हैं। उनके अंग हैं पद और बिरुद। इनके साथ स्वर से युक्त प्रबन्ध, पाट से युक्त प्रबन्ध, ताल से युक्त प्रबन्ध और तेन से युक्त प्रबन्धों का नाट्य में उपयोग करने के लिए अलग-अलग रचे गये। दोनों

अंगों से रचे हुए प्रबन्धों में ध्रुवपद, प्रवन्ध, वगैरह हैं। प्रबन्ध में स्वर ही एक अंग है। बाकी प्रबन्धों में, पद और बिरुद ही रहते हैं। आधुनिक प्रबन्धों में, प्रायः तीन अवयव हैं। हिंदुस्थानी पद्धति में इन तीनों के नाम स्थायी, अन्तरा और आभोग हैं। कर्नाटक पद्धति में इनके नाम क्रमशः—पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरण हैं। कभी-कभी दो ही अवयव रहते हैं।

प्रचलित प्रबन्ध

ध्रुवपद या ध्रुपद

हिंदुस्थानी पद्धति के प्रबन्धों में, ध्रुवपद श्रेष्ठ साहित्य माना जाता है। यह प्रबन्ध ध्रुपद नाम से प्रचार में है। यह प्रबन्ध प्रायः ब्रजभाषा या हिंदी में है। मराठी भाषा में भी कई ध्रुवपद हैं। यह शुद्ध राग-रागिनी में रचे गये हैं। तालों में चौताल, त्रिवट, धमार और कभी-कभी सूरफाक और झंपाताल प्रयुक्त किये गये हैं। इस प्रबन्ध के प्रायः तीन अवयव हैं। वे स्थायी, अंतरा और आभोग हैं। कुछ लोगों ने दो ही अवयवों से रचनाएँ की हैं। पद और बिरुद अनिवार्य अंग माने जाते थे। कहीं-कहीं पाट या स्वर का भी तीसरे अंग से प्रयोग किया है।

ध्रुपद, ध्रुवपद का बिगड़ा हुआ रूप है। ध्रुवपद प्राचीन काल से प्रत्येक नाटक का गीतांग होकर प्रधान हुआ था। भरतमुनि ने अपने नाटचशास्त्र के ३२ वें अध्याय में ध्रुवपदों की विस्तृत रूपरेखा खींची थी। नाटकों के आदि, मध्य और अंत में ध्रुपदों का गाना प्रचार में था। उन पदों में, पात्र, संदर्भ तथा कभी-कभी देवताओं का वर्णन भी हुआ करता है। गाते समय, अभिनय के साथ गाना उन पदों की एक अलग विशेषता है। जब ध्रुवगान में, पात्रों का गुणवर्णन किया जाता है, तब वह पात्र अपने वर्णित गुणों के अनुसार चेष्टा और अभिनय करता है। उसके साथ नर्तन को भी जोड़ दिया गया।

दक्षिण भारत में, तेलुगु भाषा में, ध्रुवपद 'दरु' नाम से प्रचलित हुए थे। विजय-नगर साम्राज्य के अधीन होने के बाद यानी १५०० ई० के बाद—तमिल देश में भी, तमिल नाटकों में वे पद अपने-अपने अभिनय और नर्तन के साथ प्रयोग में आने लगे। पर आजकल, 'दरु' का प्रयोग, उत्तर तथा दक्षिण भारत के नाटकों में क्रमशः कम होकर रुक गया। तथापि उत्तर के गायकों के संप्रदाय में ध्रुपद नाम से वह न केवल जीवित है, अपितु उच्चस्थान भी पा चुका है। इतने पर भी उन पदों को गाने में जो कठिनता होती है, उसके कारण उत्तर में भी उन पदों के गायकों की संख्या कम हो रही है।

दक्षिण भारत में, तो 'दरु' के गान ने गायकों के संप्रदाय में स्थान नहीं पाया,

लेकिन, अब भी, प्राचीन संप्रदाय के नाटकों में, जो विरल ही हुआ करते हैं, तथा नृत्यों में कुछ-कुछ प्रचलित हैं।

ध्रुपदों के विषय प्रायः भक्ति, ईश्वरस्तुति, राजाओं की प्रशंसा, मंगल उत्सवों का वर्णन, धर्मतत्व, पुराणविषय, मतसिद्धान्त और संगीतशास्त्रों की श्रुतिस्वर, ग्राम मूर्च्छना आदि के लक्षण वर्णन इत्यादि हैं। शृंगार आदि नव रसों में इनकी रचना हुई है।

ध्रुपद गाते समय, रागालाप, रूपकालाप, अलंकार, स्वर, करण बोलतान इनका भी उपयोग करना प्रचलित है। कंप, आंदोलित आदि बहुविध गमकों के प्रयोग भी किये जाते हैं।

ध्रुपद गाने का नियम यह है कि पहले रागालाप बहुविध गमक अलंकारों के साथ विस्तार से करके, तत्पश्चात् ही ध्रुवपदों के पदों का उच्चारण करना चाहिए। ध्रुवपद में अंश, ग्रह, न्यास तथा अपन्यास स्वरों को उनके उचित स्थान में रखकर शास्त्रोक्त रीति से रचना किये जाने के कारण उन्हें बहुत ध्यान देकर, कुछ भी अदल-बदल के बिना, गाना चाहिए। इन कारणों से ही जो विद्वान् ध्रुवपद गा सकते हैं वे ऊँचे दर्जे के कलावंत माने जाते हैं। ध्रुवपदों की रचना में गोपालनायक, नायक बैजू, राजा मानसिंह, तानसेन, चिंतामणि—ये ही सिद्धहस्त थे।

गवैयों के संप्रदाय में ध्रुपद का स्थान, ग्वालियर नरेश राजा मानसिंहजी (१४-८६–१५१६ ई०) से सुप्रतिष्ठित हुआ।

नवीन ध्रुपद का प्रचार

नाटक के संबन्ध के बिना मौलिक रूप में, प्रभु तथा इष्टदेवताओं की प्रशंसा करने के लिए ध्रुवपदों की रचना आरंभ हुई। प्राचीन संप्रदाय के, तेलुगु तथा तमिल में रचे हुए 'दरु' कहीं-कहीं प्रचार में हैं।

ख्याल

ध्रुपद की तरह ख्याल भी एक विस्तारपूर्ण साहित्य है। पर ख्याल भावप्रधान है। विस्तार करने योग्य मुख्य रागों में ही ख्यालों की रचना की गयी है। ताल में भी पूर्ण अवधान दिया जाता है। ख्याल को गाते समय भाव के विस्तार करने के लिए स्थायभंजनी, रूपकभंजनी, प्रतिग्रहणिका—इन रूपकालाप के भेदों का अधिक प्रयोग किया जाता है। ख्याल का विषय विप्रलंभशृंगार है। ख्याल में नायक-नायिकाओं के भेद, उनके गुण ये सब वर्णित किये जाते हैं। ध्रुपद से कुछ समय बाद यह रचना उत्पन्न हुई है। ध्रुपद केवल भारतीय रचना है; पर ख्याल भारतीय-फारसी मिश्रित

रचना है। कहा जाता है कि इस ख्याल का श्रीगणेश जौनपुर के सुलतान हुसेन शर्क़ी (१५ वीं सदी) के समय में हुआ था।

ख्याल में, अस्थायी अंतरे के दो अवयव और पद बिरुद ये दोनों अंग ही रहते हैं। प्रायः विलंबित लय में त्रिताल में रचे जाते हैं। ध्रुपद की तरह, ग्रह, अंश, न्यास, वादी-संवादियों का स्थाननियम ख्याल में नहीं है। केवल रंजन ही मुख्य है। ख्यालों के प्रमुख रचयिता सदारंग एवं अदारंग हैं। आजकल, हिंदुस्थानी संगीत में ख्याल का मुख्य स्थान है।

होरी

श्रृंगार रसप्रधान और एक प्रबन्ध है, होरी। इसका विषय है राधाकृष्णलीला। ख्याल की तरह मुख्य रागों में ही रची गयी है। होरी में, स्थायी व अंतरा के दो ही अवयव और "पद" एक ही अंग हैं। ताल का मुख्यत्व है। होरी का ताल, प्रायः, "धमार" है। कभी झूमरा (१४ मात्रा) या दीपचंदी ताल भी प्रयोग किया जाता है। ख्याल के समान होरी भी मुख्य प्रबन्ध माना जाता है। होरी, कभी-कभी ताल के नाम "धमार" से पुकारी जाती है।

टप्पा

श्रृंगाररस प्रधान साहित्य है। संकीर्ण राग में रचा गया है। विलंबित, तिवट या धीमा, तिवडा, तिलवाडा और झूमरा वगैरह तालों में होता है। इसमें स्थायी और अंतरा दो अवयव हैं। पद और बिरुद दो ही अंग हैं। स्फुरित, आहति, प्रत्याहति—इन गमकों से युक्त खटका, मुर्की, प्रयोग बहुत हैं। शोरी मियाँ ही टप्पे के प्रमुख रचयिता हैं। कहा जाता है कि टप्पे की उत्पत्ति पंजाब में हुई और ऊँट पालनेवाले ही उसको गाते थे। उसकी भाषा पंजाबी या पंजाबी मिश्रित हिंदी है। टप्पे का मुख्य विषय है हीर व रांझा का प्रणय।

ठुमरी, दादरा, ग़ज़ल

नर्तन के अनुकूल श्रृंगाररस प्रधान चीज हैं। त्रिवट और एकताल में रची गयी हैं। यह आम जनता को बहुत प्रिय हैं।

त्र्यश्रजाति के विलंबित लय में, एकताल में या दादरा नामक छः मात्राओं के ठेके से युक्त ताल में रची हुई चीज का मुख्य नाम है दादरा।

त्र्यश्रजाति में ग़ज़ल नामक पांच मात्राओं के ठेके से युक्त रूपक ताल में रची हुई चीज़ का नाम ग़ज़ल है।

बैत, रूबाई, रेखता, कजरी, रसिया, लेज

ये सब फ़ारसी या उर्दू में, चतुरश्र जाति में बनायी गयी हैं। पिछली तीनों चीजें एक्लाताल में रची हुई हैं। ये तीनों, नीचे दर्जे के नर्तन में प्रयोग करने लायक हैं। ये चीजें पीलू, खमाच, झिंझोटी, काफ़ी वगैरह रागों में रची जाती हैं। इनमें कुछ चीजों के संचार को राग नाम देना युक्त नहीं है। अनिश्चित और अनियमित स्वरूप होने के कारण उनका धुन कहा जाना ही उपयुक्त है।

भजन

ये चीजें भक्तिरस प्रधान हैं। संतों के द्वारा रचित हैं। ईश्वरस्तुति रूप में हैं। उत्तर हिन्दुस्थान की ब्रजभाषा, राजस्थानी और गुजराती में मीराबाई के भजन प्रसिद्ध हैं। पंजाब में नानक पंथ के भजन प्रसिद्ध हैं। बंगाल में, गौडीय संप्रदाय के भजन भी प्रसिद्ध हैं। इन भजनों में करुणरस ही प्रधान है। राग, ताल, करुणरस, ईश्वर की प्रार्थना, नम्रभाव आदि इनके अनुकूल रहते हैं। भजन में, पद और बिरुद ये दोनों अंग हैं।

प्रबन्ध

ईश्वर और राजाओं के स्तोत्रों के रूप में, संस्कृत भाषा में रची हुई चीजें हैं। शांत, वीर, अद्भुत तथा भक्तिरस प्रधान हैं। प्रायः मुख्य रागों में ही हैं। तेवरा और झंपा ताल में हैं। इस कारण इन प्रबन्धों को झंपा प्रबंध भी कहते हैं। इन प्रबन्धों में ध्रुव, अंतर और आभोग—ये तीन अवयव हैं। पद और बिरुद दो अंग हैं। कुछ प्रबन्धों में स्वर तथा पाट भी हैं। इन प्रबन्धों को संस्कृत कविता प्रबन्ध कहते हैं।

गद्य

संस्कृत भाषा प्रबन्ध है। ईश्वरस्तोत्र रूप में या सामान्य वर्णन के रूप में हैं। ताल का निबन्ध नहीं। इनमें ध्रुव और आभोग ये दो अंग हैं। अंग दो हैं; पर उनमें एक तो पद हैं; और दूसरा स्वर या पाट। इनमें अनुप्रास आदि शब्दालंकार का विशेष है।

अष्टपदी

प्रसिद्ध भक्तकवि जयदेव के गीतगोविंद और उनके अनुकर्ता दूसरे कवियों के द्वारा रचित प्रबन्ध है। इनमें ध्रुव और आभोग के दो अवयव हैं। पद और बिरुद दो अंग हैं। उनके राग और ताल भावों के अनुकूल रहते हैं। जयदेव की अष्टपदी में हरएक पद का राग और ताल कवि के द्वारा ही निश्चित किये गये हैं। परंतु

बहुत-से पंडितंमन्य लोग दूसरे राग और तालों में गाकर इसके रस और भावों का भंग करते हैं।

तिल्लाना या तराना

स्वर, ताल और वाद्य शब्दाक्षर इन तीनों से बनाये हुए प्रबन्ध हैं। स्थायी और अंतरा दो अवयव हैं। गाने और नाचने में बहुत प्रयोग किये जाते हैं। परंतु मनोहरतम चीज है।

पद[1]

इन प्रबन्धों में पद ही मुख्य अंग है। इनमें दो ही अंग हैं पद और बिरुद या ध्रुव और आभोग। ये मराठी, कन्नडी और हिंदी भाषा में हैं। हिंदी भाषा में तुलसीदास, सूरदास, नानक, चैतन्य कबीर इत्यादि साधुओं और कवियों ने तथा कनडी भाषा में पुरंदरदास वगैरह दासरू कवियों ने, मराठी भाषा में केशवस्वामी, रंगनाथस्वामी, उद्धवचिद्धन, प्रेमाबाई, अमृतराव आदि ने बनाये हैं।

द्विपदी, चतुष्पदी, षट्पदी

इन्हें हिंदी भाषा में क्रमशः दोहा, चौपाई, छप्पय कहते हैं। दोहे में पद एवं बिरुद दो अंग हैं। दो चरण हैं। इसका विषय सामान्यनीति और दृष्टान्त है। इनके प्रवर्तक तुलसीदास और कबीर वगैरह साधु कवि हैं। चौपाई व छप्पय में चार और छः चरण हैं। पद और बिरुद दो अंग हैं। इनका विषय राजाओं का पराक्रम वर्णन है। पृथ्वीराज के दर्बारी कवि चंदबर्दाई चौपाई और छप्पय शैली में प्रसिद्ध हैं। ये वीररस प्रधान हैं। उनमें राग और ताल का नियम है।

लावणी, पोवाडा, कटाव, फटका

ये प्रबन्ध शुद्ध मराठी में हैं। इनमें ध्रुव और आभोग ये दो ही अवयव हैं। पद और बिरुद ये दो ही अंग हैं। मिश्रित रागों में त्रिवट, रूपक और एक्काताल में हैं। लावणी श्रृंगाररस विषयक और वेदांतपरक है। पोवाडा, वीर, रौद्र, अद्भुत और करुणरस प्रधान है। इसमें आभोग का छौक नाम है। कटाव विविध संदर्भों में वर्णन करते हैं। इसमें अनुप्रास एवं यमक की प्रचुरता है। फटका, संसार में विरक्ति पैदा करके सन्मार्ग का अवलंबन करने के लिए प्रेरित करनेवाला है।

१. ये साहित्य-पद सरस्वती महल पुस्तकालय में बहुत हैं।

भूपाली, आरती, पालना

ये तीनों प्रबन्ध इष्टदेवता की पूजा में उपयोग करने के लिए हैं। भूपाली देवता को जगाने का स्तोत्र है। 'आरती' नीराजन का साहित्य है। इसमें अवतार लीलाएँ वर्णित रहती हैं। पालना (हिंदोला) शयन कराने का साहित्य है। भूपाली प्रातः-काल के रागों में—अर्थात् भूप, विभास, भैरव, रामकली इत्यादि रागों में—गाते हैं। पालना, सारङ्ग, आरभी इत्यादि रागों में मध्याह्नकाल में गाते हैं। आरती मिश्र रागों में गाते हैं। इनके ताल रूपक और त्रिपुट हैं। ये साहित्य मराठी, गुजराती और हिंदी में हैं। इन साहित्यों में ध्रुव और आभोग के दो अवयव तथा पद और बिरुद दो ही अंग हैं।

अभंग, ओवी, आर्या, साकी, दिण्डी, घनाक्षरी, अंजनीगीत

ये साहित्य मराठी भाषा में रचे गये हैं। इनमें एक ही अंग पद है। इनमें राग और ताल के नियम नहीं। तुकाराम का अभंग, ज्ञानेश्वर की ओवी, मोरोपंत की आर्या, रघुनाथपंडित की दिण्डी—ये प्रसिद्ध हैं। घनाक्षरी और अंजनीगीत मोरोपंत के साहित्य वृत्तांत के वर्णन रूप में हैं।

कर्नाटक पद्धति में प्रचलित प्रबन्ध

कीर्तना या कृति

ये प्रबन्ध, कर्नाटकी, तेलुगु, तमिल भाषा और संस्कृत भाषाओं में रचित हैं। प्रायः इष्टदेवता का गुणवर्णन या इष्टदेवता की प्रार्थना ये ही इनके विषय रहते हैं। इनमें ध्रुवा, अंतरा और आभोग ये तीन अवयव हैं, परंतु इनके नाम में परिवर्तन हुआ है। ध्रुवा का नाम पल्लवी है। अंतरा का नाम अनुपल्लवी है। आभोग का नाम चरण है। इनमें कुछ कीर्तना अनुपल्लवी रहित रहते हैं। ये सब कर्नाटक रागों में हैं। पद बिरुद दो ही अंग हैं। ये कीर्तन पुरंदरदास के पदों के अनुसार हैं।

पल्लवी, अनुपल्लवी, चरणं के संप्रदाय के प्रवर्तक पुरंदरदास, भद्राचलं रामदास, तालप्पाक्कं, चिन्नमार्युल्ल, सहोदरुल हैं। प्रचलित कीर्तनों के रचयिता श्रीत्यागय्या, श्रीमुत्तुस्वामि दीक्षितार, श्रीश्यामाशास्त्री, स्वातितिरुनाल महाराज, पट्टणं सुब्रह्मण्य अय्यर, सदाशिवं ब्रह्मं, गोपालकृष्ण भारती, सुब्बराम दीक्षितार, पापनाशं शिवन्, पोन्नय्या, पल्लवि गोपालय्यर, सदाशिव राव, मैसूर वापुदेवाच्चार, मुत्तय्या भागवतार, मोसु कृष्णय्यर, पूच्छि श्रीनिवास आय्यंगार, लक्ष्मण पिल्लै, कोटीश्वर अय्यर इत्यादि हैं।

इनमें से पहले के—त्यागय्या, श्यामाशास्त्री और मुत्तुस्वामि दीक्षितार—इन तीनों को संगीत की त्रिमूर्ति कहते हैं। कीर्तन में दो पद्धतियाँ हैं। एक में "चरण", पिछली आधी अनुपल्लवी की धातु में ही रहते हैं। दूसरी पद्धति में इस तरह नहीं रहते। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री ने पहले की पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार ने दूसरी पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार की कृतियाँ संस्कृत भाषा में हैं। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री की कृतियाँ तेलुगु में हैं।

कई कीर्तनों में तीसरा अंग स्वर भी जोड़ा गया है। इसे चिट्टास्वर कहते हैं। अनुपल्लवी तथा चरणं के बाद इसे गाते हैं। कई कीर्तनों में चिट्टास्वर को अनुपल्लवी के बाद गाकर चरण के बाद चिट्टास्वर के अनुसार पदसाहित्य रूप में गाते हैं। श्यामा-शास्त्री की कृतियों की यह एक विशेषता है। श्रीत्यागय्या के कीर्तनों में, पंचरत्न-कीर्तन नामक कीर्तनाएँ विशेष रचनाओं का एक गुच्छा है। इसमें पल्लवी तथा अनु-पल्लवी गाने के बाद चरण में चिट्टास्वर के अनुरूप रचित मातु को भी गाकर पल्लवी या चरण के पहले भाग का ग्रहण करना अर्थात् मुक्तायि करना होता है।

प्राय: कीर्तनों को गाते समय पहले गवैये लोग, प्राय: उस कीर्तन के राग का आलाप करके फिर कीर्तन आरम्भ करते हैं। रूपक तथा आलाप के दोनों भेदों का भी प्रयोग करते हैं। प्रतिग्रहणिका स्वराक्षर के रूप में गाते हैं। इसका अन्त पल्लवी या चरण में करते हैं।

१. गीतम्

यह प्रबन्ध सालगसूड प्रबन्ध के अनुसार उसके राग और तालों में ही रचा गया है। आजकल के प्रचलित गीतों में उद्ग्राह, ध्रुवा, आभोग—ये तीनों अवयव हैं। इनमें स्वर, पद और बिरुद ये तीनों अंग है। स्वर रूप धातु के अनुसार सब धातुओं की रचना है। गीतों को प्रारंभिक शिक्षा में रागों से परिचय कराने के लिए सिखाते हैं। प्राचीन गीतों में पुरंदरदास और वेंकट मखी दोनों के गीत ही प्रचार में हैं। इनका अनुसरण करके समीपकाल में गीतों की रचना हुई है।

२. वर्ण

यह प्रबन्ध ३०० वर्ष पहले उत्पन्न रचना है। प्रत्येक राग के योग्य आरोही, अव-रोही, संचारी, स्थायी इन चारों वर्णों में राग के प्रकाशन करने के लिए रचे जाने के कारण इस प्रबन्ध का नाम 'वर्ण' पड़ा। आजकल, रागस्वरूप को निर्धारित करने के लिए वर्ण एक मुख्य साधन है। इसमें उद्ग्राह और आभोग दो ही अवयव हैं। पद स्वर और बिरुद ये तीन अंग हैं। हरएक अवयव में पद, पद के बाद चिट्टास्वर, प्रति-

ग्रहणिका के रूप में रचे गये हैं। शिक्षा देते समय, पद के धातु को सिखाने के लिए उनको स्वररूप में पहले सिखाते हैं। इनके रचयिता वेंकट मखी, सुब्बराम दीक्षितार, वीणै कुप्पय्यर, कुलशेखर, पल्लवि गोपालय्यर, पट्टणं सुब्रह्मण्य अय्यर, गजपति राव, पूच्छि अय्यंगार, पोन्नय्या आदि हैं। वर्ण मुख्य रागों में ही रचे जाते हैं।

वर्णों में दो प्रकार हैं। एक का नाम तानवर्ण है। दूसरा है पदवर्ण। पहला भेद रागप्रधान है। वह केवल गाने के लिए है। पदवर्ण भाव ताल प्रधान है और नृत्य में उपयोग करने के लिए रचा गया है।

३. पद

पद ज्यादातर नीति, भक्ति और शृंगाररस प्रधान है। भाव ही इसके प्राण हैं। इसी कारण से रसभाव-प्रकाशक राग के संचारों को पदों से ही जान सकते हैं। इसमें भी पल्लवी, अनुपल्लवी और चरणं ये तीन अवयव हैं। चिट्टास्वर और जाति भी जोड़ते हैं। पद, तमिल, तेलुगु तथा कन्नड़ भाषाओं में रचे गये हैं। क्षेत्रज्ञर, सुब्बराम-य्यर, मुत्तुत्ताण्डवर, कविकुंजर भारती, शाहजी राजा (तंजौर के महाराष्ट्र राजा), चिन्नय्या, पोन्नय्या, आदि के द्वारा रचे हुए पद आज प्रचार में हैं। ये विशेषतया नृत्य में उपयुक्त किये जाते हैं। गाने में भी उपयोग होता है। मुख्य रागों में ही पद रचे जाते हैं।

४. जावलि

यह शृंगाररस प्रधान छोटा-सा प्रबन्ध है। इसकी गति मध्य और द्रुत है।

५. चिन्दु

यह मध्य और द्रुतगति के मिश्र रागों तथा आम जनता को पसंद आनेवाली रीति में, तमिल भाषा में रची जाती है। इसमें कई भेद हैं। कावडिचिन्दु, नोंडिचिन्दु, ईरडिचिन्दु, ओरडिचिन्दु, वलिनडैचिन्दु वगैरह हैं। कावडिचिन्दु रचना में सेन्नि-कुळं अण्णामलै रेड्डियार बहुत प्रसिद्ध हैं। दूसरी चिन्दुओं में सिरुमणऊर मुनुस्वामि प्रसिद्ध हैं। प्रायः शृंगाररस प्रधान और संभववर्णनात्मक भी हैं।

६. तिरुप्पुकळ्

अनेक तरह के तालों में, अनुप्रासयुक्त तमिल और संस्कृत पदों से रचित प्रबन्ध है। राग का नियम नहीं पर ताल का नियम है। हर एक चीज़ में ताल के रूप—"तन तन तनताना" के रूप—में दिये गये हैं। इस तरह की रचना के प्रवर्तक और

प्रमुख रचयिता "अरुणगिरिनाथ" हैं। उन्होंने स्कंद पर ही तिरुप्पुकळ की रचना की है। हर एक तिरुप्पुकळ के पहले भाग में श्रृंगार का वर्णन करके उसे छोड़कर इष्ट-देवता स्कंद की उपासना और स्तोत्र करने का मार्ग पिछले भाग में है। इन्हें अनुसरण करके दूसरी तिरुप्पुकळ भी रची गयी हैं।

७. ओडम्

यह नाव को खेने का अनुसरण करके पुन्नागवराळी जैसे रागों में गाया जाता है। ध्रुवा विलंबकाल में रहता है। आभोग का नाम है मुड्गु और द्रुत काल में रहता है।

८. लाली ऊंजल

यह झूला-गान है। लाली तालबद्ध है। ऊंजल अनिबद्ध है। लाली और ऊंजल, प्रायः नवरोज़, रीति-गौड़ तथा भैरवी में, क्रमशः गाये जाते हैं।

९. तालाट्टु

पालना गान है। नीलांबरी राग में ही प्रायः गाते हैं।

१०. देवार

तमिल देश की तमिल संगीत पद्धति का प्रबन्ध है। ये सातवीं या आठवीं शताब्दी की रचनाएँ हैं। इनके राग प्राचीन तमिल राग हैं। उनके नाम हैं फण् और तिरम्। इनके रचयिता ३ शैव आचार्य हैं। वे हैं ज्ञानसंबंधर अप्पर् या वागीशर् और सुंदरमूर्ति। प्रचलित देवारों में २४ राग या फण हैं। उन २४ फणों के नाम प्रायः मतंग, दत्तिल और शार्ङ्गदेव के ग्रंथों में पाये जानेवाले रागों के जैसे हैं। गाने की पद्धति अब भी प्रचार में है। शिवजी के मंदिरों में प्रतिदिन गाये जाते हैं।

११. चार हजार दिव्यप्रबन्ध

जैसे शैव-संप्रदाय को लेकर देवार रचे गये हैं वैसे ही प्रायः उसी काल में वैष्णव-संप्रदाय को लेकर दिव्यप्रबन्ध रचे गये हैं। उनके रचयिता १२ विष्णुभक्त हैं। उनके नाम आलवार हैं। शुरू में, ये चार हजार पाशुरं या छंद, देवार के जैसे प्राचीन तमिल रागों में—अर्थात् फणों में—रचे गये हैं। पर, बाद में, फण को भूल जाने के कारण वे देवगांधारी और आरभी मिश्रित रागों में गाये जाते हैं।

१२. मंगलम्

सभा के सामने या मेले में होनेवाले गान, नाच या नाटक के अंत में, शुभ प्रार्थना रूप में गाये जानेवाले गीत को मंगलं कहते हैं। यह चीज कीर्तना-रूप में है। तालबद्ध है। प्रायः, सुरटी व मध्यमादि रागों में रचे गये हैं।

गीतों के गुण-दोष

गीत-गुण—

१. श्लक्ष्ण—तीनों स्थानों में सुखभाव के साथ श्रमरहित संचार करना।

२. व्यक्त—स्पष्ट रूप में अक्षर और स्वरों का उच्चारण।

३. पूर्ण—गमक और अलंकारों का पूर्ण स्वरूप में गाना।

४. सुकुमार—कण्ठध्वनि में मृदुत्व।

५. अलंकृत—तीनों स्थानों में अलंकारों सहित गाना।

६. सम—वर्ण, लय और स्थान की समता होना।

७. सुरक्तम्—वीणा, वेणु आदि वाद्य शब्दों के साथ कण्ठ ध्वनि को लीन करना।

गीत-दोष

१. लोकदुष्ट—लौकिक संप्रदाय के विरुद्ध।

२. शास्त्रदुष्ट—संगीतशास्त्र के विरुद्ध।

३. श्रुतिविरोधी—आधार श्रुति और स्वरों की नियतश्रुति इनमें न्यूनता या अधिकता करना।

४. कालविरोधी—लयभ्रष्टता।

५. पुनरुक्त—एक ही स्थाय या पद का बार-बार प्रयोग करना।

६. कलाबाह्य—संगीत कला के नियमों का उल्लंघन करना।

७. गतत्रय—राग, भाव और ताल—इनमें किसी एक की हानि हो जाना।

८. अपार्थकं—अर्थ या भाव से रहित गाना।

९. ग्राम्य—ग्राम्य या अनागरिक रीति की रचना या गाना।

१०. संदिग्ध—पद, स्वर या तालप्रयोग में संदेह या अनिश्चय।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

वाद्याध्याय

वीणा आदि तन्त्री वाद्य, वेणु, काहल आदि सुषिर वाद्य, पटह, मुरज, मृदङ्ग, आदि अवनद्ध वाद्य, कांस्य, तालादि घनवाद्य हमारे देश में वैदिककाल से रहे हैं। वेदप्रोक्त यज्ञ करते समय वीणा-वादन के साथ सामवेद का गान विहित है। सामवेद के साथ बजाई जानेवाली वीणाओं के दस प्रकार रहते थे। उनके नाम ये हैं—

"आघाटी, पिच्छोला, कर्कटिका, अलाबु, वक्रा, कपिशीर्षणी, शीलवीणा, महा-वीणा, काण्डवीणा, बाण।" इनमें आघाटी लोह शलाका से बजायी जाती थी।

कर्कटिका दो तन्त्रियों की वीणा है।

अलाबु कद्दू से युक्त वीणा है।

वक्रा और कपिशीर्षणी नाम के अनुरूप हैं। अर्थात् वक्र वीणा वक्र है और कपि-शीर्षणी बन्दर के सिर के समान होती है।

'बाण' वीणा में १०० तन्त्रि थीं। औदुम्बर (अन्जीर या गूलर) पेड़ की लकड़ी से बनायी जाती थी। लाल रंग की गाय के चर्म से मढ़ी होती थी। पीछे दस द्वार होते थे और हरएक द्वार के जरिये दस तन्त्रियों को बाँध देते थे। सौ तन्त्रियों को तीन भागों में बाँट देते थे। दर्भ और मूँज से इनका विभाजन करते थे। मध्य में ३४ तन्त्री, और तिरछी ३३ तन्त्रियों के दो समूह रहते थे। इस वाद्य को एक बारीक वक्र पलाश की शलाका से बजाते थे।

सामगायकों और उनकी स्त्रियों के द्वारा भी वीणा बजायी जाती थी। नारदीय शिक्षा में वेणु वाद्य स्वरों की तुलना सामगायकों के स्वरों से की गयी है।

'यस्सामगानां प्रथमः स वेणोर्मध्यमस्वरः'

यज्ञ में नर्तन भी विहित है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के सप्तम (?) काण्ड में इसका उल्लेख है। नृत्य के उपयुक्त मृदङ्ग या पुष्कर वाद्य और कांस्य ताल भी रहे होंगे। इसलिए यह निश्चित होता है कि हमारे भारतवर्ष में विविध वाद्य—गीत और नृत्य के साधनरूप में रहकर—विकसित हुए हैं।

वाद्यों के बारे में लिखे हुए प्रथम ग्रन्थ के कर्ता नारद और स्वाति हैं। यह तथ्य भरतमुनि के द्वारा ही नाटचशास्त्र में स्पष्टतया बताया गया है। वाद्याध्याय के आरंभ में (अध्याय ३३ नाटचशास्त्र) भरतमुनि कहते हैं—

'मृदङ्ग पणवानाञ्च दर्दुरस्य तथैव च।
गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च।
विस्तारगुणसम्पन्नमुक्तं लक्षणकर्मतः।
अनुवृत्या तदा स्वातेरातोद्यानां समासतः।
पौष्कराणां प्रवक्ष्यामि निर्वृत्ति सम्भवं तथा।'

(नाटचशास्त्र अध्याय ३३ श्लोक २–४)

'गान्धर्वमेतत् कथितं मया हि,
पूर्वं यदुक्तं त्विह नारदेन।
कुर्याद्य एवं मनुजः प्रयोगं,
सम्मानयोग्यः कुशलेषु गच्छेत्।'

(नाटचशास्त्र, अध्याय ३२, श्लोक ४७८)

इसका तात्पर्य यह कि "स्वाति और नारद ने मृदङ्ग, पणव, दर्दुर आदि अवनद्ध वाद्यों, तन्त्रीवाद्यों और अन्य वाद्यों के भी विस्तारपूर्वक सुस्पष्ट लक्षण और वादनक्रम बताये हैं। उनका अनुसरण करके मैं भी पुष्कर (तीन मुख युक्त अवनद्ध वाद्य) आदि वाद्यों की उत्पत्ति, बनाने का क्रम और वादनक्रम बताऊँगा।"

'स्वातिनारदसंवाद' नामक एक ग्रन्थ अब भी खोज करें तो मिल सकता है। 'संगीत मकरन्द' नामक एक मुद्रित ग्रन्थ नारदोक्त कहा जाता है। पर इसमें बहुत से पश्चाद्वर्त्ती संप्रदाय भी जोड़ दिये गये हैं। उपलब्ध ग्रन्थों में नाटचशास्त्र ही वाद्यों पर भी प्रामाणिक आदि ग्रन्थ है। उसके ३३ वें अध्याय में पुष्कर, पणव, दर्दुर, मुरज, झल्लरी, पटह आदि के वादनक्रम उनमें बोलनेवाले अक्षर इत्यादि अवनद्ध वाद्यों के विवरण के रूप में विस्तारपूर्वक दिये गये हैं।

वाद्यों में चार भेद हैं। तत, सुषिर, अवनद्ध और घन। तन्त्री वाद्य को ही 'ततवाद्य' कहते हैं। छिद्रों में फूँक मारने से ध्वनित होनेवाले वाद्यों का नाम 'सुषिरवाद्य' है। चमड़े से मढ़े हुए वाद्यों का नाम 'अवनद्ध' है। कांस्यादि धातुओं से निर्मित घन रूप करताल आदि वाद्यों का नाम है 'घन'।

ततवाद्य अनेक तरह की वीणाएँ—अर्थात् एक तन्त्री, नकुल, त्रितन्त्रिका, चित्रा, विपञ्ची, मत्तकोकिला, आलापिनी, किन्नरी, पिनाकी, और आधुनिक तन्त्री वाद्य

अर्थात् जन्त्र, चतुस्तन्त्री, विचित्र वीणा, रुद्रवीणा, सितार, सरोद, स्वरबत, बाल-सरस्वती, स्वरमण्डली, सारङ्गी, दिलरुबा, वायलिन, तंबूरा या तानपूरा, मोरसिंह आदि हैं।

सुषिर वाद्यों में वंशी आदि विविध प्रकार की बाँसुरियाँ, शहनाई, सुन्दरी, नाग-स्वर, मुखवीणा या छोटा नागस्वर, काहल, श्रीचिह्न (तिरुच्चिन्न), शंख, शृङ्ग, क्लारिनट, ट्रम्पेट, साक्सफोन आदि हैं।

अवनद्ध वाद्यों में प्राचीन काल के वाद्य मृदङ्ग या मार्दल या मद्दल, मुरज, पणव, दर्दुर, हुडुक्का, पुष्कर, घट, डिंडिम, ढक्का, आवुज, कुडुक्का, कुडुवा, ढवस, घढस, रुञ्जा, डमरुक, मण्डि ढक्का, ढक्कुलि, सेल्लुका, झल्लरी, भाण, त्रिवली, दुन्दुभि, भेरी, निस्साण, तुम्बकी आदि हैं।

इनमें प्रायः सब किसी न किसी जगह आज भी प्रयुक्त किये जा रहे हैं। इनके साथ ढोल, ढोलक, तबला, खञ्जरी, ड्रम, कुन्तल, किरिक्कट्टी, जुमिडिका, दासरीका तप्पट्टा, तमुक्कु, पम्बै, तबुल (डिंडिम), शुद्ध, मद्धल, ढोलकी आदि भी हैं।

घन वाद्यों में ब्रह्मताल, कांस्यताल, घण्टा, क्षुद्रघण्टा, जयघण्टा, कम्रा, शुक्ति पट्ट आदि हैं।

तन्त्री वाद्य

वीणा वादन में नारद और तुम्बुरु आदिकाल से अति प्रसिद्ध हैं। भरतमुनि ने भी अपने नाट्यशास्त्र में नारदस्वाति के मत का ही अनुसरण किया है। नारदरचित कहे जानेवाले मुद्रित ग्रन्थ 'संगीत मकरन्द' में वीणा के उन्नीस भेद बताये गये हैं। उनके नाम कच्छपी, कुब्जिका, चित्रा, वहन्ती परिवादिनी, जया, घोषावती, ज्येष्ठा, नकुली, महती, वैष्णवी, ब्राह्मी, रौद्री, कूर्मी, रावणी, सारस्वती, किन्नरी, सैरन्ध्री, घोषका हैं। पर इनका विवरण नहीं दिया गया है।

वीणा वादन के अंगों को पुरुषाकृति रूप में वर्णित किया गया है। तीन ग्राम तीन शिर हैं (नारदजी तीनों ग्रामों का वादन कर सकते थे)। मन्द्र मध्य आदि तीन स्थान तीन मुख हैं। वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी चार जिह्वाएँ हैं। दूसरे तन्त्री वाद्यों, सुषिरवाद्यों और मृदङ्गादि अवनद्ध वाद्यों, कांस्य तालादि घन वाद्यों का वादन उपाङ्ग है। सात स्वर आँखें हैं। रागालप्ति और रूपकालप्ति दो हाथ हैं। षाडव, औडव, संपूर्ण राग, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र रूप हैं। विविध राग संदर्भ त्रिमूर्त्ति की सन्तान हैं। १९ गामक पाँव हैं। वीणावादन और श्रवण का परिणाम पापक्षय, पुत्रपौत्र, धन, धान्य आदि की प्राप्ति, शत्रु की निवृत्ति, राज्य वृद्धि और मोक्ष भी हैं।

नारदजी के मत का अनुसरण करके ही याज्ञवल्क्य भी संगीत की प्रशंसा करते समय कहते हैं कि 'वीणावादन का ज्ञान मोक्ष को भी प्राप्त कराता है।'

नाट्यशास्त्र में सप्ततन्त्री चित्रा, नवतन्त्री और विपञ्ची ये दो वीणाएँ बतायी गयी हैं। उँगलियों से चित्रा का वादन विहित है। धातु से बनाये एक 'कोण' नामक उपकरण को उँगली में धारण कर विपञ्ची का वादन करना विहित है।

एक तन्त्री का वर्णन 'संगीतरत्नाकर' में अच्छी तरह किया गया है। वीणा के दण्ड की लंबाई तीन हस्त अर्थात् ७२ अंगुल (५४ इंच) होती थी। दण्ड की परिधि या घेरे का नाप एक वितस्ति या बित्ता (९ इंच) होता था। दण्ड का छिद्र पूरी लंबाई में १½ अंगुल (१⅛ इंच) व्यास का रहता था। एक सिरे से १७ अंगुल की दूरी पर अलाबु या कद्दू को बाँधना होता था। दण्ड आबनूस की लकड़ी से बनाया जाता था। कद्दू का व्यास ६० अंगुल (४५ इंच) होता था। दूसरे सिरे में ककुभ रहता था। ककुभ के ऊपर धातु से बनायी हुई कूर्म पृष्ठ की भाँति पत्रिका होती थी। कद्दू के ऊपर नागपाश सहित रस्सी बाँधी जाती थी। ताँत अर्थात् स्नायु की तन्त्री को नागपाश में बाँधकर ककुभ के ऊपर की पत्रिका के ऊपर लाकर शंकु या खूँटी से बाँधा जाता था। तन्त्री और पत्रिका के बीच में नाद सिद्धि के लिए वेणु निर्मित 'जीवा' रखते थे। इस वीणा में सारिकाएं नहीं हैं। बायें हाथ के अंगूठा, कनिष्ठिका और मध्यमा पर वेणुनिर्मित कम्रिका को धारण कर तर्जनी से आघात करके सारण किया जाता था। तन्त्री को ऊर्ध्वमुख करके तथा कद्दू को अधोमुख करके, ककुभ को दाहिने पाँव पर रखकर, कद्दू को कंधे के ऊपर रहने की स्थिति में रखकर, जीवा से एक बित्ता की दूरी पर उँगली से वादन किया जाता था।

इस वीणा को 'घोष' या 'ब्रह्मवीणा' भी कहते हैं। यह सब वीणाओं की जननी है। इसके दर्शन एवं स्पर्श भी भुक्तिमुक्तिदायक हैं। यह सब पापों से विमुक्त कर सकती है, क्योंकि इसमें शिवजी दण्ड रूप, पार्वतीजी तंत्री रूप, ककुभ विष्णु रूप, लक्ष्मीजी पत्रिकारूप, ब्रह्मा तुँब (कद्दू) रूप, सरस्वती कद्दू की नाभिरूप, दोरक वासुकि रूप हैं, चन्द्र जीवा रूप और सूर्य (सारि से युक्त वीणा में) सारिका रूप है। इसलिए वीणा सर्वदेवमयी होने के कारण सारे मंगलों का स्थान है।

एकतन्त्री वीणा या घोषक का वादन क्रम

कम्रिका (बायें हाथ में धारण करने का साधन) की क्रिया के चार भेद हैं—

१. उत्क्षिप्ता—इसमें तन्त्री का स्पर्श करके हाथ ऊपर उठाकर तन्त्री पर तत्काल पात करना।

२. सन्निविष्टा—तन्त्री का स्पर्श के साथ ही सारणा करना।

३. उभयी—उत्क्षिप्ता और सन्निविष्टा को जोड़कर प्रयोग करना।

४. कम्पिता—स्वरस्थानों में कम्पन देना।

वादन में हाथों का व्यापार

दाहिने हाथ के व्यापार ९ हैं—

१. घात—मध्यम उँगली को भी जोड़कर तर्जनी से आघात करना।

२. पात—मध्यम उँगली के बिना तर्जनी मात्र से पातन करना।

३. संलेख—तन्त्री को उँगली के अन्दर रखकर बजाना।

४. उल्लेख—मध्यम उँगली के अन्दर रखकर तन्त्री को बजाना।

५. अवलेख—मध्यम उँगली को तन्त्री के बाहर रखकर बजाना। मतान्तर के अनुसार उल्लेख और अवलेख तर्जनी मध्यमा और अनामिका दोनों से या तीनों से संयुक्त रूप में बज सकते हैं।

६. भ्रमर—चार उँगलियों से क्रमशः वेगपूर्वक बजाना।

७. संधित—मध्यमा और अंगूठे को बाहर रखकर बजाना।

८. छिन्न—तर्जनी के पार्श्व भाग से तन्त्री का स्पर्श करते समय अनामिका के द्वारा बाहर से बजाने का नाम है 'छिन्न'।

९. नखकर्तरी—चार नखों से वेगपूर्वक क्रमशः बजाना।

बायें हाथ के व्यापार २ हैं—

१. स्फुरित—कम्पन देने के समान तन्त्री के पिछले भाग का स्पर्श करके सारण करना।

२. खसित—तन्त्री से हाथ न उठाकर घर्षण कर सारण करना।

उभय हाथों का व्यापार:—

१. घोष—दाहिने हाथ के अंगूठे के पार्श्व भाग से और दूसरी उँगली से कैंची की तरह एक को सामने से, दूसरी को अपनी ओर से, एक ही समय बजाना। इसका नाम है घोष। अथवा बायें हाथ की छोटी उँगली दाहिने हाथ की छोटी उँगली और बायें हाथ की कम्रिका से कैंची की तरह परस्पर विपरीत दिशाओं में वादन।

२. रेफ—दाहिने हाथ की अनामिका को अन्दर रखकर और बायें हाथ की मध्यम उँगली को बाहर रखकर एक ही समय बजाना।

३. बिन्दु—दाहिने हाथ की अनामिका से बजाकर उस ध्वनि को तर्जनी उँगली से धारण करना अर्थात् स्पर्शास्पर्श से शब्द को एकरूप बढ़ाना।

४. कर्तरी—दोनों हाथों की चारों उँगलियों को कैंची की तरह रखकर बाहर की ओर क्रमशः वेग से बजाना।

५. अर्धकर्तरी—दाहिने हाथ की उँगलियों से कैंची की तरह बजाने के बाद बायें हाथ की कम्रिका से तन्त्री पर आघात करना।

६. निष्कोटित—बायें हाथ की तर्जनी उँगली से सारण न करके उसी उँगली से तन्त्री पर आघात करना।

७. स्खलित—बायें हाथ से उत्क्षिप्त सारण करके वेग से दाहिने हाथ से कर्तरी के तुल्य बजाना।

८. शुकवक्त्र—अंगूठा और तर्जनी दोनों उँगलियों से तन्त्री को पकड़ कर छेड़ना है।

९. मूर्च्छना—तर्जनी को पहले उठाकर दाहिना हाथ घुमाने का नाम 'उद्वेष्टन' और छोटी उँगली को पहले नीचे लाकर घुमाने का नाम 'परिवर्तन' है। इन दो प्रकारों से दाहिने हाथ को घुमाकर तन्त्री को बजाते समय बायें हाथ से स्वरस्थानों में वेगपूर्वक कम्रिका से सारण करना।

१०. तलहस्त—दाहिनी हथेली से बजाते समय बायें हाथ की तर्जनी के द्वारा तन्त्री का स्पर्श करना या धीरे बजाना।

११. अर्धचन्द्र—दाहिने हाथ के अंगूठे और तर्जनी को अर्धचन्द्र रूप में रखकर तन्त्री का स्पर्श करना।

१२. प्रसारक—दाहिने हाथ के अंगूठे को हथेली पर रखकर बाकी चारों उँगलियों को संयुक्त करके तर्जनी और छोटी उँगली से बजाना।

१३. कुहर—सब उँगलियों को सिकोड़कर छोटी उँगली से बजाना।

दशविध वाद्य (क्रियाओं के जोड़ने का क्रम)—

१. छन्द—खसित (बायें हाथ की क्रिया २) और स्फुरित (बा० १) करके तुरन्त तारस्थान के स्पर्श करने का नाम 'छन्द' है।

२. धारा—स्खलित (उ० ७), मूर्च्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४) और रेफ (उ० २), उल्लेख (दा० ४) और रेफ इनको जोड़ने का नाम है 'धारा'।

३. कैकुटी—शुकवक्त्र (उ० ८), स्फुरित (बा० १), घोष (उ० १), अर्धकर्तरी (उ० ५), इनको क्रमपूर्वक जोड़ने का नाम है 'कैकुटी'।

४. कंकाल—स्फुरित (बा० १), मूर्च्छना (उ० ९) इनके साथ तीन बार कर्तरी (उ० ४) के भी प्रयोग करने का नाम है 'कंकाल'।

५. वस्तु—स्पष्टतया तारस्वरों के साथ कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २) और कुहर (उ० १३) का प्रयोग करना।

६. द्रुत—कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २), कुहर (उ० १३), रेफ (उ० २), भ्रमर (दा० ६), घोष (उ० १) इनको क्रम से जोड़ना।

७. गजलील—मूर्च्छना (उ० ९), स्फुरित (बा० १), कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २) इनको जोड़ना।

८. दण्डक—स्खलित (उ० ७), मूर्च्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४), रेफ (उ० २), खसित (बा० २) इन्हें जोड़ना।

९. उपरिवाद्य—ऊपर और नीचे सारण करके रेफ (उ० २), कर्तरी (उ० ४), निष्कोटित (उ० ६) और तलहस्त (उ० १०) का प्रयोग करना।

१०. पक्षिरुत—इसमें सब हस्त-व्यापारों का मिलन है।

सकल-निष्कल वादन प्रकार

तन्त्री-संलग्न जीवा के कारण जब ध्वनि स्थूल रूप में उत्पन्न होती है, तब वह सकल 'वाद्य' कहलाता है।

नाद की स्थूलता के लिए तन्त्री-पत्रिका के बीच जीवा को स्पृश्यास्पृश्य रूप में रखना चाहिए। इसे 'कला' कहते हैं। कला स्थापित किये बिना वादन किया जाय, तो नाद सूक्ष्म रहता है। इस तरह के वादन का नाम 'निष्कल' है।

एक-तन्त्री वीणा के पर्य्यायवाची नाम ब्रह्मवीणा या घोष हैं। एक-तन्त्री वीणा ही विविध वीणाओं की जननी है। एक-तन्त्री वीणा के अनुसार ही दूसरी वीणाओं का भी वादन विहित है।

दो तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'नकुल' और तीन तन्त्रीवाली का नाम त्रितन्त्री या जन्त्र है।

सात तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'चित्रा' और नौ तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'विपञ्ची' है। चित्रा और विपञ्ची में कोण और नख दोनों से वादन विहित है। इक्कीस तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'मत्तकोकिला' है। इसे 'सुरमण्डल' भी कहते हैं। यह वीणा सब वीणाओं में मुख्य कही गयी है, क्योंकि इसमें हर एक स्थान या सप्तक के सातों स्वरों के लिए सात-सात तन्त्रियाँ हैं।[1]

१. मतंग की वीणा चित्रा है। स्वाति की वीणा विपञ्ची है। नारदजी की वीणा महती (२१ तन्त्रीवाली) है। इन इक्कीस तन्त्रियों में तीन ग्राम स्थापित किये जाते थे। नारदजी के सिवा और कोई गान्धार ग्राम का वादन नहीं कर सकता। विपञ्ची

वृन्द में वीणा का वादन-प्रकार

विविध वीणाओं का वादन करते समय मुख्य स्थान 'मत्तकोकिला' का ही है। अन्य वीणाएँ उसी की अंगरूप हैं। मुख्य वीणा के वादन के अनुसार दूसरी वीणाओं में कुछ-कुछ गति भेद करके बजाने की परम्परा है। ऐसा भेदन 'करण' कहलाता है।

करण के छः भेद हैं। उनके नाम—(१) रूप (२) कृतप्रतिकृत (३) प्रतिभेद (४) रूपशेष (५) ओघ और (६) प्रतिशुष्क हैं।

१. रूप नामक करण में एक ही समय में जब मुख्य वीणा में गुरु-लघु आदि के प्रयोग किये जाते हैं तब अंगवीणा में गुरु स्थान पर दो लघु, लघुस्थान में दो द्रुत का—इस प्रकार भञ्जन युक्त प्रयोग विहित है।

२. इसी प्रकार वादन करने में एक ही समय के बदले मुख्य वीणा के बाद अंगवीणा के वादन करने का नाम 'कृतप्रतिकृत' है।

३. रूप के विरुद्ध प्रकार में वादन करना 'प्रतिभेद' है। अर्थात् मुख्य वीणा में दो लघु का प्रयोग करते समय अंगवीणा में एक गुरु का प्रयोग करना इत्यादि।

४. मुख्य वीणा के वादन के समय विदारी विच्छेद के अवसर पर, अर्थात् 'चीज़' के एक भाग के अंत और दूसरे भाग के आरंभ के मध्य को अंगवीणा के वादन से पूर्ण करना 'रूपशेष' है।

की नौ तन्त्रियों में सात स्वर तथा अन्तर एवं काकली स्वर स्थापित थे। यज्ञों में उपयोग करने के लिए ४ तन्त्री, १२ तन्त्री और शत-तन्त्री वीणाएँ थीं। नान्यभूपाल ने, जो 'संगीत रत्नाकर' में आचार्यों में उद्धृत किये गये हैं, अपने 'सरस्वतीहृदयालंकार हार' नामक भरत भाष्य में वीणाओं को शैव आगमों के प्रमाण के अनुसार तीन भेदों में विभाजित किया है। उनके नाम वक्रा, कूर्मा और अलाबु हैं। विपञ्ची, वल्लकी, मत्तकोकिला, ऐन्द्री, सरस्वती, गान्धर्वी, ब्रह्मिका ये सात वक्रवीणा हैं। उनकी तन्त्रियाँ ९ हैं। संवादिनी, वितन्त्री, किन्नरी, परिवादिनी, ध्रासक्ता—ये पाँच कूर्मवीणा हैं। वितान, नकुल, त्रितन्त्रिका, विशोका, ईश्वरी, परिवादिनी—ये सात अलाबुवीणा हैं।

'संगीत नारायण' में रत्नाकर में कही हुई वीणाओं के अलावा वल्लकी, ज्येष्ठा, जया, हस्तिका, कुब्जिका, कूर्मा, सारंगी, त्रिसरी, शततन्त्री, ऐन्द्री, कर्तरी, औदुम्बरी, रावण-हस्त, रुद्रवीणा, स्वरमण्डल, कपिलासी, मधुस्यन्दी और घोणा के नाम भी दिये गये हैं।

५. मुख्य वीणा में विलंबित लय में वादन करते समय अंगवीणा में अतिद्रुत लय में वादन करने का नाम 'ओघ' है। इस तरह के वादन के लिए राग एवं स्वरों का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास तथा हस्तलाघव आवश्यक है।

६. मुख्य वीणा के स्वरों के संवादी या निकट अनुवादियों को अंगवीणा में प्रयुक्त करके वादन को सुशोभित करना 'प्रतिशुष्क' है।[1]

विविध वादनों के धातु

विविध वादनों की समीचीन योजना के द्वारा रक्ति और दोषरहित पुष्टि उत्पन्न कराने की विधि 'धातु' है। धातु के चार भेद हैं—विस्तार, करण, आविद्ध और व्यञ्जन।

विस्तार धातु के चार प्रकार हैं—विस्तारज, संघातज, समवायज और अनुबन्ध।

विस्तारज प्रकार में एक ही बार तन्त्री को छेड़ना है। संघातज प्रकार में दो बार छेड़ना है। समवायज प्रकार में तीन बार छेड़ना है। अनुबन्ध प्रकार में इन तीनों प्रकारों को यथोचित जोड़ना है।

संघातज प्रकार के चार भेद हैं। समवायज प्रकार के आठ भेद हैं। विस्तारज और अनुबन्ध के प्रकार के एक-एक भेद हैं। कुल मिलकर विस्तार धातु के १४ प्रकार हैं।

विस्तार धातु के छेड़ने में दो प्रकार हैं—उत्तर और अधर। वीणा के उत्तर भाग में छेड़ने से मन्द्रस्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है। अधर भाग में छेड़ने से तारस्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है।

संघातज प्रकार में उत्तर में दो बार छेड़ना पहला भेद है। अधर में दो बार छेड़ना दूसरा भेद है। अधर के बाद उत्तर में छेड़ना तीसरा भेद है। उत्तर के बाद अधर में छेड़ना चौथा भेद है।

समवायज प्रकार के आठ भेद हैं—(१) तीन उत्तर (२) तीन अधर (३) दो उत्तर और एक अधर (४) दो अधर और एक उत्तर (५) एक उत्तर के बाद दो अधर (६) एक अधर के बाद दो उत्तर (७) अधर के बाद उत्तर और उसके बाद फिर अधर (८) उत्तर के बाद अधर और उसके बाद उत्तर।

१. ये छः करण तंजौर के राजा सरफ़ोजी (१८०० ई०) के द्वारा परिष्कृत तंजौर बैण्ड में आज भी सुने जा सकते हैं। यह बैण्ड पाश्चात्य वाद्यों के द्वारा भारतीय संगीत का वादन करनेवाली वाद्यगोष्ठी है।

करण धातु के पाँच प्रकार हैं। इनके नाम—रिभित, उच्चय, नीरटित, ह्लाद और अनुबन्ध हैं।

आविद्ध धातु के पाँच भेद हैं—क्षेप, प्लुत, अतिपात, अतिकीर्ण और अनुबन्ध।

करण और आविद्ध प्रकारों में छेड़ने के लघु-गुरुत्व कालप्रमाण भेदों से धातु बनाये गये हैं। करण में गुरु का प्रयोग अधिक नहीं है। आविद्ध में प्रायः गुरु या गुरु की विहीनता है।

करण धातु—'रिभित' में दो लघु के बाद एक गुरु है। 'उच्चय' में चार लघु के बाद एक गुरु है। 'नीरटित' में छः लघु के बाद एक गुरु है। 'ह्लाद' में आठ लघु के बाद एक गुरु। 'अनुबन्ध' में इन प्रयोगों का मिश्रण है।

आविद्ध धातु—आविद्ध धातु के पाँच भेद हैं—(१) क्षेप—एक लघु के बाद दो गुरु। (२) प्लुत—लघु, गुरु और लघु (३) अतिपात—लघु, गुरु लघु गुरु या लघु लघु गुरु गुरु (४) अतिकीर्ण—लघु गुरु, लघु गुरु, लघु गुरु, लघुगुरु, या लघुलघु, लघुलघु गुरुगुरु, गुरुगुरु (५) अनुबन्ध—इन चारों प्रकारों का मिश्रण। मतान्तर के अनुसार आविद्ध के पहले चार भेदों में क्रमशः दो, तीन, चार और नौ लघु होते हैं।

व्यञ्जन धातु—व्यञ्जन धातु में उँगलियों के विविध प्रयोग से विचित्रता का संपादन करते हैं। इसमें दस भेद हैं—पुष्प, कल, तल, बिन्दु, रेफ, अनुस्वनित, निष्कोटित, उन्मृष्ट, अवमृष्ट और अनुबन्ध।

अंगूठे और छोटी उँगली से समकाल में मारना 'पुष्प' है।

दो तन्त्रियों पर एक ही स्वर को भिन्न-भिन्न स्थानों पर दोनों अंगूठों से बजाने का नाम है 'कल'।

बायें हाथ के अंगूठे से तन्त्री को छेड़ने का नाम है 'तल'।

एक ही स्वर पर क्रमशः हरएक उँगली से छेड़ना 'रेफ' है।

'तल' का प्रयोग करके उसके बाद अवरोह में स्वर प्रयोग करना 'अनुस्वनित' है।

बायें हाथ के अंगूठे से ऊपर और नीचे छेड़ने का नाम 'निष्कोटित' है।

तर्जनी के द्वारा अति मधुरता के साथ धीरे से छेड़ने का नाम है 'उन्मृष्ट'।

तीन तन्त्रियों में तीन जगहों पर दाहिने हाथ की छोटी उँगली और दोनों हाथों के अंगूठों से एक ही स्वर का उत्पादन करने का नाम है 'अवमृष्ट'। इन सब का मिश्रण है 'अनुबन्ध'।

इन धातुओं के समस्त भेदों का योग ३४ है। ये धातु सब तन्त्रीवाद्यों में प्रयुक्त करने योग्य हैं। पर एक नियम यह है कि जिस धातु से जिन रागों की रक्ति बढ़ती है उसी धातु को उन रागों में प्रयुक्त करना चाहिए।

वृत्ति

गीत, वाद्य और नृत्त में भिन्न-भिन्न देश की जनता के रुचि-भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रयोग हुआ करता है। इन प्रकारों का नाम 'वृत्ति' है। ये वृत्तियाँ तीन हैं। अर्थात् चित्रवृत्ति, वार्त्तिकवृत्ति और दक्षिणवृत्ति।

चित्र वृत्ति में वाद्य का मुख्यत्व है। वाद्यों का अनुसरण करने में ही गीत का महत्त्व है। वार्त्तिक वृत्ति में गीत का प्राधान्य है। गीत का अनुसरण ही वाद्यों की श्रेष्ठता है। एक दूसरा मत यह है कि द्रुत, मध्य और विलम्ब लय; सम, स्रोतोगत, गोपुच्छ यति; मागधी, संभाषिता और पृथुला गीति; ओघ, अनुगत और तत्त्व वाद्य; (इन तीनों का विवरण ऊपर देखिए) चित्र, वार्त्तिक और दक्षिण ताल का मार्ग; अनागत, सम और अतीत ग्रह; इन्हें इन तीनों वृत्तियों में क्रमशः मुख्यत्व देते हैं।

वाद्यवादन का प्रकार

वाद्यों के वादन में तीन प्रकार 'तत्त्व', 'ओघ' और 'अनुगत' हैं।

१. गीत के लय, ताल, विराम (अन्त करने की जगह), उस राग की जाति, अंश, ग्रह, न्यासादि के प्रकाशन करने के मार्ग का अवलंबन करके गीत में लीन होकर वाद्यों के वादन करने का प्रकार 'तत्त्व' है।

२. गीत का थोड़ा-थोड़ा अनुसरण करके वादन करने का नाम 'अनुगत' है।

३. गीत के अन्त में तो वाद्य मिल जाता है, पर अवशिष्ट प्रयोगों को दूसरे प्रकार में विभाजित करके वादन करने का नाम 'ओघ' है।

निर्गीत प्रबन्ध

वाद्यों के गीतरहित वादन का नाम 'निर्गीत' है। इसका पर्य्यायवाची शब्द 'शुष्कवाद्य' है। रक्ति और मनोहरता के साथ वाद्यों का वादन करने के लिए शास्त्र-रीति से धातुओं एवं तालों और वादी-संवादी स्वरों का भी संयोजन करना चाहिए। इस तरह के संयोजन प्रबन्धरूप में हैं। इसके दस भेद हैं—आश्रावणा, आरम्भ-विधि, वक्त्रपाणि, संघोटना, परिघट्टना, मार्गासारित, लीलाकृत और त्रिविध आसारित। इनके लक्षण 'संगीत रत्नाकर' के वाद्याध्याय में (श्लोक १८२ से २४० तक) दिये गये हैं।

हरएक निर्गीत वाद्य-प्रबन्ध के विवरण में धातुओं का विवरण, गुरु, लघु आदि के प्रयोग का विवरण, ताल कलाओं का विवरण, तालों तथा सशब्दादि क्रियाओं के

विवरण दिये गये है। इस संप्रदाय का अत्यन्त लोप हो जाने के कारण इनकी सम्यक् जानकारी रखना और इनके अनुसार वादन करना तब तक साध्य नहीं है जब तक कि इसके अनुसार लक्ष्य-साहित्य की खोज न हो जाय।

आलापिनी

आलापिनी का दण्ड बाँस से बनाया जाता था और नौ मुष्टि लंबा होता था (लगभग ४५ अंगुल—३४ इंच)। छिद्र का व्यास दो अंगुल था, तन्त्री बकरी की आंत से बनी होती थी। मतान्तर के अनुसार दण्ड दस मुष्टि लंबा है और रक्त चन्दन, खैर या आबनूस की लकड़ी से भी बनाया जाता है। तन्त्री रेशम या कपास की है।

इस वीणा के ककुभ में पत्रिका नहीं है। परंतु ककुभ पिण्डयुत है। तुम्ब या कद्दू का परिणाह एक वितस्ति है। उसका मुख चार अंगुल का है। उसकी नाभि हाथीदांत से बनायी जाती है। नीचे से पौने दो मुष्टि की दूरी पर तुम्ब या कद्दू का स्थान है। इसका विशिष्ट लक्षण यह है कि नारियल का कर्पर, दोरक एवं सारिका इसमें नहीं हैं।

आलापिनी का वादन-क्रम

तुम्ब या कद्दू को वक्ष पर रखकर दण्ड के निचले भाग को बायें हाथ के अंगूठे और मध्यमा उँगली से धारण करके बायें हाथ की चार उँगलियों से चार स्वर और दाहिने हाथ की तीन उँगलियों से तीन स्वर का वादन करना है। बिन्दु (उभय हस्त व्यापार) की तरह वादन करना चाहिए। इसमें तालबद्ध गीतों का वादन उल्लेख्य है।

किन्नरी

किन्नरी के दो भेद हैं—लघ्वी और बृहती। इसके दण्ड की लंबाई तीन बित्ता और पाँच अंगुल है। दण्ड बाँस का रहना चाहिए। उसके घेरे का नाप पाँच अंगुल है। उसके ककुभ में धातु की पत्रिका है। उसमें कांस्य, गीध (के वक्ष) की हड्डी या लोहे की चौदह नलिकाएँ (सारिकाएँ) छोटी उँगली के परिमाण की स्थापित करनी चाहिए। स्थापना के लिए वस्त्र और मसी (स्याही) का मिश्रण कर और कूटकर लगाना है। नीचे से पहली सारिका दूसरे स्वर-सप्तक के निषाद का स्थान है। उससे एक अंगुल दूर पर दूसरी सारिका रखना है और क्रमशः दूरी को बढ़ाते हुए सारिकाओं का स्थापन करना है। आठवीं सारिका की दूरी दो अंगुल हो जाती है।

उसके बाद की ६ सारिकाओं की दूरी उससे ४ अंगुल तक रहनी चाहिए। ककुभ के नीचे एक कद्दू का स्थापन करना चाहिए। तीसरी और चौथी सारिकाओं के बीच में दूसरे कद्दू को रखना चाहिए। यह कद्दू पहले कद्दू से जरा बड़ा रहना चाहिए। नीचे दण्ड के सिरे से दो अंगुल की दूरी पर छेद करके, उसमें भ्रमण करने योग्य खूँटी रखनी चाहिए। उसके आगे एक अंगुल ऊँची एक स्थिर खूँटी रखनी है। उसका ऊपरी भाग तन्त्री को धारण करने योग्य बाण-पुंख के आकार का होना चाहिए। तन्त्री लोहे की हो जो हाथी के बाल के समान मोटी हो। तन्त्री को ककुभ से बाँधकर सारिकाओं के ऊपर लाते हुए स्थिर खूँटी के ऊपर रखकर घुमाई जा सकनेवाली खूँटी से बाँध देना है।

दाहिने हाथ की उँगलियों से तन्त्री को छेड़ना और बायें हाथ की उँगलियों से स्वरस्थान में दबाना चाहिए।

बृहती किन्नरी—यह किन्नरी एक बित्ता ज्यादा लंबाई की है। तन्त्री इसमें स्नायुनिर्मित है। कद्दू तीन हैं। तीसरे कद्दू को आलापिनी के समान रखना है।

किन्नरी के देशी भेद तीन हैं—बृहती, मध्यमा और लघ्वी। इनके परिमाण के विषय में अनेक मत हैं।

पिनाकी

पिनाकी आधुनिक वायलिन की जननी है। उसका रूप धनुषाकार है। इसी आकार में उसे स्थिर रखने के लिए एक रस्सी से दोनों सिरे बाँध रखे गये हैं। हरएक सिरे में एक-एक शिखा है। उसका निचला सिरा एक कद्दू पर स्थापित किया जाता है। शिखाओं पर स्नायु की तन्त्री बाँधी जाती है। तन्त्री की दोनों शिराओं के मध्य में तन्त्री से नीचे पौने दो अंगुल विस्तार का एक साधन स्वरस्थानों पर तन्त्री को दबाने के लिए रखा जाता है। इसका वादन धनुषाकार कोण से होता है, जो घोड़े की पूँछ के बालों से बँधा हुआ है। इस पर राल (रेजिन) रगड़कर वादन किया जाता है। कद्दू को पाँव से पकड़े हुए ऊपर की शिखा को कन्धे पर रखकर बायें हाथ से तन्त्री को दबाकर वादन करना है।

वैणिकों के लिए आवश्यक गुण

अंगों का सौष्ठव, स्थिर बैठने की शक्ति, श्रम को जीतने की शक्ति रखनेवाले हाथ, भय रहितता, इन्द्रियों को जीतना, प्रगल्भता, गीत-वाद्य में होशियारी, अवधान से युक्त मन आदि वैणिकों के लिए आवश्यक गुण हैं।

प्रचलित तन्त्री वाद्य

रुद्रवीणा—यह वीणा अब उत्तर भारत में प्रचलित है। सोमनाथ (१६०० ई०—रागविबोध कर्ता) के ग्रन्थ में भी इसका विवरण है। अहोबल (संगीतपारिजात कर्ता—१७ वीं शताब्दी) और नारायण (संगीतनारायण कर्ता—१६ वीं शताब्दी) इन दोनों ने भी रुद्रवीणा का विवरण दिया है। इसका दण्ड ११ मुष्टि का है। रन्ध्र अंगूठे के व्यास का है। दोनों सिरों में कांस्य की टोपी लगी हुई है। दण्ड का घेरा साढ़े पाँच अंगुल है। उसके ककुभ के तीन सिरे हैं, वे उच्च, उच्चतर तथा उच्चतम हैं। ऊर्ध्व सिरे में चार मूल तंत्रियों का स्थापन करना है। दाहिने सिरे में 'सुर' देनेवाली दो या तीन तंत्रियों का स्थापन करना है। ककुभ से सात अंगुल दूर एक कद्दू का स्थापन करना है। ३४ अंगुल की दूरी पर दूसरे कद्दू का स्थापन करना है। दोनों कद्दुओं के मुख के घेरे १८ अंगुल के हैं। उसके ऊपर कुम्भ का स्थापन करना है। पिछले कद्दू की ऊँचाई कुछ अधिक चाहिए। इस वीणा में सारिकाएँ १८ हैं। दस बड़ी हैं और आठ छोटी। छोटी सारिकाएँ तारस्थान के लिए हैं। चारों मूलतन्त्रियाँ क्रमश: षड्ज, पञ्चम, षड्ज-पञ्चम का वादन करती हैं।

तंजौर वीणा या दाक्षिणात्य वीणा—इसमें एक ही कद्दू है। पर दाहिने सिरे में लकड़ी का घट दण्ड के साथ जोड़ दिया जाता है। एक ही लकड़ी में भी दण्ड और घट खुदवाये जाते हैं। तब उसे 'एकाण्ड वीणा' कहते हैं। कद्दू का स्थान बायीं ओर है। सारिकाएँ २४ हैं। हरएक स्थान की बारह सारिकाएँ हैं। मूलतन्त्रियाँ चार हैं और चिकारियाँ तीन हैं। चिकारी दण्ड के पार्श्व में रहती है। मूल तन्त्रियों पर मुक्तावस्था में मध्य षड्ज, मन्द्र पञ्चम, मन्द्र षड्ज, अति मन्द्र पञ्चम बोलते हैं। चिकारियों पर तारस्थानीय षड्ज, पञ्चम और अतितारस्थानीय षड्ज बोलते हैं। तीनों चिकारियाँ और मूल तन्त्रियों में पहली दो तन्त्रियाँ लोहे की हैं। बाकी दो मूलतन्त्रियाँ पीतल की हैं।

महानाटक वीणा या गोट्टुवाद्य—कर्नाटक पद्धति का यह एक नवीन वाद्य है। इसमें अनुध्वनि के लिए सात तन्त्रियाँ दण्ड के अन्दर हैं। आकार वीणा के अनुसार है। उँगली से बजायी जाती है, पर सारण उँगलियों से नहीं किया जाता। एक लकड़ी के टुकड़े से तन्त्री को दबाकर स्वरों का उत्पादन करते हैं। यह काष्ठदण्ड लंबाई में ३ इंच है और १ इंच इसका व्यास है। यह आबनूस की लकड़ी से बनाया जाता है। इसमें विविध गमकों को अच्छी तरह उत्पन्न किया जा सकता है, परंतु वीणा के कुछ विशेष प्रयोग इसमें साध्य नहीं हैं।

सारंगी—सारङ्गी का विवरण 'संगीत नारायण' में बताया गया है। यह विवरण प्रायः आधुनिक सारङ्गी के समान है। संगीत नारायण में पाये जानेवाले विवरण यों हैं—उसका वदन साल, पनस या घनता से युक्त अन्य लकड़ी से बनाया जाता है। उसकी लंबाई तीन बित्ते की है। सिर का विस्तार १५ अंगुल है (लगभग ११ इंच), सिर सर्पफणाकार है। सिर के मध्य भाग में एक शिखर है। गला पतला है। दण्ड गले के नीचे है। उसकी लंबाई १७ अंगुल है। ऊपर स्थूल होता जाता है और नीचे क्रमशः कृश है। दण्ड और सिर इन दोनों का गर्भ खुदा हुआ है। दण्ड के पिछले भाग में और सिर के गर्भ भाग में सारण करने का स्थान चतुरश्र रूप में है। उसकी लंबाई छः अंगुल और चौड़ाई चार अंगुल है।

उसके सिर का प्रदेश चमड़े से मढ़ा जाता है। उसकी तीन तन्त्रियाँ रेशमी धागे की हैं। धनुष (गज़) से इसका वादन करना है। धनुष (गज़) घोड़े की पूँछ के बालों का रहता है। इसमें राल रगड़कर वादन करना है। धनुष की लंबाई ३० अंगुल (२२½ इंच) है।

आधुनिक सारङ्गी का रूप इसके समान है, पर वादन करते समय वाद्य को रखने में अन्तर है। सिर को नीचे रखकर वादन करते हैं। इसकी तीन तन्त्रियाँ ताँत की हैं और चौथी तन्त्री लोहे की है। इसके अतिरिक्त अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियों के नीचे लगभग लोहे की १५ तन्त्रियाँ हैं। सब तन्त्रियाँ घूम सकनेवाली खूँटी से बाँधी जाती हैं।

सितार—सितार भारतीय त्रितन्त्री वीणा का एक भेद है। कहा जाता है कि उसके नाम और रूप की कल्पना अमीर खुसरो ने की। सितार का 'घट' पनस की लकड़ी से या कद्दू के आधे भाग से बनाया जाता है। घट के ऊपरी भाग पर पतला तख्ता लगाया जाता है। उसका ककुभ सीधा रहता है। इसमें कद्दू नहीं है। घट के ऊपरी भाग में छोटे-छोटे द्वार हैं। तन्त्रियाँ चार हैं। दण्ड और उसके ऊपर की पीतल की सारिकाएँ कूर्मपृष्ठ के आकार की हैं। कुछ सितारों में अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियों के नीचे तन्त्रियाँ रखी जाती हैं। सारिकाएँ सरकने योग्य रखने के लिए कमानी स्प्रिङ्ग से बाँधी जाती हैं। सारिकाएँ अठारह से बीस तक होती हैं।

सरोद—सारङ्गी, सितार और वीणा के गुणों से युक्त है और लंबाई दो हाथ की है। घट से ककुभ तक की चौड़ाई में क्रमशः कमी होती है।

दिलरुबा—सारङ्गी के आकार में रहता है, पर दण्ड की लंबाई कुछ ज्यादा है। धनुष (गज़) से बजाया जाता है, इसमें सारिकाएँ हैं। सारङ्गी की तरह इसके घट-स्थान के नीचे के भाग चमड़े से मढ़े जाते हैं। चार मुख्य तन्त्रियाँ हैं और अनुध्वनि

के लिए उनके नीचे २२ तन्त्रियाँ रहती हैं। सारिकाएँ १९ हैं और वे सरकने योग्य हैं। चार मुख्य तन्त्रियों में दो लोहे की और दो पीतल की हैं।

सुरबहार—सितार के आकार में रहता है, परंतु इसकी सारिकाएँ सरकने योग्य नहीं हैं, स्थिर रहती हैं। इसे उँगलियों से और कोण से बजाते हैं।

इसराज—सारङ्गी के आकार और प्रकार में रहता है। पर सब तन्त्रियाँ लोहे की हैं।

तंबूरा—भारतीय संगीत का, 'सुर' देने का वाद्य है। आकार में वीणा के समान है। पर इसमें कद्दू और सारिकाएँ नहीं हैं। घट मात्र है। इसमें चार तन्त्रियाँ हैं। उन्हें क्रमशः बजाने से 'प स स स' बोलते हैं।

सुषिर वाद्य

बाँसुरी—वेणु (बाँस), आबनूस की लकड़ी, हाथी दाँत, चन्दन, रक्त चन्दन, लोहे, कांसे, चाँदी या सोने से बनायी जा सकती है। यह ग्रन्थि, भेद, और व्रण से रहित रहती है। इसका रंध्र-प्रमाण छोटी उँगली का व्यास है। यह रंध्र पूरी बाँसुरी में एक-सा रहता है। सिर स्थल बंद रहता है। दो, तीन या चार अंगुल की दूरी पर फूँकने के लिए एक उँगली के प्रमाण का पहला रंध्र बनाना है।

अग्र भाग में एक या दो अंगुल छोड़कर उसके पीछे बदरी-बीज के समान परिधि-वाले आठ रंध्र करना है। इन आठ में से पहला रंध्र वायु के निर्गमन या बाहर जाने के लिए नियत है। बाकी सात रंध्र सात स्वरों के लिए निर्धारित हैं। ये आठ रंध्र उनके बीच में समान दूरी के स्थान छोड़कर करना है।

मुखरंध्र के निकटतम रंध्र से, सप्त स्वररंध्रों को मूँदकर उत्पन्न होनेवाले स्वर का तारस्वर निकलता है। मुखरंध्र और ताररंध्र के बीच में जो जगह छोड़ी जाती है उस जगह की दूरी से विविध भेद होते हैं। संगीत रत्नाकर में इस बात पर पहले एक नियम बताया है, उस नियम को शास्त्रीय नियम कहा गया है। उसके बाद देशी-मत नाम का दूसरा नियम बताया, परंतु उसी ग्रन्थ में बताया गया है कि ये दोनों नियम ठीक नहीं। ऐसा कहकर स्वकल्पित नये नियम को प्रस्तुत किया गया है।

पहले-पहल बताया हुआ शास्त्रीय नियम यह है—"स्वररंध्रों का परस्पर अंतर आधा अंगुल और मुखरंध्र से ताररंध्र की दूरी एक, दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, चौदह, सोलह या अठारह अंगुल हो सकती है। इन पंद्रह प्रकार के वंशों के अलग-अलग नाम—एकवीर, उमापति, त्रिपुरुष, चतुर्मुख,

पंचवक्त्र, षण्मुख, मुनि, वसु, नाथेन्द्र, महानन्द, रुद्र, आदित्य, मनु, कलानिधि और अष्टादशाङ्गुल दिये गये हैं।

मुखरंध्र तारस्वर रंध्र की दूरी को बढ़ा सकते हैं। मुखरंध्र से १३, १५ और १७ अंगुल दूरी पर यदि ताररंध्र रहता है, तो स्वरों का अन्तर स्पष्ट नहीं होता। बीस या बाईस अंगुल की दूरी पर भी कुछ लोग ताररंध्र बनाते हैं, पर उनमें शब्द अतिमन्द्र होने के कारण वे मान्य नहीं हैं। यह दूरी पाँच अंगुल के नीचे होती है तो ध्वनि अतितार रहती है। इसलिए इनके प्रयोग विरल हैं।"

"इनमें सप्त स्वरों के द्वारों को मुद्रित किया जाय अर्थात् बंद कर दें, तो अष्टादशाङ्गुल नामक बाँसुरी में मन्द्रषड्ज उत्पन्न होता है। दूसरी बाँसुरियों में क्रमशः मन्द्रऋषभ, मन्द्रगान्धार, मन्द्रमध्यम, मन्द्रपञ्चम, मन्द्रधैवत और मन्द्रनिषाद उत्पन्न होते हैं। उसके बाद की आठ बाँसुरियों में क्रमशः मध्यस्थानीय षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद और तारस्थानीय षड्ज क्रमशः उत्पन्न होते हैं।"

"इसी प्रकार इन बाँसुरियों के अन्तिम दो रंध्रों को खुला रखें तो, क्रमशः हरएक बाँसुरी में मन्द्रऋषभ, मन्द्रगान्धार—इत्यादि अग्रिम स्वर की उत्पत्ति होती है। तीन रंध्रों को खुला रखें तो बाँसुरी में तीसरा स्वर उत्पन्न होता है। इस तरह सात रंध्र तक खुले रहने से क्रमशः हरएक बाँसुरी में सातवाँ स्वर तक उत्पन्न होता है।" इसी को शास्त्रीय नियम कहते हैं।[1]

प्राचीन तमिल ग्रन्थों में पाये जानेवाले विवरण और आज कर्नाटक संप्रदाय में प्रचलित पद्धति—ये दोनों भी प्रायः समान हैं। इसके अनुसार बाँसुरी की लंबाई २० अंगुल (१५ इंच) है। उसके सिर से दो अंगुल (१½ इंच) छोड़कर फूँकने का रंध्र बनाया जाता है। उससे सात अंगुल (५¼ इंच) दूर छोड़कर और अन्त में दो अंगुल (१½ इंच) छोड़कर बाकी जगह में समान दूरी के आठ छिद्र बनाये जाते हैं। इन आठ रंध्रों में अन्तिम रंध्र वायु संचार के लिए है। बाकी सात द्वारों में दाहिने हाथ की चार उँगलियाँ और बायें हाथ की तर्जनी से अर्थात् तर्जनी, मध्यमा और अना-

१. संगीत रत्नाकर में बताये हुए 'शास्त्रीय मत' के विषय में ग्रन्थकार का कथन है कि यह मत ठीक नहीं है। हमें मूल ग्रन्थों को ढूँढ़कर उसके असली स्वरूप का निश्चय करना है। क्योंकि हमारी संगीतकला का विकास शास्त्रीय (वैज्ञानिक) आधार पर हुआ है। इसलिए बाँसुरी के बारे में भी सच्चे शास्त्र का पता लगाना आवश्यक है।

मिका उँगलियों से बंद और खुला रखकर बजाते हैं। बायें हाथ की अनामिका को खोलने से षड्ज, मध्यमा उँगली को खोलने से ऋषभ, सब द्वारों को खुले रखने से गान्धार, बायें हाथ की तर्जनी उँगली को खोलने से मध्यम, दाहिने हाथ की अनामिका से पञ्चम और मध्यमा को खोलने से धैवत, तर्जनी को खोलने से निषाद---उत्पन्न होते हैं। इनके साथ शास्त्र वचन के अनुसार चतुःश्रुति स्वर, त्रिश्रुति स्वर और द्विश्रुति स्वर के उत्पादन का प्रकार भी अनुभव के अनुसार प्रयुक्त करना है। शास्त्र का वचन है कि उँगली को हटाकर रंध्र को पूरी तरह खुले रखने से चतुःश्रुति स्वर को उत्पत्ति होती है। उँगली से द्वार को बार-बार खुला और बंद रखने से त्रिश्रुति स्वर और आधा खोलने से द्विश्रुति स्वर की उत्पत्ति होती है। कभी-कभी फूँकने के बल में कमी करके त्रिश्रुति स्वर उत्पन्न किया जाता है।

फूँकने के प्रकार

मुँह को रंध्र के अति निकट में रखकर फूँकने से तार स्वर की उत्पत्ति होती है। इसका नाम 'टीपा' है। मुँह को थोड़ी दूर पर रखकर फूँका जाय तो, मन्द्र स्वर की उत्पत्ति होती है। फूँकने में वायु को वेगयुक्त या मन्द रखना, पूर्ण या अपूर्ण रखना, बढ़ाते जाना या कम करते आना इत्यादि क्रियाओं से एक ही स्वरस्थान में विविध स्वरों की उत्पत्ति हो सकती है।

बाँसुरी की गतियाँ

बाँसुरी की पाँच गतियाँ हैं; कम्पिता, वलिता, मुक्ता, अर्धमुक्ता, निपीडिता—इन गतियों से विविध वर्णालंकारों का प्रकाशन होता है।

बाँसुरी को अधर में रखकर कम्पन करें तो 'कम्पिता' गति उत्पन्न होती है।

उँगलियों को टेढ़ी करके चालन करने से 'वलिता' गति हो जाती है।

रंध्र पूरा खोल दिया जाय तो 'मुक्ता' गति है।

आधा खोलने का नाम 'अर्धमुक्ता' है। शब्द को कुछ देर धारण करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है।

सब रंध्रों को बंद करके जोर से बजाने का नाम 'निपीडिता' है।

नाटक में बाँसुरी का प्रयोग

शृङ्गार रस में मध्य, द्रुत लय में बाँसुरी के द्वारा ललित ध्वनि का प्रयोग करना विहित है। शोक भाव प्रदर्शन के लिए मध्य लय में मृदुत्व के साथ बाँसुरी बजाना है।

क्रोध और अभिमान की अवस्था का प्रदर्शन करने के लिए द्रुत लय में कम्पित, एवं स्फुरित गति में बजाना है। यह मतङ्ग मुनि का कथन है।[१]

बाँसुरी के नाद अर्थात् फूत्कार के गुण

१. स्निग्धता—रूखापन न रहना।

२. घनता—स्थूलता।

३. रक्ति—रञ्जन शक्ति।

४. व्यक्ति—स्पष्टता।

५. प्रचुरता—नादपूर्णता।

६. लालित्य—ललित भाव।

७. कोमलत्व—मृदुलता।

८. अनुरणन—अनुरणनत्व।

९. त्रिस्थानत्व—तीनों सप्तकों में बिना रुकावट के संचार करना।

१०. श्रावकत्व—सुनने में रमणीय रहना।

११. माधुर्य—मधुरता।

१२. सावधानता—अनवधान राहित्य अर्थात् फूँकने में न्यूनाधिकता के बिना एक सा फूँकना।

फूँकने के दोष

१. यमल—फूत्कार के साथ प्रतिफूत्कार की उत्पत्ति।

२. स्तोक—फूत्कार की कमी, नाद स्थूल होने पर भी स्थान को पाने की शक्ति का लोप।

३. कृश—स्थान प्राप्ति होने पर भी नाद का अस्थूल रहना।

४. स्खलित—बीच-बीच में ध्वनि स्थगित होना।

मतान्तर के अनुसार और पाँच दोष हैं—

१. कम्पित—कफ की युक्तता के कारण ध्वनि का विकृत भाव।

२. तुम्बकी—कद्दू के नाद की तरह रहना।

१. बताया गया है कि बाँसुरी वाद्य मतंग मुनि ने ही परिष्कृत किया और बाँसुरी वादन में उनका मत ही प्रमाण माना जाता है, परन्तु मतंग मुनि के उपलब्ध ग्रन्थ 'बृहद्देशी' में वाद्याध्याय लुप्त है।

३. काकी—तारप्राप्ति के अभाव के कारण कौए-जैसी ध्वनि रहना।

४. सन्दष्ट—दाँत पीसने की तरह फूँकना।

५. अव्यवस्थित—नाद की एकरूपता न होना।

बाँसुरी बजानेवाले के गुण

उँगलियों के चलाने का अभ्यास, अच्छी तरह स्थानों की प्राप्ति, मधुरता से रागभाव को व्यक्त करने की शक्ति, वेग से आगे और पीछे संचार करने की शक्ति, गीत और वादन में कुशलता, गवैयों को सुर देना, गायक के दोष को छिपाना, मार्ग और देशी रागों की अच्छी जानकारी, अपस्थान स्वरों में भी रागभाव को उत्पन्न करने की शक्ति—आदि ही बाँसुरी बजानेवाले के गुण हैं।

बाँसुरी बजानेवाले के दोष

मिथ्या प्रयोग अर्थात् अनुचित स्थान में आलाप करना या गमक का ज्यादा प्रयोग करना, इष्ट स्थान तक पहुँचने में अशक्तता, सिर का कम्पन आदि बाँसुरी बजानेवाले के दोष हैं।

बाँसुरी का वृन्द

एक मुख्य बाँसुरी बजानेवाला और चार लोग अंग-बाँसुरी बजानेवाले रहने चाहिए।

मुरली—मुरली की लंबाई दो हस्त की है। वादन करने के लिए मुखरंध्र है और स्वरों के लिए ४ द्वार हैं। नाद रमणीय है। शृङ्ग से या लकड़ी से बनायी जाती है। आकार काहल के समान है। लंबाई २८ अंगुल है।

काहल—पीतल, ताम्र और चाँदी से बनाया जाता है। धतूरे के फूल के आकार में रहता है। लंबाई तीन हाथ की है। उससे उत्पन्न होनेवाले शब्द 'हा' और 'हू' हैं। वीर-बिरुद के प्रकाश के लिए इसका प्रयोग करते हैं।

तुण्डकी या तुरुतुरी या त्तित्तिरी या तुरुत्ति—दो हस्त की लंबाई का जोड़ेवाला सुषिर वाद्य है। ४ हस्त की लंबाई हो तो उसका नाम 'चुक्की' है।

शृङ्ग—भैंस के शृङ्ग से बनाया जाता है। उसके मूल में साँड़ का आठ अंगुल लंबा सींग रखना चाहिए। उसके मूल में फूँकने का छिद्र करना चाहिए। इसका आकार हाथी की सूँड की तरह और इसके अन्तिम भाग का आकार धत्तूर के फूल की तरह रहता है। वादन में 'तुथुकार' उत्पन्न होता है। इसकी ध्वनि गंभीर है। गोपकेलि में इसका उपयोग होता है।

शंख—दोषरहित ११ अंगुल लंबाई के एक शंख की नाभि को खुदवाकर उसके शिखर में एक रंध्र बाहर से आधा अंगुल और अंदर से उरद के प्रमाण का करना है। उसे कर्कट मुद्रा हस्त से पकड़कर पूर्ण बल से फूँक मारना चाहिए। इसके शब्द 'हुं, धुं तो, दिगिद् दीं'—इत्यादि हैं।

नागस्वर या तूर्य—ये दक्षिण भारत के देवालयों में उत्सव, शादी, जुलूस आदि मंगल अवसरों पर बजाये जाते हैं। इनका आकार लंबे धत्तूर जैसा है। 'आच्चा' (द्राविड़ी) नामक लकड़ी से बनाये जाते हैं। इनकी लंबाई डेढ़ हाथ होती है। मुख का व्यास धीरे-धीरे बड़ा होता जाता है। अन्त में फूल के खिलने की जगह व्यास दो अंगुल का रहता है। उसमें सप्त स्वरों के रंध्र ½ अंगुल व्यास के बनाये जाते हैं। वायु-संचार के लिए सातों रंध्रों के नीचे कुछ दूर पर आठवाँ रंध्र है। सातवें रंध्र के नीचे दोनों तरफ दो रंध्र हैं, और आठवें रंध्र के नीचे इसी तरह के और दो रंध्र दोनों तरफ़ रहते हैं। फूँकने का एक उपकरण शीवाली नामक है। वह शीवाली गोलाकार न रहकर उभरा हुआ एवं खुलने तथा बंद करने योग्य छोटे नाल जैसा है। उसका अधर भाग वाद्य के मुँह में संलग्न करने योग्य एक शलाका जैसा है। उसे वाद्य के मुख में लगाकर बजाते हैं। अधर के चालन से विविध घन, नय आदि ध्वनि, स्वरों के वर्णालंकार उत्पन्न कर सकते हैं। और इसी क्रिया से स्वरों की एक या दो श्रुतियाँ ऊँची और नीची भी कर सकते हैं। नागस्वर सुर देने के लिए है। 'ओत्तु' नामक स्वर-द्वारों से रहित, नागस्वर के आकार का वाद्य और ताल रखने के लिए कांस्य ताल, अवनद्ध वाद्य के लिए 'डिंडिम' रहते हैं। वाद्यवादकों में पूर्ण संगीत-संप्रदाय-विशारद बहुत हैं।

मुखवीणा—यह छोटा नागस्वर है। इसका उपयोग नाट्य में है। पर आजकल इसका स्थान क्लारिनट ले रहा है।

शहनाई—नागस्वर का प्रतिरूप है शहनाई। यह उत्तर भारत में बजायी जाती है, परंतु उसकी लंबाई नागस्वर से आधी है। उसका नाद कोमलतर है। नागस्वर-वालों की तरह शहनाई बजानेवालों में संप्रदायकुशल लोग बहुत हैं।

क्लारिनट—पाश्चात्य नागस्वर है। इसमें स्वरस्थानों को बंद करने या खोलने के लिए उँगलियों का प्रयोग सीधे नहीं करते हैं। हरएक रंध्र को बंद करने और खोलने का एक उपकरण है। उसे दबाकर स्वरों का उत्पादन करते हैं। दक्षिण भारत में आज इस वाद्य में कर्नाटक और हिन्दुस्थानी संगीत को अच्छी तरह बजाया जाता है। इसके साथी साज दूसरे पाश्चात्य वाद्य हैं। उनके नाम साक्सफोन, ट्रम्पेट आदि हैं।

अवनद्ध वाद्य

मृदङ्ग शब्द आदिकाल में 'पुष्कर' वाद्य का नाम था। पुष्कर वाद्य में चमड़े से मढ़े हुए तीन मुख थे। दो मुख बायीं और दाहिनी ओर रहते थे, तीसरा मुख ऊपर रहता था। उसका पिण्ड मृत् या मिट्टी से बनाया जाता था। इसी कारण इसका नाम मृदङ्ग पड़ा। कुछ समय के बाद बायीं और दाहिनी ओर दो ही मुख वाले वाद्य की सृष्टि हुई। फिर उसका पिण्ड लकड़ी से बनाया गया। इन पुष्कर आदि वाद्यों की उत्पत्ति के बारे में नाटयशास्त्र में एक वृत्तान्त है।

पहले भी बताया गया है कि स्वाति और नारद ही संगीत वाद्यों के आदि ग्रन्थ-कर्ता हैं। इनमें स्वाति एक बार छुट्टी के दिन (अनध्ययन दिन) एक सरोवर पर पानी लाने के लिए गये थे। आकाश बादलों से घिरा हुआ था, वेगपूर्वक वर्षा होने लगी। तब वायु वेग से सरोवर में पानी की बड़ी-बड़ी बूँदों के पड़ते समय पद्म की बड़ी, छोटी और मंझोली पंखुड़ियों पर वर्षा-बिन्दुओं के आघात से विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न हुईं। उनकी अव्यक्त मधुरता को सुनकर आश्चर्यचकित स्वाति ने उन ध्वनियों को अपने मन में धारण कर लिया और आश्रम पहुँचने पर विश्वकर्मा से कहा कि इसी तरह के शब्द उत्पन्न करने के लिए एक वाद्य बनाना चाहिए। फलतः पहले-पहल तीन मुख से युक्त 'मृत्' से पुष्कर की सृष्टि हुई। बाद में उसका पिण्ड लकड़ी या लोहे से बनाया गया। तब हमारे मृदङ्ग, पटह, झल्लरी, दर्दुर आदि चमड़े से मढ़े हुए वाद्यों की सृष्टि हुई।

आगमों में बताया गया है कि लकड़ी से बनाये हुए मृदङ्ग की सृष्टि ब्रह्मा ने की है और शिवताण्डव का साथ देने के लिए ही उसकी उत्पत्ति हुई। पुष्कर आज व्यवहार में नहीं है। पर मृदङ्ग आदिकाल से अब तक अवनद्ध वाद्यों में मुख्य स्थान पाता रहा है।

मृदङ्ग का पिण्ड बीजवृक्ष (तमिल में वेङ्गै) या पनस की लकड़ी से बनाया जाता है। उसकी लंबाई २१ अंगुल (१५$\frac{3}{4}$ इंच) है। लकड़ी का दल आधे अंगुल का है। दाहिना मुख १४ अंगुल और बायां मुख १३ अंगुल है, मध्य में १५ अंगुल है। दोनों ओर के मुख चमड़े से मढ़े जाते थे। किनारे पर चमड़ा घनता से युक्त रहता था। उस चमड़े के घेरे में २४ छिद्र रहते थे। छिद्रों का पारस्परिक अन्तर एक अंगुल रहता था। उन छिद्रों में से वेणी की तरह चमड़े की रस्सी (वध्र, बद्धी) से बाँधा जाता था। इन दोनों 'पुडियों' को चमड़े की रस्सी से दोनों ओर खींचकर दृढ़ता से बाँधा जाता था। रस्सी के बंधन को ढीला करने या तानने से मृदङ्ग के स्वर को ऊँचा या नीचा कर सकते थे। पकाये हुए चावल को अपामार्ग के भस्म के साथ मिलाकर दोनों पुडियों के मध्य

में लगाया जाता था। उसका नाम 'वोहण' है। संगीतरत्नाकर में कहा गया है कि बायीं ओर अधिक और दाहिनी ओर थोड़ा कम लगाया जाता था। पर आजकल बायें मुख में, बजाने से पूर्व गुँथा हुआ आटा छोटी आकृति में लगाते हैं और दाहिने मुख में मृदङ्ग बनाते समय ही लकड़ी का कोयला, पकाया हुआ चावल, गोंद—इनको मिश्रित कर तीन इंच व्यास के चक्राकार में लगाते हैं। उसे स्थिर रहने देते हैं।

इस तरह के मृदङ्गों में तीन प्रकार हैं। आङ्किक, आलिङ्ग्य, ऊर्ध्वक। आलिङ्ग्य भूमि में रखकर बजाने योग्य है। आङ्किक कटि में बाँधकर बजाने योग्य है। ऊर्ध्वक छाती में बाँधकर बजाने योग्य है। रक्तचन्दन और आबनूस की लकड़ी से भी मृदङ्ग बन सकते हैं। पर उनकी मोटाई एक अंगुल (¾ इंच) रहनी चाहिए। लंबाई तीस अंगुल रहती है। दाहिना मुख ११½ अंगुल और बायां मुख १२ अंगुल व्यास का रहता है। इस वाद्य का देवता नन्दिकेश्वर है।

इस वाद्य में बोलनेवाले पाट या वाद्यशब्द ये हैं—दाहिने मुख में तद्धि, थे, टें, हें, नं, दें। बायें मुख में त, ट, ह्ला, द, ध, ल—इनका नाम 'शुद्ध संज्ञा' है। इनके सिवा इस वाद्य से उत्पादित किये जा सकनेवाले अक्षर भी शास्त्रों में बताये गये हैं। उन्हें 'कूट संज्ञा' कहते हैं। क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, य, र, ल, ह, म, झ—ये सब व्यञ्जन कई स्वर अक्षरों के साथ बोलते हैं।

ककार अ, ई, उ, ए, ओ, अं से युक्त बोलता है। उसके रूप क, कि, कु, के, को, कं हैं।

खकार इ, उ, ओ के साथ आता है, इसके रूप खि, खु, खो हैं।

गकार से उ, ए, ओ के साथ गु, गे, गो बनते हैं। घकार अ, ए, ओ के साथ घ, घे, घो, के रूप में आता है।

टकार से अ, ई, ओ, अं के साथ ट, टि, टो, टं बनते हैं।

ठकार अ, ई, ओ, अं के साथ ठ, ठि, ठो, ठं के रूप में आता है।

डकार अ, ओ, के साथ ड, डो बन जाता है।

ढकार आ, ए, अं के साथ ढा, ढे, ढं बन जाता है।

तकार अ, आ, इ, ए के साथ त, ता, ति, ते बनता है।

थकार अ, आ, इ, ए के साथ थ, था, थि, थे के रूप में बोलता है।

दकार अ, उ, ए, ओ के साथ द, दु, दे, दो के रूप में ध्वनित होता है।

धकार अ, इ, ओ, अं के साथ ध, धि, धो, धं के रूप में आता है।

रकार या रेफ अ, आ, इ, ए के साथ र, रा, रि, रे बन जाता है।

लकार अ, आ, ई, ए के साथ ल, ला, लि, ले बन जाता है।

हकार यकार के साथ अर्थात् ह और य मिलकर आते हैं।

मकार अं के साथ 'मं' के रूप में आता है और झकार अ, ए और अं के साथ झ, झे, झं बोलता है।

क, घ, त, ध—इनके साथ रेफ का अनुबन्ध होता है, अर्थात् क्रं, घ्रं, त्रं, ध्रं—इस तरह रूप होते हैं। ककार, पकार और तकार के साथ लकार भी आता है, जैसे—क्लां, प्लां, त्लां—आदि।

उन्हें उत्पादन करने का मार्ग—

दोनों हाथों से एक ही समय बजाने से 'धं' शब्द निकलता है। एक मुख से भी 'धकार' की उत्पत्ति होती है।

दोनों मुखों में उँगलियों को सरकाने से 'कुं' शब्द निकलता है।

दोनों मुखों में अवष्टम्भ (उठाने की तरह की क्रिया) करने से 'यकार' शब्द निकलता है।

बजाते समय पुड़ी के आधे भाग में ही हाथों को खींच लेने से 'थ' कार शब्द निकलता है।

दाहिने मुख में पीडन करने से 'क्ल' कार, उँगलियों से घर्षण करने से 'क्षकार', दोनों तर्जनियाँ बलपूर्वक रखने से 'क्ले', एक मुख में नख के द्वारा 'र', बायें मुख में 'द' कार।

दाहिने मुख के ऊपरी भाग में 'म' कार और बायें मुख के ऊपरी भाग में ओंकार की उत्पत्ति होती है।[1]

पञ्च पाणि प्रहतम्

अक्षरों की उत्पत्ति के लिए कराघात पाँच प्रकार के हैं—समपाणि, अर्धपाणि, अर्धार्धपाणि, पार्श्वपाणि, प्रदेशिनी। नाम से ही उनकी क्रिया स्पष्ट है।

समपाणि से मारकर हाथ खींच लेने से मकार की उत्पत्ति होती है।

अर्धपाणि से मारते समय हाथ को आधा खींच लेने से गकार, दकार, धकार आदि शब्द निकलते हैं।

पार्श्वपाणि से मारकर खींच लेने से ककार, खकार, णकार, उकार आदि शब्द निकलते हैं।

१. वाद्य शब्द-अक्षरों का विवरण और उनका उत्पत्ति-क्रम नाट्यशास्त्र, ३३वें अध्याय से उद्धृत है।

अर्धार्धपाणि से मारने से त, थ, ह कार शब्द निकलते हैं।

प्रदेशिनी से बजाते हैं तो गंकार, थंकार, णंकार शब्द निकलते हैं।

हस्तपाट या वाद्यशब्दों की योजना

१. आदि हस्तपाट—शिवजी के पाँच मुखों में हरएक से सात संयुक्त हस्तपाट उत्पन्न हुए हैं। उनमें **सद्योजात** मुख से उत्पन्न हस्तपाट—

वनगिन गिननगि	—	इसका नाम है	नागबन्ध
ननगिड गिडदगि	—	,,	पवन
गिडगिडगिडदत्था	—	,,	एक
किटतत किटतत	—	,,	एक सर
नखु नखु	—	,,	दुस्सर
खिर्रतकिट	—	,,	संचार
थोंगि थोंगि	—	,,	विक्षेप

वामदेव मुख से उत्पन्न हस्तपाट

ततकिट	—	इसका नाम है	स्वस्तिक
थोंहता	—	,,	बलिकोहल
थोंगिन थों थोंगिन	—	,,	फुल्लविक्षेप
थों थों गों गों	—	,,	कुण्डली विक्षेप
थोंगिण तत्ता	—	,,	संचारविलिखी
किटथोंथों गिनखेंखें	—	,,	खण्ड नागबन्ध
टकुझेंझें	—	,,	पूरक

अघोरमुख से उत्पन्न हस्तपाट

ननगिडगिडदगिदा	—	इसका नाम है	अलग्न
दत्थरिक्रि दत्थरिकि	—	,,	उत्सर
'तकिधिकि तकिधिकि	—	,,	विश्राम
टगुनगु टगुनगु	—	,,	विषमखली अथवा विषमस्खलित
खिरिट खिरिट	—	,,	सरी
खिरि खिरि	—	,,	स्फुरी
नरकित्थरिकि	—	,,	स्फुरण

तत्पुरुष मुख से उत्पन्न हस्तपाट

दरिगिड गिडदगिदा	—	इसका नाम है	शुद्धि
टटकुटट	—	,,	स्वरस्फुरण
ननगिनखिरिखिरि	—	,,	उच्छल्ल
दखें दखें दखें खें	—	,,	वलित
थों गिनगि थों गिनगि	—	,,	अवघट
तत्ता	—	,,	तकार
धिधि	—	,,	माणिक्यवल्ली

ईशान मुख से उत्पन्न हस्तपाट

तझें तझें झें	—	इसका नाम है	समस्खलित अथवा समस्खली
गिरिग्ड गिरिग्ड	—	,,	विकट
किण किणकि	—	,,	सदृश
धिधि किटकि	—	,,	अड्डुखली अथवा स्खलित
गिदिनगि दिगिनगि	—	,,	खली
धरकट धरकट	—	,,	अनुच्छल अथवा अनुच्छल्ल
दों नकट दों नकट	—	,,	खुत्त

मृदङ्ग वादकों में चार कोटियाँ हैं। वादक, मुखरी, प्रतिमुखरी और गीतानुग।

'वादक' का वादन इस प्रकार रहना चाहिए—

पहले 'त्राटन' नामक वादन करना चाहिए। मृदङ्ग में ताल का अनुसरण न करके 'वोहण' लगाने से पहले 'देह्डडग'—इत्यादि ध्वनियों की उत्पत्ति करनी चाहिए।

उसके बाद 'ओडवाड' नामक घन ध्वनि की अधिक उत्पत्ति करनी चाहिए।

उसके बाद 'उधार' नामक अनुरणन ध्वनि रूप 'देह्डडाद' आदि शब्दों का वादन करना उचित है। उसके बाद 'स्थापन' का वादन करना है। बायें मुख में वोहण को लगाकर बायें मुख में 'गडदग धों' और दाहिने मुख में 'गडदग धां' इत्यादि शब्द उत्पन्न करना चाहिए। उसके बाद द्वितीय ताल (१०८ ताल देखिए) के मध्य लय में दोनों मुखों में तीन बार क्रमशः शब्दों को अधिक करते हुए वादी संवादी का संयोग करके वादन करना चाहिए। उसके बाद विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में क्रमशः एक, दो, तीन थोंकार से अंत करके वादन करना चाहिए। उसके बाद तीनों स्थानों में आलाप करने की तरह विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में मनोधर्म का विस्तार

करते हुए मधुरता और सुन्दर रचना के साथ वादन किया जाना चाहिए। इस प्रकार के वादन का नाम 'स्थापन' है।

इसके बाद 'अन्तर' नामक वादन करना चाहिए, इसमें थोंकार का बहुत्व है। उसके बाद 'टाकणी' और 'वाद' का वादन करना चाहिए। टाकणी में दो प्रकार—सर टाकणी और जोडा टाकणी है। बाद में भी एक सरवाद, जोड़ा वाद होता है। इनमें चतुरश्र, त्र्यश्र, मिश्र, खण्ड तालों में एक तरह का ताल लेकर वादन करना। टाकणी में पहले श्रमवहनी नामक शब्द समूह का वादन करना। इसका रूप यह है—

तद्धितोटें
तत धिधि थोंथों टेंटें
ततत धिधिधि थोंथोंथों टेंटेंटें
तततत धिधिधिधि थोंथोंथोंथों टेंटेंटेंटें

उसके बाद एक सर टाकणी में 'तकधिकट तकधिकट, धिकटतक, तकधिकट, तकतकधिकट, धिकटकतधिकट'—इत्यादि के रूप में आठ वाद्यखण्डों का ताल की आठ कलाओं में वादन करना चाहिए। जोड़ा टाकणी में ऐसा वादन दो बार करना चाहिए।

'वाद' में पहले श्रमवहनी का वादन करके शुद्ध वर्णाभ्यास से 'दं दं टिरिटिट्टि कड्द—कड्दगझेक-उदवाझे-थरिक्कुथरि टगणगणथरि-गणगण धरि-धथरिगडदग-धथरिगडदग-हथरिगडदग-धतरि धतरि-तर्गड्दक्-तरिक्क टत्तक—इत्यादि ताल के सोलह खण्डों में वादन करना चाहिए।

'जोड़ावाद' में इसी प्रकार का दो बार वादन करना है। उसके बाद 'ताट' और 'वाद' का वादन करना उचित है। इनमें अतिद्रुत लय में दिगि दिगि दिग्दिग्—इत्यादि शब्दों का वादन करना। इसी प्रकार दूसरे वादन क्रम भी ऊहनीय हैं। इस तरह वादन करने से मृदङ्गवादक स्पर्धा में विजयी होता है।

मुखरी—वाद्य प्रबन्ध का रचयिता, नर्तन की शिक्षा में कुशल, गीत और वादन में पारङ्गत, सुस्वरूप, अवधान के साथ रहने के लिए अंतर्मुख रहनेवाला, नृत्य के अर्धाङ्ग के समान नृत्य में लीन होनेवाला, दूसरे वादकों के आगे खड़ा होनेवाला वादक 'मुखरी' कहलाता है।

इससे कुछ न्यून कोटि के वादक का नाम 'प्रतिमुखरी' है। शुद्ध, सालग गीतों के वर्ण, कठिन, कोमल, सम, विषम, मन्द्र, मध्य, तार, प्रौढ़ या मधुर शब्दों का अनुसरण वादन के द्वारा भली-भाँति करनेवाला, सालगगीत के उद्ग्राह नामक पूर्वभाग में तथा आभोग में, निस्सारुक ताल में अनुलोम, प्रतिलोम, उभयमिश्र गति रचना से वादन

करनेवाले, तकार से आरंभ करके थोंकार से अंत करनेवाले वादक का नाम है 'गीतानुग'।

मद्दल आदि वाद्यों के प्रबन्ध

गीत प्रबन्ध के समान उद्ग्राह आदि खण्डों के साथ वाद्य शब्दों का प्रबन्ध भी बनाया गया है। उनके भेद ४३ हैं। वाद्य प्रबन्धों के अन्त में 'दें' कार रहता है।

मृदङ्ग वादकों के गुण

अक्षरों की स्पष्टता, मुख आदि अंगों की सुरूपता, दूसरे वाद्यों का अनुसरण करने की पटुता, मधुर और गंभीरता के साथ वादन करने का कौशल, हस्तलाघव, सावधानी, श्रम को जीतने की शक्ति, मुख (आरंभ) वाद्य में पटुता, रञ्जनशक्ति, दूसरे अवनद्ध वाद्यों का अनुसरण करना, शब्दों की बहुलता, यति, ताल और लय की अच्छी जानकारी, गीत का अनुसरण करना—ये मृदङ्ग वादकों के गुण हैं। इनसे रहित होना 'दोष' है।

पञ्च संच

वादन करते समय वादकों के पाँच अंग हिलते हैं। इन्हीं कन्धे, कोहनी, अंगूठा, कलाई और बायें पाँव में होनेवाले कम्पन का नाम 'पञ्च संच' है। श्रेष्ठ वादकों के अंगूठे और मणिबन्ध (कलाई) ही हिलते हैं। मध्यम वादकों की कोहनी हिलती है। कन्धा अधम वादकों का हिलता है। बायें पाव का कम्पन हो तो वह सर्वश्रेष्ठ है।

मृदङ्ग वृन्द

दो, तीन या चार मृदङ्ग वादक वृन्द में रह सकते हैं। सब वादक 'मुखरी' का अनुसरण करते हैं।

मृदङ्ग के अलावा पटह, आवुज आदि प्राचीन अवनद्ध वाद्य हैं। पर आज इन सब का प्रयोग नहीं हो रहा है। ढूँढा जाय तो कहीं देखने को मिल सकते हैं।

पटह—आबनूस की लकड़ी से बनाया जाता था। उसकी लंबाई २½ हाथ की है। मध्य में घेरे का नाप ६० अंगुल है। दाहिने मुख का व्यास ११½ अंगुल है। बायें मुख का व्यास १० अंगुल है। दाहिनी ओर लोहे का पट्टा होता है। बायीं ओर लताओं का पट्टा लगाना होता है। उससे चार अंगुल दूर पर लौह-निर्मित तीसरा पट्टा लगता है। दोनों ओर मृत बछड़े के चमड़े से मढ़ाया जाता है। बायीं ओर के चमड़े के घेरे में सात छिद्र बनाकर उनमें पतली रस्सी से, सोने चाँदी आदि से बनाये हुए चार अंगुल लम्बे सात कलशों को ढीला बाँधा जाता है। दाहिनी

ओर से उन्हें फिर उस चमड़े से बाँध दिया जाता है। इसे 'कोण' नामक साधन से या हाथ से बजाते हैं। इसी तरह का पटह कुछ छोटा रहे तो उसे 'देशी पटह' या 'अड्डावुज' कहते हैं। पटह का देवता स्कन्द है।

हुडुक्का—इसकी लंबाई एक हस्त की होती है। परिधि या घेरे का नाप २८ अंगुल होता है। पिण्ड का दल एक अंगुल होता है। दोनों मुखों का व्यास ७ अंगुल होता है। हरएक मुख में चमड़े से बनी हुई मण्डली बाँधी जाती है। मण्डली का व्यास ग्यारह अंगुल है। दोनों मण्डलियों को रस्सी से बाँध दिया जाता है। रस्सी के मध्य में रहनेवाली स्कन्ध-पट्टिका को बायें हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से बजाया जाता है। उसमें बोलनेवाले १६ अक्षर हैं, पर देंकार नहीं है। हुडुक्का की देवी सप्त माता हैं—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा।

करटा—लंबाई में २१ अंगुल और घेरे का नाप ४० अंगुल है। मुख का व्यास १४ या १२ अंगुल है। दोनों मुखों में चमड़े से मढ़ी हुई लोह-मण्डली है। मण्डली की परिधि ४२ अंगुल है। दोनों मण्डलियाँ चमड़े से मढ़ी हुई हैं। हरएक चमड़े में १४ छिद्र हैं। दो-दो छिद्रों के बीच में विग्निका नामक लोह-कर्पर रहते हैं, जो कपाल की तरह हैं। 'कुडुप' नामक कोण से इसका वादन करते हैं। इसके पाट 'करट' और 'तिरिकिरि' हैं। इसका देवता 'चर्चिका' (देवी का एक रूप) है।

घट—घट का उदर बड़ा रहता है। मुख छोटा है। इसका पिण्ड घनतायुक्त है। अच्छी तरह पका रहता है। हाथों से इसका वादन किया जाता है। मर्दल में बोलनेवाले पाट घट में भी बोलते हैं।

घडस—इस वाद्य का दाहिना मुख मात्र चमड़े से मढ़ा जाता है। बायां मुख रस्सी से बाँधा जाता है। बायें हाथ की तर्जनी से रस्सी को दबाते हैं। दाहिनी ओर हाथ से और बायीं ओर उँगली से वादन किया जाता है। वादन करते समय हाथ में मोम लगा लेते हैं। इसका पाट 'धोंकार' है। दाहिने हाथ से घर्षण के द्वारा धोंकार की उत्पत्ति होती है।

ढवस—इसकी लंबाई एक हस्त की है। परिधि ३९ अंगुल और मुख का व्यास १२ अंगुल है। लता का वलय है। चमड़े से मढ़ा रहता है। चमड़े में सात छिद्र रहते हैं। यह छिद्रों के द्वारा रस्सी से बाँधा जाता है। मध्य भाग को हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से 'कुडुप' नामक कोण के द्वारा वादन किया जाता है। इसका पाट 'ढंकार' है।

ढक्का— ढवस के समान है, परन्तु मुख का व्यास १३ अंगुल है। उसका पाट 'ढेंकार' है।

कुडुक्का—हुडुक्का का एक भेद है। हाथ से या कोण से बजाया जाता है।

कुडुवा—इसकी लंबाई २१ अंगुल है। बीज वृक्ष या लोहे का बनाया जाता है। दो मुख रहते हैं। पिण्ड और दोनों मुखों का व्यास सात अंगुल है। दोनों मुखों में चमड़े के अन्दर लता का वलय रहता है। उन्हें भी रस्सी से बाँध देते हैं। कोण से मोम को रगड़कर बजाना होता है। इसका पाट 'झेंकार' है।

डमरुका—इसकी लंबाई एक बित्ता है। मुखों का व्यास ८ अंगुल है। मुख को मण्डली से बाँधा करते हैं, जो मण्डली चमडे से मढ़ी जाती है। मध्य में व्यास कम है। मध्य में कटि-प्रदेश के आकार में रस्सी से बाँधना होता है। वादन के लिए मध्य में मिट्टी और मोम की गोली से लिपटी हुई एक रस्सी टाँगी जाती है। मध्यभाग को हाथ से पकड़कर वादन किया जाता है। इसका पाट 'डग' है। मतांन्तर के अनुसार 'कख, रट' भी हैं।

डक्का—इसकी लंबाई एक बित्ता है। मध्य भाग कृश रहता है। मुखों का व्यास आठ अंगुल है। पिण्ड की घनता आधा अंगुल है। हरएक मुख में दो-दो तन्त्रियाँ हैं। तन्त्रियों को बाँधने के लिए हरएक मुख में ताम्र की दो-दो खूँटियाँ हैं। अन्य विषयों में हुडुक्का के समान है।

दिण्डिमा या तवुल—यह वाद्य नागस्वर की भाँति है। एक या सवा हाथ की लंबाई है। दोनों मुखों का व्यास पौन हाथ है। बदन कठोर लकड़ी से बनाया जाता है। दोनों मुख चमड़े से मढ़े जाते हैं। दोनों मुखों के घेरे में चमड़े की डेढ़ अंगुल घनता की मण्डली बाँधी जाती है। बायीं ओर का मुख मण्डली के अंदर है। दाहिनी ओर की मण्डली सीधी है। दाहिने मुख को हाथ से बजाते हैं और बायें मुख को एक बित्ता की लंबाई की लकड़ी से। इस लकड़ी की घनता एक अंगुल से क्रमशः ½ अंगुल हो जाती है। इस वाद्य को गले और दाहिने पार्श्व में टांगकर बजाते हैं। इसके शब्दों में 'डिं डिं' मुख्य है। इसी कारण से इसका नाम 'डिंडिं' पड़ा।

तबला—तबले में मृदङ्ग के दो भाग अलग-अलग हैं। दोनों भागों में मुख रहते हैं। दाहिने भाग में मृदङ्ग की दाहिनी ओर उत्पन्न होनेवाले शब्द उत्पन्न होते हैं। उसी तरह बनाया जाता है। बायें में मृदङ्ग की बायी ओर के शब्द बोलते हैं। दाहिना भाग लकड़ी से और बायां भाग धातु से बनाया जाता है। उत्तर भारत में तबला मृदङ्ग के स्थान में है।

पखावज—मृदङ्ग से कुछ बड़ा रहता है। उत्तर भारत मे ध्रुपद गाते समय बजाया जाता है।

ढोलक—मृदङ्ग की तरह है। पर इसके मध्य भाग का व्यास मुखों के समान है।

दोनों मुखों के ऊपर से कोई लेप नहीं किया जाता। कपास की रस्सी से दोनों मुख बाँधे जाते हैं। रस्सी को ढीला करने या तानने के लिए दो दो रस्सियों के बीच में पीतल के छल्ले रहते हैं। उन्हें सरकाने से इसकी ध्वनि को चढ़ाया उतारा जा सकता है।

कञ्जिरा (खंजरी)—एक ही मुख से युक्त है। मूल्य और वादन दोनों दृष्टियों से सस्ता वाद्य है। बायें हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से बजाया जाता है। इसका व्यास पौन बित्ता है। लंबाई तीन या चार अंगुल की है। मुख गोधिका (Varanus) (गोह) के चमड़े से मढ़ा जाता है। पिण्ड में तीन या चार द्वार हैं जिनमें दो ताम्र के सिक्के शब्द की उत्पत्ति के लिये लगाये जाते हैं।

घनवाद्य ताल

कांस्य-धातु से बनाया जानेवाला वाद्य घनवाद्य है। इस धातु को आग में भली-भाँति पकाकर, पहले चक्राकार कर लेते हैं। इस चक्र का मुख सवा दो अंगुल का होता है। उसका मध्यभाग अंगुल-भर नीचा रहता है। उस निम्न-देश के ठीक बीच में एक रंध्र होता है जिसमें डोरा पिरोया जाता है। जो उन्नत भाग निम्न-प्रदेश को घेरे रहता है वह डेढ़ अंगुल का बनाना चाहिए, जिससे तालों की ध्वनि कानों को अच्छी लगेगी। उसी रंध्र में टिका रखने के लिए सूत्र को एक ग्रंथि से ग्रथित करते हैं।

ऐसे दोनों तालों को, दोनों हाथों की तर्जनी व अंगूठे से सूत्रों को पकड़कर बजाते हैं। ध्वनि कम उत्पन्न होती हो तो वह शक्ति है; अधिक होती हो तो वह शिव है। बायें हाथ के ताल से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि अल्प होनी चाहिए। वैसे ही दाहिने हाथ के ताल से उत्पन्न ध्वनि घनता से युक्त होनी चाहिए। ऐसे नियम से वादन करने में वादक को अश्वमेध का फल प्राप्त होता है। अन्यथा वादक का अमङ्गल होता है। इन दोनों तालों का देवता तुंबुरु है; अलग-अलग रूप में शक्तिताल का देवता शक्ति और शिवताल का देवता शिव है। इस तालवाद्य को बजाने में भी कल्पना होती है, जो अंगुलियों को ऊँचा करके बजाने से सिद्ध होती है।

कांस्यताल

पंकज के नालों जैसे कांस्य-धातु के बने हुए, एक-से-आकार वाले दो वाद्यों को कांस्यताल कहते हैं। उनके मुखभाग १३ अंगुलों के तथा नीचे के तलभाग दो

अंगुलों के होते हैं। मध्यभाग तो अंगुल भर के ही होते हैं। उनके पाट 'झनकटा' आदि हैं।

घण्टा

घंटा कांस्य की बनी हुई है। उन्नति ८ अंगुल तक की होती है। मूलभाग से मुख-भाग की परिधि ज्यादा होती है। प्रासाद के ऊपर एक दण्ड है। प्रासाद के गर्भ में लोह का बना हुआ 'लालक' लटक रहा है। दण्ड को हाथ में लेकर वादन करते हैं। खासकर देवताओं के पूजन में इसका वादन करना अभीष्टद मात्र नहीं, आवश्यक भी है।

बारहवाँ परिच्छेद

वाग्गेयकारों का संक्षिप्त इतिहास

१. श्रीशार्ङ्गदेव

यह, "दौलताबाद" के राजा सिंहण, जिन्होंने ई० १२१० से १२४७ तक राज्य किया था, के समकालिक थे। काश्मीरी भास्कर देव के पुत्र और सोढलदेव के पौत्र थे। इन्होंने "संगीतरत्नाकर" नामक ग्रंथ की रचना संस्कृत भाषा में की, जिसके सातों अध्यायों में संगीतशास्त्र के सारे विषय, क्रम से यों प्रतिपादित हैं; जैसे—१ अध्याय स्वरगताध्याय, २ अ० रागविवेकाध्याय, ३ अ० प्रकीर्णकाध्याय, ४ अ० प्रबंधाध्याय, ५ अ० तालाध्याय, ६ अ० वाद्याध्याय, ७ अ० नृत्याध्याय।

इसकी सात व्याख्याएँ हैं जिनमें गंगाराम की ब्रजभाषा-व्याख्या भी एक है, जो सरस्वती महल पुस्तकालय में भी उपलभ्य है। शार्ङ्गदेव की दूसरी रचना "अध्यात्म-विवेक" वेदांत विषयक है।

उन्होंने भरत, मतंग, कीर्तिधर, कोहल, कंबल, अश्वतर, आंजनेय, अभिनव गुप्त और सोमेश्वर जैसे प्राचीन आचार्यों के मतों की विवेचना की है।

२. अहोबल पंडित

यह अहोबल में कोई ४५० वर्षों के पहले रहे होंगे। इन्होंने शार्ङ्गदेव व आंजनेय के मतानुसार "संगीतपारिजात" की रचना की, जिसके कई लक्ष्य-लक्षण आजकल की पद्धति से मेल खाते हैं।

३. रामामात्य

यह, नियोगी तेलुगु ब्राह्मण तिम्मामात्य के पुत्र थे। इन्होंने "स्वरमेलकलानिधि" की रचना वेंकटाद्रिराय की इच्छा के अनुसार की, जो विजयनगर सम्राट् कृष्णदेव राय के दामाद का भाई था। इन्होंने दूसरे कई प्रबंधों की—जैसे एला, रागकदंब, गद्यप्रबंध, पंचतालेश्वर, स्वरांक, श्रीरंगविलास इत्यादि की रचना की थी, लेकिन उन प्रबंधों में किसी एक का भी पता नहीं। स्वरमेलकलानिधि के अनुसार इनका समय १५५० ई० है।

४. गोविंद दीक्षित

यह पंडित तंजौर के नायकराजा अच्युतय्य एवं उनके पुत्र रघुनाथ नायक दोनों के दरबार के मुख्य मंत्री थे। प्रसिद्ध अप्पय्य दीक्षित के समकालिक होने के कारण इनका समय ई० १५५४ से १६२६ तक है। शिष्ट व नयनिष्ठ ब्राह्मण-मंत्री होने के कारण इनकी शासन-पद्धति की प्रसिद्धि अब भी सुनाई पड़ती है। इन्होंने रघुनाथ नायक के साथ संगीतशास्त्र में "संगीतसुधा" की रचना की। इस लक्षणग्रंथ का उल्लेख मात्र, इनके पुत्र वेंकट मखी की "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" में पाया जाता है।

५. वेंकट मखी

यह गोविंद दीक्षित के कनिष्ठ पुत्र और अपने बड़े भाई यज्ञनारायण दीक्षित के शिष्य भी हैं। इन्होंने तानप्पाचार्य से संगीत की शिक्षा पायी। इनकी पहले-पहल की रचना "गंधर्वजनता खर्व दुर्वार गर्वभंजनु रे" अब भी गायी जाती है। तंजौर के नायकराजा रघुनाथ के पुत्र विजयराघव राजा की प्रेरणा से "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" नामक लक्षणग्रंथ की रचना इन्होंने की। इसमें वेंकट मखी ने वीणा, श्रुति, स्वर, मेल, राग, आलाप, ठाय, गीत, प्रबंध और ताल—इन दस विषयों को दस प्रकरणों में बाँटा है। इन्होंने कई गीत और प्रबंध निर्मित किये हैं।

६. गोविंदामात्य

यह षट् सहस्र-नियोगी ब्राह्मण थे। इन्होंने संगीतशास्त्र की रचना तेलुगु भाषा में की। उसमें, कई स्थानों पर संगीतरत्नाकर का तथा मेल एवं राग के विषय में स्वरमेलकलानिधि का अनुसरण किया है। ये वेंकट मखी से पहले और रामामात्य से पीछे रहे होंगे।

७. पुरंदर विट्ठलदास

ये कर्णाटक ब्राह्मण एवं भक्तकवि थे। सरलि, अलंकार तथा गणेशगीत—इनके प्रवर्तक ये ही महानुभाव हैं। इन्होंने प्रायः सूलादि प्रबंधों और हजारों की संख्या में पदों की रचना की है। दक्षिण भारत में आज भी इनकी कृतियों का अधिक सम्मान होता है। इनका काल सोलहवीं शताब्दी का मध्यभाग है।

८. रामदास

ये नियोगी ब्राह्मण गोपन्नामात्य के पुत्र हैं। इन्होंने रामभक्त होने के कारण संगीतसाहित्य में आत्मनैपुण्य के निदर्शक कीर्तन प्रायः श्रीराम की सेवा के रूप में बनाये हैं। वे कीर्तन तेलुगु भाषा में हैं।

९. ताळपाकं चिन्नय्य

ये तैलंग ब्राह्मण थे और वेंकटाचलपति के भक्त। ये ही भजनपद्धति के प्रवर्तक माने जाते हैं। उस पद्धति में प्रात:काल के प्रबोधन से, रात के शयन तक के भिन्न-भिन्न समय में किये जानेवाले कार्य-कलापों के साथ गाये जानेवाले कीर्तन इन्होंने रचे हैं और ये अब भी गाये जाते हैं।

१०. क्षेत्रज्ञ

यह त्रिलिंग ब्राह्मण एवं कृष्णभक्त हैं। इनके पद तेलुगु भाषा एवं साहित्य में सर्वश्रेष्ठ हैं एवं अपनी-अपनी अलग विशेषताओं से संबद्ध हैं। हरएक पद में प्रयुक्त शृंगार रसानुसारी कैशिकी रीति, अर्थ पुष्टि, संदर्भानुसारी राग, धातु और पदविन्यास, गाने एवं सुननेवालों को मुग्ध कर लेते हैं, जो कि "मुव्वगोपाल" की मुद्रा से अंकित हैं। ये तंजौर के विजयराघव के समकालीन हैं।

११. श्रीनिवास

यह तमिलब्राह्मण और मीनाक्षी के भक्त हैं। तमिल में, इन्होंने जो पद व कीर्तन रचे हैं, उनमें "विजयगोपाल" की मुद्रा है। वे अर्थपुष्टि, शब्द व धातु शय्या के कारण मनोहर हैं। इनका जीवन-काल चोक्कनाथ नायक भूपाल के समय (ई० १६५०) में है।

१२. जयदेव

यह गोवर्धनाचार्य के शिष्य एवं कृष्णभक्त हैं। संस्कृत भाषा में इन्होंने "अष्ट-पदी" या "गीतगोविंद" की रचना की है। यह संस्कृत भाषा तथा संगीत-साहित्य में उच्चकोटि का ग्रंथ होने के कारण अद्वितीय है। इन्होंने "प्रसन्नराघव नाटक" इत्यादि दूसरी कई रचनाएँ की हैं; (?) तो भी उनकी ख्याति "गीतगोविंद" से ही हुई है। यह शार्ङ्गदेव के समकालिक हैं।

१३. घनं सोनय्य

इन्होंने "शशांक विजय" नामक शृङ्गाररस का प्रबंध रचा है। संगीत और संस्कृत एवं तेलुगु भाषा में प्रवीण थे। इस प्रबंध के अलावा "मन्नारुरंग" की मुद्रा से अंकित कई कीर्तनों एवं पदों के भी रचयिता हैं। यह बात उनके "शशांक विजय" से मालूम होती है। क्षेत्रज्ञ के समकालिक हैं।

१४. मार्गदर्शी शेषय्यंगार

वैष्णव ब्राह्मण एवं रंगनाथ के भक्त हैं। संस्कृत पंडित हैं और संगीतशास्त्रज्ञ भी। इनके ६० कीर्तन श्रीरंग के रंगनाथ स्वामी के बारे में रचे हुए हैं। इनकी चातुरी

देखकर पण्डित लोगों ने, 'मार्गदर्शी' के बिरुद से इन्हें सम्मानित किया है। कहा जाता है कि अय्यंगारजी सोनय्य के पूर्वकालिक हैं।

१५. गिरिराज कवि

यह तैलंग ब्राह्मण हैं और इनका वासस्थान तंजौर जिले में तिरुवारूर था। प्रसिद्ध संत त्यागराज के दादा हैं। तंजौर के दूसरे महाराष्ट्र राजा शाहजी ने इनका सम्मान किया था। इनके कीर्तन भक्तिरसपूर्ण व वेदांतप्रधान हैं।

१६. शाहजी महाराज

यह तंजौर-महाराष्ट्र-राजवंश के स्थापक एकोजी राजा के पुत्र हैं। संस्कृत, महाराष्ट्र, हिंदुस्थानी तथा तेलुगु भाषा के प्रकांड पंडित थे। साथ ही संगीत-साहित्य-विद्या के पंडित होने के कारण इन्होंने बहुत-से कीर्तनों एवं पदों की रचना की। तिरुवारूर के त्यागराज स्वामी के बारे में, इन्होंने एक पालकी-नाटक तेलुगु भाषा में रचा, जो "पल्लकि सेवा प्रबंध" नाम से प्रसिद्ध है। इनका शासनकाल ई० सन् १६८४ से १७११ तक है।

१७. वीरभद्रय्य

तंजौर के महाराष्ट्र राजा प्रतापसिंह की, जिन्होंने ई० सन् १७४१ से १७६५ तक शासन किया था, संगीतरसिकता एवं उदारता को सुनकर, यह वाग्गेयकार उत्तर से तंजौर पधारे। यह तैलंग ब्राह्मण हैं; संगीत-साहित्य की रचना में सिद्धहस्त भी हैं। इन महाशय के आने का समाचार सुनते ही, राजा ने स्वयं ही इनके पास जाकर इनका भली-भाँति आतिथ्य किया। इन्होंने बहुत-से कीर्तन तरह-तरह के रक्ति-पूर्ण रागों में रचे हैं, जो "प्रतापराम" की मुद्रा से मुद्रित हैं। इनके अलावा इस राजा के प्रशस्तिगान के रूप में कई दरु, पद, तिल्लाना इत्यादि की रचना की है। हरएक कृति गेय कल्पनाओं से सज्जित है। इन्हीं महाशय को दक्षिण देश की गानरीति के परिष्कर्ता कहें तो यह अतिशयोक्ति या अत्युक्ति न होगी।

१८. कवि मातृभूतय्य

ये त्रिशिरपुरीवासी तैलंग ब्राह्मण और भक्तकवि हैं। इन्होंने नीति व भक्ति-मार्ग के कीर्तन रचे हैं। पारिजातापहरण नामक गांधर्वनाटक की भी रचना की है। "त्रिशिरगिरि" की मुद्रा से युक्त इनके कीर्तन, वहाँ की देवी सुगंधिकुंतलांबा की सेवा के रूप में रचित हैं। अपनी विकराल दरिद्रता से छुटकारा पाने के लिए भी देवीजी के पदों में ही भरोसा रखकर इन्होंने भक्ति की थी और सफलता भी पायी

थी। कहा जाता है कि देवीजी की आज्ञा से तंजौर के राजा प्रतापसिंह ने ही, दस हजार रुपये देकर उन्हें बचाया था।

१९. आदिप्पय्य एवं उनकी संतान

यह आदिप्पय्य कर्णाटक ब्राह्मण हैं। तेलुगु तथा संस्कृत के पंडित हैं। इन्होंने वीरभद्रय्य के मार्ग पर चलकर, रक्तिपूर्ण देशी रागों में अनेक कीर्तन, विशेष गमक-जातियों से युक्त रचे हैं जो "श्रीवेंकटरमण" की मुद्रा से मुद्रित हैं। रागालापन की मध्यमकाल-पल्लवी का परिष्कार इन महाशय के द्वारा हुआ है। इनका तानवर्ण "विरिब्रोणि" जो भैरवी राग का है, बहुत प्रसिद्ध है। वह वर्ण मौखिक व वीणागान में समानरूपेण रंजक है।

आदिप्पय्य के पुत्र वीणा-कृष्णय्य हैं, जो प्रसिद्ध वैणिक हैं। इनके तीन प्रबंध, जो "सप्ततालेश्वरम्" नाम से प्रसिद्ध हैं, मैसूर, विजयनगर तथा पुदुक्कोट्टै के राजाओं के विषय में रचे हुए हैं। इनके पुत्र वीणा-सुब्बुक्कुट्टि अय्य भी प्रसिद्ध वैणिक थे, इनका तालज्ञान, जो वैणिकों में थोड़ा ही पाया जाता है, बेजोड़ था।

२०. सोंटि वेंकटसुब्बय्य

यह तैलंग ब्राह्मण हैं। तेलुगु भाषा में तथा संगीतशास्त्र में निपुण थे। वेंकट मखी के रागांगादि रागों के संप्रदायज्ञ थे। तंजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के बारे में इनका बिलहरी राग में रचित एक वर्ण, विचित्र कल्पनाओं से युक्त एवं मनोरंजक है। इनके पुत्र वेंकटरमणय्य भी संगीत-साहित्य तथा गान दोनों मार्गों में अपने पिता की अपेक्षा भी निपुणतर निकले थे।

२१. रामस्वामी दीक्षित

ये द्राविड ब्राह्मण हैं। संस्कृत व तेलुगु भाषा के पंडित हैं। पहले वीरभद्रय्य से तथा पीछे वेंकटवैद्यनाथ दीक्षित से इन्होंने शिक्षा पायी। इनकी तथा इनके पुत्र मुद्दुस्वामी दीक्षित की कई रागतालमालिकाओं, तानवर्णों और कीर्तनों ने इनकी आर्थिक परिस्थिति की श्रीवृद्धि की और वे ही इनकी ख्याति के कारण भी हुए।

२२. श्यामाशास्त्री

इन्होंने १७६३ ई० में जन्म लिया, संस्कृत व तेलुगु के पंडित होकर एक यतीन्द्र से संगीत का भी अभ्यास किया था। श्रीविद्या के प्रसाद से प्राप्त इनकी प्रखर प्रतिभा की झलक इनके प्रत्येक कीर्तन में पायी जानेवाली गेय-कल्पना व साहित्य-चमत्कार के कारण स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इनकी रचनाएँ "श्यामकृष्ण" की मुद्रा से अंकित हैं। ये महानुभाव संगीत की त्रिमूर्तियों में अन्यतम हैं।

इनके दूसरे पुत्र सुब्बराय शास्त्री भी संस्कृत और तेलुगु, दोनों भाषाओं में प्रवीण और संगीतमर्मज्ञ थे। इनके बहुत-कुछ कीर्तन एवं स्वरजातियाँ अब भी प्रसिद्ध हैं।

२३. वीण पेरुमालय्य

यह आंध्र ब्राह्मण और तंजौर आस्थान के पंडित थे। घनराग के तानों को बजाने में सिद्धहस्त थे। भैरवी जैसे रक्तिरागों को लगातार नौ या दस दिनों तक बजाकर पूर्ण करना इनकी अपनी विशेषताओं में से एक है। सौराष्ट्र और सावेरीराग के दो तानवर्णों की रचनाएँ, उनकी गेयरचना की चातुरी के नमूने हैं।

२४. श्री त्यागराजय्य

ये गिरिराज कवि के पौत्र और दरबारी विद्वान् सोंटि वेंकटरमणय्य के शिष्य थे। संस्कृत तथा तेलुगु भाषा की शिक्षा पाकर एक ही वर्ष के अभ्यास से संगीत के विविध विषयों के विज्ञ निकले। इसके पहले ही वेदाध्ययन कर चुके थे। अचानक ही कांचीनगरी के एक भागवतोत्तम का साक्षात्कार इनसे हुआ। उन्होंने रामनाम का उपदेश दिया था। इन्होंने इसी तारकमंत्र के प्रभाव से भगवद्दर्शन किये थे। पहले-पहल जब दर्शन पाया था, वही समय इनकी रचना का आरंभकाल था। भगवान् नारदजी ने भी इनकी भक्तिपरायणता से मुग्ध होकर, "स्वरार्णव" नामक पुस्तक दी थी। उस समय में ही नारदजी के विषय में कई एक कीर्तन रचे हैं। इनकी रचनाएँ प्रायः समयानुकूल हैं और "रामचंद्रजी" की सेवा के रूप में रची हुई हैं। प्रत्येक कीर्तन "त्यागराज" की मुद्रा से अंकित, तेलुगु भाषा में है। इनकी कृतियों में बहुत प्रसिद्ध पाँच हैं, जो "पंचरत्न कीर्तन" कहाते हैं। सारी रचनाओं में भक्ति रस की ही प्रधानता है। इन्होंने अपने जीवन को राम की सेवा में ही अर्पित किया था। तंजौर के राजा शरभोजी की आज्ञा एवं प्रार्थना का अनादर करके आदर एवं संपत्ति से वंचित रहने का साहस इन्होंने ही किया था। ऐसे समयों में जो परिस्थिति सामने आ पड़ी थी, उससे लाचार होकर इन्होंने कई कीर्तन रचे थे। वे कृतियाँ भी अब गायी जाती हैं।

ये तीर्थयात्रा के कारण अनेक स्थानों में घूमे। श्रीरंग, शेषाद्रि आदि तीर्थों के देवताओं के बारे में कीर्तन गाते थे। अंतिम दिनों में इन्होंने प्रव्रज्या ले ली थी। संत त्यागराज स्वामीजी सतहत्तर वर्ष की अवस्था में गोलोकवासी हुए थे। इनकी समाधि तंजौर के पास के पंचनदक्षेत्र में है।

ये संगीत की त्रिमूर्तियों में अन्यतम हैं। केवल ये महात्मा ही तेलुगु तथा अतेलुगु लोगों में समानरूपेण लोकप्रिय हुए हैं।

२५. वीणा कुप्पय्य और उनके पुत्र

गायन एवं वीणावादन में ये बहुत श्रेष्ठ हैं। इन्होंने गेयचमत्कृति से युक्त तानवर्ण कीर्तनों की रचना की है। इनके पुत्र त्यागय्य ने, जिसका नामकरण अपनी गुरुभक्ति के कारण कुप्पय्या ने किया था, कई तानवर्ण रचे थे। इनके अलावा "पल्लवी-स्वरकल्पवल्ली" के रचयिता भी ये ही हैं।

२६. वैकुंठ शास्त्री

शास्त्रीजी संस्कृत वाग्गेयकारों में प्रमुख हैं। अन्य काव्य नाटक अलंकारशास्त्रों की तरह संगीतशास्त्र भी इनके अध्ययन का विषय था। गेयकल्पनायुक्त संस्कृत-कीर्तन, रक्ति एवं देशी रागों में इन्होंने रचे थे। "वैकुंठ" की मुद्रा से इनके कीर्तन अंकित हैं।

२७. कुप्पुस्वामी अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण हैं। तेलुगु भाषाविज्ञ भी थे। इनके कीर्तन प्रायः भक्ति रस के हैं। कई एक शृंगार रस के भी हैं। दोनों गेयकल्पनाएँ बहुत चमत्कारयुक्त हैं। पदविन्यास ललित है। "वरदवेंकट" की मुद्रा से मुद्रित हैं।

२८. पल्लवि गोपालय्यर

इनकी इस "पल्लवि" पदवी का मुख्य कारण इनकी प्रतिभा थी, जिससे ये पल्लवी के गाने में बेजोड़ हुए थे। इनके रचे हुए एक "वनजाक्षी" कल्याणी नामक तानवर्ण से ही, संगीतकल्पनाचमत्कार, गमक, स्वरकल्पनाशय्या इत्यादि का पता चलेगा। इन्होंने "वेंकट" की मुद्रा से अंकित अन्य कई तानवर्णों की रचना भी की है। ये अमरसिंह तथा शरभोजी के समकालिक हैं।

२९. मुद्दुस्वामी दीक्षित

ये रामस्वामी दीक्षित के पुत्र थे। ई० सन् १७७५ में उत्पन्न हुए थे। सोलह बरस में ही साङ्गवेदाध्ययन कर चुके थे। ज्योतिष, वैद्यक तथा मंत्रशास्त्र में भी विशेष प्रज्ञा थी। सौभाग्य से चिदंबरनाथ योगी नामक एक सिद्धपुरुष ने इनको श्रीविद्या का उपदेश दिया था। पीछे सुब्रह्मण्य का अनुग्रह भी इन्हें मिला था। इन्होंने प्रायः सभी तीर्थों की यात्रा की है। वहाँ के देव-देवियों के स्तोत्ररूप विविध कीर्तन रचे हैं। इनकी भाषा पूर्णरीति से संस्कृत है, तो भी गेयकल्पना, अर्थपुष्टि, ललितपदविन्यास आदि से युक्त हैं। इनके कीर्तन "गुरुगुह" की मुद्रा से अंकित हैं। इनके कीर्तन

वेंकट मखी के संप्रदाय के अनुसार हैं। रागों के नाम से भी शोभित हैं। अर्थपुष्टि, विन्यासचातुरी इत्यादि उच्चकोटि की है। इनके अलावा सूडादि सात तालों में रचे हुए नवग्रह कीर्तन और कमलांबा देवीजी की नवावरणपूजा के अनुसार रचित नौ कीर्तनों से इनकी प्रशस्ति सर्वतोमुखी हुई।

ये महानुभाव संगीत की त्रिमूर्ति में अन्यतम हैं। ई० सन् १८३५ में, एट्टयपुरं राजा के अनुरोध से वहाँ चले गये थे। वहीं उसी साल में उनका वियोग हुआ था।

३०. चिन्नस्वामी दीक्षित

यह मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। संस्कृत और आंध्र भाषा के विद्वान् हैं। संगीतशास्त्र का अध्ययन करके वैणिकश्रेष्ठ हुए थे। कई राजसभाओं में इन्होंने वैणिकश्रेष्ठ के रूप में प्रशंसा पायी है। तोडी तथा कल्याणी के इनके दो कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

३१. बालस्वामी दीक्षित

ये भी मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। वीणा ही नहीं, इनके लिए सितार, फिडिल, मृदंग इत्यादि वाद्यों का बजाना बायें हाथ का खेल था। मणलि मोदलियार के सौजन्य से इन्होंने एक अंग्रेजी फिडिल वादक का शिष्य होकर पाश्चात्य संगीत की शिक्षा भी पायी थी। एट्टयपुरं राजा के सभापंडित होकर उस राजा के बारे में कई कीर्तन रचे थे। उस राजा के पुत्र को संगीत सिखाया था। पीछे उस कुँवर राजा के द्वारा रचित विविध रागों के संस्कृत कीर्तनों को, विशेष चमत्कार व कल्पनायुक्त मुक्तायिस्वरों से सज्जित किया था। इनके नाट तथा दूसरे रागों के तानवर्ण, जो चमत्कृतिजनक स्वरों और जातियों से युक्त हैं, बेजोड़ हैं। इनका समय ई० सन् १७८६ से १८५९ तक है।

३२. चौकं सीनु अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण एवं संगीत के चतुर विद्वान थे। रागालाप आदि को बहुत विलंब से गाने में चतुर थे। इसी कारण "चौकं सीनु अय्यर" नाम से प्रसिद्ध हुए थे। शरभोजी तथा उनके पुत्र शिवाजी के समय हुए थे।

३३. मध्यार्जुन प्रतापसिंह महाराज

तंजौर के महाराष्ट्र राजा अमरसिंह के पुत्र हैं। संस्कृत तथा महाराष्ट्री में विचक्षण थे। इनके मृदंगवादन का कौशल प्रसिद्ध है। इनकी साहित्य रचना में,

"नवरत्नमालिका" नाम की रागतालमालिका वर्णक्रम और स्वरचमत्कृति से लसित है।

३४. कुलशेखर पेरुमाळू

तिरुवनंतपुर के राजा कुलशेखर संस्कृत, केरली, तेलुगु, हिंदुस्तानी, अंग्रेजी इत्यादि भाषाओं में प्रवीण थे। साथ ही संगीत के प्रतिभावान् विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित तरह-तरह के रक्ति व देशी रागों के संस्कृत-चौकवर्ण, जो गेयकल्पना तथा चातुरी से रंजित और "पद्मनाभ" की मुद्रा से अंकित हैं, असंख्य हैं। इनके अलावा तेलुगु तथा केरली भाषा में भी संगीत साहित्य की रचनाएँ इन्होंने की हैं।

३५. शेषाचल भागवत

यह पुदुक्कोट्टै के आस्थानपंडित थे। प्राचीन संप्रदाय के रागालापन और कीर्तन के गाने में अद्वितीय थे। प्रसिद्ध श्यामाशास्त्रीजी के शिष्य थे। इनके भाई, पुत्र तथा पौत्र, सब वंशानुगत संगीतविशारद थे और उसी आस्थान के विद्वान् भी हुए थे।

३६. सदाशिव ब्रह्म

संत सदाशिव ब्रह्म अमानुषिक विभूतिवाले महानुभाव थे। ब्रह्मानंद में निमग्न ये योगिराट् अखंड कावेरी के प्रान्तों में गाते-गाते विचरते थे। गेय वाक्-रूप इनके संस्कृत कीर्तनों में पदलालित्य व श्रवणसुख के अलावा अलौकिक शक्ति भी सुननेवाले अनुभव करते हैं। विविध रागों में इनके संस्कृत कीर्तन, संस्कृतज्ञों और असंस्कृतज्ञों में प्रसिद्ध हैं। इनकी समाधि नेरूर में है, जो आजकल एक तीर्थस्थान है।

३७. अक्किल स्वामी

ये यतींद्र कृष्णभक्त थे। चिदंबरं के पास रहा करते थे। संस्कृत में इन्होंने कीर्तन रचे थे। कहा जाता है, श्रीकृष्ण के प्रसाद से इनकी एक शारीरिक व्याधि नष्ट हुई थी। उसी समय इन्होंने एक कीर्तन रचा था जो कल्याणी राग का "तावक-करकमले" कीर्तन है।

३८. शिवरामाश्रमी

ये तैलंग ब्राह्मण थे। इन्होंने संगीतकीर्तन और भक्तिमार्ग के पदों को सीखकर "निजभजनसुखपद्धति" की रचना की और बीस ही वर्ष की आयु में प्रव्रज्या ग्रहण की थी। सारे देश का भ्रमण करके, अन्ततः तिरुवारूर में रहकर त्यागराज स्वामी की भक्ति की। इनकी रचनाएँ तेलुगु और संस्कृत, दोनों में पायी जाती हैं।

३९. सारंगपाणि

इनके पद शृंगार और हास्यरस-प्रधान हैं। हास्यरस की रचनाओं में ग्राम्योक्तियाँ तथा चाटु मुख्य हैं। "वेणुगोपाल" की मुद्रा से अंकित हैं। यह भी तैलंग ब्राह्मण हैं।

४०. मेलट्टूर वेंकटराम शास्त्री

यह तैलंग ब्राह्मण और शरभोजी के समसामयिक एवं तेलुगु भाषा के पंडित थे। इनके पद, कैशिकी रीति के पदविन्यास से युक्त शृंगाररस-प्रधान हैं।

४१. तोडि सीतारामय्य

तोडी राग इनकी संपत्ति थी। कहा जाता है कि आर्थिक परिस्थिति जब बिगड़ जाती, तब तोडी को धरोहर रखकर उससे प्राप्त धन द्वारा ये कालयापन करते थे। राजा-रईसों की सहायता से ऋण चुकाकर ही तोडी गाते। इनके तोडीराग को सुनने के लिए लोग तरसते रहते थे। इन्होंने कई और रचनाएँ भी की थीं, जो कल्पना की खान हैं।

४२. तच्चूरू शिंगराचार्य

यह आंध्र वैष्णव ब्राह्मण थे। फिडिल बजाने में बहुत समर्थ थे। इनके कई संस्कृत कीर्तन गेय कल्पनाओं से युक्त हैं। स्वरमंजरी, गायकपारिजात, संगीतकलानिधि, गायकलोचन और गायकसिद्धांजन आदि पुस्तकों के प्रकाशन में इनका बड़ा हाथ था।

४३. अरुणगिरिनाथ

इनका वासस्थान शीयाळि था। तमिल भाषा के पंचलक्षणों के विज्ञ थे। इनके समय में तुलजा राजा ने तंजौर का शासन किया था। यह संगीत शास्त्र में दक्ष थे। श्रीमद्रामायण के प्रत्येक कथासंदर्भ को संदर्भानुसृत रसों के ह्लादजनक रागों में, तमिल कीर्तन के रूप में इन्होंने रचा था। प्रत्येक कीर्तन वर्णक्रमचातुरी से निबद्ध है। इन रामायण-कीर्तनों को इन्होंने मणलि मुद्दूकृष्ण मोदलियार की सभा में गाकर उनके हाथों कनकाभिषेक पाया था। तमिल प्रांत में इनकी बहुत ख्याति है।

४४. मुत्तुत्तांडवर्

यह द्रविड भाषा और संगीत के पंडित और शिवभक्त शिखामणि हैं। चिदंबर के सभापति के बारे में, भक्ति और शृंगाररस के विविध पद तथा कीर्तन इन्होंने रचे हैं। इनका समय अरुणगिरिनाथ के पूर्व है।

४५. पापविनाश मोदलियार

तंजौर के तुलजा राजा के समकालिक मोदलियारजी तमिल तथा संगीत के विशारद थे। उनके पद "पापविनाश" की मुद्रा से अंकित हैं। वे निंदास्तुति के रूप में रचे हुए हैं।

४६. घनं कृष्णय्यर

यह प्रसिद्ध त्यागय्य के समकालिक ब्राह्मण हैं। इनका पल्लवि-गायन बहुत रंजक होता था। इनके पद शृंगाररस में प्रसिद्ध हैं। इनका स्थान उडयार पालयम् था। वहाँ के राजा को सम्बोधित करके कई पद रचे हैं। उन पदों में सारी विशेषताएँ पायी जाती हैं।

४७. शंकराभरणं नरसय्य

शरभोजी के समकालिक इन सज्जन ने तमिल भाषा में कई पदों की रचना की थी जो गेय कल्पनाओं से रंजक है। इन ब्राह्मण-विद्वान् का शंकराभरण राग अनुपम है। इसी कारण इनका नाम शंकराभरणं नरसय्य पड़ा है।

४८. आनतांडवपुरं बालकृष्ण भारती

यह ब्राह्मण शिवभक्त हैं। रक्ति व देशी रागों के अलावा और कई रागों के कीर्तन गेय कल्पना एवं चमत्कार से युक्त रचे थे, जो "गोपालकृष्ण" की मुद्रा से मुद्रित हैं। इस भक्त-ब्रह्मचारी ने "नंदनार" नाम के प्रसिद्ध शिवभक्त का चरित रचा था।

४९. वैद्दीश्वरनकोइल सुब्बरामय्य

इन्होंने शृंगाररस के कीर्तन, "मुद्दक्कुमरन" की मुद्रा से अंकित रचे हैं। द्राविड़ी भाषा और संगीत शास्त्र के विद्वान् थे।

५०. वेंकटेश्वर एट्टप्प महाराज

इनका शासन समय ई० सन् १८१६ से १८३९ तक का था। यह राजा संस्कृत, आंध्र और द्राविड के पंडित थे। संगीत शास्त्र के मर्मज्ञ थे। वैणिक श्रेष्ठ भी थे। "शिवगुरुनाथ" की मुद्रा से अंकित मुखारि राग का द्राविड कीर्तन इन्हीं का है। इन्होंने कई द्राविड वृत्त रचे थे।

५१. सुब्बराम दीक्षित

मुद्दुस्वामी दीक्षित के दत्तक पुत्र हैं। इन्होंने संस्कृत तथा तेलुगु भाषा की और संगीत शास्त्र की भी ऊँची शिक्षा पायी थी। वीणा की शिक्षा पिता से मिली थी।

पहले-पहल श्री कार्तिकेय के बारे में दरबार राग का एक तानवर्ण रचकर राजसभा में गा सुनाया था। इनके कर्तृत्व में संदेह होने के कारण, संदेह को दूर कराने के लिए यमुना राग का एक जातिस्वर इनसे रचाया गया था। इनकी रचनाओं में कीर्तन, तानवर्ण, चौक-वर्ण, रागमालिका आदि हैं।

५२. पट्टणं सुब्रह्मण्यय्य

यह तमिल ब्राह्मण १९ वीं सदी के उत्तरार्ध में थे। इनका वासस्थान तंजौर के आस-पास का पंचनद क्षेत्र था। आंध्र भाषा और संगीत शास्त्र दोनों की शिक्षा पायी थी। इनके तेलुगु कीर्तन बहुत प्रसिद्ध हैं।

५३. वेंकटेश्वर शास्त्री

संस्कृत और तमिल के पंडित थे। साथ ही संगीत शास्त्रज्ञ तथा श्रेष्ठ वैणिक भी। संगीतस्वरबोधिनी के प्रकाशक हैं। इनके रचे हुए संस्कृत-कीर्तन कई एक मिलते हैं।

५४. गर्भपुरी धर्मपुरी वाले

ये यमल विद्वान् "गर्भपुरी" और "धर्मपुरी" की मुद्राओं से अंकित शृंगाररस की जावलियों के रचयिता हैं।

५५. रावबहादुर नागोजीराव

यह महाराष्ट्र ब्राह्मण बहुभाषाविज्ञ तथा संगीतज्ञ भी थे। रागविबोधिनी तथा दूसरी संगीत पुस्तकों के प्रकाशक हैं। इन्होंने पाठशालाओं के इंस्पेक्टर के पद पर रहकर संगीत पुस्तकों के प्रकाशन में काफी दिलचस्पी ली थी।

कल्लिनाथ

संगीतरत्नाकर की प्रसिद्ध व्याख्या "कलानिधि" के रचयिता हैं। विद्यानगर के महाराज इम्मडि देवराय के आस्थान पंडित थे। इनका समय ई० सन् १५५० के आसपास था।

वेंकटरामय्य

जातीय ज्ञान के साथ कीर्तनों के गाने में जो कठिनता होती है उसका तनिक भी अनुभव किये विना, यह महाशय गाते थे। इसलिए "इनुपसनिगेल"—अर्थात् "लोहे के चने" की उपाधि इन्हें मिली थी। बोधेंद्र स्वामी के बारे में रचा हुआ इनका "सत-

मनि" तोड़ी कीर्तन प्रसिद्ध है। इनकी कृतियों में "गोपालकृष्ण" की मुद्रा सुनाई पड़ती है। इनका समय भी आदिप्पय्य का अंतिम काल है।

त्यागराजय्य के शिष्य

१. वीण कुप्पय्य (२५ देखिए)

२. बालाजीपेट वेंकटराम भागवत

इनके शिष्य प्राय: सौराष्ट्रभाषी थे। उनके द्वारा त्यागराजय्य के कीर्तन का प्रचार व प्रसार इन्होंने कराया था।

अन्य शिष्य—

अय्या भागवत
सुब्बराम भागवत
तिल्लस्थानं रामय्यंगार
उमयापुरं कृष्णभागवत
सुंदर भागवत

गोविंदसामय्य

यह तैलंग ब्राह्मण थे। इनकी रचनाएँ श्रृंगाररस प्रधान हैं। कावेरी नगर संस्थान के राजा के प्रति मोहनराग में एक वर्ण इन्होंने रचा था। इनके कई अन्य वर्ण देवताओं के विषय में रचे हुए हैं। नवरोज व केदारगौड़ राग के इनके वर्ण बहुत प्रसिद्ध हैं।

विजयगोपाल

ये भक्त-विद्वान् थे। संस्कृत तथा तेलुगु में इनके कीर्तन भक्तिरस-स्निग्ध हैं। इनकी कृतियाँ "विजयगोपाल" की मुद्रा से अंकित हैं। इनका समय १७ वीं सदी का अंतिम भाग है।

मुद्दुस्वामी दीक्षित (२९) के शिष्य

(१) संगीत व द्राविडी के पंडित तिरुक्कडयूरु भारती।
(२) आवडयार कोयिल वीणा वेंकटरामय्यर।
(३) तेवूरु सुब्रह्मण्यय्य।
(४) संगीत-मृदंग-लक्ष्य-लक्षणदक्ष तिरुवारूर शुद्ध मृदंगं तंबियप्पा।
(५) भरतश्रेष्ठ तंजाऊर पोन्नय्या।
(६) वडिवेलु।

(७) भरतलक्ष्यलक्षणविशारद कोरनाडु रामस्वामी।
(८) नागस्वरप्रज्ञ तिरुवळुंदूर बिल्लवनं।
(९) तानवर्णपद रचयिता तिरुवारूर अय्यास्वामी।
(१०) नाट्यगानविद्या विदुषी तिरुवारूर कमलं।
(११) गानयशस्विनी वळ्ळलार कोइल अम्मणि।

दोरसामय्य

इनकी तेलुगु कृतियों में "सुब्रह्मण्य" की मुद्रा से अंकित कीर्तन प्रसिद्ध हैं। सहज शैली और रंजनयुक्त हैं। ये द्रविड ब्राह्मण हैं। इनका समय शरभोजी का अंतिम तथा शिवाजी का आदिम काल है।

रामानंद यतींद्र

ये संस्कृत साहित्य रचना में दक्ष थे। इनके गौरीराग-प्रबन्ध को देखने से इनके पांडित्य की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है। ये अहोबल पंडित के पिछले समय में थे।

नारायण तीर्थ

इनकी रची हुई तरंगों से संस्कृत साहित्य की रचना का पता चलेगा। प्रायः ३५० वर्षों के पहले इनका समय है।

स्वयंप्रकाश यतींद्र

मायूर क्षेत्र के रहनेवाले ये यतिराट् संस्कृत तथा तेलुगु के प्रकाण्ड पंडित थे। साथ ही संगीत शास्त्र निष्णात भी थे। इनके संस्कृत कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

युवरंगपद

उडयारपालयं संस्थान के अधीश युवरंग, रसिकशिखामणि एवं उदार दाता थे। इनके बारे में, कई वाग्गेयकारों के द्वारा गेयकल्पनायुक्त पद रचे गये। वे ही युवरंगपद नाम से प्रसिद्ध हैं। तुलजा राजा के समकालिक थे।

परिमलरंग

"परिमलरंग" की मुद्रा से जो पद, प्रास तथा गमक से युक्त सुनाई पड़ते हैं उनके रचयिता यही परिमलरंग हैं। इन्होंने तेलुगु भाषा में रचना की थी। प्रायः २५० वर्ष पहले, चेन्नपुरी के उत्तर प्रांत में रहते थे।

शृंगारपद के रचयिता तेलुगु कवि

१. घटपल्लिवाला	— कैलासपति की मुद्रा से युक्त पदों के रचयिता					
२. बोल्लपुरवाला	— बोल्लवरं	,,	,,	,,	,,	
३. जटपल्लिवाला	— जटपल्लिगोपाल	,,	,,	,,	,,	
४. शोभनगिरिवाला	— शोभनगिरि	,,	,,	,,	,,	
५. इनुकोंडवाला	— इनुकोंडविजयराम	,,	,,	,,	,,	
६. शिवरामपुरीवाला	— शिवराम पुरम् रामपुर	,,	,,	,,	,,	
७. वेणंगिवाला	— वेणंगि	,,	,,	,,	,,	
८. मल्लिकार्जुन	— मल्लिकार्जुन	,,	,,	,,	,,	

ये कवि आंध्रदेशस्थ तैलंग ब्राह्मण थे। लगभग २५० वर्ष पहले रहे होंगे।

अनुबन्ध १

(कर्नाटक पद्धति के रागों का आरोहण-अवरोहण-क्रम)

कर्नाटक संप्रदाय की आधुनिक पद्धति (शिङ्गराचार्य के गायकलोचन के अनुसार)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की संगीत सम्प्रदाय प्रदर्शिनी के अनुसार
(१) कनकांगी मेल-जन्य—९	($रि_1, ग_1, म_1, ध_1, नि_1$)		
१. कीर्तिप्रिय	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२. कनकांबरी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिगरिस।	सारिमपधसा। सानीधपमगारिरीस्सा।
३. वागीश्वरी	सरिगमपधस—	सधपमगरिस।	
४. मुक्तांबरी	सरिगमपनिस—	सनिधमगरिस।	
५. शुद्धमुखारी	सरिगमपधनिस—	सनिधमगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगरिस।
६. भोगचिंतामणि	सरिपमपधनिस—	सधपमगरिगरिस।	
७. मोहनमल्लार	सरिगमधनिधस—	सधनिधपमगरिस।	
८. खड्गप्रिय	सगरिगमपधपनिस—	सधपधमगरिस।	
९. तपोल्लासिनी	समरिगमपधनिस—	सधपगरिस।	
(२) रत्नांगी मेल-जन्य—११	($रि_1, ग_1, म_1, ध_1, नि_2$)		
१. ऋषभांगी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
२. वसंतभूपाल	सरिगपधनिस—	सनिधपमधमगरिस।	
३. फेनद्युति	सरिमपधनिस—	सनिधमगरिस।	स़रिमपधधपनिनिस। सनिधधपमगगरिस।
४. गौरीगांधारी	समरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
५. जयसिंधु	सरिगमपस—	सपनिधमगरिस।	

६. श्रीमणि	सरिगपधस–	सनिधपगरिस।	
७. वसंतमनोहरी	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
८. जीवरंजनी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	
९. घंटारव	सरिसगमपनिस–	सनिधपमगरिस।	सगरिगम पधपनि धनिस। सनिधपमगरिस।
१०. भूपालचिंतामणि	सरिगमपधनिधस–	सधनिधपमरिस।	
११. पुष्पवसंत	सरिगपमधनिस–	सधनिपमगरिस।	

(३) गानमूर्ति मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_3$)

१. गिरिकर्णिक	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
२. सुरटिमल्लारु	सरिमपनिस–	सनिधपमगरिस।	
३. सामवराली	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
४. छायागौड़	सरिगरिमपधनिस	सधनिपमगरिस।	
५. ललिततोडी	सरिगमपस–	सनिधमगरिस।	
६. मंगलगौरी	समपधनिस–	सनिपधमगरिस।	
७. भिन्नपंचम	सगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	सरिगगरिमपधपनिनीस्सा। सनिधमागगरिस।
८. सारंगललित	सरिगमरिमपनिस–	सनिधपमरिस।	
९. त्र्यंबकप्रिय	समरिगमपस–	सनिसधपमगरिस।	

(४) वनस्पति मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

१. वीरविक्रमी	सरिगमपधनिस–	सनिपधमगरिस।
२. कर्णाटकसुरटी	सरिगमपधस–	सनिधपमरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
३. सुरभूषणी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
४. भानुमती	सरिगरिमपस–	सनिधपमगरिस।	सरिमपधनिस। सनिधपमगारिस।
५. इंदुशीतल	सरिगमपधनिधस–	सधनिपमगरिस।	
६. लीलारंजनी	समरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
७. रसाली	सरिमपधनिप–	सधपमरिस।	
८. सुगात्री	समपधनिस–	सधपमगरिस।	
९. श्वेतांबरी	सरिगमपमधनिस–	सनिपमगरिस।	

(५) मानवती मेल-जन्य—९ (रि$_{१}$ ग$_{१}$ म$_{१}$ ध$_{२}$ नि$_{३}$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. मानलोचनी	सरिगमपधनिपस–	सनिधमगरिस।	
२. मंगलदेशिक	सरिगमपनिधस–	सनिपधमगरिस।	
३. देश्यगौरी	सरिगमधपनिस–	सधनिपमगरिस।	
४. मनोरंजनी	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	सरिमपधनीस। सनिसधप मपम रिग रिस।
५. जयसावेरी	समरिगमपधनि–	धपमगरिसनिसा।	
६. मंगलभूषणी	पधसनिसरिगमप–	मगरिसनिधप।	
७. धनश्यामल	सगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
८. पूर्वकन्नड	सरिगमपमपस–	सधनिधपमगरिस।	
९. पूर्वसिंधु	सरिगमपसनिस–	सधपमधमगरिस।	

(६) तानरूपी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१. तिलकप्रकाशिनी	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
२. देश्यनारायणी	सरिगमपनिस—	सनिधनिपमरिस।	
३. सिंधुमालवी	सरिगमपधनिपनिस—	सनिपमरिस।	
४. तनुकीर्ति	सरिमपनिस—	सनिधनिपमगमरिस।	अव० सनिधनिपमगरिस।
५. छायानारायणी	सपमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।	
६. श्रीमालवी	सरिगमपनिधनिपस—	सपमगरिस।	
७. शृंगारिणी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
८. देश्यसुरटी	समरिगमपधनि—	पमगरिसनिस।	
९. गौडमालवी	सरिगमपधनिपनिस—	सपधनिपमगरिस।	

(७) सेनावती मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

१. सैंधवगौड़	सरिगमपधनिस—	सनिधमगमरिस।	
२. सेनाग्रणी	सरिगरिमगमधनिस—	सनिधपमगरिस।	सरिगगरिम गमप निधस्सा। सानीधप म गमागगरिस।
३. सिंधुगौरी	सगरिगमपस—	सधपमगरिस।	
४. ईशगौड़	समगमपधनिस—	सधपधमगरिस।	
५. भोगी	सगमपधनिधस—	सनिधपमगस।	
६. छायागौरी	सरिमगमपनिधनिस—	सनिधपमगमरिस।	
७. गौड़चंद्रिक	सरिमपधस—	सनिधपगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
८. चिंतामणि	सरिगमसमपधनिस–	सधनिपमगरिस।	
९. छायामालत्री	सगरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
१०. भानुगौड़	धसरिगमपधनि–	धपमगरिसनिधप।	

(८) हनुमत्तोडी मेल-जन्य—१९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_2$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. हिमांगी	सरिगमपधनिधस–	सनिपधमगरिस।	
२. तोडी	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	सरिगामपधनीस। सनिधपमगारिस।
३. चंद्रिकागौड़	सरिगमपधस–	सधपमरिस।	
४. भूपाल	सरिगपधस–	सधपगरिस।	
५. भानुचंद्रिक	समधनिस–	सनिधमगस।	
६. नागवराली	निसगरिगमपध–	पमगरिसनि।	सरिगमप मधनिस। सनिधमपगरिस।
७. छायाबौली	सरिगामसपमधनिस–	सनिपधमगारिस।	
८. शुद्धसामंत	धसरिमपध–	धपमगरिस।	
९. इंदुसारंगनाट	सरिगमपमधनिस–	सधपमगरिस।	
१०. असावेरी	सरिमपधस–	सनिसपधमपरिगरिस।	सरिमपधस। सनिधपमगारिस।
११. शुद्धमारुव	सगमपधस–	सधपमरिगरिस।	
१२. पुन्नागवराली	सरिगमपधनि–	निधपमगरिसनि।	निसरिगमपध। धपमगरिसनि।
१३. शुद्धसीमंती	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।	
१४. आहिरी	सरिसगमपधनिस–	सनिधापमगरिस।	सरिसगमपधनिस। सानिधापमगारिस।

१५. देशिकाबंगाल	सरिगपमधनिस—	सधपमगरिस।	
१६. धन्यासि	सगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	निसगामपनीस्सा। निधपमगरिस।
१७. नाधनालि	सरिगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	
१८. चंद्रकान्त	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
१९. कलासावेरि	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	

(९) धेनुक मेल-जन्य—१० (रि$_{१}$ ग$_{७}$ म$_{१}$ ध$_{१}$ नि$_{३}$)

१. धैर्यमुखी	सरिगमपधस—	सनिपमपरिगरिस।	
२. ललितश्रीकंठी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमधमगरिस।	
३. सिंधुचिंतामणि	सरिमगमधपधस—	सधपमगरिस।	
४. भिन्नषड्ज	सरिगरिपमपनिस—	सधपमगरिस।	सरिगामपधनिस। सनिधपमगारिस।
५. देश्यआंधाली	सरिगमपनिधस—	सधपमगरिस।	
६. पूर्वफरजु	समगमधनिस—	सनिधपमगरिस।	
७. शोकवरालि	सगमनि—	धपमगरिस।	
८. गौरीबंगाल	धसरिमपधनि—	धपमगरिसनिधप।	
९. देशिकारुद्रि	समरिगमपनिस—	सनिपधमगरिस।	
१०. टक्क	सगमपमधनिस—	सनिधपमगरिस।	१. सगमधध्रनिधस। सधमगरि गस। २. सगमप मग मधनिस। सनिधमपम गम-रिगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
(१०) नाटकप्रिय मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)			
१. निरंजनी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२. कन्नडसौराष्ट्र	सरिमगमधपधनिस—	सनिधपमगस।	
३. पूर्वरामक्रिय	सरिगमपनिधनिस—	सनिपधमगरिस।	
४. दीपर	सरिगमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।	
५. वसंतकन्नड	सरिगमपनि—	धमपगरिसनि।	
६. सिंधुभैरवी	मपधनिधसरिगम—	गरिसनिधपमगम।	
७. नटाभरण	सरिगमपधपनिस—	सनिधपमगमरिस।	सगमप्पानिध निससा। सनिधनिपा निपपमगग रिरिसा।
८. सारंगबौलि	समगमपधनिधस—	सनिधपमगारिस।	
९. हिन्दोलदेशिक	समरिगमपधनिस—	सपनिधमगारिस।	
१०. मागधश्री	सगरिमपधस—	सनिपगस।	
(११) कोकिलप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_3$ नि$_3$)			
१. कौमारी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२. मारुवदेशिक	सगमपधपनिस—	सनिधपमपमगरिस।	
३. वसंतनारायणी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
४. कोकिलारव	सरिगरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	सारिममप मपधनिसा। सनिधधप मगरिरिस।
५. छायासैंधवी	सरिगमपधपनिस—	सधनिपमगरिस।	

६. शुद्धमंजरी	सगमपमधनिस—	सनिपधमगरिस।
७. वर्धनी	सगमपमपधनिस—	सनिपधपमगस।
८. सिंधुक्रिय	सरिगमपमधनिस—	सधपमगरिस।
९. शुद्धललित	सपमधनिस—	सनिसधपमगरिस।

(१२) रूपवती मेल-जन्य—९ ($रि_1$ $ग_2$ $म_1$ $ध_3$ $नि_3$) रूपवती राग— सरिमप पससा। सनिधनिप मगस।

१. रेखावती	सरिगमपनिधस—	सनिधपमगरिस।
२. प्रतापवसंत	समरिगमपनिस—	सनिपमरिस।
३. भोगवराली	सरिगमपनिस—	सनिपमगरिस।
४. भानुकोकिल	समपधनिस—	सधनिपमगस।
५. रौप्यसग	समपधनिस—	सधनिपमगरिस।
६. पूर्णस्वरावलि	सगमपधनिस—	सधनिपमरिगस।
७. सामकुरंजि	सगपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।
८. सोमभैरवी	सरिगमपस—	सनिपधनिपमगरिस।
९. श्यामकल्याणी	समगमपधनिस—	सनिपधनिपमगरिस।

(१३) गायकप्रिय मेल-जन्य—१५ ($रि_1$ $ग_3$ $म_1$ $ध_1$ $नि_1$)

१. गीतप्रिय	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
२. सामनारायणी	सरिमपधनिस—	सपधनिपमरिस।	
३. हेज्जज्जि	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिम गमपधस। सनीधपमगरिस।
४. कुंतलकांभोजी	सगमपधनिधस—	सनिधपमगस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
५. देवमुखारी	सरिमपधनिस–	सनिधपमरिस।	
६. मेघराग	सरिमपनिधपस–	सनिधपमरिस।	
७. कल्याणकेसरी	सरिगपधस–	सधपमगरिस।	
८. नवरसचंद्रिक	सरिगपमधस–	सधपमगरिस।	
९. सुजस्कावली	समगमपधनिस–	सधनिधपमगस।	
१०. सुरवराली	समपधनिस–	सनिधपमस।	
११. कलकंठी	सरिमपधनिस–	सनिधपमरिस।	
१२. भुजगचिंतामणि	सपमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
१३. कल्तड	सरिगपधनिस–	सनिधपगरिस।	
१४. नागसामंत	सरिपमपधस–	सधपमरिस।	
१५. जुजाहुलि	समगमपधनिस–	सधनिधपमगस।	

(१४) **वकुलाभरण मेल-जन्य—११** (रि१ ग३ म१ ध१ नि२)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. विजयोल्लासिनी	सरिगमपमधनिस–	सनिधपमगरिस।	
२. रागवसंत	सरिमपनिधस–	सनिधमपमगरिस।	
३. हंसकांभोजी	सरिगमधनिस–	सनिधपमरिस ।	
४. वसंतभैरवी	सरिगमधनिस–	सनिधमपमगरिस।	सरिगम मधनिस। सनिध मगमप-मगरिस।
५. श्यामचिंतामणि	सरिमपधस–	पनिपधमगरिस।	
६. सोमराग	सरिमपमधनिस–	सनिधमगरिस ।	

७.	निटलप्रकाशिनी	समपधनिस—	सनिपमरिगस।	
८.	कर्णाटक आंधाळी	सगरिमपधनिस—	सधपमगरिस।	
९.	सुधाकांभोजी	सगरिमपनिस—	सनिपमगरिस।	
१०.	वसंतमुखारी	समगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
११.	पूर्वदर्शी	सरिसगमपधनि—	धपमगरिसनिस।	

(१५) मायामालवगौड़ मेल-जन्य—४१ (रि$_1$ ग$_3$ म$_1$ ध$_1$ नि$_3$) मायामालवगौड़राग—सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।

१.	मित्रकरणि	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस।	
२.	सावेरि	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगरिस।
३.	जगन्मोहिनी	सगमपनिस—	सनिपमगारिस।	
४.	गौड़	सरिगमरिमपनिस—	सनिपमगमरिस।	सा रिमपनिस। सनिपमरिग मरीस्सा।
५.	बौलि	सरिगपधस—	सनिधपगरिस।	सरिगपधनिस। सनिधपगरिस। (अल्पनिषाद)
६.	सारंगनाट	सरिमपधस—	सनिसधपमगरिस।	
७.	मारुवकन्नड	सरिमगमपनिस—	सनिपमरिगरिस।	
८.	नादनामक्रिय	सरिगमपधनि—	निधपमगरिसनि।	सरिगमपधनिस। सनिधधप मागरिरिस।
९.	मेचबौलि	सरिगपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगसधस। सनिधपमागरिस।
१०.	गुम्मकांभोजी	सरिगपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
११.	रेगुप्ति	सरिगपधस—	सधपगरिस।	
१२.	मलहरि	सरिमपधस—	सधपमगरिस।	अव० सधपगरीस।
१३.	ललितगौरी	सरिगमपधनिस—	सधपगरिस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१४.	सालंगनाट	सरिसमपधस—	सधपसनिसधपमगरिस ।	सरिमपधस। सनिधपमगरिस।
१५.	मंगलकैशिक	समगमपमधानिस—	सनिधपमगरिस ।	सरिगमपमग पधनिस सरिमगधपस सनिधपमगरिस।
१६.	ललितपंचम	सरिगमधनिस—	सनिधमपमगरिस ।	रिसगा मधनिस। सांनिधपमगरिस।
१७.	मारुव	सगमपधनिधपस—	सनिधपमधमपमगरिस ।	सगमधनिस। सनिधपगम गरिस रिगरिस।
१८.	शुद्धक्रिय	सरिपमपधस—	सधपमगरिस ।	
१९.	देश्य रेगुप्ति	सरिगरिमपधनिस—	सधनिधपमगस ।	
२०.	मेघरंजि	सरिगमनिस—	सनिमगरिस ।	अव० सनिमगसरि स ।
२१.	पाडि	सरिमपनिस—	सनिपधपमरिस ।	रिमपधपनिस। सनिप धा पपमरीस।
२२.	पूर्णपंचम	सरिगमपध—	धपमगरिस ।	सरिगमपधस। सधपमगरिस।
२३.	सुरसिंधु	समगमधपधनिधस—	सनिधपमगरिस ।	
२४.	देश्यगौड़	सरिसपधनिस—	सनिधपसरिस ।	
२५.	शुद्धमलहरि	सरिगपमधस—	सधपगरिस ।	
२६.	गौरी	सरिमपनिस—	सनिधपमगरिस ।	सरिमपधनिस। सांनिध पम मप मगरिस।
२७.	सिंधुरामक्रिय	सगमपधनिस—	सनिपधपमगस ।	सरिगमपधधनीस्सा। सनिधपमगरिगस।
२८.	गौड़िपंतु	सरिगरिमपधपनिस—	सनिधपमगरिस ।	
२९.	सौराष्ट्र	सरिगमपधनिस—	सनिधापमगरिस ।	अव० सनिधपमगरिस।
३०.	आर्द्रदेशिक	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस ।	१. सरिगमपधनिस। सनिधपमगगगरिस। २. (रिसनिध) निसरिगमपधप। (धस) धपमगगगरिस। धधधसनिस।

३१. वसंतप्रिय	सरिगमपधप।नेस–	सनिपमरिस।	
३२. गुज्जरि	सरिगमपधनिस–	सधनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३३. कन्नडवंगाल	सरिमगमधपधस–	सधपमगरिस।	सरिमपधस। सधपमगरिस।
३४. गुण्डक्रिय	सरिमपनिस–	सनिपधपमगरिस।	सारिगमपधनिस। सानिपमगम धपमगरिस।
३५. मार्गदेशिक्	सरिगपधस–	सधमपगरिस।	सरिगरि गधमपधस। सधमपगरिस।
३६. फरजु	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगारीस।	अव० सनिधपमगरिस।
३७. ललितक्रिय	सरिगमपमधानिस–	सनिधमगरिस।	
३८. पूर्वी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमधमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३९. वसंत	सगमधनिस–	सनिधमगरिस।	रिसगमधनिस। सानिधनिधमाग मम पमगरिस।
४०. घनसिंधु	समगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
४१. छायागौड़	सरिमपनिस–	सनिधपमगरिस।	

(१६) चक्रवाक मेल-जन्य—२८ (रि$_2$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

१. चिन्मय	सरिगामपमधनिस–	सनिधनिपमगारिस।
२. शुद्धश्यामल	सगपधनिस–	सनिधपमगरिस।
३. बिंदुमालिनी	सगरिमपधनिपनिस–	सपनिधपगारिस।
४. मलयमारुत	सरिगपधनिस–	सनिधपगरिस।
५. गणितविनोदिनी	सगमपनिस–	सनिधपमगरिस।
६. चंद्रकिरणी	सगमपमधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
७. वीणाधरी	सरिगपधनिस—	सनिधपमगारिस।	
८. शशिप्रकाशी	सरिगमपधनिस—	सनिधपगारिस।	
९. कलावती	सरिमपधस—	सधपमगसरिस।	सारिगम, पधनिधपधसा। सानीधसम रिग मरिस।
१०. कुंतल	सरिगमपधनिस—	सधनिपमगमरिस।	
११. भक्तप्रिय	सगमपधनिस—	सनिधपमरिमगस।	
१२. शांतस्वरूपी	सगरीमपधनि—	सनिधनिपमरिस।	
१३. घोषणी	समगमपधनिधस—	सनिधपमगमरिस।	
१४. वेगवाहिनी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	सारिगमपधनिसा। सानिधपमगरिसा।
१५. नभोमार्गिणी	सगमपधनिस—	सधापमगरिस।	
१६. मनसिजप्रिय	सरिगमपधनिधपमधनिस—	सधनिपमगरिस।	
१७. शिवानंदी	समगमपधनि—	धपमगरिसनिस।	
१८. सुभाषिणी	सधनिसरिगमप—	मगरिसनिधनिस।	
१९. पूर्णगांधारी	पधनिधसरिगमपधा—	पमगरिसनिधनिप।	
२०. कुवलयानंदी	सरिगमनिधनिपनिस—	सनिधमगस।	
२१. रविकिरणी	सगमनिधनिस—	सनिधपमगरिस।	
२२. भुजंगिनी	सरिसमगमनिधनिस—	सनिधमगरिस।	
२३. रसकलानिधि	सपमधनि—	धपमगमरिसनिस।	
२४. कुसुमांगी	सरिसपधनिस—	सनिधपमगरिस।	

२५. भुवनमोहिनी	सगमनिधस—	सनिपधमगारिस।	
२६. गुहप्रिय	सरिगामसपमधनिस—	सनिधपमगसरिस।	
२७. जनाकर्षणी	सरिगपमधनिस—	सधनिपमगधमगरिस।	
२८. धनपालिनी	सरिगमपमपस—	सनिधपमधमगरिस।	

(१७) सूर्यकान्त मेल-जन्य—९ (रि$_१$ ग$_३$ म$_१$ ध$_२$ नि$_३$)

१. सेनामणि	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२. सामकन्नड	सरिमगमपधनिस—	सनिधापमरीस।	
३. ललित	सरिगमधनिस—	सनिधँमगरिस।	सरिगमधधनिस। सनिधमामगरिस।
४. सुप्रदीप	सरिमपधनिस—	सनिधपमगमरिस।	
५. सोमतरंगिणी	सरिसगमपमधनिस—	सनिसधपमगमरीस।	
६. नागचूड़ामणि	सगामपधनिस—	सनिधपमगस।	
७. भैरव	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस।	अव० सधपमपमगरिस।
८. सामंतमल्लार	सगमपनिस—	सनिपधमगरिस।	
९. दिव्यतरंगिणी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	

(१८) हाटकांबरी मेल-जन्य—११ (रि$_१$ ग$_३$ म$_१$ ध$_३$ नि$_३$)

१. हितभाषिणी	सरिगमपनिधनिस़—	सनिपमगरिस।	
२. नागतरंगिणी	सरिगमपनिस—	सनिपधनिपमगास।	
३. शुद्धमालवी	सगरिगमपधनिस—	सधनिपमगरिस।	सरिगमपनिस। सनिध निपमगरिस।
४. भानुचूड़ामणि	सरिगमपस—	सनिधनिपमगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
५. सिंहोल	सरिगमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।	
६. चंद्रचूड़प्रिय	सगमपनिधनिस—	सनिपमरिस।	
७. हंसनटनी	सगमपस—	सपमगरिस।	
८. भूपालतरंगिणी	सरिमपनिस—	सनिधनिपमगमरीस।	
९. कल्लोल	सपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
१०. शुद्धकन्नड	समपधनिस—	सनिपमगस।	
११. दिव्यगांधारी	समगरिपधनिस—	सधनिपमगसरिस।	

(१९) झंकारध्वनि मेल-जन्य—१० (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. झंकारी	सरिगमपधस—	सधपमगरिस।	
२. प्रभातरंगिणी	समरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
३. देश्यबेगंड	सगमपस—	सनिधपमगरिस।	
४. झंकारभ्रमरी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधनिधपधसा। सनिधपम गरिगरिरीसा।
५. छायासिंधु	सरिमपधस—	सधपमगरिस।	
६. सिंधुसालवि	समपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
७. पूर्णललित	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
८. अमृततरंगिणी	सरिगमधनिस—	सधनिधपमगरिस।	
९. पूर्वसालवि	सगमधनिस—	सनिधपमरिस।	
१०. चित्तरंजनी	सरिगरिगमपध—	निधपमरिगरिस।	

(२०) **नटभैरवी मेल-जन्य—३४** (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_2$)

१.	नीलवेणी	सरिगमपधनिधस—	सधपमगरिस।	
२.	भैरवी	सरिगमनिधनिस—	सनिधमगरिस।	स। रिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३.	रीतिगौड़	सगरिगमनिधमपनिस—	सनिधमपधमगरिस।	सरींगम्म पध पनिनिस।। सानिनीध मागग-रिस।
४.	जयंतश्री	सगमधनिस—	सनिधमपमगस।	
५.	नारायणदेशादि	सरिसगमपधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
६.	कमलातरंगिणी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमरिस।	
७.	हिदोल	समगमधनिस—	सनिधमगस।	सगगमनिधनिस। सानीधमगस।
८.	आभेरी	सगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	समगमपपसस। सानिधपमागरिस।
९.	उदयरविचंद्रिक	सगमपनिस—	सनिपमगस।	सगमपनिनिस। सनिपममगस।
१०.	आनंदभैरवी	सगरिगमपधपनिस—	सनिधपमगरिस।	सगगमपध पसनिस। सानिधपमममागगरिस।
११.	कन्नड	सगमपधस—	सनिधमगस।	
१२.	देवक्रिय	सरिगमनिधनि—	पधमगरिसनि।	सरिमपधस। सधपमरिस।
१३.	इंदुघण्टारव	सगमपधपनि—	धापमगरिसनि।	
१४.	वसंतवरालि	सरिमपधनि—	निधापगरिसनि।	
१५.	नागगांधारी	सरिगमपधनि—	निधापमगरिसनि।	सरिमगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१६.	दिव्यगांधारी	सगमपधनिस—	सनिपमगस।	
१७.	मांजी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	निसरीगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१८.	शुद्धदेशी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधनिध स। सनिधपधममगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१९. मार्गहिंदोल	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगस।	सगगमपाम धनिस। साधमगसरि स।
२०. नायकी	सरिमपधनीधपस—	सनीधपमगारिस।	सारिगामपधनीसा। सानीधपमगारीस।
२१. शुद्धसालवि	सगमपनिस—	सनिपमरिस।	
२२. कनकवसंत	संगमपनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२३. पूर्णषड्ज	सपमपधपस—	सनिधमगरिस।	
२४. गोपिकावसंत	समपनिधनिधस—	सनिधपमगस।	रि सरिगमपध पनिनीस्सा। सनिधपमगरि मगस।
२५. चापघंटारव	सगमपनि—	धमगरिसनि।	
२६. भुवनगांधारी	सरिमपनिस—	सनिधपमगस।	
२७. हिंदोलवसंत	सगमपधनिधस—	सनिधपमगधमगस।	सगगमपधसस। सनिधपधनीधमगस।
२८. सारंगकापि	सरिपमरिपरिमपनिस—	सनिधपमगरिस।	
२९. सारमती	सरिगमपधनिस—	सनिधमगस।	
३०. शुद्धतरंगिणी	सगमपनिस—	सनिधमगरिस।	
३१. अमृतवाहिनी	सरिमपधनिस—	सनिधमगरिस।	
३२. जिंग्ल	सरिगमपधनिधपस—	सनिधपमगरिस।	
३३. पूर्वभैरवी	सरिगमनिधनिस—	सनिधपमगरिस।	
३४. कोकिलवराली	सरिगरिमपधनिधस—	सधनिधपमरिगरिस।	

(२१) कीरवाणी मेल-जन्य--१३ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_3$)

राग	आरोही	अवरोही
१. कुलभूषणी	सरिगमपनिस—	सधपमगरिस।

२. सामंतसाळवि	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
३. जयश्री	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
४. इन्दुधवली	सरिगमसमपधनिस–	सनिधपमगस।	
५. किरणावली	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	सरिमप धपधनिस। सनिपधपमप गरिस।
६. सौमगिरि	निसरिगमपध–	पमगरिसनिस।	
७. माधवी	समगमपधनिस–	सनिधपमसमगरिस।	
८. हंसपंचम	सगमपनिधनिपस–	सनिधमगरिस।	
९. कल्याणवसंत	सगमधनिस–	सनिधपमगरिस।	
१०. गगनभूपाल	समगमपधनिस–	सनिधमगरिस।	
११. कर्णाटकदेवगांधारी	निसगमपा–	धापमगरिसनि।	
१२. नागदीपक	सरिगमपस–	सनिधमगस।	
१३. संजीवनी	सरिसगमपनिस–	सनिधनिपमगरिस।	

(२२) खरहरप्रिय मेल-जन्य—५६ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

१. खलावली	सरिगामपस–	सनिपमगरिस।
२. सुगुणभूषणी	सगमपमधनिस–	सनिधपमगमरिस।
३. स्वररंजनी	सरिगमधनिस–	सनिपमगामरिस।
४. भगवत्प्रिय	सरिगामरिमपधनिस–	सनिधपमरिस।
५. स्वरकलानिधि	समगामपधनिस–	सनिधनिपमरिगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार	
६. श्रीराग	सरिमपनिस–	सनिपधनिपमरिगरिस।	रीमपनिस। सनिप धनिपगरिग रिस।	सायं गेय—ग्रामराग या रागांग अल्पधैवत; सरिगम और मगरिस प्रयोग नहीं—सारामृत। संचार—रिमपनिसनि-पधनिपमरिगारिस —संपादक। मुख्यसंचार— रिगारि सनिपानीसा।
७. मालवश्री	सगमपनिधनिपधनिस–	सनिधपमगस।	सगगमपनिनिस। नि-निधपमप निधममगस।	रि वर्ज्य—मपधनिसा; सनिनि धनि धपममम-गस। —सारामृत। सदा गेय—रागांग
८. कन्नडगौड़	सरिगमपनिस–	सनिधपमगस।	सरिगमपधनिस। स-निपमगस। सगगामपनिनीसा। स-निनीधममगसा। (मगरिस) प्रयोग भी है। निसनीधममगसा।	उपांग—दिन का पश्चिम याम, आरोह और अवरोह में वक्रसंचार, उदाहरण— सनिपधनिसनिनिस। रिगमगमपनिपम। पनि निस मगस। मधनिस। निरीगमम सनिप—सारामृत।

९. मध्यमावती	सरिमपनिस—	सनिपमरिस।	
१०. फलमंजरी	सगमधस—	सनिधपमगामरिस।	
११. रुद्रप्रिय	सरिगमनिस—	सनिपमगारिस।	सारिगमपधनिनिसा। सनीपमगारीसा।
१२. वृन्दावनसारंग	सगरिमपनिस—	सनिपमरिगस।	
१३. नटनप्रिय	सगरिगमधनिस—	सनिपमगरिस।	
१४. ललितमनोहरी	सगमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
१५. मणिरंगु	सरिमगामपनिस—	सनिपमगारिस।	रिममपनिनिस। सनिपमगरिरिस।
१६. जयंतसेन	सगमपधस—	सनिधपमगस।	
१७. सैन्धवी	निधनिसरिगम—	पमगरिसनिधनिस।	सारिगमपनिधनिस। सनिधपमगरिस।
१८. शुद्धधन्यासी	सगमपनिपस—	सनिपमगस।	सगमपनिस। सनिपमगस।
१९. पूर्णकलानिधि	सगमपधनिस—	सधपमगरिस।	
२०. हरिनारायणी	सरिगामपमधनिस—	सनिपमगरिस।	
२१. पूर्वमुखारी	समगमपधनिधस—	सनिपमगरिस।	
२२. ललितगांधारी	सरिगामपनिस—	सनिपमगामरिस।	
२३. शुद्धभैरवी	सगमनिधस—	सनिधमगरिस।	
२४. आभोगी	सरिगमधस—	सधमगरिस।	
२५. सालगभैरवी	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधसा। सनिधमगरिस।
			सरिगरिपमपधपसा। निसधपमगरिस।
२६. जयनारायणी	सरिगामपधस—	सनिधपमगरिस।	
२७. मनोहरी	सगरिगमपधस—	सधपमगरिस।	सागमपनिसा। सनिधपमगसा।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२८. मारुवधन्यासी	सगमपधनिधपमपनिस—	सनिधपमधमगरिस।	
२९. कलानिधि	सरिगमसपमधनिस—	सनिधपमगरिस।	
३०. नागरी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगस।	
३१. स्वरभूषणी	सगमपधनिस—	सनिधपमरिस।	
३२. वज्रकांति	सगमपनिस—	सनिधापमगरिस।	
३३. पंचमराग	सरिधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
३४. शुद्धबंगाल	सरिमपधस—	सधपमरिगरिस।	
३५. मंजरी	सगरिगमपनिधनिस—	सनिधपमगरिस।	
३६. हुसेनी	सरीगामपधनिस—	सनिधपमागरिस।	सरिगमापधनिसा। निधपमागरिस।
३७. कापि	सरिगामरिपमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	स।रिगमपधनिस। निधपमगगरीस्सा।
३८. श्रीरंजनी	सरिगमधनिस—	सनिधमगरिस।	
३९. शुभांगी	समरिगमपधनि—	धपमगरिसनिस।	
४०. कलास्वरूपी	सरिगामपधनिपस—	सनिपमगारिस।	
४१. शुद्धवेलावलि	सरिमपनिस—	सनिधनिपमगरिस।	
४२. दरबार	सरिमपधानिस—	सनीधपमगारिस।	सारिगमपधनिसा। नीधपमगारिसा।
४३. देवरंजनी	सगरिमपधनिस—	सधपमगारिस।	समपध पनिध पनिस। सनिधपमसा। धनिस धसस।
४४. बालचंद्रिका	सगमपधनिस—	सनिधमगरिस।	
४५. मंडमारि	सरिमपधस—	सनिसधपमरिगस।	

४६. शुद्धमनोहरी	सरिगमपधस—	सनिपमरिगस।	
४७. सिद्धसेन	सगरिगमपधस—	सनिधमपमरिगरिस।	
४८. कालिंदी	समगामपस—	सनिधमगरिस।	
४९. कह्लार	सरिमगमपधपस—	सधपमरिस।	
५०. नादमूर्ति	सगमधनिस—	सनिामरिगस।	
५१. मुखारि	सरिमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगरिस।
५२. धातुमनोहरी	सपमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
५३. कुमुदप्रिय	सरिगामपस —	सनिधनिपमगस।	
५४. देवमनोहरी	सरिमपधनिस—	सनिधनिपमरिस।	सरिमपधनिपमपनिनीस्सा। सनिधनिप मरिस।
५५. बालबोधी	सरिगपमनिधस—	सनिधपमगरिस।	
५६. नादवरांगिणी	सपमरिगरिस—	सपनिधपमगरिगस।	

(२३) गौरीमनोहरी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_2$ नि$_1$)

१. गंभीरिणी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२. सालविबंगाल	सरिमपधस—	सनिधपमरिस।	
३. हंसदीपक	सरिगमधस—	सनिधपमगरिस।	
४. नागभूपाल	सरिगमनिस—	सनिमगरिस।	
५. वेलावली	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगगस रिममपधधसा सनिधपमगगरिस।
६. सामसालवी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
७. कोकिलदीपक	सगमधनिस—	सनिधमगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
८. सिंहमेलभैरवी	सगमपधस—	सनिधमगरिस।	
९. नागपंचम	समपनिधस—	सधमगरिस।	
(२४) वरुणप्रिय मेल-जन्य—९ ($रि_2$ $ग_1$ $म_1$ $ध_3$ $नि_3$)			
१. वीरवसंत	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	रिममपनिध निस। सनिपमरिगस।
२. भानुदीपक	सरिगमपधनिस—	सनिपमरिस।	
३. गौड़पंचम	सरिमपनिस—	सनिपमगरिस।	
४. हंसभूपाल	सरिगमपस—	सनिधनिपमगस।	
५. सिह्मेलकापि	सरिमपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
६. हंसभूषणी	सगमधनिस—	सनिपगरिस।	
७. गंधर्वनारायणी	समपधनिस—	सनिधनिपमस।	
८. सोमदीपक	सगपधनिस—	सनिपमगस।	
९. नवनीतपंचम	सगमधपधनिस—	सनिपमरिस।	
(२५) माररंजनी मेल-जन्य—१० ($रि_2$ $ग_3$ $म_1$ $ध_1$ $नि_1$)			
१. मित्ररंजनी	सरिगमपधपस—	सनिधपमगरिस।	
२. रम्यपंचम	सरिगमपधनिस—	सधमगरिस।	
३. शरद्द्युति	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
४. सिह्मेलवसंत	सरिगमपमधनिस—	सधपमगरिस।	
५. कल्लोलसावेरी	सरिमपधम—	सनिधपमगरिस।	

६. देशमुखारी	सरिगमपधनिधस–	सधनिधपमगरिस।
७. भानुप्रताप	समगमपधस–	सधपमगरिस।
८. हंसगांधारी	सरिगमपस–	सनिधपधमगरिस।
९. केसरी	सरिगमपमधपधस–	सधनिधपमगरिस।
१०. देवसालग	सगपधनिस–	सपनिधपमगरिस।

(२६) चारुकेशी मेल-जन्य—८ (रि$_{२}$ ग$_{३}$ म$_{१}$ ध$_{१}$ नि$_{२}$)

१. चित्स्वरूपी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगमरिस।
२. सोमप्रताप	सपमधनिस–	सनिधपमगरिस।
३. सिह्मोलवराली	सरिगमपमधनिस–	सधपमगमरिस।
४. तरंगिणी	सरिमगरिमपधनिधस–	सनिधपमगरिस। सरिगपधनिधपधस। साधपगरि सरिगमग रीस्सा।
५. कन्नडपंचम	सरिगमपनिस–	सनिधनिपमगस।
६. कोकिलप्रताप	सगमपमधनिस–	सनिपमगस।
७. गंधर्वमनोहरी	सरिमपस–	सनिधमगरिस।
८. शुक्रज्योति	सरिगमपधनिस–	सनिपधमगरिस।

(२७) सरसांगी मेल-जन्य—२९ (रि$_{२}$ ग$_{३}$ म$_{१}$ ध$_{२}$ नि$_{३}$)

१. सिंहवाहिनी	सगमपधनिस–	सनिधपमगरीस।
२. नादविनोदिनी	सरिगमपमधानिस–	सनिसधपमगरीस।
३. नादस्वरूपी	सगमपमधानिस –	सनिधपमगरीस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
४. पद्मराग	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगस	
५. सोममुखी	सगमपधनिस–	सनिधपमरिमगस।	
६. भानुकिरणी	सगमधानिस–	सनिधपमगरीस।	
७. सुरसेन	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	
८. जलजवासिनी	सगमपनिस–	सनिधपमरिस।	
९. सारसप्रिय	सरिमगामपधनिस–	सनिपधामगरिस।	
१०. जयाभरणी	सगमपमरिगमपसा–	सनिधापमरिस।	
११. हरिप्रिय	सरिगमपस–	सनिधपमगस।	
१२. रत्नमणि	समगामरीगमपधनिस–	सनिधापमरिगस।	
१३. नादप्रिय	समगामपधनिस–	संनिसमगस।	
१४. मानाभरणी	सरिगपमधानिस–	सनिधपमगरिस।	
१५. दिव्यपंचम	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
१६. नयनरंजनी	सरिगमपधपनिस–	सनिपनिधमगरिस।	
१७. मणिमय	सनिसरिगमपधा–	पमगरिसनिस।	कुरंजिच्छाय
१८. मंजुल	पसनिसरिगमप–	मगरिसनिधप।	
१९. माधुर्य	पनिसरिगमप–	मगसनिधप।	
२०. मधुकरी	समगमपधनि–	पमगरिसनिस।	
२१. कमलामनोहरी	सगमपनिस–	सनिधपमगस।	
२२. भिन्नगांधारी	सरिगमपधनी–	धपमगमरिस।	

२३. दिनकरकांति	समगमपस–	सनिधपमगस।	
२४. दिव्यांबरी	सपमपधनिस–	सपनिधमगरिस।	
२५. नागाभरणी	सरिगपमरिमपस–	सधापमगरिस।	सरीगमपनिध निस। सनिपमगमरिस मग-रिस।
२६. नलिनकांति	सगरिमपनिस–	सनिपमगरिस।	
२७. रत्नाभरणी	सरिपाधनिस–	सनिधपगस।	
२८. कुसुमप्रिय	सरिगमपधनिस–	सनिपमगारिस।	केदारच्छाय
२९. भोगलील	समगमपधनिस–	सनिव्रपगरिस।	

(२८) हरिकांभोजी मेल-जन्य—५३ (रि२ ग३ म१ ध२ नि२)

१. हितप्रिय	सरिगमधनिस–	सनिधनिपमरिमगस।	
२. कांभोजी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	सरिमग पधनि धसा। सनिधपमगरिस।
३. केदारगौड़	सरिमपनिस–	सनीधपमगरिस।	सारिमपनिस। सानिधपमगरिस।
४. नवरसकलानिधि	सरिमपसनिस–	सनीधपमगरिस।	
५. नारायणी	सरिमपधस–	सनिधपमरिस।	सारिमगरिगम पधसा। सनिप निधपधमपमग-रिस।
६. नारायणगौड़	सरिमपनिधनिस–	सनिधपमगरिगरिस।	रिमपनिधनिस। निधपमगरिगरिस।
७. प्रतापचितामणि	सगमपमधनिस–	सनिधपमगमरिस।	
८. सुरभैरवी	सरिपमपधनिस–	सनिधपमस।	
९. द्वैतचिंतामणि	सगमधनिस–	सनिपधमगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१०. मालवी	सरिगमपनिमधनिस—	सनिधनिपमगमरिस।	
११. प्रतापरुद्री	समगमपधनिस—	सनिपमगमरिस।	
१२. छायातरंगिणी	सरिमगमपनीस—	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१३. बलहंस	सरिमपधस—	सनिधपमरिमगस।	सरिगमपधस सनिधपमगरिस।
१४. नटनारायणी	सरिगमधनिस—	सनिधपमगमरिस।	सरिगसरिमपधस। सधपमगरिस।
१५. मोहन	सरिगपधस—	सधपगरिस।	अव०पधपगरिस।
१६. प्रबालशोधी	सरिमपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
१७. सिंधुकन्नड	समगमरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
१८. कापिनारायणी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगारिस।	
१९. जंझाटि (झिंझोटी)	धसरिगमपधनि—	धपमगरिसनिधपधस।	
२०. शहन (शहाना)	सरिगमपमधनिस—	सनीधपमगमरिगरिस।	सरिगमपमधनिसा। निनिधपमगगरीगरिस।
२१. प्रतापनाट	सरिगमधपधनिस—	सनिधपमगस।	
२२. स्वर्चिंतामणि	सरिगमपनिधनिपस—	सनिधपमरिस।	
२३. द्वैतानंदी	सरिगमपस—	सनिधनिपमरिस।	
२४. रत्नाकरी	सगमपनिधनिस—	सनिधपमरिस।	
२५. ईशमनोहरी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमरीमगरिस।	अव० सनिधपमगरिसास्स।
२६. प्रतापवराली	सरिमपस—	सधपमगरिस।	
२७. कुंतलवराली	समपधनिधस—	सनिधपमस।	
२८. सरस्वतीमनोहरी	सरिगमधस—	सधनिपमगरिस।	सरिगमधधनिस। सनिधपमगमरि स।

२९. नीलांबरी	सरिगमपधपनिस–	सानिपमगरिगस।	सरिगममासध पनिनिसा। पानिपमागरि गसा। निध निसा।
३०. साम	सरिमपधस–	सधपमगरिस।	सारिगस रिपपधधस्सा। सधपमगरिस। (रिपमधधसा) प्रयोग भी है।
३१. आंधाली	सरिमपनिस–	सनिपमरिगमरिस।	सरिगमपनिस। सनिपमगरिस।
३२. द्विजावंती	सरिमगमपधनिस–	सनिधपमगरिगस।	
३३. द्वैतपरिपूर्णी	सरिगमपधनि–	पमरिमगसनिस।	
३४. मत्तकोकिल	सरिधपनि–	धपसरिसनि।	
३५. बंगाल	सरिगमपमरिपस–	सनिपमरिगरिस।	
३६. रागपंजर	सरिमपधनिधस–	सनिधमरिस।	
३७. रविचंद्रिक	सरिगमधनिधस–	सनिधमगरिस।	
३८. वेदघोषप्रिय	निधनिसरिगम–	पमगरिसनिधनिप।	
३९. कोकिलध्वनि	सरिगमधनिधस–	सनिधनिपमगरिस।	
४०. नवरसकन्नड	सगमपस–	सनिधमगरिस।	
४१. स्वरावलि	समगमपनिधनिस–	सनिपधमगरिस।	
४२. नागस्वरावलि	सगमपधस–	सधपमगस।	
४३. सूक्ष्मरूपी	सपमरिगमपस–	सनिधपमस।	
४४. बहुदारी	सगमधपधनिस–	सनिपमगस।	
४५. यदुकुलकांभोजी	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	सरिमप, धनिधपधसा। सानिधपमगरिसा।
४६. शुद्धवरालि	सरिगमधनिस–	सनिधनिपमगस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
४७. सुरटी	सरिमपनिस–	सनिधपमगपमरीस।	निसरिमपनीस्सा। सनीधपमा गरीस्सा।
४८. खमास	सगपधनिस–	रिसनिधपमगस।	सारिगमपधनिसा। सनिधपमगरिसा।
४९. नाटकुरंजी	सरिगमधनिस–	सनिधमगस।	सारिगमप धनिसा। सनिधमगसा।
५०. कुलपवित्री	सरिगमधपनिस–	सनिपमरीस।	
५१. मायातरंगिणी	सरिमगपमनिस–	सनिधपमगरिस।	
५२. उमाभरण	सरिगमपधनि–	सनिपमरिगमरिस।	
५३. देशाक्षी	सरिगमपधस–	सनिधमगमरिस।	

(२९) **धीरशंकराभरण मेल-जन्य**—३१ (रि$_2$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_3$) धीरशंकराभरण—सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. धूर्वांको	सरिमपधस–	सनिपधपमगरिस।	
२. कुरंजी	सनिसरिगमपध–	धपमगरिस़निस।	सारिगमगमपनिनीस्सा। सनिपनिध धपमग-रिसा।
३. केदार	समगमपनिस–	सनिपमगमधमगरिस।	समग मपनिनीस्सा। सनिपममागरिस।
४. आहिरीनाट	समगमपधनिस़–	सनिपधनिपगमगस।	
५. माहुरी	सरिगरिमपनि–	धपमगरिस।	सरिमगरिमपधसा। सनिधपमगरि सारि-गरिस।
६. कोलाहल	सपमगमपधनिस़–	सनिधपमगरिस।	
७. जनरंजनी	सरिगमपधपनिस़–	सधपमरिस।	
८. सिंधुमंदारी	सरिगमपस–	सनिधपगमधपमरिस।	

९. ब्यागु	सगमपनिधनिस—	सनिधपमगारिस।	
१०. हंसध्वनि	सरिगपनिस—	सनिपगरिस।	सरिगपनिस। सनिपगरिस।
११. पूर्णचंद्रिक	सरिगमपधपस—	सनिपधपमगमरिस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगमरिस।
१२. देवगांधारो	सरिगरिमपधनिस—	सनिधापमगरीस।	सरि सगगम पध पनिनिस। सानिधपाममगग-रिस। (र) सारिमपधधास्सा। सनिधपमगरी, सरिगरी-सा (दे)
१३. आरभी	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	
१४. नवरोज	पधनिसरिगमप—	मगरिसनिधप।	अव० पमगरिसनिधप।
१५. गरुडध्वनि	सरिगमपधनिस—	सधपगरिस।	
१६. अठाण	सरिमपनिस—	सनिधापमगारिस।	सरिगमपधानिस। सनिधापमगारिस।
१७. जुलावु	पनिसरिगमप—	पमगरिसनिप।	
१८. कन्नड	गरिसरिगमपमधनिस—	सनिसधपमपगमरिस।	सरिगमपधानिस। सनिधपमगारिस।
१९. बिलहरी	सरिगपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमगपधसा। सनिधपमगरिस।
२०. शुद्धसावेरी	सरिमपधस—	सधपमरिस।	सरिमपधसा। सधाधपपमरिसा।
२१. नागध्वनि	सरिसमगमपनिधमपनि-धनिस—	सनिधनिपमगस।	सरिगसमगमपधनिस। सनिध निपमगरिगस।
२२. कोकिलभाषिणी	सरिगमपधनिस—	सनिपमगमरिस।	
२३. शुद्धवसंत	सरिगमपनिस—	सधनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
२४. बेगड	सगरिगमपधनोधपस—	सनोधपमागरिस।	सगमपनिनीस्सा। सनिधपमगरिस।

रांग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२५. विवर्धनी	सरिमपस–	सनिधपमगरिस।	
२६. सिंधु	सरिगरिमपस–	सनिधपनिधपमगरिस।	
२७. पूर्वगौड़	सरिमगरिमपनिधनिस–	सनिधपमगरिस।	सगरिग सरिमपधनिस। सनिधपमगरिस।
२८. शंभुक्रिय	सगरिमपनिस–	सनिपनिमगरिस।	
२९. गौडमल्लारु	सरिमपधस–	सनिधमगरिस।	
३०. नागभूषणी	सरिमपधनिस–	सधपमरिस।	
३१. धीरमती	सगरिगमपमनिधस–	सनिपधसपमगरिस।	

(३०) नागानंदिनी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

रांग	आरोही	अवरोही	
१. निर्मलांगी	सरिमपधस–	सनिधनिपमगरिस।	
२. सामंत	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
३. नागभाषिणी	सगरिगमधनिस–	सनिपमरिस।	
४. सिह्लेलसावेरी	समगमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
५. ललितगंधर्व	सरिगमपधनिस–	सनिपगरिस।	
६. प्रतापकोकिल	सपमपधनिस–	सनिपमगस।	
७. हंसगंधर्व	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
८. सोमभूपाल	सरिमपमधस–	सधनिपमगरिस।	
९. भानुक्रिय	समगमपधनिस–	सनिपधनिपमरिस।	

(३१) यागप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१.	यौवनी	सरिगमपनिधनिस—	सधपमरिमगस।
२.	कलहंस	सरिमपधनिधस—	सनिधपमरिस।
३.	प्रतापहंसी	सगमपनिधनिस—	सनिधपमगमरिस।
४.	नागगंधर्वं	सरिमपधनिस—	सधनिपमरिस।
५.	गंधर्वकन्नड	सरिगपधस—	सनिधपमगमरिस।
६.	सोमक्रिय	सपमरिगमधनिस—	सधपमगमरिस।
७.	कोकिलगंधर्व	सगमधस—	सधपमगरिगस।
८.	कल्लोलबंगाल	सरिमपनिधस—	सनिपधमगरिस।
९.	हिंदोलकन्नड	सगमधनिस—	सनिपधमगस।

(३२) रागवर्धनी मेल-जन्य—९ (रि$_3$ ग$_3$ म$_1$ ध$_1$ नि$_2$)

१.	रींकारी	सरिमगमपनिस—	सनिपमरिस।
२.	जिंग्लाभैरवी	सगमपमधस—	सनिधपमगमरिस।
३.	हिंदोलदर्बार	सगमपस—	सनिधपमरिस।
४.	हिंदोलकापि	सरिगमपमपस—	सनिधपमगस।
५.	कुसुमकल्लोल	सपमरिगमपस—	सधपमगमरिस।
६.	सामंतजिंग्ल	सरिगमपधनिस—	सनिपधनिपमगमरिस।
७.	कुसुमचंद्रिक	सरिमगमपधनिस—	सधपमरिस।
८.	हिंदोलसारंग	सरिगमपसनिस—	सनिधपनिधमगमरिस।
९.	रागचूडामणि	सरिगमपस—	सनिधमगरिस।

सामरिगमप पनिनीस्सा। सानिधपममरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
(३३) गांगेयभूषणी मेल-जन्य—९	(रि$_1$ ग$_3$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)		
१. गीतमूर्ति	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगस ।	
२. गंगातरंगिणी	सरिगमपस—	सनिधपमगमरिस ।	सरीग, मापधनिसा । सनिपध, ममगमरि सा ।
३. हिंदोलसावेरी	सगमपमधनिस—	सनिपधमरिस ।	
४. कन्नडदर्बार	सरिगमपधपस—	सनिधपमरिस ।	
५. हिंदोलमालवी	समपधनिधस—	सनिधमपमरिस ।	
६. शुद्धजिंगल	सगपमधनिस—	सनिपमगस ।	
७. हिंदोलनायकी	समगमपस—	सनिधपमगमरिस ।	
८. शैलदेशाक्षी	सरिगमपमधनिस—	सनिपमगमरिस ।	समगपधस । सनिधसनिपमरिस ।
९. नागहिंदोल	सगमपस—	सनिधपमरीस ।	
(३४) वागधीश्वरी मेल-जन्य—१०	(रि$_1$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)		
१. विमली	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगस ।	
२. शुद्धघंटाण	सगमपधस—	सनिधपमरिस ।	
३. मेचनीलांबरी	सगमपधनिस—	सनिपमरिस ।	
४. छायानाट	सरिगमपमपस—	सनिधनिपमरिस ।	सारिग रिगमप निनिस्सा । सनिध नि पसनिपममरिस ।
५. कुसुमभ्रमरी	सरिगमपमधनिस—	सनिधपमरिस ।	
६. भानुदीपर	समरिगमपस—	सधपमगमरिस ।	

७. भानुमंजरी	सरिगमपनिस–	सनिपमरिगरिस।
८. नलिनमुखी	समगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।
९. मेचगांधारी	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।
१०. शारदाभरण	समगमपमधनिस–	सनिधमपमरिस।

(३५) शूलिनी मेल-जन्य—८ (रि$_3$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_3$)

१. शेखरी	सरिगमपधनिस–	सधनिपमरिगस।
२. मारुवकन्नड	सरिगमपधपनिस–	सनिपमरिस।
३. सोमदीपर	सगमपमधनिस–	सधपमगमरिस।
४. नलिनहंसी	सरिगमपनिधस–	सनिधपमरिस।
५. मेचनारायणी	सरिगमपधस–	सधनिपमरिस।
६. गानवारिधि	समरिगमपधनिस–	सधनिपमरिस।
७. शुद्धनीलांबरी	समरिगमपस–	सनिधपमगस।
८. हंसघंटाण	सरिगमपधनिस–	सनिपमगमरिस।

(३६) चलनाट मेल-जन्य—६ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_3$)

चलनाट—सारिग मप धनिस। सनिपममरिस्सा।

१. चिदानंदी	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।
२. नागनीलांबरी	समगमपधनिस–	सनिधपमगस।
३. मंजुल	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।
४. नाट	सरिगमपधनिस–	सनिपमरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
५. श्रुतिरंजनी	सरिगपधनिस–	सपमगस।	
६. गंभीरनाट	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
(३७) सालग मेल-जन्य—१०	(रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)		
१. सिंधुनाट	सगरिगमनिधनिस–	सनिधमगरिस।	
२. सिंधुघंटाण	सगरिगमपधस–	सधमगरिस।	
३. नादभ्रमरी	सगरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
४. सालवी	सगरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
५. शुद्धभोगी	सरिगमपनिधस–	सधनिपमगरिस।	
६. ललितभारुव	सरिगमपधनिस–	सनिधमगरिस।	
७. भोगसावेरी	सरिमपधनि–	धपमगरिस।	
८. सोमप्रभावी	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।	
९. भोगवराली	सरिगमपनिधनिस–	सनिधमगरिस।	
१०. आलापी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
(३८) जलार्जव मेल-जन्य—८	(रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)		
१. जीवरत्नभूषणी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
२. नागदीपर	सरिगमधनिस–	सनिधनिमगरिगस।	
३. रविप्रभावलि	सरिगमधस–	सधपमगरिगस।	

४. जगन्मोहन — सरिमपधसनिध— सनिधपमगरिस । सागमपधधनिस । सनिधपमगरिस ।

५. मारुवचंद्रिक — सनिसरिगमपधनि— निधपमगरिगस ।

६. कुमुदाभरण — सरिगमपनिधस— सधनिपमगरिस ।

७. हंसभोगी — सरिगमधनिस— सनिधपमगरिस ।

८. भोगरसाली — सरिगमधपनिस— सनिधनिपमगरिस ।

(३९) **झालकवराली मेल-जन्य—९** (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_3$)

१. झिनालि — सगरिगमपधनिधस— सनिधपमगरिस ।

२. नागघंटाण — सगरिगमनिधस— सनिधमगरिस ।

३. हंसनीलांबरी — सरिगमधनिस— सनिपधमगरिस ।

४. कोकिलपंचम — पधनिसरिगरि— सनिधपधनिस ।

५. अमृतवर्षिणी — सरिगमपधनिपस— सनिपधमगरिस । सगमपनिस । सनिपमगस ।

६. नटनवेलावली — सरिमपधनिस— सनिपमगरिस ।

७. भूपालपंचम — सगरिगपमधस— सपमधमसरिस ।

८. नागभोगी — सरिगमपधनि— धपमगरिसनिस ।

९. मारुवबंगाल — सपमपधनिस — सनिधपमगरिस ।

(४०) **नवनीत मेल-जन्य—८** (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_2$ नि$_2$)

१. निषादप्रिय — सरिगमपनिधस— सनिपमगरिस ।

२. नागवेलावली — सरिगमधस— सनिधमगरिस ।

३. सोमघंटाण — सरिगमनिधनिस— सनिपधमगरिस ।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
४. नभोमणि	सरिगरिमपस—	सनिधपमगरिस।	सागरि मपध पनिस। सनिधपमगरिस।
५. सुखनीलांबरी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
६. सुखप्रिय	सगरिगमनिस—	सनिधमगरिस।	
७. नवरसकुंतली	समपधनिस—	सनिधपधमगरिस।	
८. सिंधुनाटकुरंजी	सरिगमधनिधस—	सनिधपमगरिस।	

(४१) पावनी मेल-जन्य—९ (रि₁ ग₁ म₂ ध₂ नि₃)

राग	आरोही	अवरोही
१. पीतांबरी	सरिगरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
२. कोकिलस्वरावली	सरिगमधनिस—	सधमगरिस।
३. कुंतलभोगी	सरिगमधपनिस—	सनिधनिमगरिस।
४. प्रभावली	सरिमपधनिप—	सनिधमपमरिगरिस।
५. शुद्धगीर्वाणी	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस ।
६. नटनदीपर	सरिगमधनिस—	सनिमगरिगस।
७. चंद्रज्योति	सरिगमपधस—	सधपमगरिस ।
८. हंसरसाली	सरिगमधपधनिस—	सनिधपमगस ।
९. श्यामनीलांबरी	सरिगमपधनिस—	सधनिधमगरिस।

(४२) रघुप्रिय मेल-जन्य—११ (रि₁ ग₁ म₂ ध₃ नि₃)

राग	आरोही	अवरोही
१. ऋषभवाहिनी	सरिगमपधनिस—	सनिपधमगरिस।

२. रघुलील	समरिपमगमपमरिमप-निस—	सनिधनिपमगमरिमग-रिस।
३. हंसवेलावली	सरिगमपधपनिस—	सनिपमगरिस।
४. इन्दुगीर्वाणी	सरिगमपस—	सनिपधनिपमगरिस।
५. ललितदीपर	सरिगमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।
६. गंधर्व	मपधनिसरिग—	रिसनिपमपधनिस।
७. मेचसावेरी	सरिमपनिस—	सनिपमगरिस।
८. आनंदभोगी	सरिगमपनिधनि—	धपमगरिसनिस।
९. गोपति	सरिगमपधनि—	पमरिगरिस ।
१०. मारुवललित	पधनिसरिगमप—	पमगरिसनिप।
११. हंसदीपर	सरिगमपनिपस—	सनिपधनिपमगरिस।

(४३) **गवांभोधि मेल-जन्य—९** (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_2$)

१. गीर्वाणी	सरिगरिमगमधनिपनिधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगमप धनिधपधस्सा।	सनिधपमगगरिस।
२. विजयभूषावली	सरिगमपमपस—	सनिधपमगरिस।		
३. जयवेलावली	सरिगमधपधनिस—	सनिधमगरिस।		
४. कोकिलदीपर	सरिगमनिधस—	सनिधमगरिस।		
५. मारुवगौड़	सरिगपमधनिस—	सनिधपमगरिस।		
६. कलवसंत	सगमपधनिस—	सनिपमगस।		
७. कोकिलगीर्वाणी	सरिगमपधस —	सनिमगरिस।		

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
८. सामस्वराली	सरिगमपनिधस–	सधपधमगरिस।	
९. मेचकांभोजी	सरिगमधनिस–	सनिपधमगरिस।	

(४४) भवप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. भीकरघोषणी	सरिगमपधनिस–	सनिधमपमगरिस।	
२. कन्नडदीपर	सरिगमधनिस–	सनिधपधमगरिस।	
३. भवानी	सरिगमधनिस–	सनिधपधमगरिस।	सरिगमपध पनीसा। सानि धपमगारिस।
४. सरसीरुह	सरिगमधनिधस–	सनिधमगरिस।	
५. सारंगमारुव	सरिगमधनिस–	सनिधमपगरिस।	
६. मेचबंगाल	सरिगमपनिस–	सधपमगरिस।	
७. सामंतवेलावली	सरिगमधपधस–	सधनिपमगरिस।	
८. भ्रमरभोगी	मपधनिसरिग–	मगरिसनिधप।	
९. धवलसरसीरुह	सरिगमधपनिस–	सनिधमगरिस।	

(४५) शुभपंतुवराली मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_3$) शिवपंतुवराली—सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही
१. शेखरचंद्रिक	सरिगमनिधनिस–	सनिधमगरिस।
२. शुद्धस्वरावली	सगमपमधनिस–	सनिधमगस।
३. मेचमनोहरी	सरिसगमपधपनिस–	सनिधमगरिस।
४. गमकसामंत	सगमपनिस–	सनिधपमगरिस।

५. कनकदीपर	सगमपधपनि—	धपमगरिसनिस।
६. भानुधन्यासी	सरिगमनिधनि—	धपमगरिसनिस।
७. मारुववसंत	समगमपधनिस—	सनिपधमगरिस।
८. भानुगीर्वाणी	सरिगमपधनिस—	सनिधमगरिस।
९. कमलाभरण	सरिगमपनिधस—	सनिधपनिधमगरिस।

(४६) षड्विधमार्गिणी मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

१. षिद्राक्षी	सरिमगरिमपधनिस—	सनिपधपमगरिस।
२. तीव्रवाहिनी	सरिगमपधपनिस—	सनिधपमगरिगमरिस।
३. कुंतलस्वरावली	सगमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।
४. लोकदीपर	सरिगमपनिधनिस—	सनिधमपमगरिस।
५. विजयाभीरु	सगरिगमपनिधस—	सधपमगरिस।
६. श्रीकण्ठी	सगमपधनिस—	सनिधपमगस।
७. इंदुधन्यासी	सगमधनिस—	सनिधपधमगरिस।
८. मारुवगौरी	सगरिगमपधनि—	धमपमगरिसनि।
९. इंदुभोगी	सगरिगमपधस—	सनिधनिपमगरिस।

(४७) सुवर्णांगी मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_2$ नि$_1$)

१. सेनामनोहरी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिगस।
२. सालगवेलावली	सरिगमपनिधनिस—	सनिधपमगस।
३. कुंतलधन्यासी	सरिगमपमधनिस—	सनिधनिपमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
४. सौवीर	सरिगरिमपधनिस–	सनिपधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधमगरिस।
५. मारुवनारायणी	सरिगमपधस–	सधनिपमगरिगस।	
६. नवरसबंगाल	सरिगमधपधनिस–	सनिधमगस।	
७. रतिक	सगरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
८. मारुवसारंग	सनिसरिगमपमधनि–	धपमगरिगस।	
९. आभीर	पधनिसमगम–	पमगसनिधनिस।	
१०. विजयश्री	सगरिगमपनिस –	सनिपमगारिस।	
(४८) दिव्यमणि मेल-जन्य—११ (रि, ग, म, ध, नि,)			
१. दुन्दुभिप्रिय	सरिगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	
२. भोगधन्यासी	सगमपनिस–	सनिपधनिपमगरिस।	
३. कुंतलदीपर	समपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
४. जीवंतिनी	समपधनिस–	सनिपमगस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
५. शुद्धगांधारी	सरिगमनिस–	सनिधनिपमरिस।	
६. मारुवदेशी	सगरिगमपस–	सपधनिपमगरिस।	
७. भोगिसिंधु	सपमपधनिस–	सनिधनिपमस।	
८. अमृतपंचम	सरिगमधनिस–	सनिधमगसरिस।	
९. आदिपंचम	सरिपधनिस –	सनिधनिपमगरिस।	
१०. कन्नडवेलावली	पनिसरिगमप–	पमगरिसनिधनिप।	
११. सुखस्वरावली	सनिसरिगमपधनि –	पमगरिसनिस।	

(४९) धवलांबरी मेल-जन्य—११ (रि$_1$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१. धीरस्वरूपी	सरिगमपधनिस–	सधनिधपमगस।	
२. स्वराभरण	सगमपधनिस–	सनिधपमस।	
३. कन्नडकुरंजी	सगरिगमपधनिस–	सधपमरिस।	
४. धवलांगी	समगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधस। सनीधपमगरिस।
५. भिन्नहेरावली	समपधनिधस–	सनिधपमगस।	
६. देवाभरण	सगरिगमधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	
७. नवरसआंधाली	सगरिगमपधस–	सधपमगरिगस।	
८. छायामारुव	सगरिगमधनिधस–	सनिधमगरिस।	
९. देवगिरि	सरिमपधस–	सनिधपमगरिगस।	
१०. धर्माणी	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
११. नवरसचंद्रिक	सरिगमधनिस–	सधपगरिस।	

(५०) नामनारायणी मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

१. निर्मंद	सरिगमधनिस–	सनिधमपमगरिस।
२. मंदारी	सरिगमपनिस–	सनिपमगरिस।
३. नवरसगांधारी	सरिगमपमधनिस–	सनिधमगरिस।
४. मेचकन्नड	समपधनिस–	सनिधपमगस।
५. गौरीमारूव	सरिमपधस–	सनिधपमगरिगस।
६. कन्नडभोगी	सरिगमपनिधनिस –	सनिधमगरिगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
७. प्रताप	सगमपधनिस–	सनिधपमसरिस।	
८. मारनारायणी	सगरिगमपधस–	सधपमगरिगस।	
९. कुसुमभोगी	सरिगमधनिस–	सधनिधमगरिगस।	
१०. मधुकरी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	

(५१) **कामवर्धनी मेल-जन्य**—१० (रि$_{१}$ ग$_{३}$ म$_{२}$ ध$_{१}$ नि$_{३}$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. किरणी	सरिगमपनिधनिस–	सनिधमगरिस।	
२. गमकप्रिय	सरिगमपनिधस–	सधपमगरिस।	
३. हंसनारायणी	सरिगमपस–	सनिपमगरिस।	
४. रामक्रिय	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	सगरि गमपधनिस। सनिधपमगरिस।
५. दीपक	सगमपधपस–	सनिधनिपमगरिस।	
६. वसंतमारुव	सरिगमपधनिधस–	सधपमगस।	
७. कनकरसाली	सरिगमधनिस–	सधपमगरिस।	
८. भोगवसंत	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
९. भोगसामंत	सगमपधपस–	सधनिपमगरिस।	
१०. इंदुमती	सगमधनिस–	सनिधपमगस।	

(५२) **रामप्रिय मेल-जन्य**—२६ (रि$_{१}$ ग$_{३}$ म$_{२}$ ध$_{२}$ नि$_{२}$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. रीतिचंद्रिक	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
२. नयनभाषिणी	सरिगमपनिधनिस–	सनिधनिपगमगस।	

३. कंकाणालंकारी· सगपधनिस– सनिधपमगरिस।

४. लोकरंजनी सगमपमधनिस– सनिधनिपमगारिस।

५. श्रीकरी सरिगपधनिस– सनिधापमगस।

६. तपस्विनी सगमपनिस– सनिधपमगस।

७. मेघमल्लार सगमपधनिस– सनिधपमगमरीस।

८. राममनोहरी सरिगमपधनिधस– सनिधपमगरिस। सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।

९. सुप्रकाशी सरिगमपमपस– सनिधनिपमगरिस।

१०. जटाधरी सगरिमपधनिस– सनिधपगरिस।

११. योगानंदी सरिगपमपधनिस– सनिधपमगस।

१२. प्रताप सपमपधनिस– सनिधपमगरिस।

१३. चिंतामणि सगमपधनि– धापमपगारिसनिस।

१४. नखप्रकाशिनी सरिगमपधनिधपस– सधनिपमगरिस।

१५. कलाभरणी सगरिगमपनिधनि– धपमगरिसनिस।

१६. पवित्री पमपधनिसरिगमप– पमगरिसनिधप।

१७. रक्तिमार्गिणी सपमधनिस– सनिधपमपगरिस।

१८. रसविनोदिनी सगमपधनिधस– सनिधपमगस।

१९. हंसगमनी सगमपनिधस– सनिधपमधपमगरिस।

२०. कामरूपी सगमपमधनिपस– सनिधपमगरिस।

२१. वेदस्वरूपी सरिगमपधनिपस– सनिधनिपमगस।

२२. मंदहासिनी सरिगमपमधनिस– सनिधपमगमरीस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२३. सुखकरी	सरिसपधनिस–	सनिधपमगसरिस।	
२४. गांभीर्यघोषिणी	सगरिपमधनिस–	सनिधपमगरिगस।	
२५. सौन्दर्य	सरिगपमधनि–	पमगरिसनिस।	
२६. मेघश्यामल	सगमपधनिधपस–	सधनिपमगरीस।	
(५३) गमनश्रम मेल-जन्य—९ (रि, ग, म, ध, नि,)			
१. गीतनटनी	सरिमगमपधनिस–	सनिधपमरिस।	
२. शुद्धरसालि	सगमपधस–	सधपमगरिस।	
३. कन्नड़मारुव	सगमपधनिस–	सनिधपमगस।	
४. गमनक्रिय	सरिमपधनिस–	सनिधपमगमरिस।	सरिगमपधनिस (धनिस अल्प) सनिधपम-गरिस।
५. मेचकांगी	सरिगमपधपनिस–	सनिपधपमगरिस।	
६. हंसानंदी	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
७. पूर्वकल्याणी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
८. सुखध्वनि	सगमपनिधस–	सधनिपमगरिस।	
९. गगनसरसीरुह	सगरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
(५४) विश्वंभरी मेल-जन्य—८ (रि, ग, म, ध, नि,)			
१. वैशाख	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।	
२. पूषाकल्याणी	सरिगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	

३. सिंधुमारुव सरिगमपस— सनिधनिपमगरिस।
४. नागसरसीरुह सगमपस— सनिधनिपमरिस।
५. भ्रमरध्वनि सगमधनिस— सधनिपमगरिस।
६. विजयवसंत समपधनिस— सनिपमगस।
७. देश्यमारुव सरिगमनिस— सनिपमगरिस।
८. भ्रमरनारायणी सरिगमपनिधनिस— सनिमगरिस।

(५५) श्यामलांगी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१. शीतंकिरणी सरिगमपधनिस— सधनिधपमगस।
२. नागगीर्वाणी सरिगमधनिधस— सनिधपमगरिस।
३. कमलनारायणी सरिमपधनिस— सनिधपमगमरिस।
४. श्यामल सगरिगमपधनिधस— सनिधपमगरिस। सा रिगमपधस। सनीधपमगरिस।
५. हंसगीर्वाणी सरिगमपधस— सधपमगस।
६. नागप्रभावली सगमपधनिस— सनिधमगरिस।
७. देश्यनाटकुरंजी सरिगमपधपनिस— सनिपधपमगरिस।
८. हंसप्रभावली सनिसरिगमपधनि— धपमगरिगस।
९. देशावली सरिगमधनिधस— सनिधमगरिस।

(५६) षण्मुखप्रिय मेल-जन्य—११ (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

१. शिकारि सगरिगमपधनिधस— सनिधमगरिस।
२. कोकिलानंदी संगमधनिस— सनिधपमगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
३. त्रिमूर्ति	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
४. भ्रमरसारंग	सरिगमपमधनिस–	सधपमगरिस।	
५. वसुकरी	सगमपधनिस–	सनिधमगस।	
६. भ्रमरकुसुम	सगमपनिस–	सनिधपमगरिस।	
७. कुसुमसारंग	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
८. भाषिणी	सगरिगमपनिधस–	सनिधपमगरिस।	
९. सारंगभ्रमरी	समपधनिधस–	सनिधपमगस।	
१०. देवमालवी	सरिगमपधनि–	निधपमगरिसनि।	
११. गुरुगद्य	निसगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	

(५७) सिंहेन्द्रमध्यम मेल-जन्य—१३ (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. सुनादप्रिय	सरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
२. सीमंतिनी	सरिगमपधनिस–	सपमगरिस।	
३. भ्रमरसुखी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	
४. माधवमनोहरी	सगरिगमपनिधनिस–	सनिधमगरिस।	सरिगमपनिध निस। सनिधमगरिस।
५. पद्ममुखी	सरिगमधनिस–	सधपमगस।	
६. शोषनाद	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
७. भ्रमरहंसी	सरिगमपनिस–	सनिधपमगस।	
८. घंटाण	मरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	

९. विजयसरस्वती	सगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	
१०. सर्वांगी	सरिमधनिस–	सनिधमगसरिस।	
११. धवलहंसी	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	
१२. शुद्धराग	सरिगमपनिस–	सनिपमगसरिस।	
१३. भ्रमरकोकिल	सरिमपनिधनिस–	सनिधपमरिस।	

(५८) **हेमवती मेल-जन्य—८** (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_2$ नि$_2$)

१. हैमांबरी	सरिगमपधनिस–	सपमगरिस।	
२. हंसभ्रमरी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
३. विजयसामंत	सगमपधस–	सनिधमगरिस।	
४. सिंहारव	सरिमपनिस–	सनिपमरिगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
५. कनकभूषावलि	सगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	
६. विजयसारंग	सरिगमपनिस–	सनिधपमगस।	
७. भ्रमरवुत्तरि	सरिगमपधनिस–	सधपमरिस।	
८. नलिनभ्रमरी	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमरिस।	

(५९) **धर्मवती मेल-जन्य—९** (रि$_2$ ग$_2$ म$_2$ ध$_2$ नि$_3$)

१. धीराकारी	सरिगमपधनिस–	सधनिपमगरिस।
२. विजयनागरी	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।
३. ललितसिंहारव	सरिगमपस–	सनिपमगरिस।
४. धौम्य	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
५. वसंतगीर्वाणी	सरिगमपनिधस—	सधनिपमगरिस।	
६. शुद्धनवनीत	सरिगमधनिस—	सनिपमगरिस।	
७. रंजनी	सरिगमधस—	सनिधमगसरिस।	
८. विजयश्रीकंठी	सगमपस—	सनिधमगरिस।	
९. धीरकुंतली	समपधनिस—	सनिधपमगरिस।	

(६०) **नीतिमती मेल-जन्य—११** (रि$_{२}$ ग$_{२}$ म$_{१}$ ध$_{१}$ नि$_{१}$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. नूतनचंद्रिक	सरिगमपधनिस—	सनिपधनिपमगस।	
२. विजयरत्नाकरी	सरिमपधनिस—	सनिपमगस।	
३. निषाद	सगरिमपस—	सनिधमपनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
४. कनकश्रीकंठी	सरिगमपस—	सनिधनिपमरिस।	
५. हंसनाद	सरिमपधनिस—	सनिधनिपमरिस।	
६. शुद्धगौरीक्रिय	सगमपनिधनिस—	सनिधपमगस।	
७. कुंतलरंजनी	समगमपधनिस—	सनिपधनिपमगस।	
८. देश्यगानवारिधि	सरिगमपधनिपस—	सनिसपमगरिस।	
९. देवकुसुमावलि	समगमपस—	सनिपमगरिस।	
१०. गौरीक्रिय	सगमपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
११. कैकवशी	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।	

(६१) **कांतामणि मेल-जन्य**—९ (रि$_{२}$ ग$_{३}$ म$_{२}$ ध$_{१}$ नि$_{१}$)

१.	कीर्तिविजय	सरिगमपनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२.	कनककुसुमावलि	सरिगमपधस—	सधपमगरिस।	
३.	कर्णाटकतरंगिणी	सरिगमपनिस—	सपमगरिस।	
४.	कुंतल	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगमरिस।	सरिगमपधस। सनीधपमगरिस।
५.	विजयदीपिका	सरिगमपनिधस—	सधनिपमगरिस।	
६.	शुद्धज्योतिष्मती	सगमपस—	सनिधपमगरिस।	
७.	श्रुतिरंजनी	सरिगमपधनि—	निधपमगसरिस।	
८.	रामकुसुमावली	सगमपनिधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
९.	कनकसिंहारव	सगमपनिस—	सनिधपमरिस।	

(६२) **ऋषभप्रिय मेल-जन्य**—९ (रि$_{२}$ ग$_{३}$ म$_{२}$ ध$_{१}$ नि$_{२}$)

१.	रुचिरमणी	सगमपधनिधस—	सधपमगरिस।
२.	रत्नभास	सरिमगरिमपनिधनिस—	सनिधपमगरिस।
३.	पद्मकांति	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।
४.	सोममंजरी	सरिमपधनिधस—	सनिपमरिगरिस।
५.	वृन्दावनदेशाक्षी	सरिगमपमधस—	सधपमगरिस।
६.	कनकनासामणि	सरिगरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
७.	शुद्धसारंग	सगमपनिस—	सधपमगरिस।
८.	विजयगोत्रारि	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
९.	शुद्धवुत्तरी	सनिसरिगमपध—	धपमगरिसनिस।

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
(६३) लतांगी मेल-जन्य—२६	(रि$_2$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_3$)	
१. लीलाविनोदिनी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।
२. रत्नकान्ति	सरिगमपनिस—	सनिपमगरिस।
३. रविस्वरूपी	सगमपधानिस—	सनिधापमगस।
४. भिन्ननिषाद	सनिसरिगमपधनि—	पमगरिसनीस।
५. नागवाहिनी	सरिगपमधानिस—	सनिधपमगरिस।
६. रमणी	सगमपनिस—	सनिधापमगस।
७. कालनिर्णिक	सगमपनिधस—	सपमगरिस।
८. नवरत्नभूषणी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।
९. पूर्णनिषाद	पधनिधसरिगम—	पमगसरिसनिधप।
१०. करुणाकरी	समपधनिधस—	सनिधपमस।
११. शुद्धकलानिधि	सगपधनिध—	पमगरिसनिस।
१२. स्वर्णकांति	सगपमधनिस—	सनिपमगस।
१३. सुजनरंजनी	सगरिमपधनिस—	सनिधपमरिस।
१४. चामुण्डी	सगरिमपनिधस—	सधनिपमगरिस।
१५. झणाकारी	सरिगमपनिधस—	सधपमरिगरिस।
१६. सज्जनानंदी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
१७. गोत्रारि	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।
१८. दोषरहितास्वरूपी	पमपधनिसग—	रिसनिधपमप।

१९. छत्रधरी	सगमपमरिपस–	सनिधपमगरिस।
२०. धातुप्रिय	सरिपमपधस–	सनिधपमगमरिस।
२१. नैमप्रिय	सरिमगमधपधस–	सनिधपमगपमगरिस।
२२. षड्विधस्वरूपी	सगरिगमनिस–	सनिधपमगरि।
२३. काननप्रिय	सरिगमपमधनिस–	सधनिपमगरिस।
२४. तानरंजनी	सरिगमपधपस–	सधपसनिसधपमगरिस।
२५. कोमली	सरिगमपनिधमपस–	सधनिमगरिस।
२६. घननायकी	सगमनिधपधनिस–	सनिधपमगरिस।

(६४) वाचस्पति मेल-जन्य—२४ (रि$_{२}$ ग$_{३}$ म$_{२}$ ध$_{२}$ नि$_{२}$)

१. विजयाभरणी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।
२. देवामृतवाहिनी	सगमपनिधनिस–	सनिधनिपमगरिस।
३. कुटुंबिनी	सगमधपधनिस–	सनिपमगरिस।
४. फलदायकी	सगपमधनिस–	सधनिपगमगरिस।
५. बर्बर	सगमरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।
६. उत्तरी	सगमपधनिस–	सनिधमगस।
७. सिंहस्वरूपी	सगमधनिस–	सनिपमगस।
८. केतकप्रिय	सगमपनिस–	सनिधपमगरिस।
९. पंचमूर्ति	सरिगमपधनि–	धपमपगरिसनिस।
१०. नादब्रह्म	सपमपधनिस–	सनिधपमगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
११. प्रणवाकारी	पनिधनिसरिगम–	पमगरिसनिधनिप।	
१२. शर्दिदुमुखी	सगमपनिधनिपस–	सनिधपमगरिस।	
१३. भूपावली	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१४. सारंग	सरिगमपधनिस–	सनिधपमरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
१५. रत्नांबरी	सगमपस–	सनिधपमरिस।	
१६. गुरुप्रिय	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	
१७. परिमलानंदी	सरिगपमधनिस–	सनिपमगस।	
१८. विजृंभिणी	सगपनिधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	
१९. सरस्वती	सरिमपधस–	सनिधपमरिस।	
२०. भोगीश्वरी	सरिगपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
२१ तरुणीप्रिय	सगरिगमपनिधस–	सनिपमरिस।	
२२. मंगलकरी	सरिपमपधनिस–	सनिधपसरिस।	
२३. गगनमोहिनी	सगपधनिस–	सनिपमगस।	
२४. सामंतशिखामणि	सगमपमधनिस–	सनिधपगस।	

(६५) मेचकल्याणी मेल-जन्य—१० (रि$_2$ ग$_3$ म$_2$ ध$_2$ नि$_3$)

राग	आरोही	अवरोही
१. मैत्रभाविनी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।
२. कौमोद	सरिगमनिस–	सनिमगरिस।
३. शुद्धरत्नभानु	सरिगमपस–	सनिधपमगस।

४. कुंतलश्रीकंठी सगमपधनिस— सनिपमगरिस।

५. शुद्धकोसल सगमपस— सनिधमगरिस।

६. हमीरुकल्याणी सपमपधनिस— सनिधपगमगरिस। सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।

७. सुनादविनोदिनी सगमधनिस— सनिधमगस।

८. कुंतलकुसुमावली सरिगमपमपस— सनिधनिपमगस।

९. यमुनाकल्याणी सरिगपमपधस— सधपमगरिस। सरिगमपधनिसा। सानिधापमगारीसा।

१०. चंद्रकान्त सरिगमपधनिस— सनिधपमगरिस।

(६६) चित्रांबरी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_3$ म$_2$ ध$_3$ नि$_3$)

१. चूर्णिकाविनोदिनी सरिगमपधनिस— सनिधनिपमगरिस।

२. चतुरंगिणी समगमपनिस— सनिधनिपगमगरिस। सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।

३. विजयकोसल सरिगमपमपस— सनिपमगस।

४. गगनरंजनी सगमपस— सधनिपमगरिस।

५. नागकुंतली सरिगमपनिस— सनिपधनिपमगरिस।

६. कनकभवानी समगमपधनिस— सनिपमरिस।

७. कनकगिरि सरिगमपसनिस— सनिधनिपमगस।

८. देवगीर्वाणी सगरिमपस— सपमगरिस।

९. शुद्धनिर्मद सरिगमपधनिपस— सनिपमगस।

(६७) सुचरित्र मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१. सेनाजयंती सरिगमपधनिस— सधपमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२. सत्यवती	सरिमपधनिधस—	सनिधपमगमरिस।	
३. कुंतलभवानी	सरिगमपमपस—	सनिधनिपमरिस।	
४. सोममंजरी	सगमपधस—	सधपमगरिस।	सरिगमपधस। सनीधपमरिस।
५. कनकगीर्वाणी	सरिमपमधनिस—	सधपमरिस।	
६. भानुज्योतिष्मती	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगमरिस।	
७. कनकनिर्मद	सरिगमपमधस—	सनिधपमगरिस।	
८. रामकुंतली	सरिगमपधनि—	धपमगरिसनिस।	
९. शुद्धसिंहरव	सरिमगमपधनिस—	सधनिधपमरिस।	

(६८) ज्योतिस्स्वरूपिणी मेल-जन्य—९ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. जौडगांधारी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२. ज्योतिष्मती	सरिगमपस—	सनिधमपमरिगस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगस।
३. कुंतलरंजनी	सरिमपनिधनिस—	सनिधपमगरिस।	
४. भुवनकुंतली	सरिगमपधस—	सधपमगस।	
५. कुसुमभवानी	सरिमपधस—	सनिधमपमरिस।	
६. रामगिरि	सरिमगमपधनिस—	सधनिधपमगरिस।	
७. कुंतलगीर्वाणी	सरिगमपधनिस—	सधमपमगरिस।	
८. हिंदोलदेशाक्षी	सनिसरिगमपध—	निधपमगरिस।	
९. शुद्धश्रुतिरंजनी	सरिमपधनिधस—	सनिधपमगमरिस।	

(६९) धातुवर्धनी मेल-जन्य—९ (रि$_3$ ग$_3$ म$_1$ ध$_1$ नि$_3$)

१. धीरसावेरी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	
२. नलिनकुसुमावली	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमरिस।	
३. धौतपंचम	सरिगमपनिपस–	सनिधपमरिगमरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमरि गास।
४. वृंदावनकन्नड	सगमपधस–	सधपमगरिस।	
५. कुंतलसिंहारव	सरिमपमधनिस–	सधपमरिस।	
६. ललितकोसली	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
७. पद्मभवानी	सरिगमपमधस–	सनिधपमगरिस।	
८. ईशगिरि	सरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
९. कुसुमज्योतिष्मती	सरिमगमपधनिस–	सधनिधपमरिस।	

(७०) नासिकाभूषणी मेल-जन्य—६ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_2$ नि$_2$)

१. निगमसंचारी	सगमपधनिस–	सनिधनिपमरिस।	
२. कुंतलघंटाण	सरिगमपमपस–	सनिपमरिस।	
३. नासामणि	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमरि गस।
४. गौरीसीमंती	सरिगमपधनिस–	सनिपमगस।	
५. नीतिकुंतली	समगमपधनिस–	पधनिपमगस।	
६. हंसकोसली	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	

(७१) कोसल मेल-जन्य—६ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_2$ नि$_3$)

१. कौस्तुभप्रिय	सरिगमपधनिस–	सधपमगमरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२. प्रतापसारंग	सरिगमपधस—	सनिधपमगस।	
३. नागगिरि	सगमपधपस—	सधपमगस।	
४. गौरीनिषाद	सगमपनिधस—	सनिधनिपमगस।	
५. सत्यभूषणी	सगमपधनिस—	सनिधपमगस।	
६. कुसुमावली	सगमपधस—	सनिधपमगमरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमरि गस।

(७२) रसिकप्रिय मेल-जन्य—५ (रि$_3$ ग$_3$ म$_2$ ध$_3$ नि$_3$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१. रीतिमल्लार	सरिगमपस—	सनिपधनिपमगस।	
२. गिरिकुंतली	सरिगमपमगमपस—	सनिधनिपमगस।	
३. हंसगिरि	सरिगमपधनिस—	सनिपधनिपमगस।	
४. कनकज्योतिष्मती	समपधनिस—	सनिधपमस।	
५. रसमंजरी	सरिगमपधनिस—	सनिपमरिस।	सरिग, सपमप, निध, निसा। सनिध, निप, पमप, रिगस।

यद्यपि ये राग—कन्नड, कुंतलरंजनी, चिंतामणि, नवरसचंद्रिक, प्रताप, भोगवरालि, मंजुल, मधुकरी, मारुकन्नड, श्रुति-रंजनी, सोममंजरी—दो-दो मेलों से उत्पन्न हैं, तथापि उनमें, मेलभेद के अनुसार लक्षणभेद अवश्य है।

अनुबन्ध २

हिन्दुस्थानी पद्धति के रागों का आरोहण और अवरोहणादि विवरण

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१.	अडाणा	आसावरी	सा	प	सारेमप धनिसां	सां धनिपमप गम रेसा	रात्रि तीसरा प्रहर	
			सां	प	निसा रेमप नि रें सां	सांध, निप, मप, ग, म, रेसा		
२.	अल्हैया बिलावल	बिलावल	ध	ग	सारेगप धनिसां	सानिधप मगरेसा	प्रातःकाल	
३.	अरज	भैरव	म	सा	सारेग मपमप धनिसां	सरिसांनि धपमग रेसा	,,	
४.	अहीर भैरव	,,	म	सा	सारेग सप धनि सां	सां नि ध प म ग रेसा	,,	
५.	आभेरी	आसावरी	म	नि	सा ग म प नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	,,	
६.	आसा	बिलावल	म	सा	सा रे म प ध सां	सां नि ध प म ग रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर	
७.	आसावरी	आसावरी	ध	ग	सा रे म प ध सां	सां नि ध प म ग रे सा	दिन दूसरा प्रहर	
८.	आनंदभैरव	भैरव	म	सा	सा रे ग म प ध-नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	प्रातःकाल	
९.	आनंदभैरवी	आसावरी	प	सा	सा रे ग म प ध सां	सां नि ध प म ग रे सा	रात्रि तीसरा प्रहर	

१०.	आभोगी	काफी	सा	म	सा रे ग म ध सां	सां ध म ग रे सा	प्रातःकाल
११.	आभोगीकान्हरा	,,	म	सा	सा रे ग म ध सां	सां ध म ग म- रे सा	मध्यरात्रि
१२.	उत्तरी गुणकली	भैरवी	सा	म	सा रे ग म प ध नि सां	सा नि ध प म ग रे सा	प्रातःकाल
१३.	कलावती	खमाज	प	सा	सा ग प ध निधपधसां	सांनिधप गप धप गसा	मध्यरात्रि
१४.	कमलरंजनी	बिलावल	ध	ग	सा ग प ध नि सां	सांनिध निपमग सा	प्रातःकाल
१५.	ककुभ	,,	म	सा	सा रे ग म प ध नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	,,
१६.	कामोद	कल्याण	प	रे	सारेप मप धप निधसां	सां निध प मप- धप गमरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर
१७.	काफी	काफी	प	सा	सारेग म प ध- निसां	सां नि ध प म ग रे सा	मध्यरात्रि
१८.	कालिंगडा	भैरव	प	सा	सारेगम प ध- निसां	सांनिधप मग- रेसा	रात्रि अंतिम प्रहर
१९.	केदार	कल्याण	सा	म	साम मप धप निध सां	सां निध प मप गमरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
२०.	कोमल ऋषभ आसावरी	भैरवी	ध	ग	सा, रेमप, धसां	सां नि ध, प, मग, रेसा		रे म प ध म ग रे म प
२१.	कोमलदेशी	आसावरी	प	रे	सा रे मप निसां	सां निधप मग-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२२.	कौशिकध्वनि	खमास	ग	नि	सा ग म ध नि सां	सां नि ध म ग सा		मधनिध मधमगसा
२३.	कौशिकध्वनि	काफी	म	सा	सा ग म ध नि सां	सां नि धम ग सा		गमगसा मधनिध मगस निस निध
२४.	कौंसी कान्हरा	आसावरी	म	सा	सा रे ग म प ध नि सां	सां नि ध प मग-रेसा	मध्यरात्रि	
२५.	कौंसी भैरव	भैरव	म	सा	साम गमपम नि-धनिसां	रेंनिधप मग म-रेसा	,,	
२६.	खमाज	खमाज	ग	नि	सा ग म प ध नि सां	सां नि ध प म ग रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२७.	खंबावती	खमाज	ग	ध	सा रे ग म प नि-ध सां	सांनिधप मग-मसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२८.	खट	आसावरी	ध	ग	सारेगम प निध-नि सां	सांनि धप मग-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	

२९.	खटतोडी	आसावरी	ध	ग	रे नि सा ग म प ध ध सां	सांनिधप गमप निधप मगरेस	दिन का दूसरा प्रहर	रे निस गमप धनि-धप मप ग म ग रे स रे नि स
३०.	खोकर	खमाज	रे	प	सारेपम निधप मपधसां	सांनिधप धनिप मगरे गरेसा	,,	
३१.	गांधारी	आसावरी	ध	ग	सारेमप धनिसां	सांनिधप मग-रेसा	,,	
३२.	गारा	खमाज	ग	नि	सारेगरे गमपध निसां	सांनिधनि पम-गरे गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
३३.	गुणकरी	भैरव	ध	रे	सारे मप धसां	सांधप म रे सा	दिन प्रथम प्रहर	
३४.	गुणकली	बिलावल	सा	प	सारे ग म पध निसां	सांनिधप म ग रे सा	,,	
३५.	गुर्जरी तोडी	तोडी	ध	रे	सा रे ग म ध नि सां	सां नि ध म ग रे गरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
३६.	गोपी वसंत	आसावरी	सा	प	सा ग म प ध निसां	सांनिध प म ग सा	प्रातःकाल	
३७.	गोरख कल्याण	खमाज	म	सा	सारे म धनि ध सां	सां नि ध प म रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर	
३८	गौड मल्लार	काफी	म	सा	सा रे म प ध सां	सांनिप मपगम रे सा	वर्षा ऋतु	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकंड़
३९.	गौरी (थैती)	पूर्वी	प	सा	सा रेमपमधनिसां	सांनिधपमपमधम गरे गरे सा	सायंकाल	निधपधममधम गरेगरेसा
४०.	गौरी (भैरव)	भैरव	रे	प	सा रे मप नि सां	सांनि धप मग रे सा	,,	
४१.	गौरी (पूर्वी)	पूर्वी	रे	प	सारेपम पनिसां	सांनिधप म पगरे मगरेसा	सायंकाल	
४२.	चन्द्रकान्त	कल्याण	ग	नि	स रे ग प ध नि सां	सां नि ध प म गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
४३.	चंद्रकौंस	काफी	म	सा	सा ग म ध नि सां	सां नि ध म ग सा		गम गसा, मधनिध, मगसा निस निधा
४४.	चंद्रकौंस	,,	म	सा	सा ग म ध नि सां	सांनिधम ग मगसा	मध्यरात्रि	
४५.	चंद्रकल्याण	पूर्वी	प	सा	सा रे म प नि सां	नि रे निधप म-धप मरेनिसा	सायंकाल	
४६.	चंद्रिका	बिलावल	प	सा	सा रे म प नि सां	सां ध प म प ध पमरे निसा	मध्यरात्रि	
४७.	चक्रधर	,,	म	सा	सा रे ग म धनि सां	सांनिध म ग रे सा	,,	
४८.	चंपक	खमाज	म	सा	सा रे म प ध सां	सां नि प ध मप गरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	

४९	चंपाकली	,,	सा	प	सा ग म प नि सां	सांनिधप मप मग रेसा	मध्यरात्रि	
५०	छायानट	कल्याण	प	रे	सारे गमप नि-धसां	सांनिधप मपधप गमरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
५१.	जयराज	बिलावल	म	सा	सारेमप मध-निसां	सांधपम धप मरेसा	मध्यरात्रि	
५२.	जलर केदार	,,	म	सा	सारे साम मप धसां	सांधप म रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर	
५३.	जैजैवंती	खमाज	रे	प	सारे गमप निसां	सांनिधप धम रेगरेसा	,,	
५४.	जैत	मारवा	प	सा	सा रे ग प धप सां	सां पध पग रे सा	सायंकाल	
५५.	जैत कल्याण	कल्याण	प	सा	सा रे ग प ध सां	रें सां धप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
५६.	जैतश्री	पूर्वी	ग	नि	सा ग म प नि सां	सांनिधप मग रे सा	सायंकाल	
५७अ.	जोगिया	भैरव	म	सा	सा रे म प ध सां	सां नि ध प ध म रे सा	प्रातःकाल	
५७ब.	जोगी आसावरी	आसावरी	सा	प	सा रे म प ध सां	सां रे निधप धम ध ग म रे सा	दिन प्रथम प्रहर	रे निधग धपम गरेसा

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
५८.	जौनपुरी	आसावरी	ध	ग	सा रे म पध नि सां	सां निध प मग रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
५९.	जंगला	,,	सा	प	सा रे ग म प ध नि सां	सां निध पध पम ग रेसा	रात्रि तीसरा प्रहर	
६०.	झिंझोटी	खमाज	ग	नि	सा रे ग म पध नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर	
६१.	झीलफ (भैरव)	भैरव	ध	ग	सा ग म प ध सां	सां ध प म ग सा	प्रातःकाल	
६२.	झीलफ (आसावरी)	आसावरी	ध	ग	सा रे ग म प ध-नि सां	रें सां निध प गपमगरेसा	,,	
६३.	टंकी	पूर्वी	प	रे	सा रे गप धप नि सां	सांनिधप मग प-गरेसा	सायंकाल	
६४.	तिलक कामोद	खमाज	रे	प	सा रे ग सा रेम-पध मपसां	सांपधमग सारेग सानि	रात्रि दूसरा प्रहर	
६५.	तिलंग	,,	ग	नि	साग मप निसां	सांनि प मगसा	,,	
६६.	त्रिवेणी	पूर्वी	रे	प	सा रे ग प ध निसां	सां नि ध प ग रे सा	सायंकाल	

६७.	तोडी	तोडी	ध	ग	सा रे ग म प ध निसां	सां नि ध प म ग रे सा	दिन दूसरा प्रहर	
६८.	दरबारी कान्हरा	आसावरी	रे	प	निसा रेग रेसा मप धनिसां	सां धनिप मप ग मरेसा	मध्यरात्रि	
६९.	दीपक (पूर्वी मेल)	पूर्वी	सा	प	सागमप धनिसां	सांधप मगरेसा	सायंकाल	
७०.	दीपक (बिलावल)	बिलावल	ग	नि	सागमप धनिसां	सां निध प मग-रेसा	रात्रि	
७१.	दुर्गा कल्याण	कल्याण	सा	प	सारेग म पध-नि सां	सां निध पम ग-मरे धसा		धप मग मरे धसा
७२.	दुर्गा (खमाज)	खमाज	ग	नि	सा ग म ध नि सां	सांनिध मगसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
७३.	दुर्गा (बिलावल)	बिलावल	म	सा	सा रे म पध सां	सां धप म रेसा	,,	
७४.	देव गांधार	आसावरी	ध	ग	साग म प नि सां	सां निधपमग रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
७५.	देवगिरि बिलावल	बिलावल	सा	प	सारेगम गपध निधसां	सांनिध निप मगरेसा	दिन प्रथम प्रहर	
७६.	देवरंजनी	भैरव	सा	म	सा म प ध प-धसां	सांध निध प म सा	प्रात:काल	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
७७.	देशकार	बिलावल	ध	ग	सा रे ग प ध सां	सांध प गपधप गरेसा	दिन प्रथम प्रहर	
७८.	देशाख्य	काफी	प	सा	निसामरे पम निपसां	सां निप मप गम रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
७९.	देश	खमाज	रे	प	सारे मप नि सां	सनिधपमगरे-गसा		
८०.	देशी	आसावरी	प	रे	सारे मप नि सां	सांनि धपमगरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
८१.	धनाश्री	काफी	प	सा	सागम पनिसां	सांनिधपमगरेसा	दिन तीसरा प्रहर	
८२.	धानी	काफी	ग	नि	साग म प निसां	सां निप मगसा	सर्वकालिक	
८३.	नट	बिलावल	म	सा	सारेगमपधनिसां	सांनिपमरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
८४.	नट बिलावल	,,	म	सा	सा गमपमग मप धनिसां	सांनिधनिपमग मरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
८५.	नट बिहाग	,,	सा	प	सारे गम पनिसां	सांनिपधपपम-गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
८६.	नट मल्लार	काफी	म	सा	सा रेग मरे गमप निधसां	सां निधनिपमगम रेसा	वर्षाकाल	

८७.	नट हमीर-नट	कल्याण	प	सा	सा रे सा गमध निसां	सधमपगमरे नि-रेस	रात्रि दूसरा प्रहर	सारेग मरेग मप साध प (नि?) मप गमरेसा
८८.	नन्द	,,	सा	प	सागमपधनिपध मपसां	सांनिधप मपगम रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
८९.	नायकी कान्हरा	काफी	म	सा	सा रे ग म प-निसां	सानिपमपगम-रेसा	मध्यरात्रि	
९०.	नागस्वरावली	खमाज	म	सा	साग मप धसां	सांधपम पग मगसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
९१.	नाटकुरंजिका	,,	सा	म	निसा गम ध-निसां	रे निसांधम गम-रेसा	,,	
९२.	नारायणी	,,	रे	प	सा रे म प ध सां	सांनिधपमरेसा	,,	
९३.	नीलांबरी	काफी	रे	प	सा रे म प ध सां	सांनिधपमगरेसा	,,	
९४.	परज	पूर्वी	सा	प	निसाग मपध-निसां	सां निधप मप-मगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
९५.	पट बिहाग	बिलावल	प	सा	सारेग मप निसां	सां निधप निधप मगरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
९६.	पहाडी	बिलावल	सा	प	सा रे ग प ध सां	सां ध प ग प गरेसा	सर्वकालिक	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
९७.	पटमंजरी (वि०)	बिलावल	सा	प	सारे ग म प ध प मपनिसां	सां नि ध नि प मगरेसा	मध्यरात्रि	
९८.	पटमंजरी (का०)	काफी	सा	प	सा रे ग म पध नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	दिन तीसरा प्रहर	
९९.	पीलू	,,	ग	नि	सारेग मपधप निधपसां	निधप मग निसा	,,	
१००.	पूर्वी	पूर्वी	ग	नि	सारे ग म प ध नि सां	सां नि ध प म ग रेसा	दिन अंतिम प्रहर	
१०१.	पूरिया	मारवा	ग	नि	निरेसा ग मध निरेंसां	सां नि ध म ग रे सा	संधि प्रकाश काल	
१०२.	पूर्विया	,,	ग	नि	निरेधसा रेगम-धसां	सां निध म ग रे सा	संध्याकाल	
१०३.	पूर्वकल्याण	,,	रे	ध	सारेगम पध निसां	सां निधप मग-रे सा	,,	
१०४.	पूर्याधनाश्री	पूर्वी	प	रे	निरे गमप धप निसां	रें निधप मग मरे-गरेसा	,,	
१०५.	पंचम	मारवा	म	सा	साम मग मध-निध सां	सांनिध ममग म-गरेसा	उत्तर रात्रि	
१०६.	प्रदीपकी	काफी	सा	म	साग मप निसां	सां निधप मग-मप गरेसा	दिन तीसरा प्रहर	

१०७.	प्रभात	भैरव	म	सा	सारे गम पध-निसां	सांनिधप मम गरेसा	प्रातःकाल	
१०८.	बहार	काफी	म	सा	सा गम पगम निधनिसां	सां निपमप गम रे सा	मध्यरात्रि	
१०९.	बसंत बहार	पूर्वी	सां	प	सा मपगमनिध-निस	रें सां निधप मग मग मगरेसा	वसंत ऋतु मध्य-रात्रि	स म प ग म नि ध प मप मग मग मप गम
११०.	बागेश्री बहार	काफी	म	सा	सा गम धनि धसां	सांनि सांनि धम-प गमरेसा	वसंतऋतु मध्य	गमधनिधमप गमरेसा
१११.	बागेश्री कानडा	,,	म	सा	सारे ग ($म_2$) मपग ($म_2$) म-ध निसां	सां निध मप गम रे सा	रात्रि तीसरा प्रहर	मधनिध मपधग ($म_2$) मरेसा
११२.	बरवा	,,	रे	प	सारेमप धनिसां	सांनि धप मप गरे गसा	दिन दूसरा प्रहर	
११३.	बडहंस सारंग	,,	रे	प	सा रे म प निसां	सांनि पम रे सा	,,	
११४.	बसंत	पूर्वी	सा	म	सा ग म ध रें सा	रेंनि धप मगमध मगरेसा	रात्रि अन्तिम प्रहर	
११५.	बागेश्री	काफी	म	सा	सा मग मधनिसां	सां नि ध म ग मगरेसा	मध्यरात्रि	
११६.	बिलासखानी तोडी	रवी	ध	ग	सा रे गमग पध निसां	सां निधम गमग-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
११७.	विलावल	बिलावल	ध	ग	सा रे ग म पध- निसां	सां निधप मग रेसा	सबेरे	
११८.	बिहाग	,,	ग	नि	साग मप निसां	सां निधप मग रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
११९.	बिहागडा	,,	म	सा	साग मप धनिसां	सांनिधप मगरेसा	रात्रि पहला प्रहर	
१२०.	वृंदावनी सारंग	काफी	रे	प	निस रे मप निसां	सां निप मरे सा	दोपहर	
१२१.	बंगाल भैरव	भैरव	ध	रे	सारे गम पधसां	सांधप मपगम रेसा	प्रातःकाल	
१२२.	भटियार	मारवा	म	सा	साधप धमपग म- धसां	रें नि धपम पग रेसा	रात्रि आन्तिम प्रहर	
१२३.	भवानी	विलावल	म	सा	सारे मध मां	सां धम रेसा	मध्यरात्रि	
१२४.	भिन्नषड्ज	बिलावल	म	सा	साग मध निसां	सां निध मग सा	मध्यरात्रि	
१२५.	भीम	काफी	सा	प	सा गमप निसां	गरेसा निधपध मगरेसा	. . .	निसाग रेसा, निध मगरेसा

१२६.	भीम	काफी	ध	सा	नि सा ग म प नि सां	सांनिपमगसा	...	निसा गम गस मप निप मप गम पनिस निपमप गमगस
१२७.	भीमपलासी	,,	म	सा	निसागम पनिसां	सांनिध पमगरेसा	दिन तीसरा प्रहर	
१२८.	भूपालतोडी	भैरवी	ध	ग	सारेग पध सां	रें सां धपग पग-रेसा	प्रातःकाल	
१२९.	भूपाली	कल्याण	ग	ध	सारेगप धसां	सांधप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१३०.	भैरव	भैरव	ध	रे	सारेगम पध निसां	सांनिध पमग-रेसा	प्रातःकाल	
१३१.	भैरव बहार	,,	म	सा	सारेगमप मध-निसां निरेंसां	सांनिध पमग रेगरे सा निरेसा निधसा	वसंतऋतु प्रातः काल	धनि धप मगरे गरेसा
१३२.	भैरवी	भैरवी	म	सा	सा रेगम पध-निसां	सां निधप मग रेसा	प्रातःकाल	
१३३.	भंखार	मारवा	प	सां	सारेसा गमपम पगमधसां	सां निधप मध-मग पगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
१३४.	मनोहर	पूर्वी	ग	ध	सा रेग मध सां	रेंसां रेंनिधप ग-मगरेसा	,,	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१३५.	मध्यमाद सारंग	काफी	रे	प	सारे मप निसां	सां निप मपरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
१३६.	मलूहा केदार	बिलावल	सा	म	निसा गमप निसां	सां निध पमग मरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
१३७.	मधुवंती	तोडी	प	सा	निसा गमप निसां	सांनिध प म ग रेसा	दिन तीसरा प्रहर	
१३८.	जयंत मल्लार	काफी	प	सा	सारे ग मप निधनि	साध निपमप मग रेग रेसा	वर्षा ऋतु	पगम रेस निस निधप रेरे गमप गमरेसा
१३९.	शुद्ध मल्लार	बिलावल	म	सा	सारेम प ध सां	सां ध प म रे सा	,,	मरेरे मपमरेपमप धसां ध पमपम रे मम
१४०.	चरजूकी मल्लार	काफी	म	सा	सा रे ग स म रे म प धपसां	सां नि ध प गरे रे ग सा	,,	सा मरे मप निसां निप सांनिधप गरे रेगसा
१४१.	चंचल सस मल्लार	,,	म	सा	साम रेप गम रेसा निमपसां	सांनि सां पनि म-प रेम सारे गम रेस सा	,,	सा मरे गगमरे सा रेपगग मरेसा निस धनि मप रेम सा रे सा
१४२.	रूपमंजरी मल्लार	,,	म	सा	सा रे प म ग म रे म प निधसां	सां नि ध निध-पम गगसा	,,	सामरेप मगमरेस पमनिधनिप मगरे सानिध निपसा

१४३.	धूलिया मह्लार	काफी	म	सा	सा रे म प निध-नि सां	सांनिध पमरे म-प मरेसा	वर्षा ऋतु	मरेमप निधनिम पसां निसांरें सां नि-ध पमस निधप मरे ममप
१४४.	मारवा	मारवा	रे	ध	सा रे गमध नि-धसां	सां निध मगरेसा	दिन अंतिम प्रहर	
१४५	मारूबिहाग	कल्याण	ग	नि	पनिसाग मप-निसां	निरें नि ध प मग रेसा	,,	
१४६.	माड़	बिलावल	सा	प	सागरे मगपम ध-पनिध सां	सां ध निप ध मपग मग	सर्वकालिक	
१४७.	मालकौंस	भैरवी	म	सा	निसा गम ध निसां	सां निध मगम-गसा	रात्रि तीसरा प्रहर	
१४८.	मालवी	पूर्वी	रे	प	सा रे ग मप म-धसां	सांनिपम गरेसा	सायंकाल	
१४९.	मालश्री	कल्याण	प	सा	सा गप पनिसां	सांनिप मगपगसा	,,	
१५०.	मालगुंजी	काफी	म	सा	सा गम धनिसां	सांनिधप मग मगरेसा	रात्रिसर्व	
१५१.	मालारानी	कल्याण	प	रे	सा रे मप निसां	निसधप रेमप ग-रेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१५२.	मालिन	मारवा	ग	नि	निसागप पनि-धसां	सांनिधपगपग-रेसा	सायंकाल	
१५३.	मालीगौरा	,,	रे	प	सा रे ग म प ध निधसां	सांनिधप मनि-धमगरेसा	,,	
१५४.	मितभाषिणी	काफी	प	सा	सा रे ग म प ध निसां	सां निधपमग-रेसा		सासा रेरे गग मम पध निपधसां
१५५.	मियां की सारंग	,,	रे	प	धनिसा रेपध निसां	सांनिध सां नि-प मरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
१५६.	मियां मल्लार	,,	म	सा	रे म रे सा म रे प निध निसां	सांनिप मपगम रेसा	मध्यरात्रि	
१५७.	मीरा मल्लार	,,	म	सा	निसा रे ग म प निधनिसां	सांध निपं मप-गम रेनिसा	,,	
१५८.	मुलतानी	तोडी	प	सा	निसा गमप निसां	सां नि धप मग रे.सा	दिन चौथा प्रहर	
१५९.	मुलतानी धनाश्री	,,	प	सा	निसा म ग म प ग म प निस	सांनिधपमगम-ग मपगमगरेस	दिन तीसरा प्रहर	निसमगगमपमपध-पमगमग नि सगरेस निध मा ग रे स
१६०.	मेघरंजनी	भैरव	म	सा	नि रेग मनिसां	रें सां निम ग मरे गरे सा	रात्रि चौथा प्रहर	

१६१.	मेघमल्लार	काफी	सा	प	सा मरे मप नि-निसां	सां निप मरे म-निरेसा	वर्षाकाल
१६२.	यमन	कल्याण	ग	नि	सा रे ग मप ध निसां	सां निध प मग रेसा	रात्रि प्रथम प्रहर
१६३.	यमनी बिलावल	बिलावल	सा	प	सारेग मग पमध निसां	सांनिधपग मगरे गरेसा	प्रातःकाल
१६४.	रसरंजनी	,,	म	सा	सा रे म ध नि सां	सांनिधम धम-रेसा	मध्यरात्रि
१६५.	रसचंद्र	,,	म	सा	सा रे सा गमम मध मसां	रेंसां धमम गम-रेसा	प्रातःकाल
१६६.	राजकल्याण	कल्याण	ग	नि	निसाग मध मग मधसां	सां निरें निध म-गरेसा	सायंकाल
१६७.	राजेश्वरी	काफी	म	सा	निसा मगम मध निसां	सां निध मग मग सं	मध्यरात्रि
१६८.	रागेश्वरी	खमाज	ग	नि	साग मध नि सां	सां निधम गरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर
१६९.	रामकली	भैरव	प	सा	साग मप धनिसां	सं निधपम पध-निधपगमरेस	प्रातःकाल
१७०.	रामदासी मल्लार	काफी	म	सा	सारेप मगम प-निधनिसां	सांध निमप मग-मरेसा	वर्षाकाल

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१७१.	रेवती (कान्हरा)	काफी	प	सा	सा रेमप धमप सां	सां धनिप मप मगमरेसा	प्रातःकाल	
१७२.	रेवा	पूर्वी	ग	प	सा रे ग प ध सां	सां धप ग रेसा	सायंकाल	
१७३.	लच्छासाख	बिलावल	ध	ग	सारेग मप धनि सां	सांनिध पधनिध-पगमरेसा	प्रातःकाल	
१७४.	ललित	मारवा	म	सा	निरेगम ममग मध सां	रें निध मध मम-ग रेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
१७५.	ललित गौरी	पूर्वी	म	सा	सारेगम ममग पधनिसां	सांनिधप धम म गमरेसा	सायंकाल	
१७६.	चैती गौरी	,,	प	सा	सारे मप मध निसां	सांनिधपमप मध मग रेगरेसा	,,	निधपधममधम गरे गरे सा
१७७.	ललित पंचम	भैरव	म	सा	सारे सा गम मग मधनिसां	सांनिधप धमम पग रेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
१७८.	ललित भैरव	,,	म	सा	सारेग ममम गप गम धनिसां	सांनि धप मग म-मग गमरेस	प्रातःकाल	स गमधप गम ममग धप गमरेस धपमप ग म ममग
१७९.	लक्ष्मीकल्याण	कल्याण	रे	प	सा रे ग म रे मप धनिसां	सांनि धप मम ग-म रेसा	सायंकाल	

१८०	लाजवंती	बिलावल	प	रे	सा मरेप धधप मपसां	सांप धधप पम-रेसा	मध्यरात्रि
१८१.	वराटी	मारवा	ग	ध	सा रेग पमग प-धनिसां	सां निधप मग रेसा	सायंकाल
१८२.	विभास (भैरव)	भैरव	ध	ग	सा रेग पध पसां	सां धप गपधप गरेसा	प्रातःकाल
१८३.	विभास (मारवा)	मारवा	ध	ग	सा रेग मग पध-निधसां	सां निधमध मग-रेसा	,,
१८४.	वैजयंती	कल्याण	प	रे	नि सारे म प निसां	सां नि पमरे सा	सायंकाल
१८५.	शहाना	काफी	प	सा	निसा गमप निध-पसां	सां निधनि पमप गमरेसा	रात्रि तीसरा प्रहर
१८६.	शहाना कान्हरा	,,	प	सा	सारेग मपनिसां	सां निधप मप गरेसा	मध्यरात्रि
१८७.	श्याम कल्याण	कल्याण	सा	म	निसा रे मप ध ग निसां	सांनिध मपगमरे निसा	रात्रि प्रथम प्रहर
१८८.	श्याम केदार	खमाज	म	सा	सारे साम रेम प धनिसां	सांनिधप धनिधप मरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर
१८९.	शिवरंजनी	काफी	प	सा	सा रेग पध सां	सां धपग रेसा	मध्यरात्रि

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१९०.	शिवमत भैरव	भैरव	ध	रे	सा रेग मप ध-निसां	सां निधप मग-रेसा	प्रातःकाल	
१९१.	शुक्ल बिलावल	बिलावल	म	सा	सा ग म प ध-निसां	सां निध निधप मगमरेसा	,,	
१९२.	शुद्ध कल्याण	कल्याण	ग	ध	सा रेग पधसां	सांनिधप मग रेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१९३.	शुद्ध सारंग	काफी	रे	प	सा रे मप मप-निसां	सांनिपम पधपम-रेनिसा	दिन दूसरा प्रहर	
१९४.	शंकरा	बिलावल	ग	नि	साग प निध सां	सां निप निध गप गरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
१९५.	श्रीराग	पूर्वी	रे	प	सारे मप नि सां	सां निध प मग-रेसा	सायंकाल	
१९६.	श्रीकल्याण	कल्याण	प	सा	सारे म प ध प सां	सां धप मप रे सा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१९७.	श्रीटंक	पूर्वी	प	रे	सा रे ग पध नि सां	सां नि ध प म ग रे सा	सायंकाल	
१९८.	श्रीरंजनी	काफी	म	सा	सा गम धनिसां	सां नि ध म ग रेसा	मध्यरात्रि	
१९९.	सरपरदा	बिलावल	सा	प	सारेगम धपनिध निसां	सां निधप मगम-रेसा	दिन प्रथम प्रहर	

२००.	सरस्वती	खमाज	प	रे	सारेमप निधप निधसां	रें नि धपम रेमप मरेसा	मध्यरात्रि	
२०१.	साजगिरी	मारवा	ग	नि	निरेग मगमप धपसां	सांनिध मधमग पगरेसा	संध्याकाल	
२०२.	साधोरी आसावरी	आसावरी	सा	प	सारे मप ध सां	सांनिधप धमप मरेम गरेसा	दिन प्रथम प्रहर	मपधसां निधप धमप धसां
२०३.	सामंत सारंग	काफी	रे	प	सारे मप निसां	सां निप मरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२०४.	साजन	खमाज	म	सा	निसा गम ध-निसां	सां निधप मगम गमरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२०५.	सावनी कल्याण	बिलावल	सा	प	सारेसा मगप धसां	सां निधनि गप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
२०६.	सावेरी	भैरव	प	सा	सा रे मप धसां	सांनिधप मग रेसा	प्रातःकाल	
२०७.	सांझ का हिंडोल	कल्याण	ग	नि	साग मध मनि मधसां	सां निधनि धम-ग सा	सायंकाल	
२०८.	सिंधु भैरवी	आसावरी	म	सा	सारे गम पध-निसां	सां निधप मग-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२०९.	सुघराई	काफी	प	सा	सारेगम पनिसां	सांनिधप मप ग-मरेसा	,,	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
२१०.	सुहा सुघराई	काफी	म	सा	निसा गम पनि मपसां	सां निप मप गम रेसा	दिन का अथवा रात्रि का दूसरा प्रहर	निस रे गमरेसा निप धमपग रेमपध गम-रेसा
२११.	सूर मल्लार	,,	म	सा	सारे मप निसां	सां निध मप म-रेसा	वर्षा ऋतु	
२१२.	सूहा (कान्हरा)	,,	म	सा	निसा गम पनि मप सां	सां निप मपगम-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२१३.	सैंधवी (सिंदूरा)	,,	सा	प	सा रे म प ध सां	सां निधपमगरेम गरेसा	सायंकाल	
२१४.	सोरठ	खमाज	रे	ध	सा रे मप नि सां	सांरें निधमपध मरेनिसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२१५.	सोहनी	मारवा	ध	ग	सा ग म ध नि सां	सांरेंसांनिध मध-मगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
२१६.	सौराष्ट्र टंक	भैरव	म	सा	सा रे ग म प म ध सां	सांनिधम निधप मगरेसा	प्रातःकाल	
२१७.	हमीर	कल्याण	ध	ग	सा रे सा गमध निधसां	सांनिधप मपधप गमरेस	रात्रि प्रथम प्रहर	
२१८.	हिजाज	भैरव	म	सा	सारेगमप धनिसां	सांनिधप म गमप रेसा	दिन दूसरा प्रहर	

२१९.	हिंडोल	कल्याण	ध	ग	साग मधनिध सां	सांनिध मग सा	दिन प्रथम प्रहर
२२०.	हुसेनी कान्हरा	काफी	सा	प	सा रेग म प ध निसां	सांनिधप गमरेसा	मध्यरात्रि
२२१.	हेमकल्याण	बिलावल	सा	प	सा रेग प सां	सां धप ग रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर
२२२.	हंसकंकिणी	काफी	प	सा	साग मप निसां	सांनिधप मपग मगरेसा	दिन तीसरा प्रहर
२२३.	हंसध्वनि	बिलावल	सा	प	सारे गपगरे गप-नि सां	सां निप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर
२२४.	हंसमंजरी	काफी	प	रे	सा रे मपध निसां	सांधप मप धप मरेनिसा	दिन तीसरा प्रहर
२२५.	हंसश्री	खमाज	प	सा	सा गमपनि सां	सां नि मप पग-मग सा	रात्रि दूसरा प्रहर

राग नाम	पकड़
१. अडाणा	सा, रे मप, मप, ध (नि १), निसां, निसां, रें सां, निसां, ध, निप, मपसांध, निसां, रें, रें, सां ध, निप, मपरिसं, निप, ग (म २) म रे सा।
२. अल्हैया बिलावल	ग, रेगग, धनिधनिसां, सांनिधप, धनिधप, मगमरे, गप, धनिधनिसां, धनिधप, धगप, मग, मरेसा।
३. आहीर भैरव	सा, ध, नि रे, सा, गमरे, सा, गमपध निधप गमरेसा, सां, निधप, गमरेसा, धनि रे।
४. आसावरी	रेमप, नि ध प, मपध सांरें निधप, मपग, रेसा। (और) रेमपध, निधमगरे म प ग रे सारे निध मपध सां रें नि ध मपध।
५. आनन्द भैरवी	मप, मपधनिधप, मगरे, गरेस, निधप, पधनिस, रेरे, ग म, पध पम, गरेस, मप, धनिधप, पधनिस, रें सं, निधप, निधपम, गरेस।
६. आभोगी	ध सा, रे ग, रे, म ग रे, धसा, गरे, ग मध, धमगरे, गमधसां ध, ध, मधगरे धसा रे गमध, मधसां धमग रे स।
७. आभोगी कानडा	धमधसा, रेसा, ग (म २) म रे सा ध सा रे ग (म २) मरेसा, मधसांमधसां धमगरे, ग (म १) मरेसा धसरे ग (म २) रे स।
८. कलावती	गप, गस, गप, धसां निध, निधप, गपधपगगसागप, धनिधप, गपगस, गपध निसां निधपगस।
९. ककुभ	साग, म, निधप, मप, गम, सा, ग, गम, धनिसां, सांधनिप, धम ग, सा गम। (और) रे, रे, गमग-रेसा, निसारे, धनिप, मम, मप, धमपसां, ध, प, धमगमरेसा।
१०. कामोद	सा, रे स, रे रे प, ग, मप, गमरेसां, रे रे प, मं पधप, सांधप, गमपग मरेप, गमरे स, रे रे प।

११. काफी — सा सा, रेरे, गगम मप, मपधनिसां, निधपमगगरेरे, रेपमप, मगरेसा, सा सा, रेंरे गग, मम पप।

१२. कालिङ्गडा — सा, रेगमप, धप, मधप, मग, मगरेसा, पसां निसां, पधप गमग मगरेसा निसरेग।

१३. केदार — सा रे सा, मम ग$_2$/प, धप, म, पमरेसा, मप धपम, पमरेसा, सासा, मगप म धपम।

१४. कौंसी कानडा — निसाम, गम, पग, मग, रेसा, म, ध, निसां, निध, म धनिधम, पग, मग, रेसा, निधनिसा, म ग प, पग, रेगमगरेसा, मधनिसां, निधम, (पग$_2$) गप, मगरेसा।

१५. खमाज — सा, गमपधनिधप, मपधमग, गमपधनिसांनिसां नि धप, धमगरेसा।

१६. खंबावती — रे, मपध, निनिधसां, सां निधमप, ग, मसा, मगमसा, रेमपध सा।

१७. खट — रेनिसा, ग, मप, पप, धध, पसां, ध, प, ग, म, निध, प, ध, प, गम, पगमरेसा।

१८. गांधारी — नि ध प, धमप, ग, रेमप, निधप, धम, पग, रेसा, रेमप, निध, निधप।

१९. गारा — निसा, निधनिपमप, धनिसा, रेगरेसा, गमप, गामरे गरेसा, निधपध निनिसा।

२०. गुणकली — सा, रेमपध, मपध, मपमरे, मपधसां, सांध, पसां पधप मरे मपध, मपमरेसा।

२१. गुर्जरी तोडी — ध, मगरे, ग म निध, निधम रे ग, रे निध सा।

२२. गोपिका बसन्त — सा, गमप, गमप, (नि निरे) धधनिसां, धप, सांधनिधप, ग, म, गमपनि धसां, मपग,मगसा।

२३. गोरखकल्याण — रेमरेसा, निधसा, रेमपधनिध, पध, मरेसा, निधसा, रेमपध निधसां, रें साधनिध, मरे,मपमरे, निस, निधसां, रेमपधमा।

२४. गौडमल्हार — सा, रेगम, गरेगसा, रेगरेम गरेसा, रेगम, मरेप, मपधनिधम, गरेगसा, रेपम, मपधसां, धपमपम, गरेगस, रेगम।

राग नाम	पकड़
२५. गौड मल्हार (काफी ठाठ)	सा, रेपम, मपग (म रे) मरेसा, समरेपम, ग (म रे) मरेसा, साध, निपम, पसांधनिपम, पग (म रे) रे सा।
२६. गौडसारङ्ग	सा, रेनिसा, गरेमग, प, रे, सा, मपसां, ध, निपमपमग, गरेमग, गरेसा।
२७. गौरी (पूर्वी ठाठ)	सा, निधनि, रे ग, रेमगरे, मारे, निसा, रे, रेगरेसा, म, ग, मधपम, रेग, रेम, गरे सारे निसा।
२८. ,, (भैरव ठाठ)	सा, निधनि, रेगरेम, गरे सारे निसा, मधनिसा, मसरेगरेसा, मपधपम, रेग, रे रे सा।
२९. चन्द्रकान्त	ग, रे, सा, निधनिधपसा, गरेग, धमग, परेसा, निरेग, रेगरेसा, गपरेग, पमग, निरेगरेसा, धमगप, रे, निसा।
३०. चन्द्रकौंस	सा, निसा, ग, धनिस, गमगसा, मधनिस, सांनिधमधनिसां, निसांध, म, गमगसा।
३१. ,, (काफी ठाठ)	सां, धनिसा (ग₂), गम, मग मगमध, निध, मग, मगसा, मध, निसां, निधमगमगसा।
३२. छायानाट	प, रे, गमप, मग, मरेसा, रे रे गम, निधप मपरे गमप, मगमरेसा।
३३. जलधर केदार	सां, रें, सां, धपम, ममप, धपम, रेसा, सा रे प, मरे, सा, सां रें मं रें सां धप, मपसां, धप, मरेसा।
३४. जैजैवन्ती	रे ग रे सा, निधपरे गमगरे गरेसा, मप, निसां, निधपगम रेगमप, गमरेगरेसारे निधपरे।
३५. जैत	सा, सा रे गरेसा, रेरेसा, रेगप, प, धग, पधग, रेग, धपग, रेसा, सारेसा, पपसां, सांरेंसां, पग, रेगपसां पधग, सागप, धपग, रेसा।
३६. जैत कल्याण	सा, ग, पग, पधपग, रेसा, पग, पधग, सासा गगम, प, पधग, पधपरे, ससारेसा, गपधसांप, पधग।

३७. जैतश्री	निसृ, गप, मधप, मग, धप, मग, मगरेसा, सा, गपम, गमग, रेसा, निसाग, मपधप, मग, मग, रेसा, प, धप, सां सां रें रें सां गं रें सां, रें निधप, प, मगरे।
३८. जोगिया	रेमप, धमरेसा, निधसा, मपधपधम, रेस, मपधधस रें रें मरेंसा, निधप, धनिधप, ममपधध मम रे रे सा।
३९. जौनपुरी	सा, रेमप, निधप, मप, धनिसां, रें निधप, निसां, निधप, मपध मधगरेस।
४०. झिंझोटी	धसा, रेमग, प, मग, रेसा, निधप, धसा, रेमग, गमपमग, धपमग, सारेग, सा, निधप, धसा रेमग।
४१. झिलाफ (भैरव)	सागमपपधसां, धप, मगम, पधसां पप, मप, मगम। (आसावरी) निसागमप, धनिसां। रेंनिसां। रें सानिधप, गगपमगरेसा।
४२. मोटकी	साध निपसा, म, म? पग रेंग, गगमरेसा, निसगमपधनि, निग, रे, स, सरेपग, मपनि, सां निसां सां निसां, सांनिधप, मपगम, पधनि, गरे, सा, सरेपग।
४३. टकी	ग, रेसा, गप, धपसां, निध, प, मग, पग, रेसा, रे रे गप, धधप, निधप, गपगरे:, निरे निधप, पग रेरेस।
४४. तिलक कामोद	पनिसृ रेगसा, रेपमग, स, रेगस, निप निसा रेमपध मग, मपसां, पधमग सारे ग स नि प नि सारे गनि।
४५. तिलंग	सा, गमप, निप, मग, गमपनिसां, निपगमग स।
४६. त्रिवेणी	स रेगप, गरेस, पपधपसां, निधप, पगरेरे सा, सारेगरेप, धपसां, निधप, गप, गरेसा।
४७. मियाँतोडी	निधमगमधसा, रेमगप, मधमगप, मगरेगरे निधपसा।

राग नाम	पकड़
४८. दरबारी कानडा	ग (म ?) रें रे सा ध निसारेग (स ?) मरेसा, रेरे ग मप, ध, निपमप, ग (म ?) मरेसा।
४९. दुर्गा (खमाज)	सा निध् सा, मग, मधनिधमग, मधनिसां, गं मं ग सां निधमगसा।
५०. दुर्गा (बिलावल)	सा, रे मपध मपध, मरे धसा, मपधसां धपमपधमरेधस।
५१. देवगांधार	धम, पनिध, प, धमपग, रे, पपग, रे, गस, निसा, स रे ग, म, पगरे गसा, रे, निसा रेगम पग रेस।
५२. देवगिरी बिलावल	सा, धनिध, सा, रेग, गग, गरे, सा, सागपध निप, मग, मरे, सा, निसा धनिधसा, रेग, मग, प, मग, गरेसा।
५३. देशकार	सा, गप, धपध, प, धपध, प, धगप, गपधपगसा, रेधसा सांधपधपधगप।
५४. देशाख्या	सा समरेसा, निस, ग गप, निप, गमरेसा, निसा, मप, पनिपसां, रेंस, निसां, निप, गगमरेंसा, निप, गंगमरेंस, निप, पनिपसांनिप, गमरेसा।
५५. देस	सा, रेमपनिधप, मगरेगनिसा, रेमपनिसां, रेंनिधप, रेमपधमगरेगनिस।
५६. देसी	निसा, रेपगरे, निसा, रेमध, ध,मप, रेगसारेनिसा, पधधस, रेमप, मपसां, पधमपरेगमा रेनिस, रेमपधप, धमपगरेगसा रे निस।
५७. धनाश्री	निसा, गमप, धप निधमग, पग, रेसा, निधप, मप, निसा, गमप, धप, निधप, सानिधप, मपग, मपग, रेसा।
५८. धानी	गसा, गमप, निपनिस, गंसां, निप, मग, सा, मपगम, प, निसां, निपमप, ग, मप, गमगसा।
५९. नट	सा, ग, गम, म, पम, ग, ग, म, प, सांधनिप, मग, रे,ग, मप सारेसा, साग, मप, पगम, रेगमप, सारेसा

६०. नट बिहाग	सा, गम, पम, गमपसांप, गमग, मग, मनिधप, पपमपध पमग, मनिधपगमग, पपनिसां, गंगंसां, पनिपधमपमगरेसा।
६१. नटकेदार	सा, रेसा, म, मप, धप, म, गम, म, प, सां, धनिप, धपम, सारेगमप, सारेसा।
६२. नटमल्लार	सा, रे ग, ग (म) रे, सा, निसा, रेसा, निसा, रेग, मप, (प) मग, मरे, रे, मरे, निसा।
६३. नन्द	सा, गम, पधनिप, ध, मप, गम, गमधपरेसा, सारेसा, गंमपधनिप, गमधपरेसा।
६४. नायकी कानडा	निप, मपसा, निपरे, गमरेस, पनिप, सारेगगमरेस, मपसां, निप, रेप, रेगमरेस, निपरे, गमरेस।
६५. नारायणी	सांनि धमप, निधप, मपम, रे, सारे, मरे, धस, मप, धसारेमरे, निधप, मपधप, मरे, मरेस, मपधसां, सांरेंसां, निधप, मपधसं, धप, मरे, सरे धस।
६६. नीलांबरी	सा, रेमप, धनिसां, सांनिधप, म, ग, ग रेस।
६७. परज़	सां, निधप, मपधप, गमग, मगरेसा, सापमपधपमगमग, सां निधप मगसग, मगरेसा।
६८. पहाडी	ग, रेसा, ध, पधसा, गपधप, गरेसाध, धरेगस, गप, धसां, मप, गरे, धसारेग, साध, पधसा।
६९. पीलू	ग, सनिसारेसा धपमपनिस रेप गस निस।
७०. पूर्वी	निरेग, मग, पम, धमग, ग, रे, निधप सा, निरेसा।
७१. पूरिया	ग, निरेसा, निधनि, मधग, मधनिरे, निमधस निरेस, ग, ग म ग निरेनिमधगमधसा निरेस।
७२. पूर्वा	सा, निरेध, निरेग, मग, निनिधमधमगरेगरेसा, रेनि, मधसा, निरेगम धमगरेसा, निधमगरेनिरे-निमधस सरेसा, नि, रेगरेगमधमगरे, गनि, धमगरेस।

राग नाम	पकड़
७३. पूर्वकल्याण	रेग, मपधनि, धप, रे, मप धमग, रेस, निरेनिध, निरेगमप, मम, निनिधमगरेस, मधमसां, सारेसा, निरेंनिधप, गमपधनिस, मधमग. निनिधमगरेस।
७४. पूरिया धनाश्री	निरेग, मप, धप , मग, मरेग, ध, मगरेस, निरेगमप, मधप, मग, मरेग।
७५. प्रदीपकी	निसा, मगरेस, निधप, मनिप, निस, ग, मपम, गम, निधप, म, गम, पग, रेस, मपसरेसा, निसमग-रेसा निधप, म, गम, पनिधप, गम, पग, रेस।
७६. प्रभात	सा, रे रेसा, ग, म, प धप, म, रे, गमम, गम, गरेस, धस, रेगमम, गमगरेस, धनिस, पध धनिस, रेरेसनि धप, मगम, धपमगरेगममगमगरेस।
७७. बहार	सरेसा, ममप, गम, ध, निसरे निसं, निनिप, मप, गम, धनिसरेनिस।
७८. बरवा	सा, रेगरेसा, रेमपधमप, रेगरेस, निसमगरेसा, रेम रेमपधसां, निधम, धपगरे, गरेगस, मपधनिसं, सनिरेसां, निनिस, निधप, निधम, पग, रेसा।
७९. बड़हंस सारंग	निनिपमरेसा, रेमप, निप, निसरेसां, निप, निप, मरेसा, रेम, मप, मप, निप, निसां, सांरेसां, सानिप, मपनिप, रेस, विसा, रेमप।
८०. बसन्त	स, ग, मधरेंसा, धसानिधप, ममग, मधसारेसानिधपमगमग, मनिधप मग, मगरेस।
८१. बसन्त बहार	सांनिधप, मग, ममग, मधनिसरेसा निधपममगममपगगमध, निसंरेसां निधपमगमग, रेसममपगम।
८२. बागेश्री	सारेस, धनिसम, मगग, मधनिध, मधनिसानिध, मग, मगरेसधनिसम।
८३. बागेश्री बहार	साम, गम, पगम, रेसा, मधनिसांनिप, मपनिनि पमपगम, गरेसां, गमरेस।

८४. बिलासखानी तोड़ी	स, रेनिसा, रेग, रेग, मग, रेसा, सरेधस रेग, मग, रेगस, धप, निधमपग, रेगमग, रेस, सधसरेग, रेग, मग, रेस।
८५. बिलावल	गरेगप, मग, मरेस, गरेगप, धनिधनिसं, सनिधपधगप, मगरेगपमग, मरेस।
८६. बिहागडा	गमध, पधनिध, पमगस, गग, पम, मगम, पधनिसांसां, नि ध, प, मपम, गरेस।
८७. बिहाग	सनिसमग, पमधप, धगमगरेस, पमगमम, निपनिसाभगपमगमग।
८८. वृन्दावनी सारंग	सा रेमप, मप, निप, निसंनि निपमरेनिस।
८९. भटियार	सा ध, धप, म, म, पग, मधसां रेनिधपम पग, मधमगपगरेसा, मधसां, निरेंगरेंसा, सनि, मपग, मधसां, रेनिध, मग, मगरेस।
९०. भंरवार	गरेस, ग, मपमग, म ध, पगरेसा, निसा, रेग, मग, मध मग, गरेस, निसा, गमप, मप, मग, ग, पमग, रेसा, नि, सरेग, मग, धमग, पग, रेस।
९१. भिन्न षड्ज	सा, ग, गम, मगसाध, निसा, गमधमग, निस, ध नि सगम, ध, मध, निधप, गमधसां, निसधमगस धनिसग मधनिसं।
९२. भीमपलासी	निसमगरेस, ममपगम, पनिपनिसंरेंस निधप, मप, गमनिस, गरेस।
९३. भूपाल तोडी	धस, रे ग सा रेस, रेस रेग, प, धप, रेगस, रेग पधसं प धपगरेगस।
९४. भूपाली	सरेगसा धप गप धस, रेग, पग, धपग, रेगरे धस, रेपग।
९५. भैरव	स, गम धधप, मपम, गमरेस, धधपमपम, निसंधप, गमधधपगम, मगमरेस।
९६. भैरवी	स, रेग सरे स धपसरेगपम, गसरेस, गमपधप धपमपम, ग, सरेग, ममरेगस।

राग नाम	पकड़
९७. मध्यमाद सारंग	निपस, निरेस, रेमपनिपमपम, रेनिसरेम, पनिमप, निपमरे पमरे निरेस।
९८. मलूहा केदार	स, रेसां, म, म, पस, गगमरेगमप, गमरेनिस, धप, मप, निस, मग, मरेस, मगप, मपधनि धप, मगमरे, निस।
९९. मधुवन्ती	निमगमप, मपधप, मपगरेसरेनिस, गमप।
१००. मारवा	धनिरे, गमगरे निधनिरे, गमध, धमगरे, गमधनिध, मगरे, निधस।
१०१. मारूबिहाग	रे, निम, गरे, गमपमप, मप, ग, मग, रेस, रेनिस, मग, मग, रेस, निधप, मग, पगरेस, रेनिस, मग, मगरेसा।
१०२. माँड	सा, रेगस, रेममप, ध, पधसं, संनिसंनि ध, धनिप, पध, म, पग, मस, रेग, गस।
१०३. मालकौंस	मधनिसं, निसं ध निमधमगनिस, गमस।
१०४. मालश्री	पप, मगस, सासगाप, पमप, पगस, निसगपमग, गपसनिपनिसंनिपमग, निपगपगगस।
१०५. मालगुंजी	म, मगरेस, निधनिस, धनिसरेग, म, मध, धनिध, म, रेगम, गमध, निसं, रेंस, निधसां, धप, म, मग, मगरेस।
१०६. मालीगौरा	धनिसरेनिध, निधप, मग, मगम ध सा, निरेग, निरेस, प, मधमग, गरेसा, मधस, निरेस, निरेनिध, मनिधमगरेस।
१०७. मियां की सारंग	रेस, धनिप, निध, निध, सनिस, सरे, मम, पप, धप, मरेसा, पनिध, निधसं, निस, संरेंसं, निधसां निप, मरे, सा।

१०८. मियाँ मल्हार — रेमरेसा, निपमप, निध, निस, रेप, मरेप, गमरेस, निधनिसा।

१०९. मीरामलहार — मरे, सरे, निस, गग, मरेप, मप, निधनिसं, रेंसां, धधनिप, मपस, सांधनिप, मपगम, मप, निप, रेम, पधमप।

११०. मुलतानी — निसा, मगप, पधप, गमगरेस, निसगमप।

१११. मेघरञ्जनी — निरेगग, म, मग, रेग, रेस, म, निसरेंरेंसनिम, ग, मरेगरेस, निरेगम, गममगग, म, गरेस।

११२. मेघमल्हार — रे, रेमरेस, निपस, सरेरेमम, रे, सरेमरे, सनिप, मपसां, निप, मरेस, मप, निसं, रेंसं, निसंरेंमरेंसं, निप सं, निप, रेरेमरेसा।

११३. यमन — निरेगरे, निरेस, मपरेगरे, धनिरेमरेगधनिरेस।

११४. यमनी बिलावल — सारेग, मग, पमधप, गमगरे, गरेस, निधनि धप धनिस, पमप, गमग, गमगरे, गरेस।

११५. रागेश्री — सा, रेस, निध, निस, मग, मध, निध, गग, मग, सरेसा, गमधनिसं, मंगंरेंसं, संनिध, मधनिध, मगरेस, निधसा।

११६. रामकली — स, गमधप, मप, ध, निधप, मप, गम, रेस, धप, मप।

११७. रामदासी मल्हार — पगमरेसा, रेनिसा, सरेग, मप, गगमरे, पमनिप, गमरेस, प धनिसां, संरेंसं, निसं, निप, ममप, गम, निप, गमरेस।

११८. ललित (पूर्वी) — निरेगम, ममग, मधमम, ग, मगरेस, निरेगम, ममग, मधसां, रें निधमम, ग, मगरेस, निरेगम।

११९. विभास (भैरव) — स, गप, गपधधप, धगप, गप, गरेस, सरेस, पगप, धसं प, धपगपगरेस, गप धपगप।

राग नाम	पकड़
१२०. विभास (मार्वा)	स, नि़रेग, पग, रेस, नि़ध़, म़ध़, सारेस, गप, पध, पग, मगरेसा, मधसां, रेसां, निधमधसं, सरें निध मग, पग, रेस।
१२१. शहाना	निधनिप, धमप, सां, निनिप, मप, गम, पगमप, गमरेसा, सम, म, धप, गम, मपनिसां, सं, निसं-रेंसां, निप, निनिप, निमपसं, निपमपगम।
१२२. श्यामकल्याण	सा, रेममप, पधप, मपधप, मरे, नि़स, रेमप, गमरे, नि़सा, रेमप, गम, रेसा, रेमप।
१२३. सामन्त सारङ्ग	प, म, पनिप, रेरेसा, निस, रेस, प, म, निधप, मप, निसं, सं निस, रेंरेंसां, निप, म, निधप।
१२४. श्याम केदार	म, म, रेस, रेमप, मपधपम, पग, मरेम, रे, रे, मप, निसं, संनिरेंसं, निपप, मपधप, रे, प, मरे, गम, रे, सा, रे, रेमप मपधपम।
१२५. शिवरंञ्जनी	गा, गपधसं, रेंगंरेंसं धपगरे, ग रे स धसरेगरे पगरे धसा रेगपधस धपगरेस।
१२६. शिवमत भैरव	ग, ग, मरेगप, मग, मरेग, रेसा, रे ग रेसा, पधनिसं, रेसं, रें गं रेंसं, निसं, धनिधप, पधनिसां।
१२७. शुक्ल बिलावल	स, ग, गम, मपम, रेप, मपधनिग, गम, मपमग, मरे, म, रेग म, मपमग, मरेप, धसं गम, प, मग, मरेस, नि़ग, मसंनिध, निपमग।
१२८. शुद्ध कल्याण	ग, रेस, नि़ध़प़ सा, गपरेस, सरेगपधसां, धपरेगपरेस।
१२९. शुद्ध सारंग	नि़सा, रेमप, मपमरेमप, निसनिप, धप. मप, मरेगा, रेमप।
१३०. शंकरा	गप, निधसंनि, पगपगरि।
१३१. श्रीराग	सां, रे रे गरे, स, मप, धप, रे, ग, रे प, मप, निसं, रेंरेंसं रेसंनिस रेनिधप रेरे मपरेगरेरेस।

१३२. दीपक (पूर्वी)	सां, प, गपगरेसा सागप, मधप, गमधपसां, निसारेसां, प, गपगरेसा।
१३३. भटियार (खमाज)	सा, ध, ध, निधसां नि ध, सं, नि ध, मप, ग, रेस, ध, ध, नि ध सां, निनि, ध, मप, ग, रेस।
१३४. सावनी कल्याण	ग, रेस, निधनिधप पसा, रेगरेसा, ससमग, पपधप धपग, रेस, ध, गरेस।
१३५. सांस कां हिंडोल	मग, सनिधसनि, मधस गसनि मगनि धसनि मग, सनि धसनि।
१३६. सुघराई	स ध, धनिप, परेम, मप, निप, सं, निसां, गग मनिप, मप, गग, मरेंसं, धधनिप, मप, निप; निसं, रेंसंमरेंसं निसंरेंसं, पनिप, पगमरेस।
१३७. सूहासुघराई	सारे, निस, ग ग मप, गमरेस, निप, स, रेगग सरेस, मप, निपसं, निसंरेंनिसं, निपम, मपम, गग मपरेस, निसरे गग मरेस, निस गग मप। (मम मम मम / मम मम)
१३८. सूरमल्हार	निस, रेमप, निधप, मपमरेस, निनिपमरेस, रेम, पनिधप, निसं, रेंनिसं, निधमप, मपनिपमरेस, संनिधप, मपनिधप, मरेनिस।
१३९. सूहाकानड	सा, निसगमप, ग, मरेसा, निस, निप, सा, मरे, पग, म, रेस, सग, मपसं, निप, मप गमरेस, निसगमप, निमपसां।
१४०. सिंदूरा	सा, रेमपधसं, निधमपगरे, मगरेस, धमप, निसं, रेंगं, रेंसं, निधसं, रे, मपधनिधमप गरेनिस।
१४१. सोरठ	रेमपनिसं, रेनिधप, धमरे, रेपमरेरेसा, रे, प, मपध, मरे, निध, मरे, रेमपनिस रेंनिधमरे, पमरे, निस।
१४२. सोहनी	ग, म धनिसंरेंसं, निधनि धग, मगरेस, ग, मधनिसं, निधमग, मधनिसंरेंसं ॥

राग नाम	पकड़
१४३. हमीर	सा, गमध, निध, सं, निधप, मपगमध , पगमरेस, गमध।
१४४. हिन्दोल	सा, गमधसां ध, मग, मगस, धसा, मग मधसां निधसां धमगमगस।
१४५. हेमकल्याण	पप धप स, रेसा, गमरेस, गमपगमरेसा, धपसा, गमरेस, मगरेसा, पधपसां धप, गमपगमरेस, पधपसा।
१४६. हंसकिंकणी	गमप, गरे, निम, गम, मपग, मपनिसां, निसं, मपनिसंगंरेंसंनिधप, मग, म, निसा, गमप, पमपग, म, प, ग, रेसा।
१४७. हंसध्वनि	सा रे स, गप, निस निपगपगसरे, निपसनिगरे, गपगरेसरेस।
१४८. कीरवाणो	स, गम पध, नि, निधपमगरें, मगरेस, निसा, गमपधपमगरेगरेसा।
१४९. वराटी	पधग, पधमग, गरे, रेग, धमग, रेस, सरे रेग, रेस, सा, निरेग, पग, प, पधसं, पधग, मग, ग, रेस।
१५०. पञ्चम	मधसां, मंनिध, मधमग, मगरेस, निसम, म, मग, मधसं, निधनिमध।
१५१. साजगिरि	निरेगरे, मगरेस, सनिधस, निरेग, निरेनिध, मधसा, गम, नि, मधम, ममगरेस, मग, मप, धप, सां, सनिरेंनिधप, पधग, पपधसां, निरेनिमधगममगरेसा।
१५२. ललिता गौरि	मध, निरेंगंरेंसंनिसां, निधप, धनिप, मप, गरेगरेस, सनिधसं, रेरेसपपधनि, पगमप, मधसं, रेरेंसंनिधप, पधनिप, गमप।
१५३. लंकदहन सारंग	स, रेमप, प, निनिप, मरेस, रेमरेस, संनिधनिप, मप, गगमरेस (ऊपर: मम), मप, निसं, संरेंमंरेंसं निपमपसं,

म म
निधनिप, गरेस।

१५४. पटमञ्जरी — साग, गमरेरेसा, साध, सारेसा, धधप, पपरेरेरेरेगसा, साग, गमप, मगमरेसा, पपसां, सांरेंसं, सांगंगंमंपं, मंगंमरेंसां, पधप, गरेगमगरेस।

१५५. श्रीरञ्जनी — मगरेसा, धनिसा, म, गमध, मधनिधम, गमधनिसां, सांनिध, मग, रे, सा।

१५६. गौड़ — सा, मरेसा, निसा, ग, मरेप, धप, मरेप, मपधरेंसं, धनिप, मपग, मरेसा, मप, निधसां, संनिरेंसां, धनिप, मंरेंसं, रेंनिसं, पनिपम, प, पसनिप, मपगमरेस।

निनिनि
१५७. कोमल देशी — पप धधध प, धमप, ध, निसा, सनिधनिधपमरेमप, धपगरेरेसा, समप, रेमप, धपगरेस, प, धप, संरेंगं, रेंसं पधमपधमपगरेस।

१५८. खटतोडी — गगरेस रेमपमप धनिनिधनिप, पमधम, मपसांसां, निपमपगरेस, मपधनिसां, धनिसंरेंगंरेंरेंसंनिधप, धनि धप, धममगरेस।

१५९. जंगला — गरेगसा, रेमप, धनिधप, ध, मप, रेगरेसा, म, पनिसां, निसंरेंगंरेंसं, निसंधप, धधनिसं, धनि, पनि, धप, धम, प, गरेगस, रेमप, धनिध, प।

१६०. सिंध भैरवी — सा, रेगम, रेग, रेनिस, धपधमपगरेग, सा, रेगरेनिसा, धपधसा, निधप।

नि
१६१. बसन्त मुखारी — निसगमप, धप, पपनिस, धनिधप, पनिधप, मपमग, मगमरेस, मपधनिसां, संरेंसां, निसांधप, पनिधप, मपगमग, मरेस।

१६२. उत्तरी गुणकली — मगमप, ध, पधम, मधमपग, गमरेसा, सरेनि, सारेगम, पधनिस, निधपम, पधनिसं, गंरेंसां, निसांधप,

राग नाम	पकड़
	मगमग, मधनिसंरेंसां धप, धम, सध ।
१६३. अञ्जनि तोडी	सारेमप, सनिसां, धप, मपगरेसा, गस, मरेमप, निधप, निनिसं, रेंनिधप, रेगसरे, मप, सांधप, मप, ग, रे, मगरेगसां, रेम, रेमपसंधप ।
१६४. बहादुरी तोडी	धप, मपध, ममधस, धनिस, रेस, सनिध, रेनि, गरेग, मरेग, रेगमधनिध, गमरेग, रेसा, मधसांनिध गमरे, गरेसा ।
१६५. औडव देवगिरि	सासारेग, गगरेगप, पध, गगरेगपधसां, पधपधपगरेसा, सांसांपधपधपगरेसस ।
१६६. लच्छासाख	प, मग, रेपमग, धनिसां, निध,'प, मग, मरेसा, सारेगम, निधपमग, मरेसा, सम, गपप धनि धप मग, मरेसा ।
१६७. नटनारायण	सारेसा, साप, पधगमसरेस, गमपसां, रेंसां, धपरे, गमपगमसरेसा, पपसां, रेंसां, सांधमंरेंसं धप, सरेगमपगम, मरेसा ।
१६८. सावंनी (बिहाग)	सारेसा, गमग, पनिसां, सांरेंसां, पग, मप, सं, पमगमगमपनिसं, सांनिधसं, निपगमगरेसा, मग, मपनिसां ।
१६९. नटबिलावल	साग, गम, मप, मग, मरे, निधप, म, पमग, रे, ग, मप, मग, मरेसा, साग, गम, मपमगमरेसा ।
१७०. सवन	मगनिसा, रे, गमप, ध, पमगम, निमां, सांनिधपमग, सा, साममपनिसां, निसंरेंनिसां, निसांरेंसां नि धप, धममगरेगनिसा ।
१७१. ललित पञ्चम	ग, मगरेसा, धनिसागम, ममम, ममग, मधनिसां, सांरेंसांनिधप, मपमधपम, गमधनिसां, सांनिरें, सांनिधनि, सागमगरेसंनि धप मप, गमगरेसा ।

१७२. रेवा — ग, रेग, पग, रे, सा, सारेग, प, पध, पग, सारेग, रेग, सांरेंसां, धप, ग, पग, रेसा।

१७३. हंसनारायण — निरेगम, पमगरे, गमपम, गरेसा, निरेनिप, मग, निरे गम, रेगरेसा।

१७४. मनोहर — धमगरे, गरेसा, मधरें निधप, गमगरेसा, मधसं, रेंसं, रेंनिधप।

१७५. दीपक (बिलावल) — सा, गमप, म, गमपमग, रेसा, प, म, मग, रेसा, सा, निधप, पधसा, साग, गरेसा, गमपधप, निधप।

१७६. गुणक्री — सरेमप, धमरे, स, पधम, मपधसं, रेंसांधप, मप ध ध मरेरे, मपमरेस, धम।

१७७. देवरञ्जनी — साम, मप, धप, धसां, धप, सांध, निध, पम, मप धसां, म, मपम, सप ध सां, निसां धाप, पनिध, पमसा, मपधसां, मपम।

१७८. सर्पर्दा बिलावल — सा, रेगम, ध, प, निध, निसां, निध, प, मग, मरे, सा, सरेगम, धप, गमधप, सारेग, मरेस, सारेग, रेग, मपमग, मरेसा।

१७९. मालवी — सांनिप, ग, मग, रेसा, साग, मधरेंसां, सां, नि, प, मग, मग, रे, सा।

१८०. कामोद नाट — गमपगमरेसरे, गम (प) म, ग, म, रेसा, धनिप, सामगप, धप, पसां, प (प) पग, गमपगम, रेसरे।

१८१. कौंसी कानडा — पम, पधग, मप, ग(म)मरेसा, रेनिसा, साधधधनिप, धनिसांरेंमं, सां, धनिपम, पधम, निसां, रेंनिसां, निप, मधध, निप, धनिरेंसां धम, पधम।

१८२. जोग — सा, गमपमगस, गम, पनिप, निसंनिप, मगमपमगस, निपस।

१८३. जोग कौंसा — स गमगसा मगम, धनिसां निधम, ग, मगस, धनिस गम।

१८४. ललित (मार्वा) — निरेगम, ममग, मध, मध, निरे निध मम, गनिरे गम ममग, मगरेसा, निरेगस।

अनुबन्ध ३

(तालों का प्रस्तार क्रम)

संख्या

नियत मात्रावाले अमुक ताल को कुल कितने प्रस्तार मिल सकते है इस प्रश्न का, अंक-पंक्ति-रूप जो उत्तर पाया जाता है वही संख्या है।

चतुर्मेरु प्रस्तार के एक-द्रुतवाले ताल का प्रस्तार—१
,, ,, ,, द्वि-द्रुतवाले ,, के ,, —२

आगे ३, ४, ५, ६, ७, ८ इत्यादि द्रुतवाले तालों को, मिलने योग्य सारे प्रस्तारों को, अंक-पंक्ति के रूप में खोजने की विधि बतायी जाती है—

अंत्य (अन्तिम अंक) उपांत्य (अंत्य से पहला अंक) तुरीय (चौथा अंक) षट्क (छठा अंक) इनको जोड़कर लिखें तो अगला अंक पंक्ति में मिलेगा। जहाँ-जहाँ तुरीय और षट्क नहीं उपलब्ध होते वहाँ, क्रम से तृतीय और पंचम को मिला लीजिए। यों लिखने पर—

३ द्रुतवाले का अंत्य— २
,, ,, ,, उपांत्य— १
कुल मिलकर— ३ १, २, ३ (अंक-पंक्ति)

४ द्रुतवाले का अंत्य — ३
,, ,, ,, उपांत्य— २
(तुरीय की अनुपस्थिति— १
के कारण) तृतीय
कुल — ६ १, २, ३, ६ (अंक-पंक्ति)

५ द्रुतवाले का अंत्य— ६
,, ,, ,, उपांत्य— ३
,, ,, ,, तुरीय— १
कुल — १० १, २, ३, ६, १० (अंक-पंक्ति)

६ द्रुतवाले का अंत्य—१०
,, ,, ,, उपांत्य— ६
,, ,, ,, तुरीय — २
(षट्क की अनुपस्थिति— १
के कारण) पंचम ———
कुल — १९ १, २, ३, ६, १०, १९ (अंक-पंक्ति)

७ द्रुतवाले का अंत्य —१९
,, ,, ,, उपांत्य—१०
,, ,, ,, तुरीय — ३
,, ,, ,, षट्क — १
कुल — ३३ १, २, ३, ६, १०, १९, ३३ (अंक-पंक्ति)

८ द्रुतवाले का अंत्य — ३३
,, ,, ,, उपांत्य—१९
,, ,, ,, तुरीय — ६
,, ,, ,, षट्क — २
कुल — ६० १, २, ३, ६, १०, १९, ३३, ६० (अंक-पंक्ति)

इस अंक-पंक्ति के द्वारा किसी ताल के समग्र प्रस्तारों की संख्या की जानकारी-मात्र नहीं, अपितु उन प्रस्तारों के बीच द्रुतांत्य, लघ्वंत्य, गुर्वंत्य और प्लुतांत्य प्रस्तार कितने-कितने होते हैं, इस बात का भी पता चलता है। इसमें, ये चार अंक नीचे जोड़े गये हैं वे ही यों इसे समझा देते हैं। जैसे—

अंत्यांक द्रुत में समाप्त होने का बोधक है
उपांत्यांक लघु ,, ,, ,, ,, ,,
तुरीयांक गुरु ,, ,, ,, ,, ,,
षट्कांक प्लुत ,, ,, ,, ,, ,,

उदाहरण—

६ द्रुतवाले	ताल के	द्रुत	में	समाप्त	होनेवाले	प्रस्तार—	१०
,,	,,	,,	लघु	,,	,,	,,	६
,,	,,	,,	गुरु	,,	,,	,,	२
,,	,,	,,	प्लुत	,,	,,	,,	१

नष्ट

तालों की प्रस्तार-श्रेणी में, अमुक प्रस्तार कैसा होगा ? यह प्रश्न यदि कोई पूछे तो उसे नष्ट प्रश्न कहते हैं। किसी नष्ट के बारे में पूछा जानेवाला प्रश्न, इसका अर्थ है। इस प्रश्न का उत्तर देने का मार्ग 'संगीतरत्नाकर' में कही हुई रीति के अनुसार यों है—

उद्दिष्ट ताल के जिस प्रस्तार के बारे में प्रश्न किया जाता है उसके अंक तक की अंक-पंक्ति को पहले लिखिए। उस प्रस्तार के जो कुल-अंक हैं उसमें उस अंक को जो प्रश्न में दिया गया है घटा दीजिए। घटित होकर बाकी जो अंक रह गया है उससे अंत्यांक को, संभव हो तो उपांत्य को तथा इसी प्रकार दूसरे अंकों को भी घटा दीजिए। ऐसे घटा देने में, यदि कोई अंक न घटेगा, तो प्रस्तार का एक द्रुत मिलेगा; घटेगा तो उससे एक लघु मिलेगा। लगातार दो लघु मिलने पर दोनों को एक गुरु मान लीजिए। इसी तरह गुरु के मिलने के बाद उसका तृतीय अंक भी घटा तो गुरु को प्लुत में बदल लीजिए। घटे हुए अंक से एक लघु के मिलने के बाद, चाहे दूसरा अंक घटे ही, पर उससे द्रुत की प्राप्ति न होगी—यानी दूसरे अंक से द्रुत को मत लीजिए। ऐसे प्राप्त अंकों को लिखते समय यदि वे ताल की कालमात्राओं से न्यून हुए तो कमी को द्रुत करके मिला दीजिए।

उदाहरण—जैसे कोई पूछे कि ६, द्रुतकाल की मात्रा के ताल-प्रस्तार में पंद्रहवाँ भेद कैसा है तो अंक-पंक्ति को पहले लिखिए। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १९।

प्रश्नविषयक प्रस्तार-भेद की क्रम-संख्या १५ है। इसे, कुल-अंक से—अर्थात् १९ से घटा दीजिए तो बाकी ४ मिलेगा। इस शेष-अंक (४) से अंत्यांक (१०) को घटा देना असम्भव है। इससे हमारा आवश्यक एक द्रुत प्राप्त होता है।

बाद में, उसी शेष-अंक (४) से उपांत्यांक (६) को भी घटा देना असम्भव होने के कारण और एक द्रुत मिलता है। तदनंतर उसी शेषांक (४) से उपांत्य के बगल-वाले तृतीयांक (३) को घटाना संभव है। घट जाने से एक लघु की प्राप्ति होती है। अब के शेष-अंक (१) से ३ के बगलवाले २ को घटाना चाहे संभव क्यों न हो, परंतु उससे द्रुत की प्राप्ति इसलिए नहीं स्वीकृत की गयी है कि वह एक लघु के मिलने के पीछे

मिली है। इसलिए इस द्रुत को छोड़ दीजिए। पीछे, शेषांक (१) से आखिरी अंक (१) को घटाना मुमकिन है। इससे एक लघु मिल जाता है। इसके पश्चात् शेष के न रहने के कारण खतम हो जाता है। अब प्रस्तार का रूप यों हुआ है—।।०० इसकी अधिकता ताल की काल-मात्रा के समान रहने से द्रुतों के मिलाने की कोई जरूरत नहीं। ऐसे ही नष्ट प्रश्न का उत्तर देना साध्य है।

उद्दिष्ट

किसी रूप के बारे में यह कहना कि इस रूप का प्रस्तार अमुक भेद का—अर्थात् चतुर्थ, पंचम इत्यादि का—है, उद्दिष्ट है। इसे खोज लेने के लिए, पहले-पहल, नष्ट की पहचान के निमित्त जो रीति, प्रयुक्त की गयी है, उसी प्रकार अंक-पंक्ति को लिखिए। नष्ट में जो अंक घटित न हुए हों उनसे द्रुत, और जो घटित हुए हों उनसे लघु, गुरु प्लुत इत्यादि प्राप्त होकर, अन्ततः कुछ शेष न रहने के कारण उसकी ठीक उलटी रीति में प्रस्तार की संख्या को जान सकते हैं। वह रीति यह है कि द्रुत-प्राप्ति के कारण जो अंक हैं उनको छोड़ दीजिए। लघु आदि की प्राप्ति के कारण जो अंक हैं उन सबों को जोड़ कर कुल-संख्या से घटा देने पर अभीष्ट प्रस्तार की भेद-संख्या मिल जायगी।

उदाहरणतया इस प्रश्न को, कि प्लुतप्रस्तार के ।।०० रूपवाले प्रस्तार की क्रम-संख्या कौन है, लीजिए। शुरू में, अंक-पंक्ति को लिखें। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १९।

हमारे अभीष्ट प्रस्तार के आदि में दो द्रुत हैं। अंत्यांक से पहला अंक (१०) और उसके बगल का अंक (६) ये दोनों अंक, नष्ट में नहीं घटे हैं। इसलिए इनको छोड़ दीजिए। अब उनके बगल में लघु है। इस लघु की प्राप्ति घटे हुए अंक से ही उत्पन्न हुई होगी। इसी कारण "३" को लीजिए। इसके पार्श्व में और एक लघु है। साधारणतया दो लघु मिलकर एक गुरु हो जाता है। यहाँ तो दो लघु अलग-अलग हैं; इसलिए गुरु के रूप में अपरिवर्तित रहने के कारण—इनके बीच कोई अंक न घटा होगा। अतः "२" को भी छोड़कर बगलवाले "१" को लेना चाहिए। अब हमारे लिये हुये अंक "३" और "१" ही हैं। इन दोनों को मिलाकर प्राप्त "४" को कुल-अंक (१९) से घटाने पर (१५) मिलेगा। यही "१५" इस प्रस्तार की क्रमसंख्या है। दूसरे शब्दों में यह प्रस्तार पन्द्रहवें भेद का है।

दूसरा उदाहरण—प्लुतप्रस्तार के १००१ रूपवाले प्रस्तार की क्रम-संख्या कौन है ?

अभीष्ट प्रस्तार के आदि में लघु है। इसकी प्राप्ति का कारण अंक "१०" है। उसे लीजिए। लघु के पार्श्व में दो द्रुत हैं। इस नियम के अनुसार कि घटे हुए अंक

से एक लघु के मिलने के बाद, चाहे कोई दूसरा घट भी जाय, परंतु उससे द्रुत की प्राप्ति न होगी, विवरणतया "६" को और दोनों द्रुतों की प्राप्ति के कारण "३" तथा "२" को भी छोड़ दीजिए। तदनंतर एक लघु होने के कारण घटे हुए अंक "१" को भी लीजिए। हमारे लिए हुए अंक "१०" और "१" हैं। इनको मिलाकर प्राप्त "११" को कुल-अंक "१९" से घटा देने पर शेष "८" है। वही प्रस्तार की क्रमसंख्या अथवा अभीष्टप्रस्तार "आठवें भेद का है"।

पाताल

पाताल एक तालिका है जिससे यह पता चलता है कि किसी एक ताल के समग्र प्रस्तारों में लघु, गुरु, प्लुत, द्रुत इत्यादि कितने-कितने हैं।

इसकी जानकारी के लिए, पहली पंक्ति में ताल की क्रम-संख्या को लिखिए। दूसरी पंक्ति के आदि के दो अंकों को "१" "२" लिखकर तीसरे अंक से, "अंत्य", "उपांत्य", "चतुर्थ" और "षष्ठ" के शीर्षक के नीचे लिखे हुए अंकों तथा अंत्य के ऊपरी अंकों को भी जोड़कर लिखते जाइए। इसमें, संख्या की कही हुई रीति की भाँति चतुर्थ और षष्ठ की अनुपस्थिति में तृतीय और पंचम को न जोड़िए। अंक-पंक्ति की प्राप्ति का ब्यौरा यों है––

तालों के द्रुत

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
संख्या	१	२	३	६	१०	१९	३३	६०	१०६	१९१
पाताल	१	२	५	१०	२२	४४	९१	१८०	३५८	६९८

पहले के दो अंक––१, २

	अंत्य	+	उपांत्य	+	चतुर्थ	+	षष्ठ	+	अंत्य का ऊपरी अंक		
तीसरा =	२	+	१	+	नहीं		नहीं	+	२	=	५
चौथा =	५	+	२	+	,,		,,	+	३	=	१०
पाँचवाँ =	१०	+	५	+	१	+	,,	+	६	=	२२
छठवाँ =	२२	+	१०	+	२	+	,,	+	१०	=	४४
सातवाँ =	४४	+	२२	+	५	+	१	+	१९	=	९१

इस तालिका के अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठांकों से, प्रस्तार के सारे द्रुतों का पता चल सकता है। उसका एक उदाहरण देखिए––

६ द्रुतवाले एक ताल को लीजिए। उसके पाताल-अंक १, २, ५, १०, २२, ४४, इन अंकों की पंक्ति के अत्यांक (४४) से प्रस्तार के समग्र द्रुतों की, उपांत्यांक (२२) से कुल लघुओं की, चतुर्थांक (५) से सारे गुरुओं की और षष्ठांक (१) से सब प्लुतों की संख्या जानी जाती है। ऐसे ही आगे देखिए।

द्रुतमेरु

द्रुतमेरु भी एक तालिका है जिससे यह पता चलता है कि तालप्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत और द्रुत के १, २, ३, ४ आदि द्रुतवाले प्रस्तार कितने-कितने हैं।

इस तालिका में, विषम संख्या के द्रुतों के अधिक मात्रा वाले तालप्रस्तारों के बीच, एक द्रुतवाले, तीन द्रुतवाले, पाँच द्रुतवाले तथा अन्य विषम संख्या के द्रुतवाले भेदों के अंकों की और समसंख्या के द्रुतवाले तालप्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत के, दो द्रुतों के, चार द्रुतों के तथा दूसरे समसंख्या के द्रुतवाले भेदों के अंकों की जानकारी प्राप्त करने की श्रेणियाँ रहेंगी। इसे बनाने की विधि यों है—

नीचे से, क्रमशः, कम कोठेवाली श्रेणियों को ऊपर बनाते जाए। नीचे की पहली श्रेणी में, हमारे अभीष्ट द्रुतों की संख्या जितने कोठों में भर जायगी, उतने कोठे बना लीजिए। उसके ऊपर कोठों की ऐसी पंक्ति बनायी जाय कि जिसमें एक कोठा बाईं ओर कम रहे। इसी तरह, इस पंक्ति की ऊपरवाली पंक्ति की रचना भी उसी बाईं ओर दो कोठे कम करके की जाय। इसी प्रकार दो-दो कोठे कम करके ऊपर बढाते रहें तो अन्त में दो या एक कोठेवाली श्रेणी पाकर रुक जाइए। सबसे नीचे द्रुतों की संख्या के सूचनार्थ, बाईं ओर से १, २, ३ आदि अंकों से अंकित कीजिए। तब कोष्ठ-विन्यास यों होगा—

							१	१
					१	१	७	८
			१	१	५	६	२०	२७
	१	१	३	४	९	१४	२५	४४
१	१	२	२	५	४	१२	७	२६
१	२	३	४	५	६	७	८	९

इन कोठों में अंक भरने की विधि यह है कि हरएक पंक्ति की बाई ओर के पहले दोनों कोठों को १,१ अंक से भरो। पीछे, नीचे की पहली पंक्ति के विषम संख्याक कोठों में, अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठ इनके अधिकांश अंकों को लिखो। चतुर्थ एवं षष्ठ अप्राप्य हैं, तो तृतीय और पंचम से पूर्ति करो।

समसंख्याक कोठों में अंत्य को छोड़कर बाकी अंकों को जोड़कर लिखो। तब तीसरे कोठे का अंक (विषमसंख्याक) अंत्य १+ उपांत्य १=२ है। चौथे कोठे का, (समसंख्याक) अंत्यांक २ को छोड़कर उपांत्य १+ चतुर्थ की अनुपस्थिति से तृतीय १=२ अंक है। पाँचवें कोठे का अंक, अंत्य २ + उपांत्य २ + चतुर्थ १=५ है। छठे कोठे का अंक, अंत्य को छोड़कर उपांत्य २+चतुर्थ १+षष्ठ के न रहने से पंचम १=४ है। ऐसे ही अंकों को लिखिए।

उसके ऊपरवाली पंक्तियों के समसंख्याक कोठों में अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठ इनको उसी श्रेणी से एवं विषमसंख्याक कोठों में अंत्य को उसकी नीचेवाली पंक्ति से और उपांत्य, चतुर्थ तथा षष्ठ इनको उसी पंक्ति से, जोड़कर लिखना है। तब नीचे से दूसरी श्रेणी के तीसरे कोठे का अंक, उसी श्रेणी का उपांत्य १+ नीचेवाली पंक्ति का अंत्य २=३ है। चौथे कोठे का अंक, उसी पंक्ति का अंत्य ३+ उपांत्य १=४ है। यहाँ यह याद रखना है कि इसमें चतुर्थ व षष्ठ के बदले तृतीय और पंचम को न जोड़ा जाय। पाँचवें कोठे का अंक, उसी श्रेणी का उपांत्य ३ + चतुर्थ १ + नीचेवाली पंक्ति का अंत्य ५=९ है। छठे कोठे का अंक, उसी पंक्ति का अंत्य ९ + उपांत्य ४+ चतुर्थ १=१४ है। सातवें कोठे का अंक, उसी पंक्ति का उपांत्य ९ + चतुर्थ ३ + षष्ठ १ + नीचे वाली पंक्ति का अंत्य १२=२५ है। आठवें कोठे में, उसी पंक्ति का अंत्य २५ + उपांत्य १४ + चतुर्थ ४ + षष्ठ १ = ४४ से भरना है। इसी तरह अन्य कोठों को भी अंकों से भर कर लेना है।

इस द्रुत मेरु से इसका पता चलता है कि ९ द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में एक द्रुत प्रस्तार के भेद नीची पंक्ति के अंतिम कोठे के लिखे अनुसार २६ हैं; तीन द्रुतों के प्रस्तार भेद उसके ऊपरवाले कोठे के लिखे मुताबिक ४४ है; उसके ऊपरवाला अंक "२७" पाँच द्रुतों के प्रस्तार भेदों का द्योतक है। उसके ऊपरवाला अंक "८" सप्तद्रुत के प्रस्तार भेदों का द्योतक है। उसके ऊपरवाले अंक "१" से नौ द्रुतवाले प्रस्तार के भेद का पता चलता है। इन सबों को जोड़ने पर पानेवाले अंक "१०६" से प्रस्तारों के तमाम भेदों का विवरण मिलता है।

आठ द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में, बिना द्रुत के प्रस्तार के जितने भेद हो सकते है उसका द्योतक है नीचेवाली पंक्ति का अंक "७"। दो द्रुतों के प्रस्तार भेद, उसके

ऊपरवाले अंक "२५" से ज्ञात हो जाते हैं। ऐसे ही चार, छः और आठ द्रुतों के प्रस्तार-भेद, क्रमशः ऊपरवाले अंकों से अर्थात् २०, ७, १ से क्रमशः पाये जाते हैं। इन सबों को जोड़ने पर मिलनेवाले अंक "६०" से प्रस्तारों के कुल भेदों का ब्यौरा पाया जाता है। इसी तरह बाकी, ७, ६, ५, ४, ३, २ द्रुतवाले ताल के विभिन्न प्रस्तारों को भी जान सकते हैं।

लघुमेरु

लघु मेरु नाम की तालिका से इस बात का परिचय होता है कि अमुक मात्रा-कालवाले ताल के प्रस्तारों में बिना लघु के, एकलघु के, द्विलघु के तथा तीन आदि लघुओं के प्रस्तार कितने होते हैं। उसे बनाने की रीति यह है—

द्रुतमेरु के सामन कोठों को बनाओ। उनमें अंकों को यों भर दो—

									१
							१	५	१५
					१	४	१०	२०	३९
			१	३	६	१०	१८	३३	६१
	१	२	३	४	७	१२	२१	३४	५४
१	१	१	२	३	५	७	१०	१४	२१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०

प्रत्येक पंक्ति के पहले कोठे में "१" अंक को लिखो। नीचेवाली पंक्ति के कोठों को, अंत्य, चतुर्थ और षष्ठ के अधिकांश के अंकों से भरो। चतुर्थ एवं षष्ठ अप्राप्य हैं, तो उनके स्थान पर तृतीय और पंचम से काम निकालो। अन्य पंक्ति के कोठों में, इन तीनों से, उन-उन पंक्तियों की नीचेवाली पंक्ति के उपांत्य को भी जोड़कर लिखना है। इसमें भी चतुर्थ व षष्ठ के बदले तृतीय और पंचम को ले लो। तब नीचेवाली पंक्ति के तीसरे कोठे में एक मात्र अंत्यांक "१" लिखो।

चौथे कोठे में अंत्य १ + तृतीय १ = २
पाँचवें ,, ,, ,, २ + चतुर्थ १ = ३
छठे ,, ,, ,, ३ + ,, १ + पंचम १ = ५
सातवें ,, ,, ,, ५ + ,, १ + षष्ठ १ = ७
आठवें ,, ,, ,, ७ + ,, २ + ,, १ = १०
नौवें ,, ,, ,, १० + ,, ३ + ,, १ = १४
दसवें ,, ,, ,, १४ + ,, ५ + ,, २ = २१

नीचे से दूसरी पंक्ति के कोठों में—

दूसरे कोठे में अंत्य १ + नीचेवाली पंक्ति का उपांत्य १ = २
तीसरे ,, ,, ,, २ + ,, ,, ,, ,, १ = ३
चौथे ,, ,, ,, ३ + ,, ,, ,, ,, १ = ४
पाँचवें ,, ,, ,, ४ + चतुर्थ १ + नी पं० ,, २ = ७
छठवें ,, ,, ,, ७ + ,, २ + ,, ,, ,, ३ = १२
सातवें ,, ,, ,, १२ + ,, ३ + ,, ,, ,, ५ + षष्ठ १ = २१
आठवे ,, ,, ,, २१ + ,, ४ + ,, ,, ,, ७ + ,, २ = ३४
नौवें ,, ,, ,, ३४ + ,, ७ + ,, ,, ,, १० + ,, ३ = ५४

इसी तरह बाकी पंक्तियों के कोठों को भी भर लीजिए।

इस लघुमेरु से पाये जानेवाले प्रस्तार-भेद

१० द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में, बिना लघु के प्रस्तार-भेद, नीचेवाली पंक्ति के दाहिने छोर के "२१" से मालूम होते हैं। एक लघुवाले ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक ५४। दो लघुवाले ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक ६१। तीन लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेद उसके ऊपरवाले कोठे के अनुसार ३९ हैं। चार लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेद उसके ऊपरवाले अंक के अनुसार १५ हैं। पाँच लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक "१"।

ऐसे ही ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ आदि द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों के बीच, बिना लघु के, एक लघु के, द्विलघु के तथा दूसरी संख्या के लघुओं के भेदों को समझ सकते हैं। एक द्रुतवाले ताल के प्रस्तार में लघु का रहना असम्भव है। बिना लघु के एक प्रस्तार भेद का द्योतक है "१" अंक; यह ध्यान देने योग्य है।

गुरु-मेरु

गुरुमेरु की नीचेवाली पंक्ति से उसकी ऊपरवाली पंक्ति ऐसी छोटी की जाय कि जिससे उस पंक्ति की बाईं ओर तीन कोठे कम हो जायँ। इसी तरह, कम कोठेवाली इस पंक्ति की ऊपरवाली पंक्ति भी, इसकी अपेक्षा बाईं ओर चार कोठों की कमी से रची जाय।

							१	३	९
			१	२	५	१०	२०	३८	७२
१	२	३	५	८	१४	२३	३९	६५	१०९
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०

इन कोठों में अंक भरने का प्रकार—

हरएक पंक्ति की बाईं ओर के कोठों में "१" लिखिए। नीचेवाली पंक्ति के दूसरे कोठे में "२" लिखिए। तीसरे आदि कोठों में अंत्य, उपांत्य और षष्ठ इनके अधिकांश लिखिए। षष्ठ की अनुपस्थिति में पंचम को लीजिए। बाकी पंक्तियों के कोठों में, अंत्य, उपांत्य और षष्ठ के अलावा नीचेवाली पंक्ति के चतुर्थांक को भी मिला लीजिए। इनमें षष्ठ की अनुपस्थिति के कारण पंचम को नहीं लेना है।

तब नीचेवाली पंक्ति के

तींसरे	कोठे	में	अंत्य	२ +	उपांत्य	१	= ३				
चौथे	,,	,,	,,	३ +	,,	२	= ५				
पाँचवें	,,	,,	,,	५ +	,,	३	= ८				
छठवें	,,	,,	,,	८ +	,,	५ +	पंचम	१	=	१४
सातवें	,,	,,	,,	१४ +	,,	८ +	षष्ठ	१	=	२३
आठवें	,,	,,	,,	२३ +	,,	१४ +	,,	२	=	३९
नौवें	,,	,,	,,	३९ +	,,	२३ +	,,	३	=	६५
दसवें	,,	,,	,,	६५ +	,,	३९ +	,,	५	=	१०९

नीचे से दूसरी पंक्ति के—

दूसरे	कोठे	में	अंत्य	१ + नीचेवाली पंक्ति का चतुर्थ	१ =	२
तीसरे	,,	,,	,,	२ + उपांत्य १ + नी० पं० ,, ,,	२ =	५
चौथे	,,	,,	,,	५ + ,, २ + ,, ,, ,, ,,	३ =	१०
पाँचवें	,,	,,	,,	१० + ,, ५ + ,, ,, , ,,	५ =	२०
छठवें	,,	,,	,,	२० + ,, १० + ,, ,, ,, ,,	८ =	३८
सातवें	,,	,,	,,	३८ + ,, २० + ,, ,, ,, ,,	१४ =	७२

ऊपरवाली पंक्ति के—

दूसरे कोठे में अंत्य १ + नीचवाली पंक्ति का चतुर्थ २ = ३

तीसरे ,, ,, ,, ३ + ,, ,, ,, ,, ५ + उपांत्य १ = ९

इस तालिका में, प्रत्येक द्रुतवाले तालों के प्रस्तारों के बिना, गुरु के, एक गुरु के, दो गुरुओं के तथा दूसरी संख्या के गुरुओं के प्रस्तार-भेद, क्रम से, तलेवाली पंक्ति के अंक, उसके ऊपरवाले अंक, उसी तरह उसके ऊपरवाले अंक आदि से खोज ले सकते हैं।

प्लुत मेरु

इसमें नीचवाली पंक्ति की ऊपरवाली पंक्ति ५ कोठों से, कम कोठेवाली करनी है। उसके ऊपरवाले कोठों की संख्या भी उसकी अपेक्षा छः कोठों की कमी की होनी चाहिए।

											१	३
					१	२	५	१०	२२	४४	८९	७४
१	२	३	६	१०	१८	३१	५५	९६	१६९	२९६	५२०	८१२
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३

इन कोठों में अंक भरने का प्रकार—

प्रत्येक पंक्ति की बाईं ओर के कोठों में "१" लिखिए। नीचेवाली पंक्ति के दूसरे कोठे में "२" लिखिए। पीछे, शेष कोठे अंत्य, उपांत्य और चतुर्थ को जोड़कर लिखते जाइए। चतुर्थ न पाकर तृतीय को जोड़ देना। बाकी पंक्तियों में, अंत्य, उपांत्य और चतुर्थ के अलावा नीचेवाली पंक्ति के षष्ठ को भी मिलाकर लिखना है। इनमें चाहे चतुर्थ न मिले, परंतु तृतीय को नहीं मिलाना है।

अब नीचे वाली पंक्ति के—

तीसरे	कोठे	में	अंत्य	२	+	उपांत्य	१	=	३			
चौथे	,,	,,	,,	३	+	,,	२	+	तृतीय	१	=	६
पाँचवे	,,	,,	,,	६	+	,,	३	+	चतुर्थ	१	=	१०
छठवें	,,	,,	,,	१०	+	,,	६	+	,,	२	=	१८
सातवें	,,	,,	,,	१८	+	,,	१०	+	,,	३	=	३१
आठवें	,,	,,	,,	३१	+	,,	१८	+	,,	६	=	५५
नौवें	,,	,,	,,	५५	+	,,	३१	+	,,	१०	=	९६
दसवें	,,	,,	,,	९६	+	,,	५५	+	,,	१८	=	१६९
ग्यारहवें	,,	,,	,,	१६९	+	,,	९६	+	,,	३१	=	२९६
बारहवें	,,	,,	,,	२९६	+	,,	१६९	+	,,	५५	=	५२०
तेरहवें	,,	,,	,,	५२०	+	,,	२९६	+	,,	९६	=	८१२

उसकी ऊपरवाली पंक्ति के—

दूसरे कोठे में अंत्य १ + नीचेवाली पंक्ति का षष्ठ १ = २
तीसरे कोठे में अंत्य २ + उपांत्य १ + नी० पंक्ति का षष्ठ २ = ५
चौथे कोठे में अंत्य ५ + उपांत्य २ + नी० पंक्ति का षष्ठ ३ = १०
पांचवें कोठे में अंत्य १० + उपांत्य ५ + नी० पंक्ति का षष्ठ ६ + चतुर्थ १ = २२
छठवें कोठे में अंत्य २२ + उपांत्य १० + नी० पंक्ति का चतुर्थ २ + चतुर्थ १० = ४४
सातवें कोठे में अंत्य ४४ + उपांन्य २२ + नी० पंक्ति का चतुर्थ ५ + चतुर्थ १८ = ८१
आठवें कोठे में अंत्य ८९ + उपांत्य ४४ + नी० पंक्ति का चतुर्थ १० + चतुर्थ ३१ = १७४

सबसे ऊपरवाली पंक्ति के—

२ रे कोठे में अंत्य १ + नीचेवाली पंक्ति का षष्ठ २ = ३

संयोग मेरु

अभीष्ट मात्रा-कालवाले ताल के प्रस्तारों में तरह-तरह के भेद अर्थात्—सर्व-द्रुत, सर्वलघु, सर्वगुरु, सर्वप्लुत, द्रुतलघुवाले, द्रुतगुरुवाले द्रुतप्लुतवाले, लघुगुरुवाले, लघुप्लुतवाले, गुरुप्लुतवाले, द्रुतलघुगुरुवाले, द्रुतलघुप्लुतवाले, द्रुतगुरुप्लुतवाले, लघु-गुरुप्लुतवाले इत्यादि के भेद होने की संभावना है। इन भेदों के बारे में कोई यदि पूछे कि अमुक प्रकार का प्रस्तार कौन भेद है, तो इस संयोगमेरु के सहारे उत्तर दे सकते हैं कि यह दूसरा, तीसरा इत्यादि। इसकी रचना ऊपर से नीचे की कोठेवाली पंक्ति-श्रेणियों से होती है। शुरू में, हमारे अभीष्ट ताल की कालमात्रा के द्रुतों की संख्या तक, ऊपर से नीचे की ओर १, २, ३ इत्यादि लिखते जाइए। बगलवाली, ऊपर से नीचे की, चारों पंक्तियों में भी उसके समानसंख्याक कोठे बना लीजिए। परंतु,

पाँचवीं पंक्ति के ऊपरी भाग में एक कोठा कम करके बाकी कोठो की रचना की जाय। उसकी पार्श्व-पंक्ति भी और दो कोठों से कम कोठेवाली हो। उसकी बगलवाली दोनों पंक्तियों में भी और एक कोठे की कमी करना है। इन दोनों की बगलवाली ३ पंक्तियों की रचना ऐसी हो कि जिससे इन तीनों के कोठे और एक से कम हों। इन तीनों की पार्श्ववर्ती पंक्ति और दो कम कोठेवाली हो। उसकी पार्श्वपंक्ति में और एक कोठा कम करो। उसकी बगलवाली पंक्ति में और एक कोठा कम हो। तब, उसका रूप यों होगा—

०	०	।	ऽ	ˋऽ											
१	१	०	०	०											
२	१	१	०	०	० ।										
३	१	०	०	०	२										
४	१	१	१	०	३	० ऽ									
५	१	०	०	०	७	२	०ˋऽ	।ऽ							
६	१	१	०	१	११	३	०	२	।ˋऽ	ऽˋऽ	० । ऽ				
७	१	०	०	०	२०	४	२	०	०	०	६				
८	१	१	१	०	३२	५	३	३	२	०	१२	० ।ˋऽ			
९	१	०	०	०	५४	९	४	०	०	०	३२	६			
१०	१	१	०	०	८७	१३	५	७	३	२	६०	१२	० ऽˋऽ		
११	१	०	०	०	१४३	१८	६	०	०	०	१३४	३२	६	। ऽˋऽ	
१२	१	१	१	१	२३१	२४	७	११	४	०	२५१	६०	१२	६	० । ऽˋऽ
१३	१	०	०	०	३७६	३५	११	०	०	०	५००	१२२	२०	०	२४

संयोग मेरु

ऊपर से नीचे की ओर पहली चार पंक्तियों की पहली पंक्ति के कोठों में हमारे अभीष्ट ताल के सर्वद्रुत भेदों की संख्या, दूसरी पंक्ति के कोठों में, सर्वलघु भेदों की संख्या,तीसरी पंक्ति के कोठों में सर्वगुरु भेदों की संख्या और चौथी पंक्ति के कोठों में सर्वप्लुत भेदों की संख्या पायी जाती है। प्रत्येक पंक्ति में किन-किन अंगों के भेद दिखाये जाते हैं, इसकी याद दिलाने के निमित्त, उनको पंक्तियों के ऊपर लिखना चाहिए। पाँचवीं पंक्ति द्रुतलघु-मिश्रित भेदों की संख्या की द्योतक है। छठी पंक्ति द्रुतगुरु-मिश्रित भेदों की संख्या की द्योतक है। सातवीं पंक्ति से द्रुत-प्लुत मिश्रित भेदों की जानकारी होती है। आठवीं पंक्ति से लघु-गुरु मिश्रित भेदों का बोध होता है। नौवीं पंक्ति लघु-प्लुत मिश्रित भेदों की बोधक है। दसवीं पंक्ति गुरुप्लुत-मिश्रित भेदों का बोध कराती है। ग्यारहवीं पंक्ति द्रुतलघुगुरु मिश्रित भेदों की और तेरहवीं पंक्ति द्रुतगुरुप्लुत मिश्रित भेदों की द्योतक हैं।

इन पंक्तियों के कोठों में अंक भरने की विधि—

पहली पंक्ति के सर्वद्रुत भेद एक ही होने से पहले कोठे में "१" लिखो। दूसरी पंक्ति के आद्य कोठे में शून्य और दूसरे कोठे में "१" लिखो। तीसरी पंक्ति के आद्य तीन कोठों में शून्य और चौथे कोठे में "१" लिखो। चौथी पंक्ति के पहले पाँच कोठों में शून्य और छठवें कोठे में "१" लिखो। पहली चार पंक्तियों के दूसरे कोठों में क्रम से, द्रुत की पंक्ति हो तो अंत्यांक, लघु की हो तो उपांत्यांक, गुरु की हो तो चतुर्थांक तथा प्लुत की हो तो षष्ठांक लिखो।

दो-दो अंगों से मिश्रित इकाइयों की पंक्तियों में अंक भरने की विधि—

प्रत्येक इकाई के द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत के लिए उसी पंक्ति के अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठ को एवं पहली चार पंक्तियों के अंत्य, उपांत्य चतुर्थ और षष्ठ के अंकों को क्रम से मिला लेना है। वैसे, आद्य ४ पंक्तियों से अंक लेते समय, इकाई के अंगों के लिए जो-जो अंक-अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ या षष्ठ का अंक—नियत है उसको बदल कर लेना चाहिए। उदाहरणार्थ द्रुतलघु-इकाई की पंक्ति में अंक इस प्रकार भरना है—

पहले, उसी पंक्ति के अंत्य को द्रुत के लिए एवं लघु के लिए उपांत्य को लेना चाहिए। उनके साथ द्रुत और लघु की पंक्तियों से भी कई-एक अंक जोड़ लेना है। द्रुत व लघु के लिए जो अंत्य तथा उपांत्य अंक नियत थे, उनके बदले द्रुतपंक्ति के उपांत्य और लघुपंक्ति के अंत्य को लेना है।

द्रुतगुरु की इकाई की पंक्ति में अंक भरने की विधि—

पहले, द्रुत के लिए उसी पंक्ति के अंत्य और गुरु के लिए चतुर्थ को मिला लेना है।

उनके साथ द्रुत और गुरु की पंक्तियों से भी जोड़ लेने के कई-एक अंक हैं। द्रुत एवं गुरु के लिए नियत अंत्य और चतुर्थ के बदले द्रुतपंक्ति के चतुर्थ तथा गुरुपंक्ति के अंत्य को लेना चाहिए। इसी तरह, दूसरी इकाइयों के नियम भी यों ही जान लेना है। तब, आगे लिखे अनुसार अंक का पूरण होगा।

द्रुतलघु-ईकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			अंत्य	+	उपांत्य	+	द्रुत-पंक्ति का उपांत्य	+	लघु पंक्ति का अंत्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
तीसरे	,,	,,	३	+	२	+	१	+	१	=	७
चौथे	,,	,,	७	+	३	+	१	+	०	=	११
पाँचवें	,,	,,	११	+	७	+	१	+	१	=	२०
छठे	,,	,,	२०	+	११	+	१	+	०	=	३२
सातवें	,,	,,	३२	+	२०	+	१	+	१	=	५४
आठवें	,,	,,	५४	+	३२	+	१	+	०	=	८७

इसी तरह इस पंक्ति के अन्य कोठों में भी अंक भरना है।

द्रुतगुरु-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			अंत्य	+	चतुर्थ	+	द्रुत-पंक्ति का चतुर्थ	+	गुरु-पंक्ति का अंत्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
तीसरे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
चौथे	,,	,,	४	+	,,	+	१	+	०	=	५

पाँचवें	,,	,,	५	+	२	+	१	+	१	=	९
छठे	,,	,,	९	+	३	+	१	+	०	=	१३
सातवें	,,	,,	१३	+	४	+	१	+	०	=	१८
आठवें	,,	,,	१८	+	५	+	१	+	०	=	२४
नौवें	,,	,,	२४	+	९	+	१	+	१	=	३५

द्रुत-प्लुत-इकाई

			उसी पंक्ति के अंत्य	+	उसी पंक्ति के षष्ठ	+	पहली चार पंक्ति के द्रुत-पंक्ति का षष्ठ	+	पहली चार पंक्ति के प्लुत-पंक्ति का अंत्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	नहीं	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	०	+	,,	+	१	+	१	=	२
तीसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
चौथे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
पाँचवें	,,	,,	४	+	,,	+	१	+	०	=	५
छठवें	,,	,,	५	+	,,	+	१	+	०	=	६
सातवें	,,	,,	६	+	,,	+	१	+	०	=	७
आठवें	,,	,,	७	+	२	+	१	+	१	=	११

लघुगुरु-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			उपांत्य	+	चतुर्थ	+	लघु-पंक्ति का चतुर्थ	+	गुरु-पंक्ति का उपांत्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
तीसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
चौथे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
पाँचवें	,,	,,	३	+	२	+	१	+	१	=	७
छठवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०
सातवें	,,	,,	७	+	३	+	१	+	०	=	११
आठवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

लघु-प्लुत-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			उपांत्य	+	षष्ठ	+	लघु-पंक्ति का षष्ठ	+	प्लुत-पंक्ति का उपांत्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	०	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	१	+	१	=	२
तीसरे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
चौथे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३

पाँचवें	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
छठे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
सातवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

गुरु-प्लुत-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			चतुर्थ	+	**षष्ठ**	+	**गुरु-पंक्ति का षष्ठ**		**प्लुत-पंक्ति का चतुर्थ**		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नही	+	०	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
तीसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
चौथे	,,	,,	,,	+	,,	+	१	+	१	=	२
पाँचवे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
छठे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
सातवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

तीन अंगों की इकाई की पंक्तियों में अंक भराने के लिए, पहले, उन अंगों की नियत पंक्ति के अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठांकों को मिला लेना है। पीछे, इकाई के अंगों को जोड़े-जोड़े के रूप में ऐसे लेकर मिलाना है जैसे दो अंगों की इकाई के, पहली चार पक्तियों के अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठांक बदलकर लिये गये हैं। अर्थात्—बड़े अंगों की इकाई की अंत्य और उपांत्य पंक्तियों में आद्यांक को तथा छोटे अंगों की इकाई में अंत्यांक को जोड़ लेना है।

द्रुतलघुगुरु-इकाई

			उसी पंक्ति के						दो अंगों की इकाई के						
			अंत्य	+	उपांत्य	+	चतुर्थ	+	लघु-गुरु पंक्ति का अंत्य	+	द्रुतगुरु-पंक्ति का उपांत्य	+	द्रुत-लघु पंक्ति का चतुर्थ		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	नहीं	+	२	+	२	+	२	=	६
दूसरे	,,	,,	६	+	,,	+	,,	+	०	+	३	+	३	=	१२
तीसरे	,,	,,	१२	+	६	+	,,	+	३	+	४	+	७	=	३२
चौथे	,,	,,	३२	+	१२	+	,,	+	०	+	५	+	११	=	६०
पाँचवें	,,	,,	६०	+	३२	+	६	+	७	+	९	+	२०	=	१३४
छठवें	,,	,,	१३४	+	६०	+	१२	+	०	+	१३	+	३२	=	२५१
सातवें	,,	,,	२५१	+	१३४	+	३२	+	११	+	१८	+	५४	=	५००

द्रुतलघुप्लुत-इकाई

			उसी पंक्ति के						दो अंगों की इकाई के						
			अंत्य	+	उपांत्य	+	षष्ठ	+	लघु-प्लुत पंक्ति का अंत्य	+	द्रुत-प्लुतपंक्ति का उपांत्य	+	द्रुत-लघुपंक्ति का षष्ठ		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	नहीं	+	२	+	२	+	२	=	६
दूसरे	,,	,,	६	+	,,	+	,,	+	०	+	३	+	३	=	१२
तीसरे	,,	,,	१२	+	६	+	नहीं	+	३	+	४	+	७	=	३२
चौथे	,,	,,	३२	+	१२	+	,,	+	०	+	५	+	११	=	६०
पाँचवें	,,	,,	६०	+	३२	+	,,	+	४	+	६	+	२०	=	१२२

द्रुतगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पंक्ति के				दो अंगों की इकाई के								
	अंत्य	+	चतुर्थ	+	षष्ठ	+	गुरुप्लुत-पंक्ति का अंत्य	+	द्रुतप्लुत-पंक्ति का चतुर्थ	+	द्रुतगुरु-पंक्ति का षष्ठ		
पहले	कोठे में नहीं	+	नहीं	+	नहीं	+	२	+	२	+	२	=	६
दूसरे	,, ,, ६	+	,,	+	,,	+	०	+	३	+	२	=	१२
तीसरे	,, ,, १२	+	,,	+	,,	+	०	+	४	+	४	=	२०

लघुगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पंक्ति के				दो अंगों की इकाई के								
	उपांत्य	+	चतुर्थ	+	षष्ठ	+	गुरुप्लुत-पंक्ति का उपांत्य	+	लघुप्लुत-पंक्ति का	+	लघुगुरु-पंक्ति का षष्ठ		
पहले	कोठे में नहीं	+	नहीं	+	नहीं	+	२	+	२	+	२	=	६
दूसरे	,, ,, ,,	+	,,	+	,,	+	०	+	०	+	०	=	०

इसी रीति से दूसरे कोठों का पूरण कर सकते हैं। चार अंगों की इकाइयों में, अंक भरने के लिए, पहले, उसी पंक्ति के उन अंगों के नियत अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठांकों को मिला लेना है। बाद में, उन-उन इकाइयों के अंगों को तीन-तीन करके मिलाना। उन तीन अंगों की इकाइयों की नियत-पंक्ति की बड़े अंगवाली इकाई की अंत्य व उपांत्य श्रेणियों के आद्यांक को एवं छोटे अंगवाली इकाई में अंत्यांक को जोड़ लो।

द्रुतलघुगुरुप्लुत-इकाई

उसी पंक्ति के					३ अंगों की इकाई के							
अंत्य +	उपांत्य +	चतुर्थ +	षष्ठ	+	लघुगुरुप्लुतपंक्ति का अंत्य	+	द्रुतगुरुप्लुतपंक्ति का उपांत्य	+	द्रुतलघुप्लुतपंक्ति का चतुर्थ	+	द्रुतलघुगुरुपंक्ति का षष्ठ	
पहले कोठे में		नहीं		+	६	+	६	+	६	+	६	= २४

खंडप्रस्तार

यह तालिका ही द्रुतमेरु के रूप में नीचे बनायी गयी है जो अभीष्ट मात्राकालवाले ताल के, प्लुत, गुरु, लघु और द्रुत जैसे अंगों सहित, प्रस्तारों को क्रमशः लिखने पर, उनमें से बिना द्रुत के द्विद्रुत के तथा चतुर्द्रुत आदि के प्रस्तार भेदों की एवं एकद्रुत के त्रिद्रुत के और पंचद्रुत आदि के प्रस्तार भेदों की संख्या को जान लेने में काम आनेवाली है। इसी प्रयोजन के लिए, लघुमेरु, गुरुमेरु प्लुतमेरु आदि की रचना हुई है।

अब प्रस्तार रचते समय, बिना द्रुत के, एकद्रुत, द्विद्रुत, त्रिद्रुत आदि के, एवं बिना लघु के, एकलघु आदि के समस्त प्रस्तार क्रमशः कैसे लिखे जायँ और ऐसे ही प्रकार गुरु और प्लुतों के प्रस्तारों की रचनामात्र कैसी की जाय, यह बात अवशिष्ट रह गयी है। इसे रचकर दिखाने की रीति का नाम है खंडप्रस्तार।

खंड प्रस्तार बनाने की विधि

अभीष्ट मात्राकालवाले द्रुत, लघु, गुरु या प्लुतों से युक्त केवल इच्छित प्रस्तारों को क्रमशः लिखिए। उनके बीच अन्य जाति के प्रस्तार आ जायँ तो, पहले लिखने योग्य नीचे के अंग को छोड़कर, उसके न्यूनांग को एवं उसकी दाहिनी ओर के अंग की नीची श्रेणी को लिखने की विधि को प्रयोग में लाना चाहिए। ऐसे करके, दाहिनी ओर के ऊपरवाले अंगों को लिखने के बाद, कमी को पूरा करने के लिए, बाई ओर

लिखे जानेवाले अंगों को, इच्छित संख्यावाले द्रुत आदि जैसे लिखने पर स्थान पायें, वैसे लिखना चाहिए।

उदाहरणार्थ एक प्लुतमात्रावाले ताल के प्रस्तार को लीजिए। पहले केवल बिना द्रुत के प्रस्तारों को लिखें। तब प्रस्तारों का पहला भेद "`S"; उसके नीचे का दूसरा प्रस्तार "। S" हम, क्रम से, प्रस्तार करते जायँ तो लघु के नीचे "०" लिखना पड़ेगा। पर, हमें तो वे ही प्रस्तार चाहिए, जिनके रूप में द्रुत ही न आये। इसलिए लघु के नीचे द्रुत न लिखकर उसकी दाहिनी ओर के गुरु के नीचे लघु लिखना चाहिए। अब की कमी को पूरा करने के लिए केवल एक गुरु लिखें, तो प्रस्तार का रूप " S।" होगा। आगे का प्रस्तार, गुरु के नीचे लघु, उसकी दाहिनी ओर ऊँचेवाले लघु का प्रतिरूप एक लघु और कमी के पूरणार्थ बाई ओर एक और लघु लिखकर बना सकते हैं। अर्थात् प्रस्तार का रूप "।।।" होगा। इससे प्रस्तार की रचना समाप्त कर लेनी पड़ती है, क्योंकि आगे के प्रस्तार की रचना में द्रुतहीन होने का अवकाश नहीं है। अतः हमने बिना द्रुत के चार प्रस्तार पाये हैं। द्रुतमेरु की तालिका में, जो बात लिखी हुई है कि ६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना द्रुत के चार ही प्रस्तार होंगे, वह सच्ची निकली।

इसी तरह, द्विद्रुत-प्रस्तार की रचना करनी पड़ती है, तो प्रत्येक प्रस्तार में दो द्रुत होने चाहिए। तब, पहला प्रस्तार "००S" होगा। पहले प्रस्तार के द्रुत के नीचे लघु लिखिए। न्यूनता-पूर्ति-निमित्त गुरु का प्रयोग न करके, एक लघु और उसके पार्श्व में दो द्रुत लिखिए। लीजिए, अब हुआ दूसरा प्रस्तार "०० ।।" तीसरे प्रस्तार में, लघु के नीचे द्रुत लिखो। दाहिनी ओर के लघु को ज्यों-का-त्यों उतारकर लिखो। कमी के पूरणार्थ एक लघु और एक द्रुत लिख सकोगे। तीसरा प्रस्तार हुआ है ०।०।, चौथा प्रस्तार ।००।, पाँचवाँ प्रस्तार ०S०, छठा प्रस्तार ०।।०, सातवाँ प्रस्तार ।०।०, आठवाँ प्रस्तार S००, नौवाँ प्रस्तार ।।००,

आगे, प्रस्तार कर जायँ तो, ज्यादा दो द्रुतों के प्रस्तार ही अवश्य आ पड़ेंगे। इससे यह मालूम पड़ता है कि हमें अभीष्ट इस खंड-प्रस्तार में नौ ही द्विद्रुत-प्रस्तार मिलेंगे। द्रुतमेरु की तालिका में भी इसे भली-भाँति समझ सकते हैं। इसी तरह, दूसरे प्रस्तार भी लिखने योग्य हैं।

द्रुतमेरु का नष्ट—१

द्रुतमेरु की तालिका द्वारा, बिना द्रुत के तथा एक, दो, तीन आदि द्रुतों के प्रस्तार-भेदों की संख्या हमें मिलती है। उन भेदों के बीच, किसी भेद के बारे में यदि कोई पूछे,

कि अमुक भेद कैसा है, तब उत्तर देना पड़ता है। इसी प्रश्नोत्तर का नाम है द्रुतमेरु का नष्ट। इसे खोज लेने की विधि यों है—

नीचे से पहली पंक्ति में

(अ) समसंख्यक द्रुतवाले कोठों के निर्दिष्ट-भेदों का नष्ट प्रश्न—

अभीष्ट भेद की पंक्ति-संख्या को निर्दिष्ट कोठे के अंक से, पहले घटाओ। घटने पर बाकी जो रहा उससे, उस कोठे के ऊपरवाले तीसरे कोठे के अंक को घटाओ। घटे तो अभीष्ट भेद का एक गुरु मिला, अन्यथा एक लघु मिलेगा शेषांक से, पांचवें कोठे के अंक को घटाओ। घटा, तो पहले मिला हुआ गुरु प्लुत हो जाता है। पहले लघु मिला हो तो उससे एक गुरु ही मिलेगा। घटित न होने पर, पहले लघु मिला हो तो उससे एक और लघु मिलेगा। गुरु की प्राप्ति पहले हुई तो, अब घटने की क्रिया न होने से कुछ की भी प्राप्ति नहीं। इतने में ही, ताल के मात्रा-काल के आवश्यक अंग मिल गये तो यहीं रुकना चाहिए। यदि, आगे, घटा देने के लिए शेषांक कुछ भी न पाने पर, मात्रा-काल के आवश्यक भी अंग न प्राप्त हुए, तो उस कमी को लघुओं से पूरा करना चाहिए। यदि अंग पूरे न हों और अंक भी शेष रहें तो, पाँचवें कोठे को अंत्य बनाकर उसके तीसरे एवं पाँचवें के अंकों को, पहले कहे अनुसार घटाओ। जहाँ तक शेष पाओ आवश्यकतानुसार यों ही घटाओ।

उदाहरणार्थ, आठ द्रुतवाले ताल के, बिना द्रुत के प्रस्तारों को लीजिए। उनकी संख्या "७", द्रुत-मेरु की नीचेवाली पंक्ति से स्पष्ट प्रतीत होती है। उनमें से पहले, प्रस्तार के रूप के बारे में प्रश्न किया जाता है, तो शुरू में, ७ में से १ को घटाओ। बाकी रहा ६। उस अंक ६ से, तृतीय कोठे के "४" को घटा देने पर शेष हुआ २। घटने के कारण मिला एक गुरु। अब के शेषांक "२" से पाँचवें अंक "२" को घटाने पर बच जाता है शून्य। पंचम के भी घटने के कारण पहले का मिला हुआ गुरु प्लुत हो जाता है। कुछ भी शेष बचा नहीं; पर तालमात्रा के अंगों की कमी तो रह गयी है। इसलिए इसके पूरणार्थ बाईं ओर एक लघु को मिला लेना। ऐसा करने पर पहला प्रस्तार । ऽ हुआ।

दूसरे प्रस्तार की जानकारी के लिए "७" से "२" को घटाकर शेष अंक "५" से तृतीयांक "४" को घटा देने पर बाकी रहा "१" अंक। घटित होने से मिला एक गुरु। अब के शेषांक "१" से पंचमांक "२" को घटा देने की गुंजाइश नहीं; इसलिए किसी की भी प्राप्ति न होगी। इस अवस्था में, तालांग भी पूर्ण निकले नहीं, अंक भी शेष रह गये हैं। इसलिए, पंचम को अंत्य बनाकर उसके तृतीयांक "१" को घटाने

पर शून्य शेष हुआ है। घटाने से एक और गुरु मिला; तालांग भी पूर्ण हुआ। इससे दूसरा प्रस्तार ऽऽ हुआ है। ऐसे ही दूसरे भेदों को समझ लेना चाहिए।

(आ) विषमसंख्याक द्रुतवाले कोठों के निर्दिष्ट भेदों का नष्ट-प्रश्न।

इसको जानने के लिए, सर्वप्रस्तार के नष्ट-प्रकरण में जो रीति कह आये हैं उससे काम लेना चाहिए। उसके अनुसार, पहले अंत्यांक से नष्ट को घटाने पर जो अंक बच जाता है उससे अंत्यांक के पूर्वांकों को क्रमशः घटाते जाइए। घटा तो लघु मिलेगा; नहीं तो द्रुत मिलेगा; साथ-साथ दो अंक घटे, तो गुरु मिलेगा; गुरु के मिलने बाद उसका तीसरा अंक भी घटा, तो गुरु प्लुत हो जाता है। लघु की प्राप्ति के बाद (पहला) एक अंक न घटकर द्रुत प्राप्त हुआ हो तो भी उसे मत लेना। प्लुत एवं गुरु इन दोनों की प्राप्ति के बाद, दो अंक न घटे हों तब भी उनसे प्राप्त होनेवाले द्रुतों को मत लेना। सर्वप्रस्तार की रीति में, नष्ट की खोज करते समय एक द्रुत मिल गया तो, उसके आगे इस विधि से काम करना है कि जो द्रुतमेरु के समसख्याक पंक्ति के कोठों के नष्टान्वेषण के योग्य हुई हो। उदाहरणतया, ७ द्रुतमात्रावाले ताल के एक-द्रुत प्रस्तारों को लीजिए। द्रुतमेरु की तालिका से यह जाना जाता है कि वे प्रस्तार १२ हैं। इनके पहले प्रस्तार-भेद के बारे में प्रश्न किया है, तो उत्तरनिमित्त "१२" से नष्ट "१" को घटाना। तब शेष ११ हुआ। उस शेषांक "११" से उसके पूर्वांक "४" को घटाने पर "७" शेष हुआ। घटने के कारण मिलता है एक लघु। उस अंक "७" से पूर्वांक "५" को घटाओ। तब "२" बच जाता है; और एक लघु की प्राप्ति के कारण लघु गुरु हो जाता है। उस शेषांक "२" से तीसरे अंक "२" को घटा देने पर शेष रहा शून्य। और लघु के मिलने से गुरु प्लुत के रूप में बदल जाता है। कमी के पूरणार्थ सिर्फ एक द्रुत को जोड़ देना। अब यह रूप ० ऽ पहले भेद का है।

दूसरा उदाहरण—पूर्वोक्त (विषम) कोठों के भेदों के बीच कोई पूछे कि ११ वाँ भेद कैसा है, तो उसे जान लेने के लिए "१२" से नष्टांक "११" को घटाना है। शेष हुआ "१"। इससे पूर्वांक "४" को घटाना असम्भव है। इसलिए एक द्रुत मिला। द्रुत-प्राप्ति के कारण, भेद के दूसरे अंगों की जानकारी के लिए समसंख्याक पंक्तियों की पद्धति का प्रयोग करना है। "४" को अंत्य बनाकर उसके तृतीयांक "२" को "१" से घटाना है, परन्तु यह भी असंभव है। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। इसके बाद, पंचमांक "१" को "१" से घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने से गुरु मिला। अन्ततः ११ वाँ भेद ऽ।० हुआ। इसी तरह, अन्य विषमसंख्याक कोठों के नष्ट की जानकारी भी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

नीचे वाली पंक्ति से अन्य पंक्तियों में

इन कोठों के नष्ट को खोज लेने के लिए, नीचे से पहली पंक्ति के समसंख्याक द्रुतकाल के कोठों के बारे में जिस रीति का प्रयोग किया गया है, उसके अनुसार तृतीय पंचमांकों को घटाना है। साथ ही उपांत्य के नीचेवाले अंक को भी घटा देना है। घटे, तो लघु मिलेगा। नहीं तो द्रुत मिलेगा। प्रस्तार के अंग पूर्ण न हों और अंक शेष भी रह जाते हों, तो पंचम को अंत्य बनाकर फिर, पहली रीति के अनुसार, घटाकर जाना है। अंत्य हो जानेवाला पंचम, विषमसंख्याक द्रुतपंक्ति में रहे तो, नीचेवाली पंक्ति के विषमसंख्याक प्रभेद और समसंख्याक द्रुतपंक्ति में रहता तो उसी पंक्ति के (नीचेवाली) समसंख्याक प्रभेद के अनुसार घटाने की क्रिया करना है।

उदाहरण—द्रुतमेरु-तालिका से यह समझा जाता है कि ६ द्रुतमात्राकालवाले ताल के प्रस्तारों में द्विद्रुत के भेद ९ हैं। उनमें से यदि कोई पूछे कि पहला भेद कौन है तो उसे समझा देने के लिए पहले, ९ से नष्टांक "१" को घटाओ। शेष ८ हुआ उससे उसके उपांत्य "५" को घटाने पर बाकी हुआ "३"। घटाने से एक लघु मिला। "३" से तृतीयांक "३" को घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने के कारण लघु गुरु हुआ। घटाने के लिए बाकी अंक न रहने के कारण तालांग की कमी के पूरणार्थ "२" द्रुतों को जोड़ लो। अब पहला भेद ००ऽ सिद्ध हुआ है।

द्रुतमेरु का उद्दिष्ट—२

नष्ट प्रश्न में, जिन अंकों के घटित होने के कारण हमें तालांग मिले थे उन्हीं सारे अंकों को एक-साथ जोड़कर प्रस्तार संख्या से घटाने पर भेद (अभीष्ट) की क्रम-संख्या प्राप्त होती है।

नीचे से पहली पंक्ति में

(अ) समसंख्याक द्रुतवाली पंक्ति के कोठों का उदाहरण—

८ द्रुतमात्रावाले ताल-प्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत के भेदों में ।।ऽ रूपवाले भेद की क्रमसंख्या क्या है? इसे जानने के लिए प्रस्तार के आदि अंग गुरु की प्राप्ति कैसी हुई होगी—यह समझ लेना है। गुरु होने के कारण, तृतीयांक "४" के घटित होने से प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसे लेना चाहिए। लघु तो जो अंक न घटे होंगे उनसे मिले हैं। इसी कारण उसके मूलभूत अंकों को मत लो। तदनन्तर समग्र भेदों की संख्या "७" से "४" को घटाने पर बाकी "३" बचा। इससे यह जाना जाता है कि अभीष्ट प्रस्तार बिना द्रुत के प्रस्तारों के तीसरे भेद का है।

(आ) विषमसंख्याक द्रुतवाली पंक्ति के कोठों का उदाहरण—

७ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों के बीच एकद्रुत के भेदों की संख्या है "१२"। उनके बीच ०।।। रूपवाले भेद की क्रम-संख्या जान लेना है, तो सर्वप्रस्तार के उद्दिष्ट-मार्ग की विधि का अनुसरण करना है। प्रस्तार का पहला अंग तो लघु है। इसकी प्राप्ति उपांत्यांक "४" के घटने के कारण मिली होनी चाहिए। उसके पार्श्व में दूसरा लघु है। इसकी प्राप्ति का कारण भी वही होना चाहिए कि बीच में एक अंक न घटने वाला अवश्य रहा होगा। वैसा न हुआ होता तो पहले का लघु, गुरु के रूप में अवश्य परिणत हो चुका होगा। इसी कारण उपांत्य के पूर्वांक को (५ को) छोड़ देना पड़ता है, परंतु उसके पूर्वांक दो को ले लेना है। बाद में और एक लघु है। पहले कहे अनुसार पंचमांक (२) को छोड़कर, इस लघु के लिए, षष्ठांक "१" को मिला लेना है। इसके बगलवाले द्रुत की प्राप्ति एक अघटित-अंक से होनी चाहिए। अतः इस द्रुत के कारण किसी भी अंक को मत लेना। अन्ततः, जो अंक घटे हैं उनको—अर्थात् ४, २, १ को जोड़कर प्राप्तांक ७ को सारे भेदों की संख्या "१२" से घटाने पर शेष हुआ "५"। यही शेषांक "५" एकद्रुत के प्रस्तार-भेदों के बीच अभीष्ट-प्रस्तार की क्रम-संख्या का बोधक है।

नीचेवाली पहली पंक्ति के अलावा अन्य पंक्तियों के कोठे का उदाहरण—

६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, द्विद्रुत के प्रस्तार-भेद हैं ९। उनके बीच ० ० ऽ वाले रूप की क्रम-संख्या क्या है, यह खोज लेना है।

इस भेद का पहला अंग है गुरु। साथ-साथ दो अंकों के घटने से यह गुरु प्राप्त होना चाहिए। यानी उपांत्य का नीचेवाला अंक "५" और तृतीयांक "३" घटे हैं; इसलिए उनको लेना है। उस गुरु के बगलवाले दो द्रुत न घटे हुए अंगों से प्राप्त हैं; अतः इनके लिए किसी अंक को लेने की गुंजाइश नहीं। अब घटा हुआ अंक "५" और "३" को जोड़कर कुल-संख्या "९" से घटाने पर बाकी हुआ १। इस शेषांक से यह जाना जाता है कि ६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, द्विद्रुत के भेदों के बीच निर्दिष्ट-भेद पहले प्रकार का है।

लघुमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पंक्ति में—

इस पंक्ति के कोठों में, बिना लघु के ही भेदों के अंक निर्दिष्ट हैं। इसके नष्ट को समझ लेने के लिए अंत्यांक से नष्ट-प्रश्न की संख्या को घटाकर बचे हुए शेषांक से उसके पहले कोठों के अंकों को क्रमशः घटाते जाइए। अंक, यदि, न घटे, तो द्रुत मिलेगा

घटे तो गुरु मिलेगा। घटे हुए अंक से एक गुरु मिलने पर उसके पार्श्ववर्ती एक या दो अंक, चाहे घटे ही, परन्तु उसके लिए द्रुतों को न मिलाया जाय। एक गुरु की प्राप्ति के बाद एक या दो बगलवाले अंक न घटें और उसके पार्श्व का अंक घटता हो तो, पहले प्राप्त गुरु प्लुत हो जायेगा। दो अंकों से अधिक के तीसरा अंक भी न घटकर चौथा अंक घटता हो, तो एक और गुरु मिलेगा।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, बिना लघु के भेद ५ हैं, यह लघुमेरु की तालिका से जाना जाता है। अब यदि कोई पूछे कि इनमें से तीसरा भेद कौन-सा है, हम इसका इसी रीति से उत्तर देंगे।

पहले, भेदों की कुल-संख्या "५" से नष्टप्रश्नांक "३" को घटाने पर प्राप्त शेषांक "२" से, पांच के पहलेवाले अंक "३" को घटाना है। यह संभव नहीं; इस-लिए एक द्रुत मिला। बाद में, उसके पूर्वांक "२" को "२" से घटाने पर बाकी रहा शून्य। घटने से मिलता एक गुरु। तालांग पूर्ण न होने के कारण, कमी की निवृत्ति के लिए एक द्रुत को जोड़ लो। ऐसा हुआ तीसरा भेद ० ऽ ०

नीचे से पहली के बिना अन्य पंक्तियों में—

पहले, भेदों की सारी संख्या से नष्टांक को घटा करके, पीछे द्वितीय एवं तृतीय के नीचेवाले अंक और पंचमांक को घटा लेना है। ऐसे घटाते समय, न घटने वाले अंक से द्रुत और घटनेवाले अंक से लघु मिलेगा। एक लघु मिल गया तो उसके बाद घटाने योग्य-अंकों को उसकी नीचेवाली पंक्ति से लेना चाहिए। ऐसा करते समय उस नियम को निभाना है, जो नीचेवाली पंक्ति के लिए नियत है। अंग पूर्ण न होकर, घटाने के लिए अंक भी यदि बच रहे तो पहले कहे अनुसार फिर, पंक्ति-क्रम से घटाते जाइए। अंक बाकी न हो, तो कमी का आवश्यक लघुओं से, पूरण कर लेना है। यह संगीतरत्नाकर के भाग से (५ वाँ अध्याय, श्लोक ३९८–४०१) लिया गया है। परंतु इस विधि पर, बिना अदल-बदल किये, चलने से नष्ट-भेद का सच्चा रूप ठीक-ठीक नहीं प्राप्त होता। कल्लिनाथ और सिंहभूपाल—इन टीकाकारों की टीका के अनुसार भी अभीष्ट-भेद का रूप प्राप्त नहीं होता।

गुरुमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पंक्ति में—

पहले, समग्र भेदों की संख्या से नष्टांक को घटा कर, पीछे उसके पूर्ववर्ती अंकों को, सर्वप्रस्तार के नष्ट को घटाने की भाँति क्रमशः घटाते जाइए। इसमें विशेषता यह है कि घटाते समय प्राप्त होनेवाले गुरु को प्लुत में बदल कर लेना है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना गुरु के भेद "१४" हैं, यह गुरुमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। इनमें पहला भेद कौन सा है? यह प्रश्न पूछा जाय, तो इसका जवाब इसी रीति पर दिया जायेगा।

पहले सारे भेदों की संख्या "१४" से नष्टांक "१" को घटाने पर शेष हुआ "१३"। इससे "१४" के पूर्वांक "८" को घटाओ। बाकी हुआ "५"; घटाने की क्रिया होने के कारण मिला लघु। शेषांक से पहला अंक "५" घटित हुआ; केवल शून्य बच गया। इस बार पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। विशेष विधि के अनुसार गुरु को प्लुत करके बदल लेना है। अब हुआ पहला भेद ꠸ऽ.

नीचे से पहली के अलावा अन्य पक्तियों में—

यहाँ उसी विधि का अनुसरण करना चाहिए, जो लघुमेरु की नीचेवाली पहली पंक्ति के अलावा अन्य पंक्तियों में नष्ट की खोज के लिए अनुसृत की गयी है। लेकिन यहाँ, तृतीय के नीचेवाले अंक के बदले, उसी पंक्ति के तृतीयांक को लेना चाहिए। उसी पंक्ति के पंचम के बदले पंचम के नीचेवाले अंक को लेना है। अंग पूर्ण न हुए हों तो, गुरु से पूर्ति कर लेनी चाहिए।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में एकद्रुतभेद "५" है तो पहला भेद क्या है? इसका उत्तर देंगे। "५" से नष्टांक "१" को घटाने पर शेष "४" हुआ। शेषांक से पूर्वांक "२" को घटाने से यह अंक "२" बचा तथा एक लघु मिला। "२" से तृतीयांक "१" को घटाने पर शेष हुआ "१" और पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। "१" से पंचम के नीचेवाले अंक "२" को घटाना संभव नहीं; इसलिए कुछ भी न मिला। पीछे, "२" के पूर्वांक "१" को घटाने से केवल शून्य बचा। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। अन्ततः पहला भेद ।ऽ हुआ है।

प्लुतमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पंक्ति में—

इसके लिए सर्वप्रस्तार के नष्ट की रीति के अनुसार क्रमशः घटाते हुए आगे बढ़ाना है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना प्लुत के भेद "१८" हैं, यह प्लुतमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। यदि कोई पूछे कि इनमें दूसरा भेद क्या है, इसका उत्तर इस रीति से प्राप्त होगा। पहले तमाम भेदों की संख्या से (१८ से) नष्टांक "२" को घटा लीजिए। बचे हुए अंक "१६" से पहले के अंक "१०" को घटाने पर शेष है अंक ६ और एक लघु मिलता है। "६" से पूर्वांक "६" को घटाने पर

केवल शून्य बच जाता है। पहले मिला हुआ लघु गुरु हो जाता है। तालांग पूर्ण न होने से कमी के पूरणार्थ दो द्रुतों को जोड़ लीजिए। दूसरे भेद का रूप होता है ० ० ऽ.

नीचेवाली पहली के अतिरिक्त अन्य पंक्तियों में—

इसके लिए गुरुमेरु की पद्धति से घटाना चाहिए। उसी पंक्ति के आखिरी कोठे तक घटाते जाते समय, अंत्य कोठे में द्रुत, लघु या गुरु के मिलने पर वह प्लुत हो जाता है। प्लुत मिल गया तो, नीचेवाली पंक्ति के आद्य ६ कोठों को छोड़कर सातवें कोठे से फिर से घटाना आरम्भ करना है।

उदाहरण—आठ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, एक प्लुत के भेद "५" हैं। इनमें से पहले भेद की खोज अब करनी है। पहले, "५" से नष्टांक "१" को घटाने पर प्राप्त शेषांक "४" से पूर्वांक "२" को घटाओ। अब "२" बच जाता है और घटित होने से मिलता है एक लघु। बाकी अंक "२" से पूर्वांक "१" को घटाओ। शेषांक "१" बच जाता है तथा पहले प्राप्त लघु गुरु हो जाता है। उसी पंक्ति के आखिरी कोठे में गुरु की प्राप्ति होने के कारण गुरु को प्लुत के रूप में बदल लीजिए। शेषांक से (१ से) नीचेवाली पंक्ति के सातवें अंक "२" को घटाना संभव नहीं। अतः उसके पूर्वांक "१" को घटाना है। अब शेष रहा शून्य। घटाने की क्रिया होने से एक लघु मिलता है। पहला भेद ।ऽ का होता है।

द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत मेरुओं के उद्दिष्ट

इनके उद्दिष्ट की जानकारी, सर्वप्रस्तार के उद्दिष्ट की खोज के लिए जिस विधि का अनुसरण किया गया है, उसके अनुसरण करने पर प्राप्त होगी। इन मेरुओं की प्रत्येक पंक्ति के उद्दिष्ट जान लेने निमित्त, नष्ट के घटित-अंकों को जोड़कर, उसे समग्र भेदों की संख्या से घटाने पर भेद की क्रम-संख्या मिलेगी।

ताल-प्रस्तार से सम्बन्ध रखनेवाले खंड-प्रस्तार, द्रुत-मेरु, लघु-मेरु, प्लुतमेरु, संयोग-मेरु और इनके नष्ट व उद्दिष्ट—ये विषय, 'संगीतरत्नाकर' में कहे अनुसार विशद रूप से लिखे गये हैं।